मानव अधिकार:

नई दिशाएं

अंक:19, वर्ष:2022

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग, भारत

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग

मानव अधिकार : नई दिशाएं

अंक-19, वर्ष -2022

प्रकाशक : **राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग**
मानव अधिकार भवन,
ब्लॉक-सी, जी. पी. ओ. कॉम्प्लेक्स,
आई. एन. ए., नई दिल्ली - 110023 भारत

© 2022 राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग, भारत

ISSN : 0973-7588 यूजीसी-केयर की गुणवत्ता पत्रिका की संदर्भ सूची में शामिल

अस्वीकरण : प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार लेखकों के निजी विचार हैं। राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग, सलाहकार मण्डल या संपादक मण्डल का इनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

मूल्य : ₹50/-

प्राप्ति स्थान:

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग
मानव अधिकार भवन,
ब्लॉक-सी, जी. पी. ओ. कॉम्प्लेक्स,
आई. एन. ए., नई दिल्ली - 110023 भारत
वेबसाईट: www.nhrc.nic.in
ई-मेल: patrika-nhrc@gov.in

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग, भारत

अध्यक्ष

न्यायमूर्ति श्री अरुण मिश्रा

सदस्य

न्यायमूर्ति श्री महेश मित्तल कुमार

डॉ. ज्ञानेश्वर मनोहर मुले

श्री राजीव जैन

महासचिव

श्री देवेन्द्र कुमार सिंह, आई.ए.एस.

महानिदेशक (अन्वेषण)

श्री मनोज यादव, आई.पी.एस.

रजिस्ट्रार (विधि)

श्री सुरजीत डे

संयुक्त सचिव

श्रीमती अनिता सिन्हा

श्री हरीश चन्द्र चौधरी

मानव अधिकार शपथ

मैं.....निष्ठापूर्वक शपथ लेता/लेती हूं कि मैं ''मानव अधिकारों'' अर्थात् संविधान द्वारा प्रत्याभूत अथवा संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा अंगी त सिविल एवं राजनीतिक अधिकारों संबंधी अन्तरराष्ट्रीय प्रसंविदा, आर्थिक, सामाजिक एवं सांस् तिक अधिकारों संबंधी अन्तरराष्ट्रीय प्रसंविदा में सम्मलित प्रत्येक व्यक्ति के जीवन, समानता एवं गरिमा से संबंधित अधिकारों, जैसा भी केन्द्र सरकार के अध्यादेश द्वारा समय-समय पर भारत में न्यायालयों द्वारा प्रवर्तनीय रूप में विनिर्दिष्ट हो, का संवर्द्धन, संरक्षण एवं समर्थन करूंगा/करूंगी।

कि, अपने कर्त्तव्यों का निर्वहन करते समय, मैं मानव अधिकारों की जागरुकता का प्रचार-प्रसार करूंगा/करूंगी।

कि, मैं अपने संज्ञान में आने वाले, लोक सेवक द्वारा किए गए किसी भी प्रकार के मानव अधिकार उल्लंघन अथवा उसके अवप्रेरण अथवा ऐसे उल्लंघन की रोकथाम में की गई लापरवाही के विरूद्ध कार्रवाई करूंगा/करूंगी तथा/अथवा संबद्ध प्राधिकारी को सूचित करूंगा/करूंगी।

मानव अधिकार: नई दिशाएं

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग, भारत

अंक- 19 वर्ष-2022

सलाहकार मण्डल

डॉ. ज्ञानेश्वर मनोहर मुले

माननीय सदस्य, राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग

श्री देवेन्द्र कुमार सिंह, आई.ए.एस. महासचिव, राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग **श्रीमती अनिता सिन्हा, आई.आर.एस.** संयुक्त सचिव राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग **श्री संजय कुमार** उप-सचिव राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग **श्रीमती अंजलि सकलानी** सहायक निदेशक (हिंदी) राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग	**डॉ. दामोदर खड़से** वरिष्ठ साहित्यकार एवं लेखक, पुणे, महाराष्ट्र **प्रो. सोमा बंदोपाध्याय** कुलपति, संस्कृत कॉलेज एवं विश्वविद्यालय, कोलकाता **श्री शशि निघोज़कर** 'बाल भारती' की हिंदी भाषा समिति के सदस्य, पुणे, महाराष्ट्र **श्रीमती सर्वमित्रा सुरजन** वरिष्ठ पत्रकार एवं लेखिका, नोएडा, उत्तर प्रदेश **डॉ. कन्हैया त्रिपाठी** सहायक प्रोफेसर, सागर, मध्य प्रदेश **डॉ. विनय कुमार शर्मा** प्रधान संपादक-शोध सरिता, अंतरराष्ट्रीय शोध पत्रिका, लखनऊ

प्रधान संपादक
श्रीमती अनिता सिन्हा, आई.आर.एस.

संपादक
श्रीमती अंजलि सकलानी

संपादन सहयोग
श्री रामस्वरूप नेहरा
सुश्री मीरा रानी

कम्प्यूटरीकरण एवं तकनीकी सहयोग
श्री जितेन्द्र सिंह

मानव अधिकारः नई दिशाएं

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग, भारत

अंक- 19 वर्ष-2022

अनुक्रम

दो शब्द
डॉ. ज्ञानेश्वर मनोहर मुले
सदस्य, राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग

आमुख
श्री देवेन्द्र कुमार सिंह
महासचिव, राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग

संपादकीय
श्रीमती अनिता सिन्हा
संयुक्त सचिव, राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग

खंड-I
आलेख

क्रम	लेखक/लेखिका का नाम	विषय	पृष्ठ
1.	सर्वमित्रा सुरजन	युद्ध में जख्मी मानवाधिकार	3
2.	डॉ. विनय कुमार शर्मा	भारत में महिला तस्करी, बालिकाओं का शोषण और मानवाधिकार	7
3.	डॉ. कन्हैया त्रिपाठी	मानव अधिकार : अमृतकाल की अमृत उपलब्धियाँ	14
4.	डॉ. श्यामबाबू शर्मा	युद्धोन्मुखता के साये में मानवीय मूल्य	20
5.	गौरहरि दास	लोकतंत्र, चुनाव व मानवाधिकार	25
6.	राकेश शर्मा	ग्रामीण बाल मजदूर और मानव अधिकार (मानव अधिकार की अमृत उपलब्धियाँ)	28
7.	डॉ. सुनील देवधर	विजयिनी मानवता हो जाय	31
8.	डॉ. जवाहर कर्नावट	न्याया व्यवस्था और मानवाधिकार	37
9.	सुवेक सिंह चौहान, डॉ. अनीस अहमद	मानव अधिकार की अमृत उपलब्धियाँ एवं स्वच्छ पर्यावरण का अधिकार : राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की भूमिका के परिप्रेक्ष्य में	40
10.	केएन मेनिका सिंह	अमृता प्रीतम एवं कृष्णा सोबती के उपन्यासों में अभिव्यक्त स्त्री अधिकार के प्रश्न	47
11.	डॉ. वीरेन्द्र सिंह	युद्ध की विभीषिका और मानवाधिकार : आधुनिक हिन्दी काव्य-नाटकों के संदर्भ में	52
12.	सोनू	सशस्त्र संघर्षों में बच्चे : मानवाधिकार का अंतरराष्ट्रीय और राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य	59
13.	श्यानी बुंदेला	जनजातीय क्षेत्रों में बाल मजदूरी और मानवाधिकार	64
14.	उर्मिला	भारतीय कानून में प्रदान किए गए अधिकार के रूप में पर्याप्त आवास के मानवाधिकार का संरक्षण और नीति	69
15.	चेतना शुक्ला	एलजीबीटीक्यू समुदाय के अधिकार	76
16.	डॉ. धनंजय चोपड़ा	ग्रामीण-बाल मजदूर और मानव अधिकार	82
17.	शंकर सिंह	भारत में मानवाधिकार परिप्रेक्ष्य में महिला कैदियों के विभिन्न प्रकार के संवैधानिक और वैधानिक अधिकार	86

18.	राकेश शर्मा 'निशीथ'	बच्चों के विरुद्ध अपराध और बाल अधिकार	92
19.	डॉ. अनिता पाण्डेय	ग्रामीण बाल मजदूर और मानवाधिकार - एक परिदृश्य	98
20.	सुदर्शन वर्मा, नीतेश कुमार चतुर्वेदी	समान लिंग विवाह की विधिक मान्यता की अपेक्षा	104
21.	संदीप कुमार पाठक	मानव अधिकार की अमृत उपलब्धियाँ	111
22.	रजनी गोसाईं	युद्ध की विभीषिका और मानव अधिकार	115
23.	शीतल प्रसाद मीना, क्षेत्रपाल सिंह	राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की कोरोना काल में प्रवासी मजदूरों के मानव अधिकारों में संरक्षण में भूमिका	118
24.	तुहिना जौहरी, विश्वास पटेल	महिला तस्करी और मानवाधिकार : समस्याएं एवं समाधान	122
25.	सर्वेश कुमार	किन्नर कथा : व्यथा ही व्यथा	128
26.	प्रीति सक्सेना	लोकतंत्र चुनाव में मतदाता की उम्मीदवार के संबंध में जानने का अधिकार	134
27.	अवनीश कुमार, सतीश कुमार	ग्रामीण बालिकाओं की औपचारिक शिक्षा : मानवाधिकार के संदर्भ में	139
28.	संदीप भट्ट	महिला तस्करी, शोषण, मानवाधिकार और मीडिया	144
		खंड-II **कविताएँ**	
1.	प्रियंका पुरोहित	कुदाली में जख्म	153
2.	सृष्टि बरनवाल	मौन	154
		खंड-III **कहानियाँ**	
1.	दामोदर खड़से	कोई अंत नहीं	157
2.	सोमा बंद्योपाध्याय	गर्म भात	166
3.	जितेन ठाकुर	एक युद्ध ऐसा भी	171
4.	सूर्यकांत नागर	चेहरे	175
5.	स्वाति कान्हेगावकर	स्कूल चलें हम...	181
6.	बलराम	सामना	186
7.	दिव्या तिवारी	आजादी का अमृत महोत्सव बनाम लैंगिक समानता	197
8.	प्रीति प्रभाकर	यह कैसी आजादी	203

	खंड-IV **आयोग के महत्त्वपूर्ण निर्णयों की सृजनात्मक प्रस्तुति; कहानीकार - सर्वमित्रा सुरजन**		
1.	अजन्मी संतानों का संरक्षक आयोग		207
2.	न्याय के नये दरवाजे		209
3.	निराश्रितों की आयोग का आश्रय		210
4.	मातम में बदली जन्माष्टमी		212
5.	जख्मों पर आयोग का मलहम		213
	खंड-V **समीक्षा**		
1.	डॉ. विनय कुमार शर्मा	अन सोशल नेटवर्क	217
2.	डॉ. कन्हैया त्रिपाठी	मानवाधिकार एवं सत्य की नई खोज है रेत समाधि	221

मानव अधिकार: नई दिशाएं
मानव अधिकार भवन
ब्लॉक– सी, जी.पी.ओ. कॉम्प्लेक्स,
आई.एन.ए., नई दिल्ली - 110023 भारत

डॉ. ज्ञानेश्वर मनोहर मुले
सदस्य

दो शब्द

अपनी बुद्धि, मेधा और क्षमता के बूते मानव ने पाषाण युग से लेकर संचार क्रांति के युग तक का लंबा सफर तय किया है। विज्ञान के साथ विकास की इस सुदीर्घ यात्रा में कई उतार-चढ़ाव मानव ने देखे और अपने हर अनुभव के साथ वह नयी सीख लेता गया। जैसे कई छोटी-बड़ी लड़ाइयों के साथ इंसान ने जब दो-दो विश्वयुद्धों की विभीषिका देखी, तो यह तय किया कि मानवाधिकारों को नए सिरे से परिभाषित किया जाए, ताकि बिना किसी भेदभाव के इस दुनिया के हर इंसान को सम्मान के साथ जीने का अवसर मिले। संयुक्त राष्ट्र संघ ने 10 दिसम्बर 1948 को मानवाधिकार की सार्वभौमिक घोषणा अंगीकार की, और तब से लेकर अब तक दुनिया में तमाम विपरीत परिस्थितियों के बावजूद मानवाधिकारों की रक्षा के लिए तमाम प्रयास किए जा रहे हैं। मनुष्य होने के नाते जो अधिकार मानव को सहज उपलब्ध हैं, वे मानवाधिकार हैं। किसी भी मानव के पूर्ण शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक विकास के लिए मानवाधिकार आवश्यक हैं। इन अधिकारों का उद्भव मानव की अंतर्निहित गरिमा से हुआ है। इन अधिकारों के बिना न तो व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का विकास कर सकता है और न ही समाज के लिए उपयोगी कार्य कर सकता है।

भारत संयुक्त राष्ट्र द्वारा घोषित की गई मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा के पालन को सर्वोच्च प्राथमिकता देता है। 1993 में राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग की स्थापना इस हेतु की गई। लेकिन इस औपचारिक कदम से पहले भी भारत में मानवाधिकारों की रक्षा को लेकर सचेत प्रयास होते रहे हैं। बल्कि ये कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि भारतीय परंपरा और संस्कृति में मानवकल्याण की जो सीख बोयी गई है, उसके फलदार वृक्ष के नीचे आधुनिक भारत आगे बढ़ रहा है। प्राचीन काल की शिक्षाओं में मानवाधिकारों की सीख मिलती रही है और इसी कड़ी को आजादी की लड़ाई के दौरान भी आगे बढ़ाया गया। हमारे पूर्वजों ने मानव मात्र से प्रेम करने और उसके साथ आदर का व्यवहार करने की शिक्षा दी। यही भाव स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान भी बना रहा। इसलिए स्वाधीनता सेनानियों ने अंग्रेजी दासता से मुक्ति के साथ-साथ समाज में व्याप्त बुराइयों से मुक्ति को भी स्वाधीनता आंदोलन का अभिन्न अंग बनाया। जिन कुप्रथाओं के कारण मानव गरिमा का हनन हो रहा था, उन्हें यत्नपूर्वक दूर किया गया। मानव अधिकारों के बूते ही हम वस्तुतः एक ऐसे भावी मानव समाज का स्वप्न देख सकते हैं, जिसमें मनुष्य अपने मानवत्व की निरन्तर सिद्धि करता रह सके। समस्त अंतर्विरोधों के बावजूद इस चुनौतीपूर्ण समय में भारत ने मानवाधिकारों की विभिन्न कसौटियों पर खरा उतरकर मानवीय गरिमा के संरक्षण व संवर्धन के उद्देश्यों की प्राप्ति की है।

आज जब समूचा देश आजादी का अमृत महोत्सव मना रहा है, तब यह देखना सुखकर है कि प्राचीन युग से लेकर आधुनिक भारत के निर्माण में मानवाधिकारों के लिए हमेशा एक विशेष स्थान रखा गया है। भारत की विकास यात्रा के साथ-साथ मानवाधिकारों की यात्रा भी चलती रही। 'मानव अधिकार: नई दिशाएं' के वर्तमान अंक में आजादी के अमृतकाल और उसके साथ बहती मानवाधिकारों की अंतर्धारा पर कई विशेष आलेख प्रस्तुत किए गए हैं। इसके साथ ही युद्ध के साए में सांस ले रही दुनिया में मानवाधिकार किस तरह जख्मी हो रहे हैं, लोकतंत्र कैसे मानवाधिकारों की रक्षा में सहायक होता है, साहित्य, कला और संस्कृति मानवाधिकारों को किस तरह अभिव्यक्त करती है, बच्चों, महिलाओं, युद्ध पीड़ितों, कैदियों, किन्नरों के अधिकारों पर किस तरह का विमर्श जरूरी है, ऐसे तमाम पहलुओं को इस अंक में समेटा गया है। साथ ही पूर्व की भांति आयोग के महत्वपूर्ण निर्णयों की सृजनात्मक प्रस्तुति राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग की महत्वपूर्ण अनुसंधान परियोजनायें व मानव अधिकार आयोग से जुड़ी कवितायें एवं कहानियों को भी प्रस्तुत किया गया है।

मानव अधिकारों के प्रति रूचि रखने वाले बुद्धिजीवियों, लेखकों तथा अकादमिक क्षेत्र से जुड़े महानुभावों ने हमें जो रचनात्मक सहयोग प्रदान किया है, उसके लिए हम उनका हृदय से आभार व्यक्त करते हैं। हमें आपकी प्रतिक्रियाओं एवं सुझावों का इंतजार रहेगा ताकि आगामी अंक हम आपके समक्ष और बेहतर रूप में प्रस्तुत कर सकें।

(डॉ. ज्ञानेश्वर मनोहर मुले)

मानव अधिकार: नई दिशाएं
मानव अधिकार भवन
ब्लॉक– सी, जी.पी.ओ. कॉम्प्लेक्स,
आई.एन.ए., नई दिल्ली - 110023 भारत

देवेन्द्र कुमार सिंह, आईएएस
महासचिव

आमुख

भारतीय संविधान की उद्देशिका में ही भारतीय नागरिकों के लिए सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता के अधिकार की प्रतिबद्धता निहित है। फिर भी, वर्तमान समाज में कई विसंगतियां उभरकर आती हैं और कई बार संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकारों से कुछ लोग वंचित हो जाते हैं।

इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु, 1993 में राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग की स्थापना की गई। राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग का इतिहास यह बताता है कि हम मीलों चले हैं और अभी बहुत से नए कीर्तिमान स्थापित करने के लिए गतिशील रहना है। हमें इस बात की प्रसन्नता है कि राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग 1993 से अब तक भारत के प्रत्येक नागरिकों को एक समान अवसर प्रदाता बनकर सबके गरिमा की सुरक्षा के लिए आगे आया है और इसकी तारीफ वैश्विक मंच पर होती रही है।

आजादी के अमृत पर्व पर हमारी उपलब्धियां हमारी जनता के हित में कैसे कारगर बन सकती है, यह हमारे लिए अब भी अधिक संवेदना की विषय है। हमने महिलाओं को सशक्त बनाया है। बच्चों के अधिकारों को सुरक्षित किया है। बुजुर्गों को भी उनका सम्मान दिलाया है। आज़ादी के 75 वर्षों में ऐसे कई संविधान-सम्मत निर्णय और संविधान के संशोधन किए गए हैं जिससे हाशिये का समाज भी अपनी गरिमा को प्राप्त कर सके। फिर भी हमें अधिक संवेदनशील बनने की कोशिश करनी है और अधिकारों को सबकी पहुँच का हिस्सा बनाना है।

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग की पत्रिका 'नई दिशाएं' मनुष्य के अधिकारों के प्रति सेचत है। इसमें समाहित लेख वैचारिक ऊहापोह को जन्म देते हैं और स्वस्थ, समतापूर्ण, स्वतंत्र राष्ट्र के निर्माण के लिए सार्थक सोच देते हैं। इस अंक में आज़ादी के अमृत महोत्सव के उपलक्ष्य पर युद्ध की विभीषिका, महिला तस्करी, बालिकाओं का शोषण, ग्रामीण बाल मजदूर, लोकतांत्रिक चुनाव और एलजीबीटीक्यू समुदाय के मानव अधिकारों से संबंधित आलेखों, कविताओं एवं कहानियों के साथ-साथ मानव अधिकारों से संबंधित 02 पुस्तकों की समीक्षा भी प्रकाशित की गई है, जिससे यह पत्रिका उपयोगी सामग्रियों का महत्वपूर्ण दस्तावेज बन सका है जिसके लिए संपादक और सलाहकार मंडल के सदस्यों का मैं अभिनन्दन करता हूँ। इस प्रयास से हम निश्चय ही अपनी मानवाधिकार के प्रति प्रतिबद्धता को अभिव्यक्ति कर रहे हैं।

हमें विश्वास है की अमृत पर्व पर अपनी उपलब्धियों को अपनी ताकत बनाकर हम मानव अधिकारों की सुरक्षा में अपने उत्तरदायित्व को और सशक्त बनाएंगे और सभी के अधिकारों की सुरक्षा के लिए अधिक संवेदनशील बनेंगे।

शुभकामनाओं सहित,

देवेन्द्र कुमार सिंह
10.11.22

(देवेन्द्र कुमार सिंह)

मानव अधिकार: नई दिशाएं
मानव अधिकार भवन
ब्लॉक– सी, जी.पी.ओ. कॉम्प्लेक्स,
आई.एन.ए., नई दिल्ली - 110023 भारत

अनिता सिन्हा, आईआरएस
संयुक्त सचिव (पी एंड टी)

संपादकीय

सन 1993 में अपने स्थापना काल से ही राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग ने नागरिकों के मानव अधिकारों के संरक्षण हेतु उल्लेखनीय कार्य किया है। आयोग ने स्त्रियों, बुजुर्गों, बच्चों, अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के प्रश्नों को गंभीरता से लेकर उनको भरपूर सम्मान देने/दिलाने का यत्न किया है। हमारे बीच में मान्यताएं और लोगों के प्रति सम्मान में बढ़ोतरी हुई है। हमने विशेष रैपोर्टियर के माध्यम चिन्हित क्षेत्रों और समुदायों के मानवाधिकारों की सुरक्षा के सतत प्रयत्न किए हैं। बहुत संतोष होता है कि हमने रोमांचकारी उपलब्धि हासिल करने के लिए समय-समय पर गंभीर निर्णय लिया है। अपनी चिंताएं समय-समय पर प्रकट करके उन लक्ष्यों को प्राप्त करने की कोशिश की जिसके लिए राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग की कल्पना की गई थी।

भारत के समक्ष फिर भी अनेकों चुनौतियाँ हैं जिससे लड़कर हमें अपने देश के नागरिकों के सम्मान, स्वतंत्रता, सुरक्षा और आपसी बंधुता के लिए कार्य करना है। दुनिया की चिन्हित चुनौतियों को भी हमें गंभीरता से लेकर सहिष्णु संस्कृति का पोषक बनना आवश्यक है क्योंकि हम सर्वे भवन्तु सुखिनः की कामना करके दुनिया को संदेश देते रहे हैं कि हम शांतिपूर्ण प्रेम पर आधारित समाज के स्वप्नद्रष्टा हैं।

इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु हमने 'मानव अधिकार-अमृतकाल की अमृत उपलब्धियां' इस थीम को केंद्र में रखकर 'मानव अधिकार: नई दिशाएं' पत्रिका का यह अंक प्रकाशित करने का संकल्प लिया। मुझे इस बात की प्रसन्नता है की थीम के अनुरूप कई महत्वपूर्ण आलेख हमें प्राप्त हुए। यथा- डॉ. कन्हैया त्रिपाठी का आलेख 'मानव अधिकार: अमृत काल की अमृत उपलब्धियां', सुवेक सिंह चौहान और अनीश अहमद का आलेख-'मानव अधिकार की अमृत उपलब्धियां एवं स्वच्छ पर्यावरण का अधिकार', शीतल प्रसाद मीना एवं क्षेत्रपाल सिंह का आलेख-'राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग की कोरोना काल में प्रवासी मजदूरों के मानव अधिकारों के संरक्षण में भूमिका', दिव्य तिवारी का नुक्कड़ नाटक 'आज़ादी का अमृत महोत्सव बनाम लैंगिक समानता' आदि हमारे केन्द्रीय विषय पर केंद्रित सामग्रियाँ पाठकों को अमृतकाल के विमर्श से जोड़ सकेंगी। इसके अलावा कई महत्वपूर्ण विषय जिसमें युद्ध, बच्चे, लैंगिक विमर्श व एलजीबीटीक्यू, बाल श्रम, शिक्षा आदि पर लेख भी इस अंक की विशेष सामग्री बन पड़ी है। इस अंक में कहानी, कविता, समीक्षा और आयोग के कार्यवाहियों का कहानी रूपांतरण पाठकों को रोचक लगेंगी।

इस अंक के लिए प्रविष्टिदाताओं को धन्यवाद और जिनकी प्रविष्टियाँ इस अंक में प्रकाशित हुई हैं, उन्हें बधाई। हमें यकीन है की आज़ादी के अमृत महोत्सव पर हमारी यह कोशिश आपको पसंद आएगी।

मुझे विश्वास है कि इस वर्ष का यह अंक पाठकों के भीतर अपनी जगह बनाने में सफल होगा। इस महत्वपूर्ण कार्य के पूर्णता में आयोग के माननीय सदस्य ज्ञानेश्वर मुले जी के विशेष मार्गदर्शन के लिए हम कृतज्ञता व्यक्त करते हैं साथ ही हिन्दी अनुभाग की सहायक निदेशिका और अपनी सहयोगी सुश्री अंजलि सकलानी के भी विशेष श्रम की हम प्रशंसा करते हैं। इस अंक के संपादकीय सलाहकार बोर्ड के सदस्यों के भी अवदान के लिए उनके आभारी हैं।

आयोग के माननीय अध्यक्ष एवं सदस्यगण के समय-समय पर मिले मार्गदर्शन में हिन्दी भाषा में इस पत्रिका को हम सार्थक एवं सारगर्भित पत्रिका बना पाते हैं। समय-समय पर परोक्ष या प्रत्यक्ष सहयोग के लिए हम अपने मार्गदर्शकों के प्रति आभार व्यक्त करते हैं। हमें विश्वास है कि इस विशिष्ट अंक को पढ़कर हमारे देश के लोग अपने कर्त्तव्य और अधिकारों के बारे में और अधिक जागरूक होंगे और सभी के मानवाधिकारों को सुरक्षित करने का संकल्प लेंगे। यदि ऐसा होता है तो निश्चित रूप से हमारा यह श्रम सफल होगा।

(अनिता सिन्हा)

खंड-I

आलेख

युद्ध में जख्मी मानवाधिकार

सर्वमित्रा सुरजन*

शांति के विरुद्ध एक कविता
सदियों से बोलते आदमी को
चुप कराने की साज़िश है शांति।
हर निर्माण, हिंसा से जुड़ा है
चाहे वह बाड़ हो सुरक्षा की
या प्रतिरक्षा के लिए
तनी बंदूक़।
अगला क़दम, जब भी उठेगा
अंत में वह धरती को कुचलेगा
और आगे और आगे
कुचलता हुआ ही बढ़ेगा
चाहे नेपोलियन हो या हिटलर या कोई और
सदियों से, संधियों और वार्ताओं में
शांति के निमित्त बीतता है वक़्त
और अशांति, हिंसा के बहाने जगह बदलती रहती है।

कवि- **गंगाप्रसाद विमल**

दुनिया इस वक्त एक भयावह दौर से गुजर रही है। नयी सदी में वक्त ने जैसे ही बीसवें साल की दहलीज पर कदम रखा, उसका सामना कोरोना जैसी महामारी से हुआ। कोविड-19 ने अपने कहर से दो बरसों में दुनिया को झकझोर कर रख दिया। अदम्य साहस औऱ जिजीविषा रखने वाला इंसान एक अदृश्य वायरस के हाथों परास्त होते नजर आया। इस रुग्ण काल में इंसानियत कई परीक्षाओं से गुजरी। आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक और सांस्कृतिक हर क्षेत्र में बदलाव देखा गया। इस दुश्वारी का मुकाबला इंसान ने कर लिया,

* *वरिष्ठ पत्रकार एवं लेखिका, नोएडा, उत्तर प्रदेश*

मगर हिंसा का जो वायरस मनुष्य के भीतर छिपा बैठा है, उसे खत्म करने की कोई सूरत नजर नहीं आ रही। दुनिया दो विश्वयुद्धों की तबाही देख चुकी है। इसके अलावा विभिन्न देशों के बीच किसी न किसी बात को लेकर झगड़े, विवाद चलते ही रहते हैं और इन के समाधान के लिए शांति वार्ताओं का दौर भी चलता है। मगर शांति की ये कोशिशें कितनी खोखली होती हैं और इनका मकसद समय बिताना होता है, ये बात कवि गंगाप्रसाद विमल की ऊपर दी गई कविता में स्पष्ट होती है। इस का एक उदाहरण भी दुनिया ने रूस और यूक्रेन के बीच छिड़ी जंग में देखा है। जहां वार्ताओं और शांति प्रस्तावों के तमाम प्रयत्नों के बाद भी युद्ध को टाला नहीं जा सका।

रूस और यूक्रेन दोनों के पास संघर्ष के अपने-अपने कारण हैं, खुद को सही ठहराने के तर्क भी हैं। मगर इस युद्ध का भुगतान दोनों देशों की जनता को ही करना पड़ रहा है। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद गठित संयुक्त राष्ट्र संघ एक बार फिर अपनी प्रासंगिकता खोता नजर आया, क्योंकि उसके निंदा प्रस्तावों या युद्ध रोकने के प्रयासों का कोई नतीजा नहीं निकला। न रूस पीछे हटा, न यूक्रेन झुकने तैयार हुआ। और इस युद्ध में जो तबाही हुई है, उसे मानवता सदियों तक भुगतेगी। इस जंग में भी हर बार की तरह महिलाएं और बच्चे ही सबसे अधिक निशाने पर हैं। बालअधिकारों को यूक्रेन के अस्पतालों में, ध्वस्त हुई इमारतों के ढेर में रोते-बिलखते देखा जा सकता है। वहीं महिलाओं की अस्मिता के साथ-साथ उनके अधिकारों की भी धज्जियां उड़ रही हैं। रूसी सैनिक किस तरह सामानों की लूटपाट के साथ-साथ यूक्रेनी महिलाओं की इज्जत भी लूट रहे हैं, इसके कई दिल दहलाने वाले किस्से सामने आए हैं। वहीं ये खबर भी आई कि रूसी सैनिक यूक्रेनी बच्चों को ढाल की तरह इस्तेमाल कर रहे हैं। रूस के सैनिक जब तुर्की के दखल के बाद कीव से पीछे हटने तैयार हुए तो इस पर यूक्रेन के रक्षा मंत्रालय के प्रवक्ता कर्नल ऑलेक्जेंडर मोटुज्यानिक ने कहा- दुश्मन अपने काफिले, अपने वाहनों को ले जाते समय यूक्रेनी बच्चों को मानव ढाल के रूप में इस्तेमाल कर रहे हैं। वे ऐसा इसलिए कर रहे हैं ताकि बच्चों के अभिभावक उनकी जानकारी यूक्रेनी सैनिकों को न दे सकें।

यह कल्पना करके ही रोंगटे खड़े हो जाते हैं कि उन मां-बाप पर क्या बीत रही होगी, जब उनके मासूम बच्चों को दुश्मन देश के सैनिक ढाल की तरह इस्तेमाल करने के लिए अपने साथ ले गए होंगे। अगर वे बच्चे दुश्मन के हाथों से बच भी गए तो उनका बाकी जीवन किस तरह की मानसिक यंत्रणा में बीतेगा। जिन बच्चों ने अपने सामने अपने घर और शहर को उजड़ते देखा, जिनके स्कूल बमों का शिकार हो गए, जिनके खिलौने उनके दोस्तों के साथ ही चिथड़ों में तब्दील हो गए, वे बच्चे किस तरह अपना बाकी जीवन इस तबाही को याद करके रहेंगे। क्या वे जब वयस्क होंगे, तो उनके भीतर दया का भाव होगा या नफरत और हिंसा को जीवन का सच मान बैठेंगे? यही सवाल महिलाओं को लेकर भी उठते हैं कि दुश्मन सैनिकों के हाथों अपना आत्म-सम्मान लुटा चुकी महिलाएं किस तरह भावी जीवन में मुश्किलों से लड़ने के लिए साहस बटोर पाएंगी। बमों, मिसाइलों और बंदूकों की गोलियों से कई परिवार तबाह हो गए हैं। कई महिलाओं के सामने उनकी गृहस्थी उजड़ गई, किसी का पूरा परिवार खत्म हो गया, किसी ने अपने सामने अपने पति, बच्चों या अन्य नातेदारों को दम तोड़ते देखा, उसके बाद उन महिलाओं को गुलामों की तरह इस्तेमाल किया गया। इस अत्याचार के बाद वे किस तरह अपना बाकी जीवन काट पाएंगी।

यूक्रेन के साथ जंग में सैकड़ों रूसी सैनिकों की जान भी गई है। ये सैनिक भी इंसान ही थे, जो अपने आका का हुक्म बजा रहे थे। मुमकिन है इन सैनिकों को मरणोपरांत कोई सम्मान मिल जाए। मगर क्या इससे उन दिवगंत सैनिकों के परिवारों के दुख कम हो जाएंगे। उनकी विधवाएं, अनाथ बच्चे, बूढ़े मां-बाप किस

तरह अपना बाकी जीवन बिताएंगे। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद कई बरसों तक रूस में महिलाएं ही हर क्षेत्र में काम संभालती नजर आईं। चाहे वह खेतों में काम हो, कारखानों में काम हो या फिर मेट्रो और बसों का संचालन हो, महिलाओं को आगे आकर मोर्चा संभालना पड़ा, क्योंकि रूस के लगातार युद्धरत रहने के कारण पुरुषों की एक बड़ी आबादी खत्म हो गई थी। अब इस जंग के बाद एक बार फिर वैसे ही आसार बनते नजर आ रहे हैं। इससे फिर यही निष्कर्ष निकलता है कि युद्ध में जीत किसी की भी हो, हारती मानवता ही है।

रूस-यूक्रेन जंग में मानवाधिकारों का एक बड़ा संकट देखा जा रहा है। और यह संकट हर युद्ध के साथ खड़ा होता ही है। बीबीसी की एक रिपोर्ट के मुताबिक 1862 में स्विस मानवाधिकार कार्यकर्ता हेनरी डूनो की किताब 'अ मेमोरी ऑफ़ सोल्फ़रीनो' प्रकाशित हुई थी। इस किताब में 1859 के इटली युद्ध के घायल सैनिकों का मार्मिक चित्रण था। इसने दुनिया को झकझोर कर रख दिया था। हेनरी डूनो की किताब के छपने के साल भर बाद स्विट्ज़रलैंड में 12 यूरोपीय देशों ने जेनेवा कन्वेंशन नाम के एक समझौते पर हस्ताक्षर किए। जर्मनी के इंटरनेशनल न्यूरमबर्ग प्रिंसिपल्स एकेडमी के निदेशक क्लाउस रैकवित्ज़ इस बारे में कहते हैं, "ये युद्ध के दौरान क्रूरता और अमानवीय अत्याचार रोकने की कोशिश थी। इस समझौते में कई तरह के नियम थे। जैसे, घायल सैनिक को जंग के मैदान में इसलिए मरने के लिए छोड़ा नहीं जा सकता कि वो दुश्मन सेना से है। युद्धबंदियों को अमानवीय हालात में नहीं रखा जा सकता। जानकारी निकालने के लिए किसी को प्रताड़ित नहीं किया जा सकता। अस्पतालों या घायलों का इलाज करने वाली जगहों पर हमला अस्वीकार्य है।"

उस वक़्त जंग के मैदान में मानवाधिकारों की रक्षा की दिशा में ये बड़ी पहल थी। बाद में कई और समझौतों को साथ लेकर जेनेवा समझौता बनाया गया। लेकिन, इनका पालन करने को लेकर मुल्कों पर क़ानूनी प्रतिबद्धता नहीं थी, इसलिए उम्मीद के अनुरूप नतीजा भी नहीं मिला। क्लाउस रैकवित्ज़ कहते हैं, "जेनेवा और हेग समझौतों में युद्ध के कुछ तरीकों पर रोक लगाई गई थी। लेकिन न तो सज़ा का प्रावधान था और न ही प्रतिबंधों की व्यवस्था। ये कमी इन समझौतों के मूल सिद्धांत में थी। जैसे जेनेवा समझौते में युद्धबंदियों पर अत्याचार पर मनाही है लेकिन ऐसा करने पर क्या होगा ये स्पष्ट नहीं है। " 1949 में दुनिया के लगभग सभी देशों ने जेनेवा समझौतों पर हस्ताक्षर कर दिए। लेकिन इसका मतलब ये नहीं था कि युद्ध अपराध के लिए ज़िम्मेदार लोगों को दोषी करार देने की समस्या सुलझ गई।

1991 में पूर्व यूगोस्लाविया के अलग-अलग नस्लीय समुदायों के बीच संघर्ष छिड़ गया। दो साल बाद संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद ने युद्ध अपराध के दोषियों पर मुक़दमा चलाने के लिए एक इंटरनेशनल क्रिमिनल ट्राइब्यूनल बनाया। यूनिवर्सिटी ऑफ़ वॉरसा में प्रोफ़ेसर और 'क्रिमिनल रेस्पॉन्सिबिलिटी फ़ॉर द क्राइम ऑफ़ अग्रेशन' की लेखिका पेट्रिशिया ग्रिज़बैक कहती हैं कि मुक़दमे के लिए पूर्व यूगोस्लाविया में शामिल सर्बिया, बोस्निया और क्रोएशिया को आरोपियों को कोर्ट को सौंपना था, यही सबसे बड़ी मुश्किल थी। बीबीसी की एक रिपोर्ट के मुताबिक पेट्रिशिया ग्रिज़बैक कहती हैं, "ये ट्राइब्यूनल सुरक्षा परिषद ने बनाया था इसलिए इसके साथ सहयोग करना देशों की प्रतिबद्धता थी, लेकिन वो न तो किसी को गिरफ़्तार करना चाहते थे और न सबूत इकट्ठा करना चाहते थे। कारगर तरीके से मुक़दमा चलाने के लिए आरोपी चाहिए और सबूत और गवाह चाहिए। अगर मुल्क सहयोग न करें तो सबूत इकट्ठा करना, अभियोजकों को भेजना, गवाही लेना और गिरफ़्तारी करना असंभव होता है। "

बहरहाल, युद्ध ख़त्म होने के बाद ही कोर्ट सही तरीके से काम कर सका। बाद में डेढ़ सौ से अधिक

लोगों पर मुक़दमा चलाया गया। इनमें सर्बिया और यूगोस्लाविया के पूर्व राष्ट्रपति स्लोबोदान मिलोसेविच और बोस्नियाई सर्ब नेता राडोवान कैराडिच और राट्को म्लाडिच शामिल थे। 20 साल तक चले इस ट्राइब्यूनल ने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मानवाधिकार क़ानूनों को नई दिशा दी। जिस वक़्त यूगोस्लाविया में संघर्ष चल रहा था, उस वक़्त अफ्रीका में भी स्थिति बेकाबू हो रही थी। रवांडा के दो मुख्य नस्लीय समुदाय हूतू और तुत्सी के बीच हिंसक संघर्ष छिड़ गया। 1994 में केवल सौ दिनों के भीतर हूतू विद्रोहियों ने क़रीब आठ लाख तुत्सियों की हत्या कर दी। इसके बाद संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद ने रवांडा के लिए इंटरनेशनल क्रिमिनल ट्राइब्यूनल बनाया। पेट्रिशिया कहती हैं, "अभियोजकों को ये तय करना था कि इसके लिए ज़िम्मेदार किसे ठहराया जाए। रवांडा के मामले में उन्होंने उन लोगों को दोषी ठहराया जो सरकार में ऊंचे पदों बैठे पर थे। आरोपियों में कई नेताओं और मंत्रियों के नाम थे, हालांकि, उन्होंने दशक भर तक घटना की ज़िम्मेदारी नहीं ली।"

ट्राइब्यूनल ने कुल 61 लोगों को सज़ा सुनाई। इनमें रवांडा के पूर्व प्रधानमंत्री शॉन केम्बैन्डा भी शामिल थे। वो पहले राष्ट्राध्यक्ष थे जिन्हें नरसंहार के लिए आजीवन कारावास की सज़ा सुनाई गई। इसके अलावा रवांडा में भी कुछ लोगों पर मुक़दमा चलाया गया और कई लोगों को सज़ा दी गई। रवांडा और यूगोस्लाविया के लिए इंटरनेशनल क्रिमिनल ट्राइब्यूनल केवल दो देशों के मामलों में युद्ध अपराधियों को सज़ा देने के लिए बनाए गए थे। इसके बाद 1998 में क़रीब सौ देशों ने रोम स्टैट्यूट यानी रोम क़ानून पर हस्ताक्षर किए जिससे युद्ध अपराधों से जुड़े मामलों की सुनवाई के लिए एक स्थायी इंटरनेशनल क्रिमिनल कोर्ट बनाने का रास्ता साफ़ हुआ। लेकिन कुछ देश कोर्ट के अधिकार क्षेत्र से बाहर हैं, इनमें अमेरिका, चीन और रूस अहम हैं।

बीती सदी की इन घटनाओं का जिक्र इसलिए करना जरूरी है, क्योंकि युद्ध की विभीषिका, मानवाधिकारों के हनन, युद्ध रोकने के लिए बनाई गई संधियों, और युद्ध अपराधों के लिए दी गई सजा के बावजूद हुकूमतों ने कोई सबक नहीं लिया। सत्ता का अहंकार और सैन्य ताकत के प्रदर्शन में मानवाधिकारों की धज्जियां बार-बार उड़ाई जा रही हैं। दुनिया फिर उस मुकाम पर जा पहुंची है जहां सरकारों ने रोटी के बदले बम को प्राथमिकता में रखा है। बारुद की तपिश एक बार फिर जैतून की टहनी को झुलसा रही है।

●●●●

भारत में महिला तस्करी, बालिकाओं का शोषण और मानव अधिकार

डॉ. विनय कुमार शर्मा*

शोध सारांश : भारत में मानव तस्करी की समस्या विकराल और भयावह है। एशियाई देशों में भारत मानव तस्करी का गढ़ बन चुका है। मानव जीवन का, तस्करी या अवैध व्यापार का शिकार होना किसी त्रासदी से कम नहीं है। इससे मानवता कलंकित होती है और सभ्य समाज को शर्मिन्दा होना पड़ता है। यह कहना असंगत न होगा कि मानव तस्करी मानवता के विरुद्ध ऐसा भयावह कृत्य है, जो मनुष्य के स्वतंत्रता जैसे मूलभूत अधिकार को ही छीन लेता है। भारत में मानव तस्करी की विकरालता को देखते हुए ही अलग से इसकी रोकथाम के लिए एक व्यापक कानून की आवश्यकता महसूस की गई, जिसके अनुसरण में 'मानव तस्करी (निवारण, संरक्षण और पुनर्वास) विधेयक, 2018 तैयार किया गया, जो कि 26 जुलाई, 2018 को ध्वनिमत से पारित भी हो चुका है।

Keywords : मानव तस्करी, संगठित अपराध, संजाल, वेश्यावृत्ति, देह व्यापार, शोषण, अनैतिक, महिला, आंदोलन, पितृसत्ता।

मादक पदार्थों की तस्करी और हथियारों के अवैध कारोबार के बाद मानव तस्करी को दुनिया का तीसरा सबसे बड़ा संगठित अपराध माना जाता है। इस अपराध को संयुक्त राष्ट्र ने इस प्रकार परिभाषित किया है- "किसी व्यक्ति को डराकर, बल प्रयोग कर या दोषपूर्ण तरीके से भर्ती, परिवहन या शरण में रखने की गतिविधि तस्करी की श्रेणी में आती है। " सामान्य शब्दों में हम यह भी कह सकते हैं कि किसी की इच्छा के विरुद्ध, किसी मजबूरी या कमजोरी का फायदा उठाते हुए किसी भी तरह के अवैध कार्य में भागीदार बनाने के लिए किसी व्यक्ति, महिला या बच्चे को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाना और उनसे गलत काम करवाना मानव तस्करी है। यह आज के नए दौर की 'आधुनिक गुलामी' है। भारत में मानव तस्करी को बढ़ाने वाले कारणों पर दृष्टिपात करने से पहले इससे जुड़े आंकड़ों पर नजर डाल लेना उचित रहेगा। राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो द्वारा जारी आँकड़ों के अनुसार मानव तस्करी भारत में दूसरा सबसे बड़ा अपराध है, जो पिछले

* *मुख्य संपादक, शोध सरिता और शोध संचार बुलेटिन, लखनऊ, उत्तर प्रदेश*

एक दशक में 14 गुना बढ़ा है। वर्ष 2009 से लेकर 2014 के बीच मानव तस्करी के मामलों में 92% की बढ़ोत्तरी दर्ज हुई, जो कि हैरत में डालने वाली है। एक आँकड़ा यह भी है कि देश में औसतन हर आठवें मिनट में एक बच्चा लापता होता है। महिला एवं बाल विकास मंत्रालय की एक रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2016 में भारत में तकरीबन 20,000 बच्चों और महिलाओं की तस्करी हुई, जिनमें 9,000 से ज्यादा बच्चे थे और यह आँकड़ा वर्ष 2015 की तुलना में 25% अधिक था। वैसे तो देश के प्रत्येक राज्य में मानव तस्करों का संजाल (Network) फैला है, किंतु कुछ राज्यों में यह ज्यादा ही घना और मजबूत है। यानी ये राज्य मानव तस्करी अपराध बाहुल्य राज्य हैं। भारत के जिन राज्यों में व्यापक पैमाने पर इस तरह के मामले सामने आ रहे हैं, वे हैं- तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, पश्चिम बंगाल, महाराष्ट्र और छत्तीसगढ़। ये राज्य मानव तस्करी के गढ़ बन गए हैं, जिनमें जिस्मफरोशी के लिए लड़कियों की खरीद-फरोख्त ज्यादा होती है। मानव तस्करी के दर्ज होने वाले 70% से अधिक मामले इन्हीं राज्यों के होते हैं। सामाजिक असमानता, गरीबी, भुखमरी, बेरोजगारी, सामाजिक शोषण, क्षेत्रीय असंतुलन, भ्रष्टाचार, युद्ध जैसे अनेकानेक कारण मानव तस्करी जैसे संगठित अपराध को बढ़ा रहे हैं। इनके अतिरिक्त मानव तस्करी को बढ़ाने वाला एक कारण पर्यटन भी है। विकसित देशों के अनेक धनवान मात्र यौन संतुष्टि के लिए पर्यटन करते हैं, जिसे 'सेक्स टुरिज्म' (Sex Tourism) के नाम से जाना जाता है। यौन कार्यों के लिए विश्व स्तर पर महिलाओं और बच्चों की अत्यधिक मांग भी इस धंधे को फलने-फूलने में मदद कर रही है। मानव तस्करी मुख्यतः देह व्यापार के लिए की जाती है। इसके अलावा बलात श्रम, घरेलू नौकर, मानव अंग व्यापार, बच्चों का अवैध दत्तक ग्रहण, बाल विवाह, भिक्षावृत्ति, अमानवीय खेल (यथा बुल फाइटिंग, ऊँट दौड़ आदि) वे कार्य हैं, जिनके लिए महिलाओं और बच्चों की तस्करी की जाती है और इन्हें दूसरे देशों तक भी भेजा जाता है।

भारत जहाँ मानव तस्करी का एक बड़ा केन्द्र है, वहीं मानव तस्करी का रास्ता भी है। बांग्लादेश, नेपाल, यूक्रेन, रूस, बेलारूस आदि देशों से तस्करी किए गए बच्चों और महिलाओं को भारत के रास्ते अन्य देशों को भेजा जाता है। भारत में मानव तस्करी का अपराध दंड के दायरे में आता है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 23 में मानव तस्करी और बलात श्रम को दंडनीय घोषित किया गया है। संविधान के अनुच्छेद 24 में 14 वर्ष से कम उम्र के बालकों को फैक्टरी, खदानों तथा अन्य खतरनाक उद्यमों में नियोजित करने को संविधान विरुद्ध घोषित किया गया है। संविधान के मौलिक अधिकारों में भी अनेक ऐसे प्रावधान हैं, जो मानव तस्करी को अपराध घोषित करते हैं। भारतीय दंड संहिता की लगभग 20 धाराएँ ऐसी हैं, जो मानव तस्करी से संबंधित अपराधों के लिए दण्ड का प्रावधान करती हैं। राज्य सरकारों द्वारा भी इस दिशा में पहल करते हुए कानूनों का प्रणयन किया गया है। इन सबके बावजूद भारत में इस अपराध पर अंकुश न लग पाने के कारण अलग से कड़े कानून की आवश्यकता महसूस की गई, तदनुसार 'मानव तस्करी (निवारण, संरक्षण और पुनर्वास) विधेयक, 2018 तैयार किया गया, जो 26 जुलाई, 2018 को लोकसभा में ध्वनिमत से पारित भी हो गया। 'मानव तस्करी (निवारण, संरक्षण और पुनर्वास) विधेयक, 2018' एक व्यापक एवं सुचिंतित विधेयक है, जिसके कानून के रूप में प्रभावी होने के बाद मानव तस्करी पर अंकुश लगने की संभावना है। खास बात यह है कि इस विधेयक में राहत और पुनर्वास की बात भी कही गई है। यानी यह विधेयक रोकथाम, बचाव तथा पुनर्वास की दृष्टि से तस्करी समस्या का समाधान प्रदान करता है। इसके तहत पुनर्वास कोष का प्रावधान है, जिसका उपयोग पीड़ित की शारीरिक, मनोवैज्ञानिक और सामाजिक देखभाल के लिए होगा। इसमें उसकी शिक्षा, कौशल विकास, स्वास्थ्य देखभाल, मनोवैज्ञानिक समर्थन, कानूनी सहायता और सुरक्षित निवास आदि शामिल हैं। पीड़ित का पुनर्वास अभियुक्त के विरुद्ध आपराधिक कार्रवाई शुरू होने या

मुकदमे के फैसले पर निर्भर नहीं करेगा। मुकदमों की तीव्र सुनवाई हेतु जहाँ प्रत्येक जिले में विशेष अदालतें गठित की जानी हैं, वहीं समयबद्ध अदालती सुनवाई की व्यवस्था की गई है। इस विधेयक के तहत दोषसिद्ध होने पर न्यूनतम 10 वर्ष सश्रम कारावास से आजीवन कारावास की सजा का प्रावधान है तथा अर्थदंड एक लाख रुपये से कम नहीं होगा। इसमें पीड़ितों, गवाहों और शिकायतकर्ताओं की पहचान को गोपनीय रखने का प्रावधान भी है। यह विधेयक जिला, राज्य तथा केंद्र स्तर पर समर्पित संस्थागत ढाँचा बनाता है। यह तस्करी की रोकथाम, सुरक्षा, जाँच और पुनर्वास जैसे कार्यों के लिए उत्तरदायी होगा। इस विधेयक के अंतर्गत राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर संगठित गठजोड़ को तोड़ने के लिए संपत्ति की कुर्की, जब्ती तथा अपराध से प्राप्त धन को जब्त करने का प्रावधान है। यह विधेयक अपराध के पारदेशीय स्वभाव से भी व्यापक रूप से निपटता है।

राष्ट्रीय तस्करी विरोधी ब्यूरो विदेशों और अंतरराष्ट्रीय संगठन के अधिकारियों के साथ अंतरराष्ट्रीय तालमेल करेगा तथा जाँच में अंतरराष्ट्रीय सहायता देगा। साथ ही न्यायिक कार्यवाहियों में अंतर्राज्यीय एवं अंतरराष्ट्रीय वीडियो कांफ्रेंसिंग में सहायता भी देगा। इसमें कोई दो राय नहीं है कि मानव तस्करी एक वैश्विक चिंता है, जिससे अनेक दक्षिण एशियाई देश भी ग्रस्त हैं। इन देशों में भारत मानव तस्करी की रोकथाम के लिए व्यापक विधेयक तैयार करने वाला अग्रणी देश है। अब भारत मानव तस्करी के विरुद्ध दक्षिण एशियाई देशों का नेतृत्वकर्ता बनकर उभरेगा। इस विधेयक के कानून के रूप में प्रभावी होने के बाद भारत में मानव तस्करी पर अंकुश लगना तय है। इस घृणित अपराध की रोकथाम के लिए कुछ और प्रयास भी होने चाहिए। पहली आवश्यकता तो यह है कि इस अपराध से अधिक प्रभावित क्षेत्रों और राज्यों में व्यापक स्तर पर जागरूकता अभियान चलाया जाए तथा गरीबी उन्मूलन के अभियान चलाए जाएँ। आदिवासी एवं पिछड़े इलाकों में बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध कराने पर विशेष ध्यान दिया जाए। शोषण के उद्देश्य से लोगों की भर्ती, परिवहन, आश्रय या प्राप्ति को मानव तस्करी के रूप में जाना जाता है पीड़ित आमतौर पर बहुत गरीब, अशिक्षित, भोले, असुरक्षित और कमजोर होते हैं। मानव तस्करी शोषण में जबरदस्ती वेश्यावृत्ति, दासता, भिक्षावृत्ति, बाल सैनिकों के रूप में भर्ती आदि शामिल हैं। मानव तस्करी, तस्करी करने वाले लोगों से अलग है। अपने गंतव्य पर पहुंचने पर, तस्करी करने वाला व्यक्ति आमतौर पर मुक्त होता है। दूसरी ओर, मानव तस्करी के शिकार को गुलाम बनाया जाता है, और उनके ऋण बंधन की शर्तें अत्यधिक शोषणकारी होती हैं। तस्कर पीड़ित के मानवाधिकारों को छीन लेता है। कुछ अवैध व्यापारकर्ता अपने पीड़ितों को नियंत्रित करने के लिए डराने-धमकाने, दिखावटी प्रेम, अलगाव, धमकी और शारीरिक बल का उपयोग, ऋण बंधन, अन्य दुर्व्यवहार, यहां तक जबरन दवा खिलाने सहित जबरदस्ती और जोड़-तोड़ करने वाले हथकंडे अपनाते हैं। जो लोग दूसरे देशों में प्रवेश चाहते हैं उन्हें तस्करों द्वारा उठाया जा सकता है और यह सोचकर गुमराह किया जा सकता है कि सीमा पार तस्करी के बाद वे मुक्त हो जाएंगे।

कुछ क्षेत्रों, जैसे रूस, पूर्वी यूरोप, जापान, हांगकांग और कोलंबिया में तस्करी को बड़े, शक्तिशाली संगठनों द्वारा नियंत्रित किया जाता है। हालांकि, अधिकांश तस्करी छोटे समूहों के नेटवर्किंग द्वारा की जाती है। अवैध व्यापार किए गए लोग आमतौर पर किसी क्षेत्र में सबसे कमजोर और शक्तिहीन अल्पसंख्यक होते हैं। वे अक्सर गरीब क्षेत्रों से आते हैं जहां अवसर सीमित होते हैं। वे अक्सर जातीय अल्पसंख्यक होते हैं, और वे अक्सर शरणार्थी जैसे विस्थापित व्यक्ति होते हैं, हालांकि वे किसी भी सामाजिक पृष्ठभूमि, वर्ग या नस्ल से आते हैं। बच्चों की तस्करी में अक्सर माता-पिता की अत्यधिक गरीबी शामिल होती है। कर्ज चुकाने, या आय हासिल करने के लिए बच्चों को तस्करों को बेच सकते हैं, या उन्हें अपने बच्चों के लिए प्रशिक्षण और

बेहतर जीवन की संभावनाओं के बारे में धोखा दिया जा सकता है। पश्चिम अफ्रीका में, अवैध व्यापार किए गए बच्चों ने अक्सर एक या दोनों माता-पिता को खो दिया है। अनुकूलन प्रक्रिया, कानूनी या अवैध, के परिणामस्वरूप पश्चिम और विकासशील दुनिया के बीच शिशुओं और गर्भवती महिलाओं की तस्करी के मामले सामने आते हैं। महिलाएं, जो तस्करी की शिकार, 70 प्रतिशत से अधिक हैं, विशेष रूप से यौन तस्करी में शामिल होने का जोखिम है। संभावित अपहरणकर्ता अवसरों की कमी का फायदा उठाते हैं, अच्छी नौकरी या अध्ययन के अवसरों का वादा करते हैं, और फिर पीड़ितों को वेश्या बनने, अश्लील साहित्य या अनुरक्षण सेवाओं में भाग लेने के लिए मजबूर करते हैं। एजेंटों और दलालों के माध्यम से जो यात्रा और नौकरी की व्यवस्था करते हैं, महिलाओं को उनके गंतव्य तक ले जाया जाता है और नियोक्ताओं तक पहुंचाया जाता है। अपने गंतव्य तक पहुंचने पर, कुछ महिलाओं को पता चलता है कि उनके द्वारा किए जाने वाले काम की प्रकृति के बारे में उन्हें धोखा दिया गया है, अधिकांश को उनके रोजगार की वित्तीय व्यवस्थाओं और शर्तों के बारे में गुमराह किया गया है, और वे खुद को जबरदस्ती और अपमानजनक स्थितियों में पाते हैं, जहां से बचना मुश्किल और खतरनाक दोनों हैं।

एक महिला या लड़की का एक अवैध व्यापारकर्ता के प्रस्ताव को स्वीकार करने का मुख्य उद्देश्य अपने या अपने परिवार के लिए बेहतर वित्तीय अवसर हैं। कई मामलों में तस्कर शुरू में 'वैध' काम या अध्ययन के अवसर का वादा करते हैं। पेश किए जाने वाले मुख्य प्रकार के काम खानपान और होटल उद्योग में, बार और क्लबों में, मॉडलिंग अनुबंध आदि हैं। तस्कर अक्सर पीड़ितों को प्राप्त करने के साधन के रूप में विवाह, धमकी और अपहरण के प्रस्तावों का उपयोग करते हैं। ज्यादातर मामलों में महिलाएं वेश्यावृत्ति में चली जाती हैं। कुछ महिलाओं को पता है कि वे वेश्याओं के रूप में काम करेंगी, लेकिन उन्हें अपने गंतव्य देश की परिस्थितियों और के बारे में स्पष्ट जानकारी नहीं है। कई महिलाओं को झूठे विज्ञापनों का झांसा देकर देह व्यापार में धकेल दिया जाता है, जबकि कई का अपहरण कर लिया जाता है। एशिया, अफ्रीका और दक्षिण अमेरिका के हजारों बच्चों को हर साल वैश्विक देह व्यापार में बेचा जाता है। उनका अपहरण या अनाथ कर दिया जाता है, और कभी-कभी उन्हें वास्तव में उनके अपने परिवारों द्वारा बेच दिया जाता है। पुरुषों को भी अकुशल कार्य के लिए अवैध व्यापार किए जाने का जोखिम होता है जिसमें मुख्य रूप से कठिन श्रम शामिल होता है। तस्करी के अन्य रूपों में बंधुआ और स्वेट शॉप श्रम, जबरन विवाह और घरेलू दासता शामिल हैं। श्रम शोषण और यौन शोषण दोनों के लिए बच्चों की तस्करी भी की जाती है। कुछ क्षेत्रों में बच्चों को बाल सैनिक बनने के लिए मजबूर किया जाता है। यूनाइटेड स्टेट्स डिपार्टमेंट के आंकड़ों के अनुसार, "अनुमानित रूप से 600,000 से 820,000 पुरुषों, महिलाओं और बच्चों की अंतरराष्ट्रीय सीमाओं के पार हर साल तस्करी की जाती है, लगभग 80 प्रतिशत महिलाएं और लड़कियां हैं और 50 प्रतिशत तक नाबालिग हैं। " डेटा यह भी दर्शाता है कि बहुसंख्यक अंतरराष्ट्रीय पीड़ितों की व्यावसायिक यौन शोषण में तस्करी की जाती है। अवैध व्यापार की प्रकृति और कार्यप्रणाली में अंतर के कारण, सटीक सीमा अज्ञात है। अल्बानिया, मोल्दोवा, रोमानिया, रूस और बेलारूस और यूक्रेन जैसे उन्नत पूर्व 'पूर्वी ब्लॉक' देशों में महिलाओं और बच्चों के लिए तस्करी के प्रमुख स्रोत देशों के रूप में पहचाना गया है। युवा महिलाओं और लड़कियों को अक्सर पैसे और काम के वादे के द्वारा धनी देशों में ले जाया जाता है और फिर उन्हें यौन दासता में डाल दिया जाता है। एक अनुमान के अनुसार, दुनिया भर में हर साल वेश्यावृत्ति के लिए तस्करी करने वाली दो-तिहाई महिलाएं पूर्वी यूरोप से आती हैं, तीन-चौथाई ने पहले कभी वेश्याओं के रूप में काम नहीं किया है। प्रमुख गंतव्य पश्चिमी यूरोप (जर्मनी, नीदरलैंड, इटली, स्पेन, ग्रीस, यूके), मध्य पूर्व (इजराइल, तुर्की, संयुक्त

अरब अमीरात), एशिया, रूस और संयुक्त राज्य अमेरिका हैं। मध्य और पूर्वी यूरोप की अनुमानित 500,000 महिलाएं अकेले यूरोपीय संघ के देशों में वेश्यावृत्ति में काम कर रही हैं।

संयुक्त राज्य अमेरिका में हर साल लगभग 14,000 लोगों की तस्करी की जाती है, हालांकि तस्करी अवैध होने के कारण, सटीक आंकड़े मुश्किल हैं। मैसाचुसेट्स स्थित ट्रैफिकिंग विक्टिम्स आउटरीच एंड सर्विसेज नेटवर्क के अनुसार, 2005 में मानव तस्करी के 55 प्रलेखित मामले मैसाचुसेट्स में दर्ज किए गए थे। 2004 में, रॉयल कैनेडियन माउंटेड पुलिस (आरसीएमपी) ने अनुमान लगाया कि कनाडा में सालाना 600-800 व्यक्तियों की तस्करी की जाती है और 500-2,200 व्यक्तियों की कनाडा के माध्यम से संयुक्त राज्य अमेरिका में तस्करी की जाती है। यूनाइटेड किंगडम में, 1998 में 70 से अधिक महिलाओं को वेश्यावृत्ति में तस्करी के लिए जाना जाता था और गृह कार्यालय ने माना कि यह पैमाना अधिक है क्योंकि समस्या छिपी हुई है और शोध का अनुमान है कि वास्तविक आंकड़ा 1,420 महिलाओं तक हो सकता है, जिनकी यूके में तस्करी की गई थी। इसी अवधि के दौरान अफ्रीका, दक्षिण एशिया और उत्तरी अमेरिका में लोगों की तस्करी बढ़ रही है। रूस यौन शोषण के उद्देश्य से विश्व स्तर पर महिलाओं की तस्करी का एक प्रमुख स्रोत है। 50 से अधिक देशों में रूसी महिलाएं वेश्यावृत्ति में हैं। इजरायल, चीन, जापान या दक्षिण कोरिया में हर साल हजारों रूसी महिलाएं वेश्या बन जाती हैं।

रूस क्षेत्रीय और पड़ोसी देशों से और खाड़ी राज्य, यूरोप, एशिया और उत्तरी अमेरिका में यौन और श्रम शोषण के लिए तस्करी किए गए व्यक्तियों के लिए महत्वपूर्ण गंतव्य और पारगमन देश है। गरीबी से त्रस्त मोल्दोवा में, जहां महिलाओं की बेरोजगारी दर 68 प्रतिशत तक है और एक-तिहाई कार्यबल विदेश में रहते हैं और काम करते हैं, विशेषज्ञों का अनुमान है कि सोवियत संघ के पतन के बाद से 200,000 से 400,000 महिलाओं को बेच दिया गया है। यूक्रेन में, 2001-03 में गैर सरकारी संगठन, 'ला स्ट्राडा' यूक्रेन द्वारा किए गए एक सर्वेक्षण में, यूक्रेन से बाहर तस्करी की जा रही 106 महिलाओं के नमूने के आधार पर पाया गया कि 3 प्रतिशत 18 बर्ष से कम की थी। अमेरिकी विदेश विभाग ने 2004 में रिपोर्ट किया था। अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन का अनुमान है कि रूस में 50 लाख अवैध अप्रवासियों में से 20 प्रतिशत जबरन मजदूरी के शिकार हैं, जो तस्करी का एक रूप है। रूस की सरकार ने तस्करी से निपटने के लिए कुछ प्रयास किए हैं, लेकिन तस्करी के उन्मूलन के लिए न्यूनतम मानकों का पालन नहीं करने के लिए भी आलोचना की गई है। बाल तस्करी के अधिकांश मामले एशिया में हैं, हालांकि यह एक वैश्विक समस्या है।

एशिया में, जापान तस्करी की गई महिलाओं के लिए प्रमुख गंतव्य देश है, विशेष रूप से फिलीपींस और थाईलैंड से। अमेरिकी विदेश विभाग ने 2001 के बाद से हर साल जापान को 'टियर 2' या 'टियर 2' वॉचलिस्ट' देश के रूप में दर्जा दिया है। वर्तमान में अनुमानित 300,000 महिलाएं और बच्चे पूरे दक्षिण पूर्व एशिया में देह व्यापार में शामिल हैं। इराक युद्ध से भागने वाली कई इराकी महिलाएं वेश्यावृत्ति की ओर रुख कर रही हैं, जबकि अन्य को विदेशों में सीरिया, जॉर्डन, कतर, संयुक्त अरब अमीरात, तुर्की और ईरान जैसे देशों में तस्करी कर लाया जाता है। अकेले सीरिया में, अनुमानित 50,000 इराकी शरणार्थी लड़कियों और महिलाओं, जिनमें से कई विधवाएं हैं, को वेश्यावृत्ति के लिए मजबूर किया जाता है। कुंवारी लड़कियों के लिए उच्च कीमतों की पेशकश की जाती है। भारत में 200,000 से अधिक नेपाली लड़कियों, जिनमें से कई 14 वर्ष से कम हैं, को यौन दासता के लिए बेच दिया गया है। नेपाली महिलाओं और लड़कियों, विशेष रूप से कुंवारी लड़कियों को उनकी हल्की त्वचा के कारण भारत में पसंद किया जाता है। घाना के कुछ हिस्सों में,

एक परिवार को अपराध के लिए दंडित किया जा सकता है, जिसके लिए पीड़ित परिवार के भीतर एक यौन दासी की सेवा करने के लिए एक कुंवारी महिला को सौंपना पड़ता है। इस उदाहरण में, महिला को "पत्नी" की उपाधि प्राप्त नहीं होती है।

गुलामी की इस प्रणाली में, जिसे कभी-कभी टोगो और बेनिन में ट्रोकोसी (घाना में) या वूडूसी कहा जाता है, या अनुष्ठान दासता, युवा कुंवारी लड़कियों को पारंपरिक मंदिरों में दास के रूप में दिया जाता है और पुजारी द्वारा धर्मस्थल के लिए मुफ्त श्रम प्रदान करने के अलावा यौन रूप से उपयोग किया जाता है।

तस्करी के कुछ कारण हैं:

(i) रोजगार के अवसरों की कमी (ii) संगठित अपराध और संगठित आपराधिक गिरोहों की उपस्थिति (iii) सरकार में भ्रष्टाचार राजनैतिक अस्थिरता (iv) आर्थिक विषमताएं (v) सामाजिक भेदभाव (vi) क्षेत्रीय असंतुलन (vii) मांग से प्रेरितः चूंकि मेजबान देशों में वेश्याओं और अन्य प्रकार के श्रम के लिए मांग अधिक है, इसलिए जो लोग हैंडलर बनना चाहते हैं उनके लिए एक बहुत ही लाभदायक बाजार उपलब्ध है। (viii) उचित पुनर्वास और पुनर्वास पैकेजों के बिना मेगा परियोजनाओं के कारण समुदायों को उखाड़ना। (ix) अवैध व्यापार करने वालों के विरुद्ध अपर्याप्त दंड तथा (x) गरीबों का बढ़ता अभाव। सीमाओं और उन्नत संचार प्रौद्योगिकियों द्वारा लोगों के अवैध व्यापार को सुगम बनाया गया है। ड्रग्स या हथियारों के बदले, लोगों को कई बार "बेचा" जा सकता है। एशियाई बाजारों के खुलने, सोवियत संघ के विघटन और पूर्व यूगोस्लाविया के पतन ने इसमें योगदान दिया है। 2000 में संयुक्त राष्ट्र ने ट्रांसनेशनल ऑर्गनाइज्ड क्राइम के खिलाफ कन्वेंशन को अपनाया, जिसे पलेर्मो कन्वेंशन भी कहा जाता है, और दो पलेर्मो प्रोटोकॉल (i) व्यक्तियों, विशेष रूप से महिलाओं और बच्चों में अवैध व्यापार को रोकने, दबाने और दंडित करने के लिए प्रोटोकॉल तथा (ii) भूमि, समुद्र और वायु द्वारा प्रवासियों की तस्करी के खिलाफ प्रोटोकॉल। सरकारी, अंतरराष्ट्रीय संघों और गैर-सरकारी संगठनों ने मानव तस्करी को विभिन्न स्तरों पर सफलता के साथ समाप्त करने का प्रयास किया है। मानव तस्करी से निपटने के लिए की गई कार्रवाईयां हर सरकार में अलग-अलग होती हैं। कुछ ने विशेष रूप से मानव तस्करी को अवैध बनाने के उद्देश्य से कानून पेश किया है। सरकारें विभिन्न राष्ट्रों की कानून प्रवर्तन एजेंसियों और गैर-सरकारी संगठनों (एनजीओ) के साथ सहयोग की प्रणाली भी विकसित कर सकती हैं। जागरूकता के स्तर को बढ़ाने के लिए सरकारें जो अन्य कदम उठा सकती हैं। यह तीन रूपों में हो सकता है (i) संभावित पीड़ितों के बीच जागरूकता बढ़ाना, विशेष रूप से उन देशों में जहां मानव तस्कर सक्रिय हैं, (ii) पुलिस, सामाजिक कल्याण कार्यकर्ताओं और आप्रवास अधिकारियों के बीच जागरूकता बढ़ाना, और (iii) उन देशों में जहां वेश्यावृत्ति है कानूनी या अर्ध-कानूनी, वेश्यावृत्ति के ग्राहकों के बीच जागरूकता बढ़ाना, मानव तस्करी के शिकार के संकेतों की तलाश करना।

संदर्भ

- India's human trafficking laws and policies and the UN trafficking protocol: Achieving clarity. Policy brief feb,2015 (http://www.jgu.edu.in/chlet/pdf/India-as-Human-Trafficking-Laws-Report-Book
- United Methodist women's work to end human trafficking by Johnson, S.

(http://www.unitedmethodistwomen.org/ht/packet.aspx,

- Beyond border security: feminist approaches to human trafficking by Jennifer K.lobasz (http://jenniferlobasz.typepad.com/files/lobasz-2009.pdf
- Vohra,T.(2009). Trafficking in women and children. Pacific publication: Delhi.
- गुप्ता, एस. पी. एवं गुप्ता, ए. (2017). अनुसंधान संदर्शिका सम्प्रत्य, कार्यविधि एवं प्रविधि, इलाहाबादः शारदा पुस्तक भवन पब्लिकेशन एण्ड़ डिस्ट्रीब्यूटर्स।
- पाण्डे, टी. एवं पाण्डे, एस. (2009). भारत में सामाजिक समस्यायें. नई दिल्लीः टाटा मेकग्रा हिल एजुकेशन प्राइवेट लिमिटेड।
- विसेन्ट, जी. एवं अन्य (2020). जर्नल ऑफ द रॉयल स्टेटिकल सोसाइटी, वॉल्यूम- 183(2), पृष्ठ सं. 655-679.
- सतपथी, वी. (2008). आश्रित वर्गों के मानव अधिकारः दलित, आदिवासी, महिलाएं, अल्पसंख्यक और असंगठित श्रमिक. नई दिल्लीः विवा बुक्स प्राइवेट लिमिटेड, पृष्ठ सं. 151.

●●●●

मानव अधिकार : अमृतकाल की अमृत उपलब्धियाँ

डॉ. कन्हैया त्रिपाठी*

सौभाग्य का सुख असीम होता है। मनुष्य जन्म सौभाग्य से मिलता है। इसलिए मनुष्य जन्म मिलना ही हमारा सौभाग्य है क्योंकि हम ईश्वर की सबसे सुन्दर कृति हैं। हम मनुष्यों ने इस अलौकिक संसार को बहुत गंभीरता से समझा है। हमने अपना सौभाग्य स्वयं जैसे गढ़ा हो। किन्तु दुर्भाग्य भी सौभाग्य की डोर छूटते ही हमारा पीछा कर लेता है। उसकी भी जिम्मेदार मनुष्य सभ्यता रही है। इन सभ्यताओं के संघर्ष ने मनुष्यता और मानव अधिकारों पर समय-समय पर अतिक्रमण किया है। इन्हीं वजहों से हम मानवाधिकारों का हनन भी होते हुए पाते हैं। दुनिया के संघर्षों का इतिहास इस बात के प्रमाण हैं कि सभ्यताओं के संघर्ष ने मनुष्य एवं मनुष्यता को प्रश्नांकित भी किया है। हमने स्वयं मनुष्यों के लिए अभिशाप और वरदान के बीज बोये हैं और काटे हैं। इसलिए हम जिन्हें प्रश्नांकित कर रहे हैं, वे भी मनुष्य थे और जिन्हें अपने लिए वरदान मान रहे हैं, वह भी मनुष्य थे। निःसंदेह मनुष्यों द्वारा मनुष्यों के लिए जिन सभ्यताओं को समृद्ध किया गया, चाहे वह सकारात्मक रही हों या नकारात्मक, उन सभ्यताओं के पीछे मनुष्यों की प्रवृत्तियाँ और उनकी इच्छाएं हैं। चाहे वह संचय की प्रवृत्ति हो, चोरी की प्रवृत्ति हो, श्रेष्ठता-बोध की महत्त्वाकांक्षाएं हों या आधिपत्य की प्रवृत्ति हो।

हमारा भारत सभी देशों में श्रेष्ठ और विश्वगुरू की श्रेणी में अपनी उपस्थिति अभिव्यक्त करता है। हमारी सनातन परम्परा में व्याप्त मंत्र और ज्ञान की अनुगूँज हमें महान बनाती है। हमारे वेद, पुराण, उपनिषद, ऋचाएं और पंचतंत्र की कहानियों को हम पढ़कर देखें, सबमें करुणा, प्रेम, दया, सहिष्णुता और सभी में ईश्वर का स्वरूप देखने की बात की गई है। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के 28वें स्थापना दिवस को संबोधित करते हुए प्रधान मंत्री श्रीयुत नरेन्द्र मोदी ने कहा इस बात का ज़िक्र किया था कि, "हमारे यहाँ सदियों से शास्त्रों में बार – बार इस बात का जिक्र किया जाता है। आत्मनः प्रति-कूलानि परेषाम् न समाचारेत्। यानी, जो अपने लिए प्रतिकूल हो, वो व्यवहार दूसरे किसी भी व्यक्ति के साथ नहीं करें।"[2] अहिंसक जीवन-मूल्य को अपनाने पर बल दिया गया है। हमारे उपनिषद में कहा गया है-

ईशा वास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम् ॥[3]

* *सहायक प्रोफेसर, डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर, मध्य प्रदेश*

हमारी संस्कृति कहती है कि हम त्याग के गीत गाते रहे हैं। हमने ही कहा- 'सबै भूमि गोपाल की'[4] और 'वसुधैव कुटुम्बकम'। [5] हमने सभी भुवनों में शांति की कामना की। हम उस सभ्यता के आग्रही हैं जिसमें 'सर्वे भवंतु सुखिनः'[6] की बात की गयी और जब भारत ने अपना संविधान बनाया तो उसमें कहा- 'हम भारत के लोग'[7]।

इन सभी आदर्शों से अनुप्राणित हमारी सभ्यता का दीर्घकालीन इतिहास है। भारत की आज़ादी के बाद का इतिहास जिसका हम भारतवासी 'अमृत महोत्सव' मना रहे हैं उस देश के लोगों ने कहा- 'हिन्दू, मुस्लिम, सिख और ईसाई हम भारत के भाई-भाई'। हम उस देश के संवाहक बने हुए हैं जिसने स्वतंत्रता, गरिमा, बंधुता के यशोगान से रागात्मक-सहिष्णु सभ्यता को अभिव्यक्त करके दुनिया में भारत का गौरव बढ़ाया। हमारे देश की यह बहुत अच्छी परम्परा रही जिसमें –सत्य, अहिंसा, प्रेम, करुणा, दया, सहयोग, समादर,अभिवादन और शील का स्वभाव प्रकृति से अनुप्राणित है। दुनिया की सभी सभ्यताओं ने सभी मूल्यों को अपनी सुविधा से अपनाया लेकिन भारत ने इसे मूल्य कहा। जीवन-पद्धति का हिस्सा माना। आचार-विचार में शामिल किया। तर्क हमारे यहाँ जीवन के विभिन्न मूल्यों को परखने के लिए उपयोग किये गए लेकिन दुनिया तर्कों की आग्रही रही। हमने तर्क को भी महत्व दिया तो जीवन-रक्षा में इसकी उपयोगिता को उतने ही स्तर तक आने दिया जिससे किसी की गरिमा, स्वतंत्रता, सुरक्षा और आत्मबोध को हानि न हो। हमारी इसी वजह से भावनात्मक राग-अनुराग की पद्धति लगाव से भी जुडी हुई है। कहना अतिश्योक्ति न होगा कि परिवार जैसी संस्था हमारे लगाव के सबसे बड़े उदहारण हैं। निःशक्त, वृद्ध, स्त्री की सेवा को भी हमने जीवन-मूल्य के रूप में लिया।

'सेवा' का भी हमारे देश में मानव अधिकारों की रक्षा में अहम योगदान है। हम कभी अलग होकर प्रसन्न नहीं रह सकते। हम जुड़ाव में विश्वास करने वाले लोग हैं। हम अनुभूति में विश्वास करने वाले लोग हैं।

अभिवादनशीलस्य नित्यं बृद्धोपसेविनः।
चत्वारि तस्य वर्धन्ते आर्यु विद्या यशो बलम्।[8]

यह दुनिया के किसी शास्त्र में नहीं कहा गया है। यह भारत के शास्त्रों का गान है। अनुभूति से हम मनुष्य, जीव-जंतु, प्रकृति एवं ईश्वर से साक्षात्कार करना जीवन-आनंद का विषय समझते हैं। हम भारतीय लोग इसी में सच्चिदानंद की खोज करते हैं। इसलिए भारतीय मानव अधिकार तो दर्शन है और तात्विक है। जहाँ तात्विक अनुभूति नहीं वे मानव अधिकारों की रक्षा क्या करेंगे? जो मशीनीकृत, तार्किक और तकनीकी जीवन की कामना करते रहे हैं मानवाधिकारों का हनन वहीँ सबसे ज्यादा हुआ है। पश्चिम के विभिन्न देशों की ओर देखें वे औद्योगिक-सभ्यता, मशीनीकृत-सभ्यता और उपभोगवादी संस्कृति में इस प्रकार फंसते जा रहे हैं कि वे स्वतः अपने लिए, अपनी आने वाली पीढ़ी के लिए अँधेरे का आमंत्रण कर रहे हैं। वे जीवन को व्यापार के लिए उपयोगी मानते हैं लेकिन हमने जीवन जीने के लिए तात्विक और ईश्वरीय अनुभूतियों को सही माना।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी का आगमन भारत में व्यापर के लिए हुआ और उन व्यापारियों ने हमारे देश के जन-जीवन को प्रभावित किया। हमें छिन्न-भिन्न किया। हमारी संस्कृति को प्रभावित किया। अतिक्रमित किया। हमारी निजता और स्वतंत्रता को मिट्टी में मिला दिया। हमारे देश के स्वाधीनता सेनानियों की हम जय करें जिनके त्याग, बलिदान और समर्पण से हमें 15 अगस्त 1947 को आज़ादी मिली। हम उसी आज़ादी का अमृत महोत्सव उन अमर समर्पित सपूतों के त्याग को स्मरण के लिए अनुभूति का हिस्सा बना रहे हैं। उस

परिप्रेक्ष्य को पुनश्च समझने का आह्वान कर रहे हैं क्योंकि अधिकांश की रक्षा के लिए स्वतः का बलिदान इसमें जुड़ा हुआ है। जब ऐसा होता है तो हम अपने ध्येय में यह मानते हैं कि हम अपनी और आने वाली पीढ़ियों के मानव अधिकारों की रक्षा कर लेंगे। यह हमारी सनातन दर्शन की दार्शनिकी है कि हम सत्ता में विश्वास करते हैं और आने वाली पीढ़ी के भी मानव अधिकारों को सुरक्षित रखने की कामना करते हैं, उन्हें गरिमा प्रदान करते हैं। हमारा त्याग आने वाली पीढ़ी के लिए आशीष बनता है, वरदान साबित होता है। हम सतत सभ्यता में इस प्रकार अपने जीवन की आहुति भी देने से नहीं कतराते।

अब सतत विकास लक्ष्य-2030 जैसी संकल्पनाएँ आ रही हैं। हम तो सबमें अपने सुख की खोज करते हुए सहिष्णुभाव से पृथ्वी की शांति के लिए, आकाश की शांति के लिए, वायु और अग्नि की भी शांति के लिए कामना करते रहे हैं।[10] हमारे लिए इसलिए आज़ादी का अमृत महोत्सव एक महापर्व है, प्रदर्शन नहीं। अनुभूति है, दिखावा नहीं। भारत सरकार ने इसीलिए अपने संविधान में हमेशा प्रतिबद्धता दर्ज की। प्रत्येक तबके का ध्यान रखा। हमारी प्रतिबद्धता ही हमारी सेवा बनी। भारत ने राज्य के रूप में सेवा को सबकी प्रसन्नता का टूल्स-माध्यम माना। यह प्रसन्नता ही तो हमारे मानव अधिकारों की भाषा में 'हैपीनेस इंडेक्स' को अभिव्यक्त करती है। हम खुशियाँ हमारी ग्राम-पंचायतों, न्याय-पंचायतों से लेकर संसद तक इस प्रकार प्रवाहित करना चाहते हैं ताकि अंतिम छोर में बैठा व्यक्ति भी गरिमामय बन सके। हम भूख, गरीबी और अन्य चुनौतियों को बहुत संजीदगी से लेते रहे हैं। हमारी पंचायतों में पांच किलो अनाज प्रति-व्यक्ति इसलिए दिया जा रहा है जिससे कोई भूख से न मरे। भूखा न सोये। हमारे देश में स्वच्छता अभियान पर बल दिया जा रहा है ताकि हम अपनी पृथ्वी स्वस्थ एवं स्वच्छ रखें। हमारे देश में नदियों को माँ सदृश सम्मान देकर नमामि गंगे अभियान चलाया जा रहा है, यह हैं हमारी-अमृतकाल की अमृत उपलब्धियां। पढ़ना-लिखना और सृजन से जोड़कर हमारे देश में गुणवत्तापूर्ण रोजगार की कामना की जाती रही है। हमारी शिक्षाओं में इसलिए कौशल-विकास को महत्व दिया जा रहा है। यह है हमारी अमृतकाल की अमृत उपलब्धियां। हमारे जेलों में भी कैदियों की गरिमा को ध्यान रखा जाता है। उन्हें सुधरने का अवसर दिया जा रहा है और मुख्यधारा में सम्मिलित होने के लिए मनो-मस्तिष्क विकसित करने का यत्न किया जाता है-यह भारत की उस संवेदना को दर्शाता है जिसमें भारतीय घने अँधेरे से निकलकर मनुष्यता में सम्मिलित होने की आकांक्षा रखते हैं।

आज़ादी के अमृतकाल जिसमें हमारे 75 वर्ष के लोकतंत्र की शान है, हमारी प्रगति है, प्रतिबद्धताएं हैं और हमारी खूबसूरत पहचान है। जिसमें हमारे पूर्वजों का त्याग-समर्पण-आहुति की अमर गाथाएँ हैं और जिससे भारतीय अपने पूर्वजों पर अभिमान करते हैं उसको हम एक ऐसे अवसर के रूप में देख रहे हैं कि यह हमारा एक नया प्रस्थान-बिंदु है। हम उस भारत को गढ़ने के संकल्प के लिए अमृतकाल की अमृत उपलब्धियों को अपनी मनुष्य बिरादरी में साझा कर रहे हैं ताकि हमारे लोग और तन्मय होकर मनुष्यता की संस्कृति को समृद्धता प्रदान कर सकें। हम नवोन्मेषी होकर भी अपने प्राचीन, अर्वाचीन सांस्कृतिक यात्रा से सीख ले रहे हैं ताकि भविष्य को संवार ले जाएँ। हम अपने इतिहास पर गर्व करें और आने वाले जीवन-जगत को प्रतिष्ठा दें। आज़ादी के 75वें उत्सव को हम मानवाधिकारों की दृष्टि से कितना समझ रहे हैं? मनुष्यों के अधिकारों को कितना सुरक्षित और संरक्षित कर पा रहे हैं यह हमारे लिए चुनौती है। यह चुनौती इसलिए है कि हमारी संरचनात्मक वैविध्य ने हमारे जीवन को उत्सव के रूप में दिया है लेकिन हमारी जीवन जीने की जटिलताएँ कहीं संसाधन की मांग कर रही हैं तो कहीं स्वास्थ्य, शिक्षा और जीवन की उमंग को। यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगा कि भारत अपनी विविधता में अपने उमंग को खोजता रहा है। उसकी चुनौतियाँ कभी जलवायु बन जाती हैं तो कभी सरकारों की पहुँच का अभाव। लेकिन इससे हम निजात भी पाए हैं। सबके लिए छत,

बिजली, पानी, खाद्यान की आपूर्ति की प्रतिबद्धताएं ही हमारी रही हैं जिससे हम एक उन्नत भारत बनाने की दिशा में बढ़ चुके हैं। हमारे यातायात के साधनों में बढ़ोतरी हुई है। हमने समुद्र से भी मनुष्य जीवन की सुरक्षा के लिए- विभिन्न द्रव्य को पहचानकर उपयोग में लाने का प्रयास किया है। प्रकृति से मनुष्य-मैत्री के रूप में भी बढ़ी है। प्राकृतिक-औषधियों से जीवन को दीर्घायु बनाने के लिए कार्य किया है। दुनिया की सबसे बड़ी चिंता यह है कि हम स्वयं को कभी प्रश्नांकित नहीं करते लेकिन ऐसा नहीं है। भारत इसमें भी पीछे नहीं है। यहाँ राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग जब से अस्तित्व में आया है, उसने मनुष्यता के लिए, मनुष्यों की गरिमा के लिए, मनुष्यों की खुशहाली को कायम रखने के लिए कार्य किया है। और इस क्रम में जब-जब किसी घटना, समस्या या हमारे व्यवहारों में कोई कमी दिखी उसे प्रश्नांकित किया है। सुधार लाने के लिए सरकारों को चेताया है और आवश्यकता अनुसार दंडात्मक कार्यवाही सुनिश्चित करने से पीछे नहीं हटा है। राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग के बहुत से प्रतिवेदन, वार्षिक रिपोर्ट्स हमारे लिए ऐसे साक्ष्य हैं जिसका अवलोकन करके हम यह स्वतः समझ सकते हैं। राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग या राज्य मानव अधिकार आयोग के स्वतः संज्ञान लिए गए दस्तावेज़ भी इसके जीवंत होने के प्रमाण हैं।

वैभवशाली भारत बनाने के लिए पूरा भारत आज़ादी के अमृत पर्व पर अपनी प्रतिबद्धता दर्शा रहा है। यह तभी हो सकता है जब भारत के लोग अपनी समग्र ऊर्जा भारत के लोगों को सुखी बनाने में करेंगे। भारत के लोगों का उत्सव सच्चे मायने में तभी संभव हैं जब हमारे मानव अधिकार सुरक्षित, संरक्षित और गरिमामय रहेंगे। सामाजिक-राजनीतिक-आर्थिक और सांस्कृतिक अधिकार से सभी संतुष्ट रहेंगे। भारत के लोगों की जयघोष ही-सबके कल्याण में अंतर्विन्यस्त है, तो सोचिये कि आज़ादी के अमृत पर्व पर हमारा लक्ष्य, ध्येय और कर्त्तव्य क्या हो सकते हैं। कोई भी राष्ट्र तभी उन्नति के पथ पर आगे बढ़ता है जब उस देश के लोग त्याग, करुणा, प्रेम, सेवा और शील को जीवन का आधार बनाकर हर चेहरों पर मुस्कान देखने की कामना करते हैं। अपनी समस्त ऊर्जा सकारात्मक सोच, कर्म और रचनात्मकता में लगाते हैं। वे राष्ट्र ही महान बन पाते हैं जो जागृत हैं और जिज्ञासा, ज्ञान और रचनाशीलता के लिए जागते हैं। वही लोग सुखी होते हैं जो दूसरों के दुःख को बाँट लेते हैं। वे ही दूसरों के लिए आइकॉन बनते हैं जो अपने जीवनकाल में अनेक लोगों को जिंदगी देते हैं। भारत के मानव अधिकार की अमृत उपलब्धियां यही हैं कि यहाँ के लोगों ने मानव अधिकारों को संवेदना, कर्म और लगाव के साथ प्रतिष्ठित किया। वैयक्तिक, सामूहिक और सरकार की सभी की संवेदनाएं एक हैं-हम भारत के लोगों की कामनाएं भी एक हैं-सबका कल्याण।

हम आज नए भारत का जब सृजन कर रहे हैं और आज़ादी का अमृत पर्व भी आयोजित कर रहे हैं तो इसके पीछे भी यह उद्देश्य है कि अतीत से सीख लें और आगंतुक का अभिनन्दन कुछ नए अंदाज़ में करें। हम मानव-अधिकारों की उस काव्यात्मक संकल्पना के पथिक बनने जा रहे हैं जिससे हम वैश्विक स्तर पर भारत की छवि और उत्कृष्ट करेंगे। नया भारत युवाओं, महिलाओं, किसान-मजदूर, गरीब-अमीर, वंचितों और देसज लोगों, वृद्धों, दिव्यंगों, सीमांत के रहवासियों सबकी सहभागिता पर आधारित है। सर्वसमावेशी और सार्वभौमिक मूल्यों पर आधारित भारत की मनसा नए भारत में इस प्रकार की है कि सबका साथ-सबका विकास-सबका-विश्वास-और सबकी ख़ुशी को प्रतिबिंबित करे। जब संयुक्त राष्ट्र मानव अधिकारों का सार्वभौम घोषणा-पत्र तैयार हुआ तब भी भारत ने सक्रिय भूमिका निभायी। जब दुनिया भर में विभिन्न कोने में युद्ध, अस्थिरता, आक्रोश, विवाद, बाज़ारवादी संस्कृति, उपभोगवादी संस्कृति और असंवेदनशील लोगों की संख्या बढ़ रही है, मूल्यों का स्खलन हो रहा है तो ऐसे 'तत्वों' और 'व्यवस्थाओं' को मुख्यधारा में लाने की कोशिश करने को भारत प्रतिबद्ध है। नए भारत का संकल्प है हम पृथ्वी के सभी लोगों के प्रगति, कल्याण

और जुड़ाव के लिए कार्य करेंगे चाहे वह एसडीजी-2030 में प्रतिभागिता करके हो चाहे, जलवायु के मुद्दे को बेहतर बनाने हेतु कार्यसंस्कृति को विकसित करके। भारत चाहता है कि हमारी सहभागिता सुनिश्चित हो, हम सदैव सक्रिय और संवेदनशील राष्ट्र की भांति कार्य करें जिसमें सेवा की भावना से भारत अपनी भागीदारी चाहता है।

अमृतकाल की मानवाधिकार के लिए अमृत उपलब्धियाँ भी हमारे लिए त्याग की भावना से ओतप्रोत है। भारत अपनी भूमि पर रह रहे लोगों की नवीनता, मौलिकता, सतता को कृत्रिम सोच से नहीं पाना चाहता बल्कि कर्मयोग और ज्ञानयोग के माध्यम से अर्जित करना चाहता है जो संविधान की गरिमा के अनुकूल हो और जिसमें सबकी गरिमा सन्निहित हो। भारत अपने नेतृत्वकर्ताओं से सदैव प्रेरणा लेता रहा है चाहे वह आज़ादी के समय के सिपाही हों या नए भारत के सेवक। हम अपने आत्मबोध के साथ भारत की उस पहचान को अभिव्यक्त करने की दिशा में अग्रसर हैं जो सबके बीच अपनी उपस्थिति बनाकर सबमें लोकप्रिय हो सके। इस बात को अभिव्यक्त करना कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी कि आज़ादी के बाद की विकास-यात्रा भारत में गरिमामय तरीके से लोकतान्त्रिक मूल्यों को जीवंत और मजबूत बनाने में रही। इसी त्याग को अपनी गुजरात यात्रा के दौरान राष्ट्रपति ने अमृत महोत्सव पर गुजरती स्वाधीनता सेनानियों को स्मरण करते हुए कहा था- उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक में, दादाभाई नौरोजी और फिरोज शाह मेहता जैसी हस्तियों ने भारतीयों के अधिकारों के लिये आवाज उठाई थी। फलस्वरूप महात्मा गांधी के नेतृत्व में भारत स्वतंत्रता की पराकाष्ठा को पहुंचा।[11] हमारी असीम सुहृद संवेदना और परिपक्व हो उन मूल्यों का अभिवादनभाव से हमारी आत्मा स्वीकार करती है क्योंकि हमारे देश की अमृतमय उपलब्धि यह भी है कि हम सभी मनुष्यों में सर्वदा ईश्वरीय गुण और ईश्वर की उपस्थिति मानते हैं। पूर्व राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद ने पुरी में गौड़ीय मठ और मिशन के संस्थापक श्रीमद भक्ति सिद्धांत सरस्वती गोस्वामी प्रभुपाद की 150वीं जयंती के अवसर पर कहा और वह आत्मसात करने लायक है कि श्री चैतन्य महाप्रभु का कहना था कि मनुष्य को घास से भी खुद को छोटा समझकर नम्र भाव से ईश्वर का स्मरण करना चाहिए। व्यक्ति को एक पेड़ से भी अधिक सहिष्णु होना चाहिए, अहंकार की भावना से रहित होना चाहिए और दूसरों को सम्मान देना चाहिए। मनुष्य को सदैव ईश्वर का स्मरण करते रहना चाहिए।[12] हमारे संतों की ऐसी भावना रही तो हमारी पृष्ठभूमि समझी जा सकती है। हमारे अतीत को समझा जा सकता है और अमृत महोत्सव पर भारत की भावना से उपजी मानवाधिकारों की अमृत उपलब्धियों का आंकलन किया जा सकता है। इसलिए बिना किसी ग्लानिभाव के हमारी संवेदनाएं प्रखर होकर मधुमय गान करती हुईं मनुष्यता और मानवाधिकारों के संवर्धन की कामना करती हैं। संयुक्त राष्ट्र महासभा सत्र 77 के अध्यक्ष चबा कोरोसी ने कहा, "हमें अपने संयुक्त रूप से सहमत लक्ष्यों, संकल्पों और प्रतिबद्धताओं की पूर्ति के लिये, और ज़्यादा बेहतर काम करना होगा।"[13] यह एक अंतरराष्ट्रीय पहल है और इसे हमें गंभीरता से लेना चाहिए। आज़ादी के अमृत पर्व पर हम अपनी अनेक भविष्य की उपलब्धियों हेतु संकल्पबद्ध होकर भारत को सुनहरे भविष्य की ओर ले जा सकते हैं।

सन्दर्भ एवं टिप्पणी:

1. राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के 28वें स्थापना दिवस को प्रधान मंत्री श्रीयुत नरेन्द्र मोदी जी के अभिभाषण से (https://pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=1763463)
2. वही
3. एक दो

4. भूदान डायरी; विनोबा विचार प्रवाह: सबै भूमि गोपाल की- सर्वोदय जगत (www.arvodayajagat.com/bhudan-diary-sabai-bhumi-gopal-ki/)
5. हमारी इसी संस्कृति का दूसरा आयाम है वसुधैव कुटुंबकम। हम कहते हैं वर्ल्ड इस फैमिली। लेकिन कुछ वर्ष पहले करीब 20-25 वर्ष पहले एक नया आयाम आया अंतरराष्ट्रीय जगत में ग्लोबलाइजेशन यानी वैश्वीकरण तो कुछ लोगों को यह लगने लगा कि कि जो भारत का वसुधैव कुटुंबकम था उसका एक और पर्यायवाची पश्चिम ने दे दिया-ग्लोबलाजेशन, वैश्वीकरण। ये ठीक है दोनों के केंद्र में विश्व है, ग्लोबल जब शब्द आता है तो विश्व आता है, जब वसुधा आती है वसुधैव कुटुम्बकम में, समूची पृथ्वी तो पूरा पृथ्वीगृह विश्व है, लेकिन वो नहीं जानते कि दोनों के सिद्धांतों में कितना बड़ा अंतर है। द्रष्टव्य: विदेश मंत्री सुषमा स्वराज द्वारा दिया गया प्रथम पंडित दीनदयाल जी की स्मृति में व्याख्यान, 24 मई 2018 https://mea.gov.in/press-releases-hi.htm?dtl/29914/
6. बृहदारण्यक उपनिषद, 1-4-14
7. भारतीय संविधान की प्रस्तावना से
8. सुभाषितानि, संस्कृतम्, प्रथम एकांश, पृष्ठ 3
9. परमात्मा अर्थात परम आत्मा को ही सत-चित-आनंद अर्थात सच्चिदानंद कहा गया है.
10. यजुर्वेद में एक शांति पाठ की चर्चा की गई है। उसमें लिखा है- ॐ द्यौ: शान्तिरन्तरिक्षँ शान्ति:, /पृथ्वी शान्तिराप: शान्तिरोषधय: शान्ति:। /वनस्पतय: शान्तिर्विश्वे देवा: शान्तिर्ब्रह्म शान्ति:, /सर्वँ शान्ति:, शान्तिरेव शान्ति:, सा मा शान्तिरेधि॥/ॐ शान्ति: शान्ति: शान्ति:॥ शांति पाठ अर्थात हे परमात्मा स्वरुप शांति कीजिये, वायु में शांति हो, अंतरिक्ष में शांति हो, पृथ्वी पर शांति हों, जल में शांति हो, औषध में शांति हो, वनस्पतियों में शांति हो, विश्व में शांति हो, सभी देवतागणों में शांति हो, ब्रह्म में शांति हो, सब में शांति हो, चारों और शांति हो, हे परमपिता परमेश्वर शांति हो, शांति हो, शांति हो।
11. गांधीनगर में गुजरात विधान सभा के सदस्यों को सम्बोधित करते राष्ट्रपति श्री राम नाथ कोविन्द, 24 मार्च, 2022, (https://www.pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=1809115)
12. पुरी में गौड़ीय मठ और मिशन के संस्थापक श्रीमद भक्ति सिद्धांत सरस्वती गोस्वामी प्रभुपाद की 150वीं जयंती के अवसर पर राष्ट्रपति का संबोधन द्रष्टव्य: (https://www.pib.gov.in/PressReleaseP-age.aspx?PRID=1799875)
13. एकजुटता, सततता, विज्ञान से दिग्दर्शित होगा, नए यूएन महासभा अध्यक्ष चबा कोरोसी का एजेण्डा (https://news.un.org/hi/story/2022/06/1058202)

●●●●

युद्धोन्मुखता के साये में मानवीय मूल्य

डॉ. श्यामबाबू शर्मा*

मानव जीवन सामाजिक जीवन है। उसका विकास, उन्नति, प्रगति, सफलता का अधिकांश भाग समाज पर ही अवलंबित है। समाज से दूर रहकर अपनी स्वतंत्र सत्ता कायम करके जीवन क्षेत्र में सफलता पाना मनुष्य के लिए असंभव है। युद्ध के विषय में महात्मा गांधी ने कहा था कि जब तक युद्ध के कारणों को नहीं समझा जाएगा और उनको जड़ से नष्ट नहीं किया जाएगा तब तक युद्ध को रोकने के सारे प्रयास व्यर्थ सिद्ध होंगे। क्या आधुनिक युद्धों का प्रमुख कारण दुनिया की तथाकथित दुर्बल प्रजातियों के शोषण के लिए मची अमानवीय होड़ नहीं है? प्रथम विश्वयुद्ध के कारणों का अध्ययन प्रोफ़ेसर सिडनी ने किया है और वे गुप्त संधियों की व्यवस्था को युद्ध का मूल कारण मानते हैं। इसके अलावा, राष्ट्रवाद, सैनिकवाद, आर्थिक साम्राज्यवाद तथा समाचार प्रकाशन को भी युद्ध के कारणों में शामिल करते हैं। टेल ए टर्नर अपनी किताब द कॉसेस ऑफ वार एंड न्यू रिवॉल्यूशन में युद्ध के इकतालीस कारणों का उल्लेख करते हैं। जिन्हें वे चार भागों में विभाजित करते हैं। आर्थिक, धार्मिक, भावनात्मक और राजवंश संबंधी कारण। स्टीवन जेरोजन तथा वोल्टर एस जोंस ने भी अपनी किताब द लाजिक आफ इंटरनेशनल रिलेशन्स में बहुत ही तार्किक और विस्तृत रूप से युद्ध के बारह कारणों का वर्णन किया है जिन्हें ट्वेल्थ थिअरीज आफ कॉजेज ऑफ वार के नाम से जाना जाता है। विद्वानों द्वारा दिए युद्ध के कारण लगभग सही साबित होते हैं। स्टीड भय को युद्ध का सबसे प्रमुख कारण मानते हैं। एरिक फ्रॉम का युद्ध दर्शन देखें तो माननीय प्रवृत्तियों को युद्ध के लिए उत्तरदाई माना गया है। प्रायः आर्थिक स्वार्थ राज्य सत्ता की लिप्सा और वर्चस्व शाही की सोच युद्ध की विभीषिका का कारण बनती हैं। जोड़ना जरूरी है यह कारक होते तो वैयक्तिक है तथापि इनकी जद में पूरी मानव जाति आ जाती है। एक तरह की मानसिक ग्रंथि जिसमें व्यक्ति अपनी निजी अस्मिता और उसके साथ निजी विवेक का विलय कर देता है। दुष्परिणामस्वरूप अंध आक्रामकता का विस्फोट और सैनिकवाद की होड़ मच जाती है। मनुष्य जैसे-जैसे सभ्यता के नए आयाम छूता है उसकी युद्ध लिप्सा उतनी ही ऊर्ध्वतर होती जाती है। कामायनी में इड़ा कहती है-भीषण जन संहार आप ही तो होता है, ओ पागल प्राणी तू क्यों जीवन खोता है क्यों इतना आतंक ठहर जा ओ गर्वीले, जीने दे सबको फिर तू भी सुख से जी ले।

समाज में व्याप्त परस्पर सहयोग समानता में संघर्ष और झगड़े में वृद्धि हो रही है। पिछले सौ सवा सौ सालों में एक तरफ जहां वैश्विक समाज की रचना की गई वहीं दूसरी ओर अधिनायकवाद, तानाशाही, असैन्य

* *एकेडमिक काउंसलर, इग्नू क्षेत्रीय केन्द्र, शिलांग*

शासन, कठपुतली सरकारें, देशों के विभाजन, सैन्य औद्योगिक गठबंधन, कारपोरेट वर्चस्व और एटम बम द्वारा नरसंहार हुए हैं। ताकत की सत्ता और महत्व के हिमायतियों में इज़ाफा हुआ है। युद्ध व्यक्तित्व के विकास को रोकता है तथा मौलिक अधिकारों और व्यक्तिगत स्वतंत्रता को कोई महत्व नहीं देता। तानाशाह की स्वेच्छाचारिता पर व्यक्ति की स्वतंत्रताओं की बलि चढ़ जाती है। समाचार-पत्रों, संघों आदि की स्वतंत्रता का नाश हो जाता है। समाज के मौलिक चिन्तन में शिथिलता आती है। मानव-जीवन को एक ढर्रे पर चलाना और उसे पूरी तरह राज्य के अधीन कर देना और स्वतः प्रेरणा का अंत करना है। नागरिकों को आर्थिक सुरक्षा के भुलावे में डालकर उनके सर्वस्व को राज्य की बलिवेदी पर चढ़ा देना उनकी वास्तविक स्वतंत्रता का अपहरण कर लेना किसी भी रूप में उचित मानवीय नहीं कहा जा सकता। इस प्रकार की नीतियां भविष्य के लिए विनाश उत्पन्न करती हैं, क्योंकि सभी मतभेदों को दूर करने के लिए उस सबको उखाड़ फेंकना पड़ता है जो समुदाय को मानसिक और आध्यात्मिक दृष्टि से जीवित रखता है।

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद समूची दुनिया पर साम्राज्यवाद की पकड ढीली पड़ी थी। अधिकांश गुलाम देश आजाद हुए। साम्राज्यवाद के शोषण एवं उत्पीडन का दायरा सिकुड़ा। समाजवादी शिविर का जन्म हुआ। सोवियत संघ के नेतृत्व में उभरे समाजवादी शिविर ने नवोदित राष्ट्रों को आत्मनिर्भर विकास का रास्ता अख्तियार करने, बुनियादी उद्योग-धंधों का निर्माण करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। इस सबका विरोध और समाजवादी सत्ता का विरोध करने के लिए शीतयुद्ध की राजनीति शुरु की गयी और शस्त्रास्त्रों की अंधी प्रतिस्पर्धा शुरु हुई। आज एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र पर अपना प्रभुत्व स्थापित करने की फिराक में है। एक देश दूसरे के अस्तित्व को अपने से नीचा रखना चाहता है। हमारा सामाजिक और अंतरराष्ट्रीय जीवन अशांत, दुखी, इर्ष्या, द्वेष, भय, परस्पर प्रतिहिंसा की भावनाओं से ओत-प्रोत एवं अव्यवस्थित बनता जा रहा है। अंतरराष्ट्रीय फलक पर विषम परिस्थितियों के प्रधान कारण यही हैं। परस्पर प्रतिद्वंद्विता और होड़ चल रही है। कोई भी अपने आप को छोटा मानने अथवा झुकने के लिए तैयार नहीं। अतः स्वयं न झुककर जबरन दूसरों को झुकाने की, अपने ही विचार, दृष्टिकोण की पुष्टि और अपने अस्तित्व के समक्ष दूसरे के अस्तित्व को नगण्य समझकर उसको क्रिया रूप में लाना ही आज के सामाजिक अंतरराष्ट्रीय जीवन की अशांति, असुरक्षा, हानि, विनाश का कारण बने हुए हैं। यदि यह प्रवृति दिनों दिन इसी प्रकार बढ़ती रही तो मानव जाति को उस भयंकर परिस्थिति का सामना करना पड़ेगा जब भाई-भाई में, बाप-बेटे में, पति-पत्नी में, संप्रदाय-संप्रदाय में, राष्ट्र-राष्ट्र में संहार चक्र घूमेगा और मानवता को भारी क्षति होगी।

सदियों पहले राजकुमार सिद्धार्थ ने बाण से बिंधे एक पक्षी की जान बचाई थी और भरी सभा में दृढ़ स्वरों में कहा था कि, 'मारने वाले से बचाने वाला बड़ा होता है। ' एक जीव मात्र के लिए इतनी करुणा! संभवत: इसी नि:शेष करुणा ने मानव जाति की रक्षा की है और हर बार वह मृत्यु की भयानक घाटियों से लौट आया है, बुद्ध की मुस्कान के साथ। इतिहास का हर युद्धकाण्ड सिद्ध करता है कि हत्यारे कायर होते हैं और करुणा कायरों का वरण नहीं करती, वह तो वीरों की शोभा होती है। चाहे राम-रावण समर हो, रोम और गुलामों की लड़ाई हो, अमरीका-वियतनाम युद्ध हो, चाहे इराक पर अमरीकी-यूरोपीय हमला हो। जीत सदैव करुणा की हुई है। आज हर देश के पास अपना सैन्य बल है। जल-थल और नभ की सुरक्षा के लिए सेनाएं हैं। दो विश्वयुद्धों के बाद यह स्पष्ट हो चला है कि अब लड़ाई के तौर-तरीक़े पूरी तरह से बदल गये हैं। आमने-सामने की लड़ाई बहुत ज़रूरी नहीं रही। युद्ध क्षेत्र के लिए अब रिहायशी इलाक़ा भी वर्जित नहीं रहा। घर, स्कूल यहां तक कि अस्पतालों पर भी बम गिराए जा सकते हैं। इन्सानों को भी जीवित बम बनाया जा सकता है। अब कोई नैतिक बंधन और प्रतिमान नहीं बचे हैं। युद्ध में सब कुछ जायज़ और मान्य है। ग़ौरतलब है कि

फ़ौजी प्रतिष्ठान भी वैज्ञानिक अनुसंधानों पर बड़ी मात्रा में धन लगा रहे हैं। नई-नई टेक्नोलॉजी पाने के लिए बेहिसाब पैसा ख़र्च कर रहे हैं। लगभग हर देश के बजट का सबसे बड़ा हिस्सा रक्षा बजट के लिये तय होता है। शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि और जन कल्याण का बजट तो ऊंट के मुंह में जीरा है। एक रुपये में यदि बारह आना रक्षा पर है तो बस चार आने में बाक़ी मदों को निपटा दिया जाता है। इसे ही पूंजीवादी सरकारें जन कल्याणकारी बजट कहती हैं। सुधी पाठकों आपको याद होगा कि दूसरे विश्वयुद्ध में नाजी सेनाओं ने ज़हरीली गैसों का इस्तेमाल किया था। गैस चेम्बरों में लाखों यहूदियों और सैनिकों को बंद कर मार डाला था। पहले बंदूक से एक गोली निकलती थी फिर दस, फिर सौ-सौ, और अब तो असंख्य गोलियां निकलती हैं। 1945 में अमरीका और उसके सहयोगी देश जापान पर परमाणु बम का भयानक प्रयोग कर चुके थे। विनाश लीला का ताण्डव दुनिया को दिखा चुके थे। वियतनाम और इराक युद्ध में अमरीका ने घातक रासायनिक हथियारों का प्रयोग किया था। आज तो हर राष्ट्र परमाणु शक्ति बनने के लिए आकुल-व्याकुल है। वैज्ञानिकों की भरी-पूरी फौज इनके पास है। अनवरत प्रयोग और परीक्षण जारी हैं।

इनकी प्रयोगशालाओं में दिन-रात नए-नए किस्म के युद्धास्त्र, युद्धक विमान, मिसाइलें और रासायनिक एवं न्यूक्लियर हथियार बनाए जा रहे हैं। नई-नई ज़हरीली गैसों को खोजा जा रहा है। पानी की तरह पैसा बहाया जा रहा है। यह पूंजी के मुनाफ़े के लिए काम करने वाला विज्ञान है। मुनाफ़े के अर्थशास्त्र में दया, करुणा और परोपकार की भावना नहीं है। धन से शुरू होकर यह धन पर ही ख़त्म होता है। मनुष्य और मनुष्यता का कोई प्रश्न इसे अपनी ओर न आकर्षित करता है, न ही विचलित करता है।

यो न रक्षति वित्रस्तान् पीड्यमानान् परे: सदा।
जन्तून् पार्थिवरूपेण स कृतान्तो न संशयः॥

अर्थात् 'जो राजा शत्रुओं द्वारा पीड़ित और भयग्रस्त प्रजा की रक्षा नहीं कर सकता वह राजा नहीं, राजा के रूप में यमराज है। ' हमारी सदी जीते-जागते यमराजों से भरी हुई है। उनकी पिशाचलीलाओं ने पूरी मनुष्यता को साक्षात नरक में ढकेल दिया है। मारना, उजाड़ना, युद्ध करना और लूटना धरती और मानवीयता के लुटेरों का एकमात्र काम कल भी था और आज भी है। महाभारत और ट्रॉय का युद्ध धरती की लूट और क़ब्ज़े से जुड़ा हुआ था और फिलस्तीन और इज़राइल के बीच का युद्ध भी धरती की लूट और उसके क़ब्जे से जुड़ा हुआ है। आज भी युद्ध धरती पर क़ब्ज़े के लिए ही लड़ा जाता है। बस युद्ध का तौर-तरीक़ा बदल गया है। आधुनिक सदी में युद्ध अब व्यापारिक कूटनीति और रणनीति से लड़ा जाता है। हथियारों से लड़ाई का पासा आख़िरी दांव के रूप में खेला जाता है।

'ईशवास्यमिदं सर्वं' अर्थात हम में वह है और उसमें हम हैं। प्रकृति और मानव का समन्वय भौतिकता की विराटता में अपना नया रूप लेता है। आज हम के स्थान पर मैं का रकबा बढ़ा है। स्व को उखाड़कर स्व का बिरवा हरिया तो नहीं सकता। हमारा चरित्र सभी जैविक कारकों के साथ ही अर्जित गुणों, आवेगों, प्रवृत्तियों, अभिवृत्तियों, अभिरुचियों तथा व्यवहार एवं जीवन-दर्शन का योग होता है। व्यक्ति का हर कार्य, हर विचार उसकी हर गति मस्तिष्क पर प्रभाव छोड़ती है और इन प्रभावों का समग्र योग व्यक्ति-समाज का चरित्र निर्धारित करता है। स्वार्थों-महत्वाकांक्षाओं और विलासिताओं से भरी पूंजीवादी आग्रहों और दुष्चक्रों वाली किस दुनिया में हम रह रहे हैं? हम मानवीयता के सरोकारों पर लंबे भाषण दे सकते हैं, लेकिन खुद मानवीय होने की कोशिश नहीं करते। आज का मानव कहने को और भौतिक रुप में दिखने को बहुत ही

आधुनिक तथा सम्पन्न हो गया है, परन्तु आन्तरिक रुप में वह बहुत ही रिक्त हो गया है। अन्धानुकरण ने विश्व को बरबादी के कगार पर लाकर खड़ा कर दिया है। असंतोष, अलगाव, उपद्रव, असमानता, असामंजस्य, अराजकता, आदर्श विहीनता, अन्याय, अत्याचार, अपमान, असफलता, अवसाद, अस्थिरता, अनिश्चितता, संघर्ष, हिंसा ने अपनी पकड़ मजबूत की है। यदि परिवेश में नैतिकता के तत्व पर्याप्त रूप से उपलब्ध नहीं हैं तो परिवेश में जिन तत्त्वों की प्रधानता होगी वे ही जीवन का अंश बनने लगते हैं।

मानव जीवन अपनी निजता तथा सामाजिकता दोनों में बहुमुखी होता है। भौतिक, आध्यात्मिक या आर्थिक आदि कोई भी एक पक्ष चाहे कितना ही महत्वपूर्ण और अस्तित्व के लिए अपरिहार्य क्यों न हो, अपने आप में न तो स्वायत्त होता है और न ही अन्य पक्षों से असंबंधित। 'साहित्य, संगीत, कला-विहीन साक्षात पशु पुच्छ-विशाणहीन:' के द्वारा जिस चिरंतन सत्य की पुष्टि की गई है, वह वास्तव में मानवीय समाज के सतत अस्तित्व सार्थकता और परिपूर्णता में संस्कृति की महती भूमिका की ओर इंगित करता है। मनुष्य, जीवन की सर्वश्रेष्ठ अभिव्यक्ति है अत: जीव मात्र से जुड़ना, उसका संरक्षण करना तथा उसके सृजनात्मक विकास में सहभागी होना मानव और मानव अधिकार दोनों का ही आधार स्तंभ है। भारतीय जीवन पध्दति में आदर्श और सिध्दांत दोनों का अलग-अलग महत्व है पर वास्तविक अर्थों में दोनों का उद्देश्य मनुष्यता के साथ-साथ मानवता को विकसित करना ही है। मूल्य बोध व्यक्ति को अनुप्राणित और अनुशसित करता है तथा मानव अधिकारों का मूल्य बोध उसे और अधिक परीक्षित और संस्कारित करने में अहम् भूमिका निभाता है। यह व्यक्ति और समाज दोनों में ही उत्तरदायित्व के बोध का बीज वपन करता है। उसे संवेदनशील बनाने के साथ-साथ उत्तरदायित्व की दुनिया की यात्रा भी कराता है। इनसे भरपूर मानवीय आचरण का पूरा खाका हमें दृष्टिगोचर होता है। मानव मूल्यों को सभ्य समाज की बुनियाद माना जाता है।

एक मानवीय सनक के आरोपित मनोविज्ञान को बार-बार बदलते समूहों तक अपनी सापेक्षिक स्वायत्ततायुक्त संगठनों के लिए भी सार्थक मान लिया गया है। वह भी ऐसा कि मुनाफा-प्रेरित व्यवहार स्वत: एक यंत्र मानव यानी रोबोट या कंप्यूटर द्वारा स्वत: संचालित, हमेशा सही और सच्चे पूर्णरूपेण दोषमुक्त रूप से कंपनियों द्वारा भी लागू होता रहे। इस तरह ऐतिहासिक साक्ष्यों से मुक्त परिकल्पनाओं और सिद्धांतों को अमूर्त सामाजिक गल्प (सोशल फिक्शन) मानना उचित प्रतीत होने लगता है। यह चंद लोगों द्वारा सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक शक्ति पर नियंत्रण का आधार बन चुकी है। इसमें विवेकाधारित मनोकामनाएँ, प्रेरणाएँ पूर्ण तथा प्रतिपल अद्यतन होता ज्ञान आदि एक प्रोग्राम यंत्र-मानव की तरह कंपनियों के संचालन के अभिन्न अंग मान लिए गए हैं। कभी गलत निर्णय नहीं लेने वाले तानाशाह (इनफोर्सिबल डिक्टेटर) का सा चरित्र और व्यवहार कंपनियों का चरित्र और व्यवहार मान लिया गया है। मानव अधिकार केवल आधिकारिक ज्ञान का सम्प्रेण ही नहीं बल्कि ये मानवीय परम्परा को सर्जनशील तथा क्रियाशील बनाये रखने की आधारशिला है। अपेक्षा की जाती है कि इससे ऐसी धाराओं का विकास हो जो मनुष्य एवं समाज दोनों को एक नए एवं उन्नत शिखर की ओर ले जाए। जिस प्रकार पानी और हवा पर सबका अधिकार होता है उसी प्रकार व्यक्ति का इन पर अधिकार होता है। प्रत्येक सभ्यता की अपनी ज्ञान एवं चिंतन परम्परा होती है और इनमें बहुत कुछ बातें ऐसी होती हैं जो मानवीय गरिमा एवं मानवता के गुण धर्म व विवेक पर अवलम्बित होती हैं। मानव अधिकार मानवता को अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाने का संकल्प देते हैं।

वेदान्त कहता है कि जिस प्रकार चकमक पत्थर में अग्नि स्वाभाविक रूप से होती है उसी तरह हर मनुष्य में मूल्य छिपे होते हैं। सिर्फ़ विज्ञान और वैज्ञानिक संस्थाएं ही अपने सामाजिक दायित्वों एवं कार्यभार

से विमुख नहीं हुई हैं। राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक संस्थाएं भी उद्देश्य और लक्ष्य से भटककर जनतंत्र और समाजवाद के विरोध में खड़ी हो चुकी हैं। समझदारी, जीवन मूल्य, नैतिकता, सौंदर्य और सच्चाई का लोप हो चुका है। अल्बर्ट आइन्सटाइन ने समझाया था और चेताया था कि विज्ञान के हर छात्र को जीवन-मूल्यों को गहराई के साथ समझना चाहिए। जीवन के सौंदर्य को, नैतिकता को जीवंत भावों के साथ ग्रहण करना चाहिए। अन्यथा वह बहुत अच्छी तरह से प्रशिक्षित पालतू कुत्ते से ज़्यादा कुछ नहीं हो सकेगा। उसका व्यक्तित्व खण्डित और अपूर्ण रहेगा। आज हम छात्रों को, युवा शक्ति को, समाज की पूरी श्रम शक्ति को गुलामी की अदृश्य ज़ंजीरों में जकड़ा हुआ और दिशा भ्रमित पाते हैं। आवश्यकता सिर्फ इस बात कि होती है कि उसे बाहर लाने हेतु समुचित प्रयत्न किया जाय। हम इक्कीसवीं शताब्दी के उस बौध्दिक समाज में जी रहे हैं जहां समन्वय और सामाजिक समरसता, सहजीवन की आवश्यकता है।

शिकागो की धर्म संसद में स्वामी विवेकानंद ने वैश्विक बंधुत्व को अपनाने की सलाह देते हुए 'अमेरिका के भाइयों और बहनों' से अपने भाषण की शुरुआत कर भारतवर्ष के समृद्ध इतिहास तथा मजबूत सांस्कृतिक जड़ों की तरफ पूरे विश्व का ध्यान आकर्षित किया था। मानव के सामाजिक जीवन में आवश्यकता इस बात की है कि वह झुकना सीखे। कोई भी समाज सिर्फ आधुनिकता के लबादे की कीट से तो नहीं जी सकता। स्व को उखाड़कर स्व का बिरवा हरिया तो नहीं सकता। उसे आयातित मिनरल वॉटर नहीं चाहिए। यह अपनी भूमि की उर्वरता, संस्कारों की तपिश और स्वाभिमान के पानी से ही पल्ल्व लेगा। आज सबसे बड़ी जरूरत उन मानव मूल्यों को बचाने की है जो सह अस्तित्व, विश्व बंधुत्व और जीवन की निरापद निरंतरता में विश्वास करते हैं। भारत इन्हीं सिद्धांतों के कारण कभी विश्व गुरु बना था। महात्मा कबीर के शब्दों में कहें तो-कहाँ बनवात पैरियां लामी भीत उसार। घर तो साढ़े तीन हाथ घणा तो पउने चार।

●●●●

लोकतंत्र, चुनाव और मानवाधिकार

गौरहरि दास*

जिस प्रकार अचेतन के हाथ से कुछ गिर जाने पर आवाज़ नहीं होती उसी प्रकार स्वप्न की अंगुलियों से आस्था का प्रकाश पड़ने पर आवाज़ नहीं होती। बल्कि इस प्रक्रिया में शरीर और चेतना को जो चोट लगती है, आसानी से मुआवजा नहीं मिलता। आज का लोकतंत्र एक गम्भीर संकट का सामना कर रहा है। अपने नागरिकों के सामूहिक सपनों को लेकर लोकतंत्र में जो विश्वास था, वह धीरे धीरे टूट रहा है।

भारत में लोकतंत्र निर्धारक यह है कि देश का निर्णय मतदान या चुनाव करता है। नागरिकों के द्वारा चुनाव प्रतिनिधि देश के सम्पर्क में फैसला करता है, यह लोकतंत्र का प्रथम नियम है। इसीलिए चुनाव केवल एक आवश्यकता पूर्ति की प्रशासनिक व्यवस्था नहीं है। भारत सरकार ने 2019 के चुनावों के लिए 50, 000 करोड़ रुपये खर्च किए हैं, चाहे चुनाव प्रक्रिया में कितना भी समय लगे, चाहे वह श्रम हो या संसाधन, या उसका प्रबंधन हो। लोकतंत्र लोगों का, लोगों के लिए, लोगों के द्वारा एवं लोंगो की सेवा के लिए अपेक्षित है। पंचायत से लेकर संसद तक हर जगह नागरिकों के द्वारा प्रत्यक्ष ओर अप्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित प्रतिनिधि तैयार करते हैं देश के शासन के लिए। जो सरकार में स्थान पाते हैं, वह लोगों के लिए एवं देश के लिए कार्य करते हैं।

साधारण लगने वाली यह बातें वास्तव में उतना साधारण नहीं है। उसका कारण है, यदि लोकप्रतिनिधि चुनाव की धारा, एवं प्रक्रिया को स्वच्छ, वैध एवं समयानुवर्ती होकर नहीं करेंगे तो लोकतंत्र का मूल लक्ष्य बिगड़ जाएगा। योग्य प्रतिनिधि न चुनने पर लोकतंत्र का उद्देश्य बाधित होगा।

हमारे देश के वयस्क नागरिक का जिस प्रकार मतदान देना अधिकार है, उसी प्रकार चुनाव प्रक्रिया में शामिल होना या भागीदार होना भी उसका अधिकार है। कोई भी नागरिक चाहे तो वह चुनाव लड़ सकता है, और यह उसी नागरिक का मौलिक अधिकार है। इस क्षेत्र में कोई भी प्रत्यक्ष ओर अप्रत्यक्ष रूप से उसे रोक नहीं सकता। संविधान उसे यह मौलिक अधिकार देता है। हम जानते हैं कि चुनाव प्रक्रिया मत अधिकार व्यक्त करने का माध्यम है एवं खुद के मत के जरिए एक नागरिक अपना मत व्यक्त कर सकता है। लोकतंत्र का वास्तविक अधिकार नागरिक को सौंपा गया है। उसका एक मत भी प्रभावशाली नेता को पदच्युत कर देता है।

भारत के कुछ हिस्सों में जैसे कि बिहार, ओडिशा, ओर उत्तर प्रदेश में एक वरिष्ठ नेता की मृत्यु होने

* *रचनात्मक लेखक, पत्रकार और शिक्षाविद*

पर उनकी विधवा या दामाद / बेटी को पद मिल जाता है। इन मामलों में दयापूर्वक मिले मत को जोर दिया जा रहा है। लेकिन उम्मीदवार को महत्व मिलना जरूरी है, एक नेता उस पच्चीस तीस वर्ष की परिपक्वता को कमाता है, जो उसकी विधवा या उसके छोटे बेटे, बेटी एक रात में कैसे हासिल कर सकते हैं? यह तर्क दिया जा सकता है कि उनके खून में ही राजनीति है। लेकिन यह हेतुवादी विचार नहीं है। दूसरी बात, लोकतंत्र में इस प्रकार की विचारधारा को बढ़ावा देना संपूर्ण अर्थहीन है। हमारे भारत में राजनीतिक विचार नहीं बल्कि दल, दल के नेतृत्व ताकतवर हो जाते हैं। यदि एक बार कोई पार्टी अध्यक्ष बनता है तो वह तानाशाह के रूप में उपयोग करता हैं। तमिलनाडु से कश्मीर तक और गुजरात से अरुणाचल प्रदेश तक परिवारवाद के नाम पर सामंतवाद का एक नया रूप गति प्राप्त कर रहा है। जो लोकतंत्र प्रतिनिधियों के चुनाव में पारदर्शिता को कमजोर कर रहा है और अपने नागरिकों के मानवाधिकारों का उल्लंघन कर रहा है। महाभारत में अंधे धृतराष्ट्र के पुत्र मोह के चलते किस प्रकार हस्तिनापुर का विनाश हो गया था, उसका अध्ययन आज आधुनिक भारत करता है लेकिन उससे कुछ सीखा नहीं है, बल्कि जैसे तैसे अपने उम्मीदवार को नागरिकों के ऊपर थोप दिया जाए उसके लिए बहुत से रास्ते अपनाते हैं। भारत के नेता और नागरिक जानते हैं कि जनादेश ऊर्जा का मुख्य स्रोत है मुख्य रहस्य है। किसी भी कीमत पर जनादेश को कब्जे में लाने के लिए काला धन, बाहुबल रिश्वतखोरी, जबरन वसूली एवं उपहार की ओर उनकी रूचि बढ़ रही है। इस बात का उल्लेख करने पर अतिरंजित नहीं होगा कि भारत में अभी भी भ्रष्टाचार की काया फैली हुई है।

एक छोटा सा उदाहरण दिया जा सकता है कि। हमारे देश के चुनाव आयोग ने यह फैसला किया है कि किन राज्यों से सांसद या विधायक चुनाव के उम्मीदवार के लिए कितने रुपए खर्च कर सकते हैं। आज एक सांसद चुनाव के लिए 70 लाख रुपए एक विधायक 28 लाख रुपए खर्च कर सकते हैं। लेकिन ओडिशा जैसे पिछडे राज्यों में हाल ही में खत्म हुए पंचायत चुनाव में एक साधारण सरपंच के उम्मीदवार ने ₹50 लाख खर्च किऐ हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि सांसद एवं विधायक लागत लाखों रुपए चुनाव में निवेश करते हैं जनादेश संग्रह के लिए।

चुनाव को जानने पर पहले वह लोग निवेश कर कमीशन, रिश्वतखोरी या अन्य अवैध हथियार के रूप में 10 गुना पैसा वसूल करेंगे। हर बार की तरह यह बढ़ता रहेगा, लेकिन कभी कम नहीं होगा। पहला, प्रतिनिधियों के चुनाव में पारदर्शिता का अभाव और दूसरा जनादेश को अपने पक्ष में करने के लिए सत्ताधारी दलों द्वारा सत्ता का दुरुपयोग करना हमारे लोकतंत्र की बीमारी को उजागर करता है।

चुनावों के दौरान भ्रष्टाचार या उपहार देना ही एकमात्र समस्या नहीं है। पिछले चार दशकों में विभिन्न राज्यों में सरकारें अन्य विकास के बारे में भूल रही है, और केवल मुफ्त वितरण की चुनावी प्रणाली ने देश की अर्थव्यवस्था को कमजोर कर दिया है और मानव अधिकारों का उल्लंघन किया है। आज मुफ्त बिजली, मुफ्त मंगलसूत्र, मुफ्त खाना आदि सब कुछ मिल जाता है। साल दर साल ऐसी योजनाओं की संख्या बढ़ती जा रही है। सबसे आश्चर्य की बात यह है कि गरीबी उन्मूलन योजना के द्वारा विशेष फायदे मिल नहीं रहे हैं। हालांकि देश की शिक्षा, स्वास्थ्य और सिंचाई के बुनियादी ढांचे के विकास के लिए धन की आवश्यकता पड़ती है।

स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव के लिए एक और शर्त है, कानून और व्यवस्था की सुरक्षा। भारत में यह मुद्दा धीरे-धीरे और जटिल होता जा रहा है। दुनिया के विकसित लोकतंत्र में चुनाव प्रचार शांतिपूर्ण तरीके से होता है, लेकिन हमारे देश में यह और भी तनावपूर्ण होता जा रहा है। हत्या, लूटपाट, अभद्र भाषा, असहिष्णुता

और अवैध गतिविधियों में वृद्धि हो रही है। किसी भी चुनाव की समय सारणी का साक्ष्य इस बात का सबूत देंगे कि पिछले चुनाव की तुलना में यह कितना अधिक तनावपूर्ण हो गया है। बूथ पर कब्जा, धमकाना, जाति धर्म और समुदाय के नाम पर मत देना चुनाव से पहले पैसे और शराब का बंटवारा भगवान के तस्वीर को छूना, निर्माल्य और तुलसी के पत्तों को छूकर प्रतिज्ञा करना यह सभी भारतीय चुनाव के अभिन्न अंग बन गए हैं।

राजनीतिक दलों के लिए इस तरह का सर्कस कितना आम है, साधारण जनता कितना कष्ट सहता हैं, रोगी और अस्पताल में जाने वाले लोगों के पीड़ा का कोई अंत नहीं है। इन सब के बीच जो लोग चयन होकर आते हैं, वह किस प्रकार स्वच्छ एवं पारदर्शी नेता हो सकते हैं, यह कल्पना की बात है? 2019 में संगठित लोकसभा में कुल सदस्य से 239 सदस्य ऐसे थे जिनके नाम पर घृणित अपराधों का केस दर्ज हुआ था। भारत के कुछ सांसद जेल की कोठरियों में रहकर चुनाव लड़ते हैं। यह कभी भी हमारे लोकतंत्र के लिए शुभ संकेत नहीं है।

स्वस्थ, लोकतंत्र के विचार का सम्मान, स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव विरोध का एक अन्य स्रोत है। चाहे चुनावी प्रक्रिया हो या विकास के मुद्दों पर असहमति और सभी के सर्वोत्तम हितों के लिए समर्थन प्राप्त करना। शुरू से ही, यदि किसी के पास एक दूसरे के साथ वहस करने के लिए आवश्यक वातावरण नहीं है, पूरे समाज के रूप में यह केवल उसका नुकसान नहीं है। किसी भी समूह या दल को यह नहीं सोचना चाहिए कि उन्होंने देश की समृद्धि के लिए जो मसौदा तैयार किया है या अपने दल द्वारा जारी किए गए घोषणा पत्रों की तरह देश के हित में प्रस्तुत करने की आवश्यकता है। राजनीतिक दलों के चुनावी घोषणा पत्र वास्तव में एक बहुत ही सम्मानजनक पाठ है। इसमें जो उल्लेख किया जाता है वह उन्हीं दलों की घोषणा पत्र है, इसके लिए उनके कार्यकर्ता जिम्मेदार हैं। लेकिन भारत में चुनावी घोषणा पत्र अधिक से अधिक अर्थ हीन होते जा रहे हैं, और लोग इससे आंखें मूंद रहे हैं। सरकार अपने जिम्मेदारी से बच रही है और जो नहीं करना चाहिए उसके पीछे पड़ जाती हैं।

उपरोक्त कारणों से कई संगठनों ने भारत की वर्तमान स्थिति पर चिंता व्यक्त की है। भारत की सांस्कृतिक स्थिति में अनेक संस्थाओं के मनोभावों को व्यक्त किया है। समय है, इस दिशा के प्रति अपने कर्तव्य को स्थिर किया जाना चाहिए। वह कैसे स्थिर होगा, कौन स्थिर करेगा एवं कब स्थिर करेगा उसको लेकर भी भिन्न मत है, लेकिन इसमें सुधार आवश्यक है इसको लेकर कोई संदेह नहीं।

●●●●

ग्रामीण बाल मजदूर और मानव अधिकार
(मानव अधिकार की अमृत उपलब्धियाँ)

राकेश शर्मा*

भारत सरकार ने ग्रामीण बाल-मजदूरी को प्रतिबंधित करने के लिए समय-समय पर अनेक कानून बनाये है। इन कानूनों का प्रभाव शहरी और नगरीय क्षेत्रों की सीमा के भीतर तो है। इन सीमाओं में स्थापित उद्योगों में काम करने वाले बाल मजदूरों का हित रक्षण इसलिये हो पाता है क्योंकि श्रम विभाग, कर्मचारी राज्य बीमा निगम जैसे भारत के अन्य विभाग भी इन क्षेत्रों पर निगरानी रखते हैं। भारत सरकार के श्रम कानूनों में इन क्षेत्रों में बाल श्रम को पूरी तरह प्रतिबंधित किया है। ठीक इसी तरह भारत सरकार की सबसे बड़ी सामाजिक योजना ''कर्मचारी राज्य बीमा निगम'' जो भारत सरकार के श्रम एवं रोजगार मंत्रालय के अंतर्गत संचालित होती है, के ई.एस.आई., अधिनियम 1948 के अनेक प्रावधानों में बाल श्रमिकों को रोकने का प्रयास किया गया है। इसमें बहुत बड़ी सफलता मिली है। ग्रामीण क्षेत्रों में श्रम कानून का उल्लंघन होता है, क्योंकि वहां की स्थितियां शहर से भिन्न हैं। खेतों, खलिहानों, ईंट भट्टों तथा अन्य कुटीर उद्योगों में बाल श्रमिक देखे जाते है। इस असंगठित क्षेत्र में कानून का प्रभाव लागू करना बहुत कठिन है। विगत 75 सालों में बदलाव की बयार बहुत तेज हुई है। इसे अमृत उपलब्धि में गिना जाना चाहिए।

इस संसार में विधाता ने जो कुछ भी रचा है, उसमें मानव ही उसकी सर्वोत्तम रचना है। मनुष्य जीवन का सबसे सुकोमल भाग बचपन है। बचपन काम करने के लिए नहीं बल्कि एक अच्छे नागरिक बनने के लिए शिक्षा, संस्कार और स्वास्थ्य प्राप्त करने के लिए होता है। मगर यह सच है कि हमारे ग्रामीण क्षेत्रों में बच्चों को शिक्षा, स्वास्थ्य, संस्कार देने के स्थान पर बाल श्रम में लगाया जाता है। इसके अनेक कारण हैं, इनमें आर्थिक, सामाजिक, भौगोलिक, परंपरागत तथा ऐसे ही अन्य कारण काम कर रहे हैं। यह प्रसन्नता का विषय है कि भारत सरकार ने इन कारणों की पहचान की है और इन समस्याओं के निराकरण के लिए अनेक योजनाएं चलाई गई है। स्वास्थ्य की दृष्टि से प्राथमिक चिकित्सा केन्द्रों की स्थापना हुई है और प्रधानमंत्री की महत्वाकांक्षी योजना ''शौचालयों का निर्माण'' पूरे देश में हर गांव और हर घर में किया गया है। बालकों के स्वास्थ्य की दृष्टि से यह दूरगामी प्रभाव देगी। एक बच्चा जब बचपन में किसी घातक रोजगार जनित चोट के कारण या किसी बीमारी के कारण अपंग हो जाता है तो वह शेष जीवन के लिए परिवार, समाज और अन्ततः

* *संपादक 'वीणा'*

राष्ट्र पर बोझ बन जाता है। इसका एक ही निदान है कि राष्ट्रीय स्तर पर मुहिम चलाकर जागरूकता फैलाकर इस पर रोक लगे। ये समस्याएं गाँव, नगर, शहर सभी जगह है। मगर गाँव में निगरानी की कठिनाई के कारण इनका निदान मंद गति से हो रहा है।

गांव में गरीबी एक बड़ा कारण है, जो गरीब परिवारों को बाल श्रम से जोड़ती है। मजदूरी की तलाश में माता-पिता अपने साथ शिशुओं को भी ले जाते हैं। ये शिशु उनके कार्यस्थल पर ही बड़े होते है और बहुत छुटपन से उनके काम में उनके साथ कार्य में हिस्सेदारी निभाने लगते है। इसका अर्थ हुआ कि आर्थिक मजबूरी ने शिशुओं को कार्यस्थल से जोड़ दिया। भारत सरकार ने प्रयत्नपूर्वक ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सुधारने की जो योजनायें चलायी हैं, इन योजनाओं से गांव की तस्वीर बदली है और आजादी के विगत 75 वर्षों में गांव बहुत बदल गये हैं। गुलाम भारत के गरीबजनों की पीड़ा राष्ट्रकवि दिनकर ने लिखी थी- ''मिलता कुत्तों को दूध भात/भूखे बालक अकुलाते हैं/मां की हड्डी से चिपक ठिठुर/जाड़े की रात बिताते हैं/स्त्री के गहने बसन बेच/जब ब्याज चुकाये जाते हैं/मालिक तब तेल फुलेरों पर/पानी सा द्रव्य बहाते हैं।

राष्ट्रकवि दिनकर ने जो हृदय विदारक दृश्य यथार्थ से खींचा है, आज के ग्रामीण भारत में जस का तस चस्पा नहीं रहा है। स्थिति बदली है और विकास का पहिया गांव में अंतिम व्यक्ति तक पहुंचा है। हमारा प्रयास हो कि जिस तरह स्मार्ट सिटी के लिए योजनाएं बनी हैं। इसी तर्ज पर स्मार्ट गाँव की योजनाएँ बने। गाँव जब नगरों में बदलेंगे तो वहाँ उद्योगों की संख्या बढ़ेगी। इससे गाँव से शहरों की ओर हो रहा पलायन रुकेगा। रोजगार की सहज उपलब्धता ग्रामीण अर्थ व्यवस्था को बल देगी। जीवन के स्तर में सुधार आएगा। बाल मजदूरी की समस्या भी समाप्त होगी। जीवन की गरिमा की सुरक्षा होगी। जीवन मूल्यों में बदलाव आएगा। कोई भी समस्या एकाकी नहीं होती, ये एक-दूसरे से जुड़ी होती हैं।

आज प्रचार-प्रसार के माध्यमों ने गति पकड़ी है। अब गांव सड़क मार्ग से जुड़े हैं। आवागमन की सुविधा बढ़ी है, स्कूलों की संख्या में बढ़ोत्तरी हुई है, जागरूकता का स्तर बढ़ा है, समाज में साक्षरता का स्तर भी ऊँचा हुआ है। इन सब कारणों से ग्रामीण अर्थव्यवस्था मजबूत जरूर हुयी है, मगर अभी भी इस दिशा में बहुत कुछ करने की आवश्यकता है। यह सुखद है कि हमारा राष्ट्र बहुत तेजी के साथ बदल रहा है। इस बदलाव में सामाजिक जड़ता समाप्त हो रही है। अवैज्ञानिक जाति, धर्म के बँटवारे में शिथिलता आयी है, मगर सब के बावजूद बहुत कुछ करने की जरूरत है। अब मुंशी प्रेमचंद का वह समाज नहीं है, जिसे 'गोदान' में उन्होंने दिखाया है। गाँव में संध्याकालीन शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिए। शिक्षा का प्रकाश जीवन के अनेक दुःख दूर करता है। हमें गरिमामय जीवन जीने की प्रेरणा देता है। सामाजिक बुराइयों का अंत करता है। हर गाँव में एक पुस्तकालय खोले जाने की जरूरत है। हमने घर-घर शौचालय बनवा दिए तो गाँव-गाँव पुस्तकालय सरलता से स्थापित हो सकते हैं।

हर बच्चे को स्कूल मिले और हर स्कूल में बच्चे आयें। उनके हाथों में काम करने के औजार न हो, बल्कि किताबें हो। हर नागरिक मानवीय जीवन मूल्यों के संरक्षण की चेतना से संपन्न हो। ये प्रयास सत्ता और समाज दोनों को करने ही होंगे। अनुभव बताता है कि बाल मजदूरी जैसे अभिशाप को समाप्त करने के लिए सत्ता जो योजनायें बनाती है, उसमें समाज की भागीदारी आनुपातिक रूप में कम होती है। परिणामस्वरूप बुराई का अंत नहीं हो पाता। वे परिवार जिनमें माता-पिता और अक्सर पिता नशे की लत के शिकार होते है, उनके बच्चे आर्थिक अभाव में बाल मजदूरी की तरफ चले जाते हैं। इस बुराई का अंत सामाजिक, वैयक्तिक, चेतना का विकास करके ही किया जा सकता है। यह प्रसन्नता का काल है, जब यह कहा जा सकता है कि

आजादी के बाद इस अभिशाप का अंत होता हुआ दिख रहा है। राष्ट्र सही दिशा में आगे बढ़ रहा है।

हमारे संविधान की भूमिका में राष्ट्रीय पुरखों ने जो सपना देखा है, उस सपने को पूरा करना राष्ट्र के हर नागरिक की जिम्मेदारी है, भूमिका देखिए- ''हम भारत के लोग, भारत को संपूर्ण, प्रभुत्व संपन्न, समाजवादी, पंथनिरपेक्ष, लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को न्याय, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त करने के लिए तथा उन सब में व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखंडता सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढ़ाने के लिए दृढ़-संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज तारीख 26 नवंबर, 1949 ई. को एतद् द्वारा संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते है''

इस भूमिका में ''व्यक्ति की गरिमा'' की बात मानव अधिकार के संरक्षण की भी भूमिका है। इसके प्रकाश में भारत का हर नागरिक आता है। संविधान का यह अर्पण राष्ट्र के हर नागरिक के लिए है।

यदि किसी देश के बच्चे शिक्षा, संस्कार, स्वास्थ्य से वंचित रहकर बाल मजदूरी जैसे अभिशाप के शिकार होंगे तो समाज और देश का भविष्य उज्ज्वल कैसे बनेगा? इस अभिशाप को दूर करने का एक ही उपाय है कि राष्ट्रीय स्तर पर यह शपथ ली जाए कि किसी भी सूरत में बाल श्रम को प्रतिबंधित किया जाए। इसके लिए सत्ता और समाज का युगल प्रयास चाहिए। हमने प्रतिज्ञा की थी पोलियों को भगाएं जो राष्ट्र ने निश्चय किया कि टी.बी. (ट्यूबर क्लोसिस) से मुक्ति पाएंगे। इन क्षेत्रों में राष्ट्र को आशातीत सफलता मिली। बालश्रम के विषय में ऐसे ही प्रण की आवश्यकता है। समाज का मन जीतने की जरूरत है। कोई भी व्यक्ति जो करुणा, दया, ममता से भरा होगा, वह बच्चों के प्रति क्रूर नहीं रह सकता। कहते हैं कि बच्चे भगवान का रूप हैं और भगवान के प्रति हम श्रद्धा से नमन करते हैं तो बच्चों के प्रति क्रूरता नहीं हो सकती। दार्शनिक कहते हैं कि परमात्मा के पास से आई आत्मा का तेज बच्चों के मुख पर होता है। धीरे-धीरे सांसारिक गतिविधियों में यह तेज विलीन हो जाता है। एक संवेदनशील नागरिक का यह परम कर्तव्य है कि वह बच्चों की बेहतर परिवरिश में सहायक बने। संवेदनशीलता सबसे बड़ा गुण है, जब इसका विस्तार सामाजिक स्तर पर बढ़ता है, तब समाज संवेदनशील बनता हैं।

समाज में बढ़ रही हिंसा और क्रूरता के शिकार बच्चे भी हैं। बंधक बनाए गए बच्चे, घातक कार्यों पर लगाए गए बच्चों के नियोजकों का मानस बदलने की जरूरत है। अनाथ, अपाहिज, निर्धन बच्चों की देखभाल के लिए सरकार और समाज मिलकर काम कर सकते हैं। ऐसे बच्चों को हुनर सिखाया जाए, जिससे ये स्वावलंबी बने और मानव होने और मानव जीवन की रक्षा कर सकें।

बाल श्रम एक समस्या है, अभिशाप है। यह जिन कारणों से है, उन्हें हटाए बगैर इसको निर्मूल नहीं किया जा सकता। माता-पिता चाहे गरीब हों या अमीर सब अपनी संतानों की उन्नति और बेहतरी चाहते हैं। हाँ हमारे समाज में एक वर्ग ऐसा है, जो अशिक्षा, भूखमरी कुरीतियों के वशीभूत ऐसा स्वर्णिम सपना न तो देख पाते हैं और न ही उनकी परिस्थितियाँ उन्हें अनुमति देती हैं। ऐसे लोगों को राष्ट्रीय स्तर पर चिन्हित कर उनके सर्वांगीण विकास के लिए योजनाबद्ध ढंग से काम करने की जरूरत है। जब पूरा समाज शिक्षित और विकसित होगा, तभी संविधान की भूमिका सही अर्थों में सफल होगी। तब तक हम सबको निरंतर काम करते रहना है।

●●●●

विजयिनी मानवता हो जाय"

डॉ. सुनील देवधर*

शक्ति के विद्युतकण जो व्यस्त,
विकल बिखरें हैं, हो निरुपाय
समन्वय उनका करें समस्त
विजयिनी मानवता हो जाय

प्रसाद के महाकाव्य कामायनी के श्रध्दासर्ग में श्रध्दा मनु से कहती है– जीवन के प्रति हताशा और निराशा त्याग कर, आपको लोकमंगल के कार्यों में लगना चाहिये। इसके लिए सबसे महत्वपूर्ण और मुख्य कार्य संसार की विभिन्न शक्तियों में पारस्परिक समन्वय स्थापित करना है। विश्व की विद्युत्कणों के समान, जो भी करोड़ करोड़ शक्तियाँ हैं, वे सब विखरी पडी हैं, उन सब शक्तियों को एकत्रित कर, उनमें समन्वय स्थापित कीजिए, जिससे उन शक्तियों का अधिक से अधिक उपयोग हो सके, इसी में मानवता का कल्याण निहित है, यदि आप ये समन्वय स्थापित करने में सफल हो जांय तो सर्वत्र मानवता का साम्राज्य स्थापित हो जाएगा।

कविता की इस व्याख्या में कुछ शब्द हैं, इन शब्दों के सन्दर्भ से, कुछ बात करें तो, 'मानव-अधिकार' की व्याख्या अधिक सहज हो जाती है।

शक्ति– शक्ति की दोहरी प्रवृत्तियाँ है, ये मंगल और कल्याण करती है, तो दूसरी ओर विनाश और संहार का भी कारण बनती है, शक्ति मनुष्य में अधिकार भाव को जन्म देती है, और यही भाव अहंकार को जन्म देता है। दोनों मिलकर व्यक्ति, समाज और राष्ट्र पर अधिकार या साम्राज्यविस्तार के भाव को जन्म देते है।

समन्वय– शक्ति और बुध्दि का समुचित समन्वय न होने से, विवेक आहत होता है, और विवेक नष्ट होने पर अधिकारों का हनन होने लगता है।

मानवता– मानव होने के नाते हमारा कर्तव्य है कि हम मानवता के लिए, एकजुट हों, समर्पित हों, मनुष्य की निरंतरता तो अनुवांशिकता में है, कि माता-पिता के समन्वय से संतान पैदा होगी, ये क्रम चलता रहेगा किन्तु मनुष्यता की निरंतरता अनुवांशिक नही है। मनुष्यता या इंसानियत के लिए अपेक्षा कुछ और ही

* *सेवा निवृत्त सहायक निदेशक आकाशवाणी , पुणे*

है, और उसकी पूर्ति, कलाओं से, साहित्य से, संगीत से संभव है।

साम्राज्य– शक्ति का दुरूपयोग यानी उसकी तामसी प्रवृत्ति साम्राज्य विस्तार की प्रेरणा बनती है, और अधिकार और विस्तार के इसी भाव ने व्यक्ति के स्तर पर लड़ाई-झगड़े से लेकर राष्ट्र के स्तर पर युद्ध और महायुद्ध को समस्त मानवता पर, मानव-विकास के साथ साथ ही थोपा है, लादा है।

युद्ध के इतिहास पर यदि हम नजर डालें तो ये इतिहास न केवल अपने समय में, निर्मम रहा है बल्कि उसके दूरगामी परिणामों ने समस्त मानव जाति को, प्रकृति को, प्राणियों को आहत किया, रौंदा और कुचला है, जिसके दुष्परिणाम आज भी देखे जा सकते हैं।

राम-रावण व महाभारत के युद्ध से लेकर ऐतिहासिक काल में, कलिंग युद्ध, तराइन के दो युद्ध, पानीपत के तीन युद्ध, हल्दीघाटी का युद्ध, बक्सर का युद्ध, मराठा युद्ध और फिर आधुनिक काल में भारत चीन युद्ध, भारत पाकिस्तान के तीन युद्ध और आतंकवाद के नाम पर चल रहे छद्म युद्ध, हठवादिता, साम्राज्य विस्तार और राष्ट्रों की (अ)नीति और लालसा के ही परिणाम है।

विश्व इतिहास के प्रमुख युद्धों की यदि हम चर्चा करें तो इनकी संख्या भी चौंकाने वाली ही है। 490 ई.पू. मैराथान का युद्ध ईरानियों और युनानियों के बीच एथेन्स में हुआ। 1095 ईस्वी में पश्चिम एशिया तुर्की तथा यूरोप के ईसाई राजाओं के बीच 'धर्म युद्ध' की एक श्रृंखला चली जिसके अन्त में ईसाई जेरुसलेम की धार्मिक यात्रा की सुविधा पा सके। विश्व इतिहास में एक शतवर्षीय युद्ध भी है जो 1338 से 1453 तक चला। इंग्लैण्ड और फ्रांस के बीच चले इस युद्ध में अन्ततः फ्रांस की विजय हुई। इन कुछ युद्धों के अलावा भी विश्व में चीन-जापान, अरब-इजराइल, ईरान-ईराक के बीच हुए युद्ध चर्चा में है और कुछ युद्ध तो इतिहास के पन्नों में दफ्न है, उनकी विशेष बात नहीं होती। आज युक्रेन और रुस के बीच युद्ध चल ही रहा है।

संसार को दो विश्व युद्धों का भी सामना करना पड़ा। पहला 1914 से 1918 तक। जिसमें ब्रिटेन, फॉन्स, अमेरिका आदि ने जर्मनी तथा उसके साथी देशों को हराया। युद्ध के कारणों पर विचार करें तो तीन कारण सामने आते हैं – जर्मनी की व्यापक व्यापारिक बाजार पाने की इच्छा, जर्मनी की इंग्लैण्ड के उपनिवेशवाद एवं समुद्री शक्ति से ईर्ष्या और तीसरा तात्कालिक कारण था सर्बिया द्वारा सराजोवा में ऑस्ट्रियन साम्राज्य के उत्तराधिकारी की हत्या।

दूसरा विश्व युद्ध 1939 से 1945 के बीच हुआ। इस युद्ध में इंग्लैण्ड, फ्रांस, अमेरिका, रूस आदि देशों ने, जापान, जर्मनी, इटली को परास्त किया। इस युद्ध की सर्वाधिक निर्मम कार्यवाही यानी जापान के हिरोशिमा और नागासाकी शहर पर अमेरिका द्वारा एटम बम का गिराया जाना, जिस कारण कई वर्षों तक आनेवाली नस्लें शारिरिक और मानसिक रूप से प्रभावित हुई।

प्रश्न उठता है, इन युद्धों की अन्तर कथाएँ क्या हैं, मानवता कहॉ तार-तार हुई, सबसे अधिक दुष्परिणाम किसे भोगने पडे। 'युद्ध और प्रेम में सब कुछ जायज है' को सहजता से कहने वाले लोग या स्वीकार करने वाला समाज क्या युद्ध में होने वाली उन अनैतिकताओं को भी स्वीकार करेगा जिसमें स्त्री और बच्चे सिर्फ इस्तेमाल की वस्तु बन गए। दूसरे महायुद्ध में दक्षिण कोरिया, चीन, फिलिपीन्स इन देशों की अनेक युवतियों और स्त्रियों को सैनिकों की शारिरिक भूख के लिए इस्तेमाल किया गया। इन युद्धों और महायुद्धों मे स्त्रियों पर होने वाले अत्याचार किस किस तरह से होते थे इसका वर्णन 'वार एण्ड इम्मोरॅलिटी' जैसी पुस्तकों और अन्य लेखों में पढ़ा जा सकता है। घर का पुरुष यदि युद्ध में खेत रहा अथवा घर न आ सका तो घर की लड़कियों

और स्त्रियों को छुपा वेश्या व्यवसाय भी करना पड़ा। एक सैनिक छावनी का, एक सीमा से दूसरी सीमा पर पहुंचने के बीच जो पड़ाव होता, ऐसे समय उन सैनिकों की यौन इच्छाओं की पूर्ति के लिए सरकार की ओर से ही वेश्या गृहों की व्यवस्था की जाती। इतना ही नहीं दूसरे महायुद्ध के समय जर्मनी द्वारा जीते गए पौलेंड, हंगेरी, ऑस्ट्रिया आदि देशों में जर्मन सैनिको के लिए 10-15 साल के बच्चे, अपने ही घर की मॉ-बहन के लिए दलाल की तरह काम करते। जर्मन सैनिक कहीं दिखा तो वे उसे ग्राहक की तरह पटाते, प्रलोभन देते और घर लाते। इस तरह नाबालिग बच्चियों को भी इस व्यवसाय में खींचा गया।

युद्ध में लूट का माल समझकर महिलाओं पर बलात्कार और अन्य अत्याचार के अनेक उदारण इतिहास में भरे पड़े हैं।

इस दूसरे महायुद्ध की स्थितियों का वर्णन साहिर लुधियानवी ने अपनी लम्बी नज्म परछाइयॉ में जिस तरह किया है, उससे घटनाओं का चित्र हमारे सामने उपस्थित होता है – वे लिखते हैं – (कुछ अंश)

नागाह लहकते खेतों से, टापों की सदाएँ आने लगीं
बारूद की वोझल बू लेकर पच्छम से हवाएँ आने लगीं
तामीर के रौशन चेहरे पर तखरीब का बादल फैल गया
हर गॉव में वहशत नाच उठी हर शहर में जंगल फैल गया।

●

इंसान की क़ीमत गिरने लगी अजनास के भाव चढ़ने लगे
चौपाल की रौनक घटने लगी भरती के दफातर वढ़ने लगे
बस्ती के सजीले शोख जवां, बन बन के सिपाही जाने लगे
जिस राह से कम ही लौट सके, उस राह पे राही जाने लगे

●

धूल उड़ने लगी बाजारों में भूख उगने लगी खलिहानों में
हर चीज दुकानों से उठकर रुपोश हुई तहखानों में
बदहाल घरों की बदहाली बढ़ते बढ़ते जंजाल बनी
महंगाई बढ़कर काल बनी, सारी बस्ती कंगाल बनी।

●

इफलास-जदा दहकानों के हल बैल बिके खलिहान बिके
जीने की तमन्ना के हाथों जीने ही के सब सामान बिके
कुछ भी न रहा जब बिकने को, जिस्मों की तिजारत होने लगी
खल्वत में भी जो ममनूअ थी, वो जल्वत में जसारत होने लगी।

विदित ही है कि दूसरे विश्व युद्ध के समय हम गुलाम थे, भारत में सैनिकों की भरती की गई। भारतीय सैनिक मित्र राष्ट्रों के लिए, उनके साथ, जर्मनी और जापान के विरुध्द युद्ध में उतरे। इस युद्ध के समय हर महीने भारतीय नौजवानों की भर्ती की जाती थी।

दूसरे महायुद्ध की विभीषिका को देखते हुए विश्व नेताओं ने, भविष्य में फिर ये नरसंहार न हो, ये बर्बरता और पाशविकता न हो, इसे रोका जा सके इस उद्देश्य से 24 अक्टूबर 1945 को संयुक्त राष्ट्रसंघ की स्थापना कर उसका एक निश्चित विधान बनाया। संयुक्त राष्ट्र का चार्टर इसका संविधान है और इसके छ: प्रमुख अंग हैं महासभा, सुरक्षा परिषद, आर्थिक तथा सामाजिक परिषद, न्यासधारिता परिषद, अन्तरराष्ट्रीय न्यायालय और सचिवालय।

महासभा ने 10 दिसम्बर 1948 को अपना घोषणा पत्र जारी किया, जिसमें व्यक्तियों के सम्मान एवं पारस्परिक समानता को मान्यता प्रदान की गई है। ये मानव अधिकारों का सामान्य विश्वव्यापी मापदण्ड है। इसे विश्व में स्वतंत्रता, न्याय तथा शांति की आधारशिला कहा जाता है। इसमें प्रत्येक देश से अनुरोध किया गया है कि वे अपने नागरिकों के लिए इन अधिकारों की व्यवस्था करें। इन अधिकारों में जीवित रहने का अधिकार, विचार, विश्वास तथा अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, एवं संगठन निर्माण तथा संचालन सम्बन्धी स्वतंत्रता के अधिकार शामिल हैं।

संयुक्त राष्ट्रसंघ के साथ ही, मानव अधिकारों के लिए कार्य करने वाली गैर सरकारी संस्था है, 'एमनेस्टी इंटरनेशनल'। इसकी स्थापना जुलाई 1961 में यूनाइटेड किंगडम में पीटर वेनेनसन ने की थी। इसका उद्देश्य भी मानवीय मूल्यों एवं मानवीय स्वतंत्रता को बचाने एवं भेदभाव मिटाने के लिए, शोध एवं प्रतिरोध करने एवं हर तरह के मानव अधिकारों के लिए संघर्ष कर उनकी रक्षा करना है। इस संस्थान को 1977 में शोषण के खिलाफ अभियान चलाने के लिए शांति का नोबल पुरस्कार भी प्रदान किया गया।

संयुक्त राष्ट्रसंघ बना, मानव अधिकारों के क्षेत्र में अपनी भूमिका प्रतिपादित की, लेकिन मनुष्य की मूल प्रवृत्ति में परिवर्तन करा पाना क्या इसके लिए संभव हो सका है? शायद कदापि नहीं, और इसके अनेक उदाहरण है। 1947 में भारत के विभाजन के बाद कश्मीर को लेकर युद्ध हुआ। संयुक्त राष्ट्रसंघ ने 10 जुलाई 1948 को अपने पर्यवेक्षक भेजे, युद्ध रोकने का प्रयास किया, शस्त्रसंधी हुई, लेकिन कश्मीर का प्रश्न आज भी अनुत्तरित है, समस्या बनी हुई है और तबसे मानव अधिकारों का उल्लंघन भी हो रहा है। इतना ही नहीं 1965 में पाकिस्तान ने एक बार फिर भारत पर हमला किया, और पाकिस्तान को भारत ने करारी मात दी। विजय तो हुई लेकिन दोनो ओर के सैनिक मारे गए। इस युद्ध की पृष्ठभूमि पर एक बार फिर साहिर लुधियानवी ने एक नज्म लिखी। ये नज्म युद्ध के कारणों पर नहीं बल्कि उसके परिणामों की बात करते हुए सुझाव भी देती है, मानवता के हित में –

खून अपना हो या पराया हो, नस्ले-आदम का खून है आख़िर
जंग मशरिक में हो कि मग़रिब में, अम्ने आलम का खून है आख़िर
टैंक आगे बढें कि पीछे हटें, कोख धरती की वांझ होती है
फतह का जश्न हो कि हार का सोग़, जिन्दगी मैय्यतों पे रोती है,
जंग तो खुद ही एक मसअला है, जंग क्या मसअलों का हल देगी
आग और खून आज बख्शेगी, भूख और एहतियाज कल देगी
इसलिए ऐ शरीफ इंसानो! जंग टलती रहे तो बेहतर है

आप और हम सभी के आंगन में, शमअ जलती रहे तो बेहतर है

स्पष्ट है कि युद्ध किसी समस्या का समाधान नही कर सकता, लेकिन फिर भी युद्ध होते हैं, मनुष्य की दुष्ट प्रवृत्तियों के कारण। इस प्रवृत्ति का एक उदाहरण बामियान में वर्षों पुरानी बुध्द प्रतिमाओं का मोटार दाग़ कर तोड़ा जाना है। अभी युक्रेन और रूस के बीच चल रहे युद्ध में भी, संयुक्त राष्ट्र की भूमिका बहुत कारगर साबित होती नहीं दिखती। निसन्देह राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर ऐसी संस्थाओं की आवश्यकता है, और उनका महत्व भी है, पर मूल प्रश्न मनुष्य के अपने स्व-भाव का है, जिसके कारण वह अपनी पद-प्रतिष्ठा और शक्ति का प्रयोग करता है, इसके विपरीत युद्ध के बीच मानव अधिकार की रक्षा ही नहीं बल्कि स्त्री सम्मान का एक अन्यतम उदाहरण छत्रपति शिवाजी की राज्य व्यवस्था में मिलता हैं।

छत्रपति शिवाजी की सेना ने कर्नाटक के बेलवाड़ी स्थित गढ़ को घेर लिया गढ़ के नायक ईशप्रभू ने युद्ध किया और मारा गया। उनकी रानी मलम्मा ने मर्दाने वेष में अपनी महिला फौज के साथ दूसरे दिन फिर आक्रमण किया, महिला टुकड़ी के आक्रमण से शिवाजी महाराज का सरदार सखुजी गायकवाड़ असमंजस में था लेकिन उसने फिर गढ़ पर जोरदार आक्रमण किया और गढ़ जीत लिया। जीत के उन्माद में रानी को कैद कर अपशब्द कहे और शिवाजी के सामने पेश किया। शिवाजी ने देखा तो सबसे पहले उसे बंधन मुक्त कराया। रानी मलम्मा ने अपना पुत्र राजा की ओर ढकेलते हुए कन्नड़ भाषा में कहा "अपने आपको बड़ा राजा कहते हो, मेरे सुहाग के धनी (स्वामी) की हत्या की, गढ़ी पर कब्जा कर लिया फिर मेरे इस बच्चे को क्यों छोड़ दिया है? इसे भी ले जाओ और मार डालो, आपकी दिग्विजय हो", शिवाजी कन्नड़ भाषा में कहे गए इन शब्दों को समझे नहीं। तब रघुनाथ पंत हणमंते ने मराठी में अर्थ समझाया। शिवाजी अकल्पित और मन को व्यथित करने वाले वाक्य सुन क्षणभर मौन रहे। सारा प्रकरण समझने के बाद उठे और बच्चे को गोद में उठाकर बोले "देवी आपकी गढ़ी की लालसा हमें नहीं है, ये गढ़ी हम आपको बहन मानते हुए वापस कर रहे है। संभालिए अपनी गढ़ी के उत्तराधिकारी को भी। आप के दर्शन से आज मुझे जगदम्बा का दर्शन हुआ है"। अत्यन्त स्फूर्ति और आनन्द से भर रानी ने अपने बच्चे को अपनी ओट किया। राजा के निर्णय और वचनों से वह भी भावुक होकर बोली, "राजन आप इतने महान, फिर आपकी सेना के ये सिपाही ऐसे क्यूं, अपने सरदार से पूछिए कि गढीपर उसने मुझसे क्या कहा था"। छत्रपति शिवाजी ने आदरपूर्वक पालकी देकर रानी को बिदा किया। उनके नेत्रों से दूर जाते ही शिवाजी ने सखूजी को बुलावा भेजा। घटित प्रकरण की पूरी छानबीन की। सखूजी का अपराध सिध्द हुआ। राजा को ये अपेक्षित नहीं था कि उनकी सेना का सरदार जीत के उन्माद में किसी विधवा का 'मानभंग' करेगा। उन्होंने आदेश दिया "दूसरे की विधवा पर बदनजर डालते हो, इनकी आंखो को तपती सलाखों से, सबके सामने दुरुस्त करो, इन्हें ले जाओ"।

विधवा रानी मलम्मा का 'मानभंग' (अश्लील शब्दों से अपमान) तक सहन न करने वाले शिवाजी महाराज जैसा उदाहरण इतिहास में दुर्लभ है।

भारत के सन्दर्भ में यदि विचार किया जाय तो हम कह सकते हैं, कि मानव अधिकारों की अवधारणा भारत में वैदिक काल से ही पल्लवित और पुष्पित होती रही है। विश्व के देश जब वैचारिक और भौतिक धरातल पर मानवीय अधिकारों के विविध पक्षों को समझने का प्रयास कर रहे थे तब भारत समानता व समरसता का संदेश देकर मानवीय अधिकारों की प्रतिष्ठा और सम्मान को प्रतिष्ठापित कर रहा था। सब प्राणियों में अपने आप को देखना – "आत्मवत सर्व भूतेषु" और सब के मंगल की कामना भारतीय साहित्य

में, विचार और चिन्तन में व्याप्त है। "सर्वे भवन्तु सुखिन:" और 'उदार चरितानाम् तू वसुधैव कुटुम्बकम्' का शाश्वत विचार प्राणीमात्र के कल्याण की कामना करता है। युद्ध के समय भी मानवीय मूल्यों की स्थापना और आदर्श हमें कई प्रसंगों में देखने मिलते हैं।

मानव अधिकारों की तमाम घोषणाओं और प्रयासों के बाद भी आज अनुभव किया जा रहा है कि विश्व अशांत है, प्रत्यक्ष युद्ध के संभावित खतरों के अलावा आतंकवाद से सारा विश्व त्रस्त है। आतंकवाद 'एकाधिकारवाद' के अलावा और क्या है?आतंकवादियों के हाथों की AK-47 के जनक मिखाइल कालश्निकोव कहते हैं – जब दूसरे विश्वयुद्ध में जर्मनी ने रूस पर आक्रमण किया तब हमारे अनेक देश बंधु मातृभूमि की रक्षा में घायल हुए, मृत्यु को प्राप्त हुए, धैर्य और साहस की हममें कमी न थी, लेकिन नाजियों के पास हमसे अधिक आधुनिक शस्त्र थे। सिर्फ आपका धैर्य और साहस काम नहीं आता, आपके पास अच्छे शस्त्र भी होने चाहिए। अपने इसी असंतुलन को दूर करने का मैंने निश्चय किया। आज इतने वर्षों बाद जब मैं अपनी बनाई रायफल से एक समय के मेरे ही देशबंधु अर्मेनियन और अजरबैजानी को एक दूसरे पर गोली बरसाते देखता हूँ तब मुझे बहुत दु:ख होता है। एक समय हम सब शांति से रहते थे, हमारा राष्ट्र एक बड़ा कुनबा था। अखण्डत्व पर मेरा विश्वास है। इन दिनों सब ओर पृथकतावादी सोच फैल रही है। इससे मुझे बहुत दु:ख होता है"।

भविष्य में आतंकवाद युद्ध से भी कहीं अधिक विनाशकारी सिध्द हो तो कोई आश्चर्य नहीं। वे रासायनिक, एटमी हथियारों का भी उपयोग करेंगे। दुनिया वैसे भी बारूद के ढेर पर बैठी है। अब अगर कोई युद्ध होता है, तो परिस्थिति का अनुमान लगाना भी असंभवहै। चेतावनी है, शायर की –

गुजश्ता जंग में घर ही जले, मगर इस बार
अजब नहीं कि, ये तनहाइयॉ भी जल जायें
गुजश्ता जंग में पैकर ही जले मगर इस बार
अजब नहीं कि ये परछाइयॉ भी जल जायें।।

आदमी की सोच को बदलना होगा, इकाई ही दहाई बनती है, समाज का विचार बदलने लगता है। ये वैचारिक संकट का समय है। बहुत 'देर' मानवता के लिए नए संकटों का द्वार खोलेगी। विचार करें इन पंक्तियों पर,

हम चले थे इक नई दुनियॉ बनाने
था कहॉ जाना कहॉ पर आ गये हैं
नाव है मझधार में पतवार गायब
और चारों ओर, बादल छा गये हैं।।
अभी तो कुछ ऐसा ही है, लेकिन –
आशा और विश्वास हमारे साथ,
जगति का है हाथ हमारे हाथ
युद्ध, बुध्द से हारेगा ही
मानवता का ऊंचा होगा माथ

●●●●

न्याय व्यवस्था और मानवाधिकार

डॉ. जवाहर कर्नावट*

मानव अधिकार की मूल अवधारणा और उसके समर्थन के स्वरों को ध्यान में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि मानव अधिकार व्यक्तिगत तथा मानव की सामूहिक मांग का प्रतिनिधित्व करते हैं जिसमें उन्हें सम्पत्ति तथा सभी मानवीय आकांक्षाओं को पूर्ण करने तथा उनमें सहभागिता का अधिकार सम्मिलित है। मानव अधिकारों के संरक्षण के लिए भारत की संसद ने 1993 में मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम पारित किया। इसी अधिनियम के अन्तर्गत राष्ट्रीय मानव अधिकार तथा राज्यों में राज्य मानव अधिकार आयोग गठित किए गए है। अधिनियम की धारा 2(घ) के अनुसार मानव अधिकारों से अभिप्राय संविधान द्वारा गारंटीकृत या अन्तरराष्ट्रीय करारों में सम्मिलित एवं भारत में न्यायालयों द्वारा प्रवर्तनीय व्यक्तियों के जीवन, स्वतंत्रता, समानता एवं गरिमा के अधिकार से है।

मानव अधिकारों का प्रमुख आयाम यह भी है कि मानव स्वतंत्र एवं निष्पक्ष न्याय व्यवस्था से संरक्षित हो तथा शासन, मानवीय आंकाक्षाओं की पूर्ति हेतु सतत् प्रयासरत रहे। हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था में न्याय संस्थाएं केवल निर्णय देनेवाली संस्थाएं कब तक बनी रहेगी? इन संस्थाओं को आम आदमी के लिए सुलभ और सुदृढ़ होना पड़ेगा तभी उसके प्रति लोगों की आस्था और आदर बना रह सकेगा। एक प्रसिद्ध उक्ति है – justice delayed is justice denied अर्थात न्याय में देरी न्याय से वंचित रखने के समान ही है। यदि किसी को न्याय मिल जाता है किन्तु इसमें बहुत अधिक देरी हो गयी हो तो ऐसे 'न्याय' की कोई सार्थकता नहीं होती। यह सिद्धांत ही द्रुत गति से न्याय के अधिकार' का आधार है। यह मुहावरा न्यायिक सुधार के समर्थकों का प्रमुख हथियार भी है।

हमारे देश में न्याय में विलम्ब की कहानी किसी से छिपी नहीं हैं। न्याय की प्रतीक्षा में वर्षों तक देश के लाखों नागरिकों के जीवन के बहुमूल्य क्षण मानसिक पीड़ा में व्यतीत हो जाते हैं। आम जनता से अपेक्षा की जाती है कि वह हर कानून का पालन करे। किन्तु कानून का उल्लंघन होता है तो कानून की अनभिज्ञता संबंधी दलील न्यायालय में स्वीकार नहीं की जाती है। वास्तविकता यह है कि पढ़े -लिखे लोगों को भी उनके समक्ष आए विवादों पर कानूनों की उपलब्धता की जानकारी नहीं होती। आज देश में जिला स्तर के विविध

* *पूर्व महाप्रबंधक, बैंक ऑफ बड़ौदा*

न्यायालयों से लेकर सर्वोच्च न्यायालय तक हजारों प्रकरण तीस वर्ष से भी अधिक समय से लम्बित है। न्याय में विलम्ब भी मानव अधिकारों के हनन का ही एक महत्वपूर्ण मुद्दा है।

देश में निचले स्तर से उच्चतम स्तर तक के न्यायालयों में चार करोड़ सत्तर लाख से अधिक प्रकरण लम्बित है। इन मामलों में एक करोड़ आठ लाख से अधिक प्रकरण दीवानी तथा तीन करोड़ आठ लाख से अधिक प्रकरण आपराधिक है। हाल ही में लोकसभा में विधि मंत्री श्री किरण रिजिजु द्वारा दी गई जानकारी में बताया गया कि इनमें से 70154 प्रकरण उच्चतम न्यायालय में तथा 58,94,060 प्रकरण देश के उच्च न्यायालयों में निर्णय की प्रतीक्षा कर रहे हैं। इन मामलों के निपटान की कोई समय सीमा निर्धारित नहीं है। प्रकरणों के न्यायिक निपटान में विलम्ब के कई कारण है जिसमें मुख्य हैं - न्यायाधीशों की कमी, स्थगन प्रदान किए जाने वाले मामलों की बहुलता, मामलों की सुनवाई प्रक्रिया में अनुप्रवर्तन की कमी आदि। न्यायालय में दायर मामलों की बढ़ती संख्या का एक प्रमुख कारण पुलिस की दोषपूर्ण कार्यप्रणाली भी है। लाखों की संख्या में ऐसे लोगों को गिरफ्तार कर जेल में ट्रायल के अन्तर्गत डाल दिया जाता है, जिनके बारे में अन्वेषण नहीं हुआ है और 'साक्ष्य' भी नहीं जुटाए जा सके हैं। ऐसे लाखों व्यक्ति 'ट्रायल कैदी' के रूप में जेलों में बंद है जिनके बारे में साक्ष्य के अभाव में न्यायालय में निर्णय नहीं हो पा रहा है। ऐसे भी अनेक प्रकरण सामने आए हैं जिनमें सालों जेल में बंद रहने के बाद न्यायालय ने उन्हें दोष मुक्त करार दिया। उनके जीवन का बहुमूल्य समय दोष मुक्त होने के उपरांत भी जेल की सलाखों के बीच नष्ट हो गया।

भारत के न्यायालयों में एक लाख से अधिक प्रकरण 30 से अधिक वर्षों से लम्बित है। 5 लाख से अधिक दीवानी एवं आपराधिक प्रकरण ऐसे हैं जो 20 से 30 वर्षों के बीच लम्बित है। 30 लाख से अधिक प्रकरण 10 से 20 वर्षों की अवधि से निर्णय की प्रतीक्षा में है। 70 लाख से अधिक प्रकरणों को दायर हुए 5 से 10 वर्ष का समय हो चुका है किन्तु इनमें न्यायिक कार्रवाई अत्यन्त धीमी गति से हो रही है। पिछले 3 से 5 वर्ष की अवधि में भी दायर किए गए 73 लाख से अधिक प्रकरण भी न्यायिक प्रक्रिया में लम्बित है।

इन लम्बित प्रकरणों में देश के अनेक साधनविहीन नागरिक न्यायालयों के चक्कर लगाते-लगाते अपने मानव अधिकारों से वंचित हो रहे हैं। न्याय व्यवस्था में मानव अधिकारों को दृष्टिगत रखते हुए संविधान में अनुच्छेद 39 क जोड़कर राज्य को यह सुनिश्चित करने का निर्देश किया गया है कि विधिक तंत्र के माध्यम से समान अवसर के आधार पर न्याय सबको सुलभ हो सके और विशेष रूप से राज्य यह सुनिश्चित करे कि आर्थिक या अन्य किसी निर्योग्यता के कारण कोई नागरिक न्याय प्राप्त करने के अवसर से वंचित न रह जाए। साथ ही इस अनुच्छेद में अपेक्षा की गई है कि गरीब तबके के लोगों को राज्य नि:शुल्क विधिक सहायता मुहैया कराएगा। सभी न्यायालयों में विधिक सेवा प्राधिकरण एवं अन्य संस्थाएं नि:शुल्क कानूनी सहायता प्रदान करने के लिए बनाई गई हैं, परन्तु अनुभवी एवं योग्य अधिवक्ताओं की सेवाएं आज भी आम नागरिक को प्राप्त नहीं हो रही है। यह तभी संभव है जब अनुभवी और सुयोग्य अधिवक्ता वर्ग इस विधिक सहायता में रुचि लेंगे। नि:शुल्क कानूनी सहायता के लिए बने पैनल्स पर न केवल जूनियर अधिवक्ता बल्कि प्रकरण के महत्व एवं उसमें निहित कानूनी विषय की महत्ता को देखते हुए सुयोग्य एवं अनुभवी अधिवक्ताओं का लाभ भी आम जनता को मिलना चाहिए ताकि इस न्याय प्रक्रिया के प्रति उनका विश्वास जागृत हो सके।

यह देखने में आया है कि धनी एवं सशक्त लोग जो सुयोग्य अधिवक्ताओं की सेवाएं प्राप्त कर न्याय तंत्र का दुरूपयोग करना चाहते हैं, उन्हें भी न्याय सहज रूप से उपलब्ध हो जाता है। न्याय व्यवस्था आम आदमी को सुलभ हो सके और संविधान में उल्लेखित मौलिक मानवीय अधिकारों का संरक्षण हो सके,

इसके लिए न्याय तंत्र से सम्बद्ध लोगों की मानसिकता में आमूल-चूल परिवर्तन की आवश्यकता है। वरिष्ठ न्यायमूर्ति श्री देवदत्त धर्माधिकारी ने अपने विचार व्यक्त करते हुए सटीक टिप्पणी की थी कि :

''न्यायपालिका एक संकट के दौर से गुजर रही है। इसके लिए यह अतीत चिंतन और आत्मनिरीक्षण के साथ-साथ भविष्य देखने का समय है। इसे अपने कार्यों को विनियमित करके लोगों के संवैधानिक अधिकारों की रक्षा के लिए सत्यापित सिद्धांतों के अनुसार अपनी शक्ति का आह्वान करना चाहिए। न्यायिक संस्था से जुड़े सभी लोगों को सतर्क रहना होगा और ऐसे किसी भी कानून का विरोध करना होगा जो न्यायिक जवाबदेही के नाम पर न्यायिक स्वतंत्रता के लिए खतरा हो। ''

यह अत्यंत आवश्यक है कि हमारी न्याय प्रणाली की विसंगतियों से त्रस्त आम आदमी की पीडा एवं परेशानियों को दूर करने के सार्थक प्रयास किए जाएं। इस मार्ग में सबसे बड़ी बाधा सभी उच्च न्यायालयों एवं सर्वोच्च न्यायालय में हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं के प्रयोग की अनुमति न होना भी है। हिन्दी प्रदेशों के उच्च न्यायालयों में हिन्दी में अपील प्रस्तुत करने की अनुमति दी भी जाती है तो उसके अंग्रेजी अनुवाद की भी मांग की जाती है जो परोक्ष रूप से इस सुविधा के उपयोग को हतोत्साहित करती है। आजादी के अमृत महोत्सव में हमारी अपनी भाषाओं में न्याय व्यवस्था सुलभ कराने का कदम इस देश के प्रत्येक नागरिक के लिए वरदान साबित होगा।

●●●●

मानव अधिकार की अमृत उपलब्धियां एवं स्वच्छ पर्यावरण का अधिकार : राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की भूमिका के परिप्रेक्ष्य में

सुवेक सिंह चौहान*
डा.अनीस अहमद**

प्रस्तावना

भारत में आज़ादी के अमृत महोत्सव के सापेक्ष विगत 75 वर्षों के कालखण्ड मे मानव अधिकारों की अमृत उपलब्धियों के सन्दर्भ में विचार करने पर तर्कपूर्ण ढंग से निष्कर्षात्मक रूप में कहा जा सकता है कि भारत में मानव अधिकारों को चिन्हित व परिभाषित कर विधि व नीति निर्माण के माध्यम से स्पष्टता प्रदान कर दी गयी है। परन्तु मानव अधिकारों के सभी आयामों को पूर्णतः व्यावहारिक ढंग से लागू करवाना संभव नहीं हो सका है अर्थात हम वैधानिकता से यथार्थता की ओर आगे नहीं बढ़ पाये हैं।

भारत में मानव अधिकारों के बहुत से आयाम अभी भी व्यावहारिक तौर पर अछूते है। जिसमें स्वच्छ पर्यावरण का अधिकार, तृतीय लिंग के मानव अधिकार, हांथ से मैला उठाने वालों के अधिकार, बच्चों का शोषण से मुक्ति का अधिकार इत्यादि महत्वपूर्ण हैं। मानवाधिकार के इन सभी आयामों के सन्दर्भ में व्यावहारिक ढंग से योजना बनाकर क्रियान्वयन करने की आवश्यकता है।

वैश्विक स्तर पर पर्यावरण आधारित सतत् विकास को यथार्थ स्वरूप प्रदान करने हेतु वर्ष 2015 में सतत् विकास लक्ष्य निर्धारित कर वर्ष 2030 तक इनकी प्राप्ति हेतु समय निर्धारित किया गया है। भारत में सतत् विकास लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु उत्तरदायी नीति आयोग के मार्गदर्शन में प्रयास किये जा रहें हैं। ऐसी स्थिति में स्वच्छ पर्यावरण के अधिकार की उपलब्धता व्यावहारिकता के साथ सुनिश्चित कराना अपरिहार्य है। भारत में पर्यावरण संरक्षण व संवर्धन से सम्बंधित प्रयास प्रमुख रूप से वर्ष 1972 के स्टॉकहोम सम्मेलन के बाद

* *शोध-छात्र, विधि संकाय, लखनऊ विश्वविद्यालय*
** *सहायक आचार्य, विधि विभाग, विधि अध्ययन पीठ बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ-226025*

प्रारंभ हुये जिसमें गति वर्ष 1993 मे राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की स्थापना के बाद आयी।

भारत में 1972 के बाद जीवन के अधिकार के लिए अनिवार्य स्वच्छ पेयजल, वायु, इत्यादि की उपलब्धता सुनिश्चित कराने हेतु नीतियां निर्मित कर विशेष अधिनियम पारित किए गए। भारतीय न्यायपालिका ने विधिशास्त्रीय कुशलता से संविधियों का सकारात्मक निर्वचन कर स्वच्छ पर्यावरण के मानव अधिकार की अमृत उपलब्धियां हासिल की गयी। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग द्वारा 1997 से स्वच्छ पर्यावरण के अधिकार की उपलब्धता सुनिश्चित कराने हेतु निरन्तर प्रयास किये जा रहे हैं। इसी क्रम में आयोग ने 09मई, 2022 को पर्यावरण संरक्षण के सन्दर्भ में एक एडवाइजरी जारी की, जो भविष्य में स्वच्छ पर्यावरण रूपी मानव अधिकार के संरक्षण और सतत् विकास लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु मानवाधिकार की एक नवीन अमृत उपलब्धि हासिल करने की दिशा में महत्वपूर्ण साबित होगा। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग द्वारा पर्यावरण संरक्षण की दिशा में किए गए इस प्रकार के प्रयास तब और अधिक महत्वपूर्ण हो जातें हैं जब हम एन्वायरमेंट पल्युशन एण्ड क्लाइमेट चेंज (ईपीसीसी) द्वारा जारी रिपोर्ट पर विचार करते हैं जिसके अनुसार वर्ष 2080 तक पर्यावरणीय समस्या के कारण उत्पन्न सूखे की स्थिति के कारण सम्पूर्ण विश्व में लगभग 3 अरब 20 करोड़ लोगों के समक्ष पेयजल की समस्या उत्पन्न हो सकती है एवं फसल चक्र अनियमित होने के कारण लगभग 60 करोड़ लोग भुखमरी के शिकार हो सकते हैं। यह आंकड़े भयावह हैं और आज़ादी के अमृत महोत्सव के मूल्यांकन परक इस कालखंड में पर्यावरण के प्रति हमारी संवेदनाओं के वाहक भी हैं।

पर्यावरण प्रदूषण: मानवाधिकारों पर संकट

मानव जीवन पारिस्थितिक सन्तुलन व पर्यावरण पर आश्रित है। सभी प्राणियों के जीवित रहने हेतु स्वच्छ पर्यावरण व संतुलित परिस्थितिक तंत्र का होना अपरिहार्य है। यदि किसी गतिविधि से पर्यावरण प्रदूषित होता है तो यह सभी मनुष्यों के जीवन के अधिकार का प्रत्यक्ष उल्लंघन है और इसे मानवाधिकार हनन की श्रेणी में रखा जाता है। स्वस्थ जीवन जीना सभी का मानव अधिकार है।

प्राकृतिक संसाधनों के असन्तुलित और अविवेकपूर्ण दोहन से पर्यावरण को गम्भीर क्षति पहुंचती है जिसका दुष्परिणाम वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, मृदा प्रदूषण और ध्वनि प्रदूषण के रूप में हमारे सामने आता है। पर्यावरण प्रदूषण से व्यक्ति के शरीर व मस्तिष्क पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

पर्यावरण के विविध अवयव अन्योन्याश्रित है एक के प्रदूषित होने से दूसरा स्वत: ही प्रदूषित हो जाता है। और मानव जीवन को घातक ढंग से प्रभावित करता है। पर्यावरण प्रदूषण प्राय: वायु, जल, मृदा इत्यादि के माध्यम से होता है। वायु प्रदूषण में वायु के संघटक तत्वों की गुणवत्ता में ह्रास हो जाता है। वायु प्रदूषण अनियमित मौसम,अम्लीय वर्षा, तपन, वायुमंडल में श्वसन हेतु उपयुक्त आक्सीजन की कमी इत्यादि के माध्यम से मानव स्वास्थ्य को कुप्रभावित करता है। जल प्रदूषण मनुष्य की जैविक वृद्धि में अवरोध उत्पन्न कर अतिसार, तपेदिक, लकवा, चर्मरोग, अन्धापन,पीलिया तथा हड्डियों के टेढ़ा व कमजोर हो जाने जैसी घातक बीमारियों को जन्म देता है। मृदा प्रदूषण व ध्वनि प्रदूषण भी मानव जीवन को रोगग्रस्त कर संकट में डाल देते हैं। भारत में पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 की धारा 2 (ख) में पर्यावरण प्रदूषण को परिभाषित कर स्पष्टता प्रदान कर दी गई है।

स्वच्छ पर्यावरण एक मानव अधिकार : सुनिश्चितता हेतु अन्तरराष्ट्रीय प्रयास

संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा प्रकृति संरक्षण के अन्तरराष्ट्रीय संघ' (IUCN) की स्थापना 1948 में ही कर दी गयी थी परन्तु वैश्विक स्तर पर पर्यावरण संरक्षण हेतु प्रयास 1960 से प्रारंभ हुये। इसके उपरांत वर्ष 1972 में 113 देशों के प्रतिनिधियों तथा 400 गैर-सरकारी संस्थानों की सहभागिता द्वारा 'मानव पर्यावरण पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन' (मानव पर्यावरण का मैग्ना कार्टा) स्टॉकहोम में सम्पन्न हुआ जिसमें पर्यावरण संरक्षण हेतु विश्व-नीति को निर्मित कर 109 सूत्री सिफारिशें व 26 सिद्धांतों को अंगीकृत किया गया। वर्ष 1983 में संयुक्त राष्ट्र द्वारा 'पर्यावरण और विकास हेतु विश्व आयोग' (डब्ल्यू.सी.ई.डी.) की स्थापना और वर्ष 1992 में रियो डि जेनेरियो में आयोजित 'पृथ्वी-सम्मेलन' में एजेण्डा- 21 निर्धारित कर पर्यावरण संरक्षण की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाए गए। 1987 में प्रथमबार प्रयोग किये गये शब्द सतत् विकास को 1992 में स्पष्टता प्रदान की गयी। सितंबर, 2002 मे सतत् विकास की अवधारणा पर आधारित जोहान्सबर्ग घोषणा में वैश्विक स्तर पर पर्यावरण प्रदूषण को जानलेवा मानकर सरकारों से पर्यावरण संरक्षण हेतु प्रभावी कदम उठाए जाने की अपेक्षा की गयी। वर्ष 2012 के सतत् विकास सम्मेलन द्वारा सतत् विकास को और अधिक यथार्थ स्वरूप प्रदान किया गया। जुलाई,2017 में संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा सतत् विकास लक्ष्यों हेतु 232 वैश्विक संकेतक अपनाए गए।

इसके साथ ही साथ वैश्विक स्तर पर पर्यावरण संरक्षण हेतु कुछ मूलभूत सिध्दांत प्रतिपादित किए गए जो इस प्रकार है-

अंतर-पीढ़ीगत समानता का सिद्धांत- जिसके अंतर्गत प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग वर्तमान पीढ़ी द्वारा भावी पीढ़ी के लिए भी उनकी उपलब्धता सुनिश्चित करते हुए न्यायोचित ढंग से किया जाना सम्मिलित है।

'प्रदूषणकर्त्ता द्वारा भुगतान' का सिद्धांत- इसके तहत जो भी व्यक्ति प्रदूषण करेगा वह उस पर्यावरण प्रदूषण से होने वाली क्षति की पूर्ति प्रतिकर चुका कर करेगा।

निवारक सिद्धांत- इसके तहत बिना किसी बहाने के पर्यावरण को होने वाली क्षति के कारणों का पता लगाकर क्षति को रोकने हेतु प्रभावी कदम उठाए जाएंगे।

लोक विश्वास का सिद्धांत- के अनुसार प्राकृतिक संसाधनों यथा जल, वायु, समुद्र व जंगल इत्यादि लोक सम्पत्ति है इसलिए इन्हें निजी स्वामित्व का विषय नहीं बनाया जाना चाहिए और राज्य को प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षक की भूमिका का निर्वहन सतर्कता से करना चाहिए।

सतत् विकास सिद्धांत- इसके अनुसार पर्यावरण और विकास में समन्वय स्थापित करने की आवश्यकता है जिससे पर्यावरण को भावी पीढ़ी हेतु शाश्वत रूप से संरक्षित किया जा सके।

स्वच्छ पर्यावरण का अधिकार एवं मानव अधिकार की अमृत उपलब्धियां: भारतीय परिप्रेक्ष्य

भारत में वैदिक साहित्य के साथ साथ सिंधु सभ्यता काल में भी प्रकृति की उपासना के स्पष्ट प्रमाण प्राप्त होते हैं। भारतीय इतिहास में चन्द्रगुप्त मौर्य व अशोक के शासन काल में अभ्यारणों की स्थापना और उनके संरक्षण के प्रमाण प्राप्त होते हैं। 1855 में चार्टर ऑफ इंडिया एक्ट के माध्यम से वन संरक्षण नीति निर्मित की गयी। वर्ष 1878 में वृक्षों की कटाई पर लगाम लगाने हेतु पहला वन अधिनियम अस्तित्व में आया जिसमें आरक्षित वन क्षेत्र का प्रावधान किया गया। वर्ष 1976 में 42वें संविधान संशोधन द्वारा राज्य और नागरिक

दोनों को पर्यावरण संरक्षण व सम्वर्द्धन का कर्त्तव्य सौंपा गया। जहां संविधान के भागIV में एक नया अनुच्छेद 48 (क) जोड़कर राज्य पर पर्यावरण संरक्षण व सम्वर्द्धन का दायित्व आरोपित किया गया वहीं भागIV (क) के माध्यम से मौलिक कर्त्तव्यों का एक नया अध्याय जोड़कर देश के नागरिकों पर भी पर्यावरण संरक्षण व सम्वर्द्धन का कर्त्तव्य सौंपा गया। इसके अतिरिक्त भारतीय संविधान के अनुच्छेद 243 (छ) व 243 (डब्ल्यू), भारतीय दंड संहिता 1860 की धाराएं 268 से 272, 277, 278, 284, व 286 से 290 और दण्ड प्रक्रिया संहिता 1973 की धाराएं 133 तथा 144 में पर्यावरण संरक्षण व सम्वर्द्धन से संबंधित महत्त्वपूर्ण विधिक प्रावधान किये गए हैं। भारत में पृथ्वी सम्मेलन 1992 की सहभागिता के आधार पर सर्वोच्च न्यायालय द्वारा एम. सी. मेहता बं. भारतसंघ (1992) के वाद के माध्यम से विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) को पर्यावरण शिक्षा हेतु सरकारी एवं गैर-सरकारी संस्थानों की स्थापना, विश्वविद्यालयों में पर्यावरण शिक्षा का प्रारम्भ व राज्य स्तर पर पर्यावरण प्रकोष्ठ निर्माण की व्यवस्था हेतु निर्देशित किया गया। भारत में पर्यावरण संरक्षण व संवर्धन हेतु प्रमुखत:निम्न प्रयास किए गए -

वन्य जीव संरक्षण अधिनियम 1972

जल (प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण) अधिनियम 1974

वन (संरक्षण) अधिनियम 1980

वायु (प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण) अधिनियम 1981

वर्ष 1985 में केन्द्रीय स्तर पर एक विशेष मंत्रालय के रूप में पर्यावरण एवं वन मंत्रालय की स्थापना हुई।

पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1986

राष्ट्रीय पर्यावरण नीति 2006

राष्ट्रीय हरित अधिकरण अधिनियम 2010

पर्यावरण संरक्षण और राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की भूमिका

भारत में पर्यावरण संरक्षण व संवर्धन हेतु प्रभावी शुरुआत वर्ष1997 से प्रारंभ हुई। जिसके मूल में मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम 1993 के अन्तर्गत 12 अक्टूबर, 1993 को अस्तित्व में आया राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग। आयोग ने स्वत: संज्ञान के माध्यम से स्वच्छ पर्यावरण रूपी मानव अधिकार के संरक्षण की शुरुआत वर्ष 2000में उत्तर प्रदेश के मेरठ जिले के मामले से की थी। वर्ष 2000 से लगातार आयोग स्वत: संज्ञान व अन्य माध्यमों से प्राप्त शिकायतों पर कार्यवाही करके पर्यावरण सम्बन्धी मानवाधिकार को पोषित पल्लवित कर रहा है। जिसमें से कुछ मामले इसप्रकार हैं-

आन्ध्र प्रदेश के गुण्टूर स्थित अभिनेनिगुण्टापलेम गांव में करोली प्लास्टिक बॉटल मैन्युफैक्चरिंग इण्डस्ट्री के स्थापित होने से वहां निवास करने वाले अनुसूचित जाति के लोगों के जीवन और स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभाव के सम्बन्ध में आयोग ने संज्ञान लेकर प्रभावी कार्यवाही की। (मामला संख्या 1046/1/6/2016)

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग को आरटीआई परिषद के अध्यक्ष रोहित सभरवाल के माध्यम से शिकायत प्राप्त हुई कि पंजाब प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (पीपीसीबी) की उदासीनता के कारण सतलुज नदी प्रदूषित

हो रही है। लुधियाना के लोग सतलुज नदी के दूषित/प्रदूषित पानी का उपयोग करने के लिए मजबूर हैं, जिससे वे संक्रमित हो सकते हैं और उनकेजीवन व स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। आयोग ने मामले का संज्ञान लेकर कार्यवाही की। (मामला संख्या 430/19/10/2016)

एनबीसीसी द्वारा दक्षिण दिल्ली के रिंग रोड पर की जा रही निर्माण गतिविधियों के कारण 2,38,000 पेड़ों की कटाई से होने वाले सम्भावित पर्यावरण प्रदूषण पर आयोग की पूर्व सदस्य प्रो. अलका क्षत्रिय से प्राप्त शिकायत के आधार पर आयोग ने त्वरित संज्ञान लेकर कार्यवाही की। (मामला संख्या 6310/30/8/2016)।

उड़ीसा के नयागढ़ जिले के रानपुर क्षेत्र में स्थानीय प्रशासन की मिलीभगत से पत्थरों के अवैध खनन से खुली खदान में बारिश का पानी भर जाने से दो बच्चों की मौत उसमें डूब जाने से हो गई। आयोग ने बच्चों के परिवारजनों को एक- एक लाख का मुआवजा दिलाते हुए अवैध खनन पर रोक के निर्देश दिए। (मामला संख्या- 1209/18/31/2016)।

आयोग को हिन्दुस्तान समाचार पत्र के रिपोर्ट शीर्षक "झारखंड के लिए कोई सहायता नहीं" के माध्यम से जानकारी प्राप्त हुई कि झारखंड राज्य के गढ़वा जिले के प्रतापपुर में पानी में फ्लोराइड का स्तर अनुमेय स्तर (विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा निर्धारित 1 पीपीएम) के मुकाबले 3.5ppm है। जिससे वहां के लोगों में फ्लोरोसिस नामक बीमारी बहुतायत में हैं। प्रतापपुर में लगभग हर दूसरे घर में एक व्यक्ति या तो अपंग या बिस्तर पर पड़ा है। आयोग ने समाचार पत्र से प्राप्त सूचना के आधार पर संज्ञान लेकर कार्यवाही की। (मामला संख्या 1209/18/31/2016)।

पर्यावरण संरक्षण हेतु राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग द्वारा जारी एडवाइजरी आधारित सुझाव

- पर्यावरण संरक्षण हेतु वैज्ञानिक व तकनीकी उपायों को अपनाया जाना समय की मांग है।
- प्रिन्ट, इलेक्ट्रॉनिक व सोशल मीडिया के माध्यम से पर्यावरण विधियों, प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के दायित्वों व पर्यावरण प्रदूषण के गम्भीर प्रभावों के विषय में जन-जागरूकता बढ़ायी जानी चाहिए।
- सतत् विकास लक्ष्यों को प्रभावी ढंग से अपनाया जाना चाहिए।
- पर्यावरण को क्षति पहुंचाने वाली गतिविधियों को गम्भीर अपराध की श्रेणी में रखा जाना चाहिए।
- प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड व अन्य प्रदूषण नियामक संस्थाओं को सशक्त बनाने हेतु उनमें नियुक्ति हेतु अनुभव को प्राथमिकता, प्रशिक्षण की उचित व्यवस्था व प्रदूषण से सम्बंधित मामलों के अन्वेषण में विशेष त्वरित निस्तारण प्रक्रिया को अपनाया जाना चाहिए।
- विहित पर्यावरण मानकों को सुनिश्चित कराने हेतु एवं पर्यावरण प्रदूषकों के अभियोजन में प्रदूषण नियंत्रण बोर्डों द्वारा राज्य, जिला व स्थानीय स्तर पर अपेक्षित जनसहयोग प्राप्ति हेतु आवश्यक कदम उठाए जाने चाहिए।
- प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा पर्यावरण प्रदूषण से सम्बंधित सूचनाएं व साक्ष्यों के सुलभ प्राप्ति हेतु एक आनलाइन पोर्टल बनाया जाना चाहिए।

- एन्वायरमेंट इम्पैक्ट एसेसमेंट प्राधिकरणों को अपने द्वारा अनुमोदित प्रोजेक्ट का ब्यौरा अपनी वेबसाईट्स पर उपलब्ध करा देना चाहिए।
- राज्य सरकारों द्वारा प्रदूषण नियंत्रण बोर्डों के वार्षिक प्रदर्शन पर निगरानी हेतु विशेषज्ञ समिति गठित की जानी चाहिए।
- पर्यावरण विधियों के उल्लंघन से सम्बंधित मामलों के त्वरित निस्तारण हेतु उच्च न्यायालयों द्वारा 'पर्यावरण विशेष न्यायालय' स्थापित किये जाने चाहिए।
- पर्यावरण प्रदूषण व प्राकृतिक अधोपतन को रोकने व कम करने हेतु निर्मित अच्छी गतिविधियों को विकसित, संवर्धित व अपनाएं जाने हेतु उद्योगों को पुरस्कृत किया जाना चाहिए, इत्यादि।

निष्कर्ष

भारत पर्यावरण संरक्षण हेतु विश्व के सबसे सशक्त विधिक व नीति-निर्माण तंत्रों में से एक होने के बावजूद आज वायु व जल प्रदूषण और पारिस्थितिक गिरावट की गंभीर समस्या का सामना कर रहा है, जोकि चिंताजनक है। पर्यावरण संरक्षण केवल सरकारों, मानवाधिकार आयोगों व अन्य संस्थाओं की ही जिम्मेदारी नही है अपितु यह प्रत्येक व्यक्ति की जिम्मेदारी भी है। आज़ादी के अमृत महोत्सव के इस कालखंड में हमें भी अपनी सांस्कृतिक मान्यता के अनुरूप पर्यावरण के संरक्षण व संवर्धन में अपनी भूमिका तय करनी होगी। हमें यह समझना होगा कि पर्यावरण प्रबंधन कोई फैशन नहीं बल्कि एक अनिवार्यता है जिसके द्वारा लोगों के स्वच्छ पर्यावरण रूपी मानवाधिकार को सुरक्षित रखा जा सकता है। पर्यावरण-प्रदूषण से बचाव तथा उन्मूलन के विश्वस्तरीय प्रयासों के कदम से कदम मिलाते हुये भारत सरकार, राज्यों की सरकारें, पर्यावरण संरक्षण हेतु जिम्मेदार संस्थाओं व लोगों को इस हेतु सामूहिक प्रयास करना होगा। स्वच्छ पर्यावरण के अधिकार की उपलब्धता सुनिश्चित कराने के उपरांत ही वास्तविकता में मानवाधिकारों की अमृत उपलब्धियां सार्थकता को प्राप्त होंगी।

सन्दर्भ-सूची

1. https://www.google.com/amp/s/m-hindi.indiawaterportal.org
2. डा. के. एस. द्विवेदी, "पर्यावरण: एक मानव अधिकार" (नई दिशाएं, अंक -2, 2005, राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, नई दिल्ली).
3. आर. सी. मिश्र, "पर्यावरण के लिए कानूनी संरक्षण"(नई दिशाएं, राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, नई दिल्ली, अंक -2, 2005).
4. https://www.drishtiias.com/hindi/daily-updates/daily-news-analysis/right-to-clean-environment.
5. मानवाधिकार: नई दिशाएं, अंक-3, 2006, राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, नई दिल्ली.
6. राजेश कुमार, "पर्यावरण प्रबंधन में मानवाधिकार संरक्षण" (श्री प्रभु प्रतिभा, 2010).
7. राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, भारत, वार्षिक रिपोर्ट 2016-17.
8. राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, भारत, वार्षिक रिपोर्ट 2018-19.
9. राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग द्वारा जारी 'पर्यावरण प्रदूषण व मानव अधिकारों की अधोगति के प्रभावों

को रोकने तथा कम करने' के विषय पर जारी एडवाइजरी (9 मई, 2022).

10. आशीष कोठारी एवं अनुप्रिता पटेल, "पर्यावरण और मानव अधिकार" (राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, नई दिल्ली, 2006).
11. डॉ. अनीस अहमद, "गरीबी, मानवाधिकार एवं सतत् विकास-एक विश्लेषणात्मक अध्ययन" (नई दिशाएं, अंक 12, 2015, राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, नई दिल्ली).

●●●●

"अमृता प्रीतम एवं कृष्णा सोबती के उपन्यासों में अभिव्यक्त स्त्री अधिकार के प्रश्न"

के एम मेनिका सिंह*

मानवाधिकार से हमारा अभिप्राय ऐसे नैसर्गिक एवं सहज अधिकारों से होता है जो मनुष्यों में मानवीय गरिमा को सुनिश्चित करने के लिए आधारभूत उपादान की तरह होते हैं। जो अधिकार मानव को मानव होने की वजह से जन्मना मिल सके वह समस्त अधिकार मानवाधिकार की परिधि में आते हैं। प्रत्येक व्यक्ति की तरह स्त्रियों के जीवन में भी मानव अधिकार समान रूप से आवश्यक है जिनकी बदौलत एक स्त्री अपने जीवन का सर्वांगीण विकास कर सकती है और सहज मानवीय गरिमा के साथ जीवन-यापन कर सकती है। वृहद् परिप्रेक्ष्य में अमृता प्रीतम एवं कृष्णा सोबती के उपन्यास स्त्री-अधिकारों के प्रति भारतीय एवं विशेषकर हिंदी पट्टी में एक तरह की संरचनात्मक जागरूकता उत्पन्न करने और उसके प्रसारण का काम करती हैं।

आधुनिक साहित्यिक रचना-धारा में अमृता प्रीतम और कृष्णा सोबती भारतीय साहित्य जगत की प्रारम्भिक और अतिमहत्वपूर्ण स्त्री रचनाकार रही हैं। अमृता प्रीतम एवं कृष्णा सोबती का चिन्तन तथा लेखन महिला-जीवन के विविध पहलुओं को बड़ी बारीकी से उकेरने में सक्षम रहा है। मूल रूप से पंजाबी भाषा की लेखिका अमृता प्रीतम के उपन्यास स्त्री-जीवन की जीवंत दस्तावेज़ मानी जाती हैं। अमृता प्रीतम के अधिकांश उपन्यास भारतीय ज्ञानपीठ के सौजन्य से हिंदी में अनूदित होकर प्रकाशित हो चुके हैं। कृष्णा सोबती भी पंजाबी पृष्ठभूमि से ही ताल्लुक रखती हैं किन्तु इनका लेखन कार्य मूल रूप से हिंदी भाषा में ही हुआ है जिसमें निस्संदेह पंजाबी एवं फ़ारसी मिश्रित उर्दू शब्दों की भी प्रयुक्ति हुई है। अपने कलेवर में अमृता प्रीतम एवं कृष्णा सोबती के उपन्यास स्त्री-जीवन के विविध पहलुओं पर प्रमुखता से रचनात्मक विचार करती है, स्त्री-गरिमा एवं स्त्री-अधिकारों की वकालत करते हुए विमर्श के आधुनिक मूल्यबोध सृजित करती हैं।

स्वतंत्रता के पूर्व जन्म लेने वालीं अमृता प्रीतम और कृष्णा सोबती सामाजिक जीवन में जहाँ स्त्रियों की पराधीनता को एक लम्बे अर्से और विविध पहलुओं से देखने में सक्षम हो सकीं थीं वहीं राजनीतिक-प्रशासनिक रूप से अपने वतन के परतंत्र अवस्था की भी साक्षी रहीं। औपनिवेशिक भारत में अमृता प्रीतम और कृष्णा सोबती दोनों ही बाल्य-काल एवं युवावस्था बड़े स्तर पर सामाजिक-सांस्कृतिक-राजनीतिक एवं आर्थिक परिवर्तनों की गवाह रही है। स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत भी सामाजिक-सांस्कृतिक-राजनीतिक एवं

** शोधार्थी, भारतीय भाषा केंद्र, जेएनयू, नई दिल्ली*

आर्थिक परिवर्तनों के आलोक में इनका जीवन युगांतकारी परिघटनाओं की अनुभवजन्यता से समृद्ध रहा है। ब्रिटिश सत्ता से स्वतंत्रता-प्राप्ति की ख़ुशी के साथ-साथ देश-विभाजन की त्रासदी भी इनमें से एक अत्यंत महत्वपूर्ण परिघटना रही है। अव्वल बात यह है कि अमृता प्रीतम और कृष्णा सोबती दोनों ने ही अपनी लेखनी के द्वारा तमाम झंझावातों एवं भौगोलिक टूटन की पीड़ादायक परिस्थितियों से बखूबी मुठभेड़ जारी रखते हुए हर बदलते परिप्रेक्ष्य में स्त्री-सरोकारों को ही रचना के केंद्र में रखा।

परम्परागत पितृसत्तात्मक समाज में स्त्री दोयम दर्जे की ही नागरिक मानी जाती रही हैं। युगों तक घर की चहारदीवारी में कैद रहने को अभिशप्त स्त्री जब आधुनिक शिक्षाओं एवं उन्नीसवीं-बीसवीं सदी के नवजागरणकालीन दौर में घर से बाहर निकलकर स्व के मानवीय उत्कर्ष हेतु शिक्षा एवं अवसर प्राप्ति के संघर्षों में लीन हुई तब बाहर का संसार पुरुष प्रधान तो था किन्तु उनमें से कुछ पुरुष स्त्री-अधिकारों के अगुआ भी थे। राजा राममोहन राय, ईश्वरचंद विद्यासागर, महात्मा ज्योतिबा फुले, महादेव गोविन्द रानडे, गुरुवर रवीन्द्रनाथ ठाकुर, दयानंद सरस्वती, स्वामी विवेकानंद, छत्रपति साहूजी महाराज, महात्मा गाँधी, बाबा साहब डॉ. भीमराव अंबेडकर, भारतेंदु हरीशचंद्र, महावीर प्रसाद द्विवेदी, कथा-सम्राट मुंशी प्रेमचंद आदि ऐसे ही महापुरुष थे जिन्होंने स्त्री-पुरुष समानता की वकालत की और स्त्री-अधिकारों की बहाली की दिशा में सार्थक पहल की। इन महापुरुषों ने अपने ओजस्वी वक्तव्यों, लेखन-कार्य एवं सक्रिय क्रियाविधियों से स्त्री-मानवाधिकार के प्रति एक बड़े जनमानस को सफलतापूर्वक जागरूक करने का युगीन कार्य किया। नवजागरण-काल की नव-प्रभाती में स्त्री-शिक्षा व स्त्री मानवाधिकारों की अगुआ पुरखिनें प्रथम शिक्षिका सावित्रीबाई फुले, फ़ातिमा शेख़, पंडिता रमाबाई, ताराबाई शिंदे, दुर्गाबाई देशमुख, सरोजिनी नायडू, एनी बेसेंट, महादेवी वर्मा, सुभद्राकुमारी चौहान आदि ने भी स्त्री-जीवन में मानवीय गरिमा को सुनिश्चित करने के लिए अभूतपूर्व दायित्वों का निर्वहन किया। अमृता प्रीतम और कृष्णा सोबती भी हमारी पुरखिनों की उन्हीं श्रृंखला से जुड़ी हुई हैं और मानवाधिकार के परिप्रेक्ष्य में स्त्री-प्रश्नों की कुशल चितेरी हैं।

महिला तस्करी की घटना किसी भी सभ्य समाज पर बदनुमा दाग़ के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है जिसका शिकार होकर एक स्त्री अपनी मूल मानवाधिकारों से एक झटके में विलग हो जाती है। महिला तस्करी की शिकार हुई स्त्री के जीवन में कभी ताउम्र अँधियारा छाया रहता है तो कभी उन्हें कुसमय अपनी जान तक गँवानी पड़ती है। अमृता प्रीतम कृत 'पिंजर' उपन्यास में नवयुवती 'पूरो' ख़ानदानी दुश्मनी की आड़ में अगवा कर ली जाती है। पूरो और उसके अपहरणकर्त्ता अलग-अलग मजहब के होते हैं। यह वक्त भी देश विभाजन का वीभत्स दौर होता है। 'पूरो' दो मजहबों की टक्कर में टूट जाती है। लेकिन वह जानती है कि नफ़रत के दाग को, नफ़रत के पानी से नही धोया जा सकता और जब दोनों देशों की अगवाशुदा लड़कियाँ, अपने-अपने देश को लौटाई जाती हैं, तब पूरो कहती है, "चाहे कोई लड़की हिन्दू हो, या मुसलमान, जो भी अपने ठिकाने पर पहुँच रही है, उसी के साथ मेरी आत्मा भी ठिकाने पर पहुँच रही है...। "

अमृता प्रीतम ने अपने उपन्यासों के माध्यम से समाज में व्याप्त अनेक विसंगतियों और रूढ़ियों को तोड़ने का प्रयास किया है। उनके उपन्यास के पात्रों में मुख्य पात्र नारी है जिसके भीतर वे स्त्री-स्वाधीनता एवं स्त्री-अधिकारों की चेतना उजागर करती हैं। उन्होंने उन सभी स्त्रियों को अपनी लेखनी में स्थान दिया जो अपने अधिकारों से वंचित और पुरुषों के द्वारा शोषित की गई हैं जैसे पतिव्रता स्त्रियाँ, घरेलू कामकाजी स्त्रियाँ, स्वाधीनचेत्ता स्त्रियाँ, गणिकाएँ, यौन-दासियाँ तथा ग्रामीण और मजदूर स्त्रियाँ आदि। अमृता उस दौर से गुजर रही थी जिस दौर में औपनिवेशिक चालबाजियों की ओट में हिन्दू-मुस्लिम धर्म के प्रति भेदभाव, स्त्रियों के

साथ किए जा रहे अन्याय एवं पर्दा-प्रथा अपने चरम पर थी। उनके भीतर इन सभी कुरीतियों के विरुद्ध आवाज उठाने की हिम्मत थी। अमृता इस भेदभाव का विरोध सबसे पहले अपने परिवार से शुरू करती हुई समाज में भी अपनी आवाज बुलंद करती हैं तथा अपनी लेखनी के माध्यम से उन तमाम स्त्रियों को अपने अधिकारों के प्रति सजग करती हुई दिखाई देती हैं।

कृष्णा सोबती कृत 'सूरजमुखी अँधेरे के' उपन्यास की केन्द्रीय स्त्री-पात्र रत्ती बाल यौन-शोषण का शिकार हुई है। 'रत्ती' का प्रथम अपराधी तो वह पुरुष है जिसने रत्ती के साथ बलात्कार किया और दूसरा अपराधी यह समाज है जिसने रत्ती के बलात्कार पर सार्थक प्रतिक्रिया नहीं दी, प्रथम अपराधी के प्रति न्यायसंगत कार्यवाही नहीं की। बचपन में अपने प्रति हुए घृणित अपराध का खामियाजा रत्ती को उम्र भर भुगतना पड़ता है। ध्यातव्य है, "बलात्कार स्त्री के निजत्व पर गहरी चोट है। जर्मेन ग्रीयर इसे 'पुरुष की स्त्री के प्रति आदमी की कामना या जबर्दस्त आकर्षण के बाध्यकर प्रत्युत्तर की अभिव्यक्ति' मानने की बजाय 'आत्मवितृष्णा से जन्मा, घृणा के पात्र पर किया गया हत्यारी आक्रामकता से भरा कृत्य' मानती हैं। " स्त्री-जीवन पर 'बलात्कार' जैसे जघन्य कृत्य की क्रूरता को रेखांकित करती हुई स्त्रीवादी आलोचक रोहिणी अग्रवाल उचित ही लिखती है, "हिंदी कथा साहित्य में 'सूरजमुखी अंधेरे के' पहली कथा-रचना है जिसने निषिद्ध क्षेत्र में प्रवेश करते हुए स्त्री के अंतस्तल के उन आतंक भरे अंधेरों को चीन्हने का प्रयास किया है जिन्हें गहराने का संस्कार प्रत्येक व्यक्ति (बेशक इसमें उदार एवं संवेदनशील व्यक्ति भी अपनी गूंगी निष्क्रिय निष्प्राण चुप्पी के साथ शामिल हैं) विरासत में पाता रहा है। 'आतंक का एक अपना एकांत होता है। एकांत की एक अपनी लिपि। भय का एक अपना सन्नाटा'। "

"विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट के मुताबिक भारत में हर 54 मिनट में एक महिला के साथ बलात्कार होता है। बलात्कार के सोलह फीसदी मामले ही पुलिस थाने में दर्ज हो पाते हैं जबकि करीब 84 प्रतिशत महिलाएं तरह-तरह के दबावों के अधीन एफ.आई.आर. तक दर्ज नहीं करा पातीं। सौ में से बमुश्किल चार बलात्कारियों को ही अदालत से दंड मिल पाता है। शेष समाज में सरेआम सीना तानकर संभ्रांत अभिजन की जिंदगी जीते हैं। 2001 यानी महिला सशक्तीकरण वर्ष के प्रारंभिक महीनों में दिल्ली में हुए एक सर्वेक्षण के जरिए सामने आए बलात्कार के 366 मामलों में 321 आरोपी परिवार के ही सदस्य थे। " यह आंकड़े वर्तमान वर्षों में और डरावने हो चुके हैं। वास्तव में, रत्ती के माध्यम से कृष्णा सोबती ने बाल यौन शोषण की शिकार उन असंख्य स्त्रियों की जीवन गाथा का त्रासद चित्रण किया है, जिसकी रपट कहीं दर्ज नहीं है; और परम्परा से जिसकी भुक्तभोगी स्त्री जाति रही है फ़िर भी समाज में यह मुद्दा विमर्श की विषय-सूचियों में सम्मिलित नहीं हो सका है।

वर्तमान समाज में बालिकाओं के अतिरिक्त बालकों के यौन-शोषण की वीभत्स घटनाओं की संख्याओं में भी बढ़ोतरी देखी जा रही है। ऐसे में रत्ती जैसे पात्र की सर्जना कर कृष्णा सोबती ने स्त्री-जीवन को न्यायपूर्ण-गरिमा एवं मानवाधिकारों के परिप्रेक्ष्य में देखने की आवश्यकता से हिन्दी जगत को परिचित कराया। उपन्यास के कथानकों में रत्ती अपनी उस हीन मनोग्रंथि से मुक्त हो जाती है जिसकी शिकार वो बचपन में हो गयी थी। रत्ती की जिजीविषा और सफल कहानी के माध्यम से कृष्णा सोबती रत्ती को एक सशक्त स्त्री पात्र के रूप में ढालती हैं और अपनी नैसर्गिक मानवाधिकारों के प्रति सजग करती हैं।

एक परम्परागत और रूढ़ियों से युक्त भारतीय समाज में स्त्री के रूप में जन्म लेना स्वत: ही जीवन भर के अथक संघर्ष से जुड़ जाने के समान है। परम्परागत भारतीय समाज में बिटिया के रूप में जन्म लेना शिक्षा

और जीवन-पथ पर उन्नति की संभावनाओं को क्षीण कर देने के लिए जाना जाता रहा है! प्रख्यात स्त्री-चिंतक सिमोन द बुवा समाज में स्त्रियों की परंपरागत अवस्था को विश्लेषित करते हुए लिखती हैं, "स्त्री के स्वभाव, विश्वास, मान्यताएं, नैतिकता, रूचि और व्यवहार का विवेचन उसकी स्थिति द्वारा होता है। चूँकि वह जानती है कि वह सर्वोपरि स्थान नहीं प्राप्त कर सकती, इसलिए वह वीरता, विद्रोह, सृजन और कल्पना के ऊँचे आदर्शों से अलग रहती है। " यद्यपि, यह स्त्री-अधिकारों की मानवाधिकार स्थापना के सन्दर्भ में प्रसन्नता की बात है कि अब वैज्ञानिक और तार्किक शिक्षाओं से युक्त आधुनिक होते दौर में पूर्व के दकियानूसी विचारों को त्यागकर बेटियों को भी उचित शिक्षा प्रदान कर जीवन पथ पर उनके उन्नतशील अवसरों को निखारने का महती प्रयास किया जा रहा है।

ईश्वर ने स्त्री को पुरुष की तुलना में अधिक मानवीय गुणों से नवाज कर सृजित किया है किन्तु धर्म की आड़ लेकर कई बार स्त्रियों को मंदिर-प्रवेश (सबरीमाला मंदिर के परिप्रेक्ष्य में) तक से वंचित कर दिया जाता है; मस्जिदों में तो स्त्रियों का प्रवेश 'पूजा स्थल (गर्भ-गृह)' तक कदाचित् निषिद्ध ही है। अमृता प्रीतम लिखती हैं,"यह सदियों का दुखान्त है कि धर्म के नाम पर इन्सान से आँखों की बलि माँगी गई और चिंतन से तर्कशक्ति की बलि मांगी गई... एक वक़्त था जब राजा जनक से एक ऋषि ने कोई वरदान मांगने के लिए कहा। उस वक़्त राजा जनक ने कहा- हे ऋषि! मुझे यही वरदान दीजिए कि मैं जब चाहूं, मुझे आपसे प्रश्न पूछने का अधिकार हो!" राजा जनक और ऋषिवर का यह संवाद अत्यंत अर्थपूर्ण है। अमृता प्रीतम के शब्दों में, "यह कितना बड़ा वरदान था कि जिज्ञासु को प्रश्न पूछने का अधिकार मिला। क्या आज किसी भी मजहब में किसी भी जिज्ञासु को प्रश्न पूछने का अधिकार है? – यही हमारे समय का दुखान्त है कि धर्म के नाम पर इन्सान की तर्कशक्ति से जबान की बलि मांगी जाती है, विश्वास से आँखों की बलि मांगी जाती है। "

यह ध्यान देने योग्य तथ्य है कि एक पराधीन समाज में बेटी के रूप में जन्म लेकर अमृता प्रीतम एवं कृष्णा सोबती ने स्त्री-जीवन के तमाम संघर्षों को बखूबी झेला किन्तु उन संघर्षों से निखरकर उन्होंने स्त्री-अस्मिता, स्त्री-स्वाधीनता, स्त्री-अधिकारों, स्त्री-शिक्षा एवं उनकी आत्मनिर्भरता की व्यापक लौ जलाई। स्त्री जीवन के विविध पहलुओं से सम्बद्ध व स्त्री स्वाधीनता की व्यापक भावना से ओतप्रोत, हिंदी साहित्य के इतिहास में ऐसे कई महत्वपूर्ण रचनात्मक प्रस्थान बिंदु रहे हैं, जिनपर लेखनी चलाने की शुरुआत अमृता प्रीतम एवं कृष्णा सोबती ने की है। अमृता प्रीतम और कृष्णा सोबती स्त्री स्वाधीनता की व्यापक पैरोकार इसलिए भी बन सकीं क्योंकि उन्होंने राजनीतिक रूप से पराधीन समाज में पुरुषों की दशा एवं मानसिक रूप से पराधीन समाज में स्त्रियों की दशा को अत्यंत नजदीक से देखा-समझा था। सिमोन लिखती हैं, "घृणा, हिंसा, दमन और उत्पीड़न निस्संदेह किसी भी व्यक्ति का मनोबल तोड़ने में अहम भूमिका निभाते हैं, लेकिन बकौल सिमोन ये तो वे भोथरे हथियार हैं जिनका स्त्री के खिलाफ वही पुरुष इस्तेमाल करता है जो "मानसिक रूप से स्वयं अपमानित होने की आशंका से ग्रस्त रहता है। " औपनिवेशिक दौर में भारतीयों की पराधीनता और पराधीन समाज में स्त्रियों की अतिरिक्त पराधीनता के परिप्रेक्ष्य में उक्त कथन की प्रासंगिकता देखी जा सकती है।

अमृता प्रीतम के'पिंजर', 'आक के पत्ते', 'कोरे काग़ज', 'नागमणि', 'धरती सागर और सीपियाँ' आदि तथाकृष्णा सोबती के'डार से बिछुड़ी', 'मित्रो मरजानी', 'यारों के यार', 'तीन पहाड़', 'सूरजमुखी अंधेरे के', 'जिंदगीनामा', 'ऐ लड़की', 'दिलो दानिश' इत्यादि उपन्यासों में हकीकत की सीमा और कल्पना की परा-सीमा कुछ इस तरह मिलती है कि उनके उपन्यास की महिलाएं यथा- अलका (नागमणि), चेतना (धरती सागर और सीपियाँ), पूरो, तारो और पगली औरत (पिंजर), चित्रा और अम्मु (ऐ लड़की), मित्रो,

धनवंती और जनको (मित्रो मरजानी), पाशो (डार से बिछुड़ी), रत्ती (सूरजमुखी अँधेरे के) जैसी केन्द्रीय स्त्री-पात्रसंघर्षमय जीवन-यापन करते हुए जीवन में अनेक समस्याओं से छुटकारा उसी तरह पा लेती हैं, जिस तरह दो नदियों का पानी कहीं मिल जाए और एक होकर बहने लगे। इस प्रकार अमृता प्रीतम और कृष्णा सोबती के उपन्यास की नारी पात्र चिंतन की बुनियाद को समझने लगी हैं और समाज में पल्लू से बंधी व्यवस्था को तोड़ते हुए, हर कदम पर यथार्थ से मुठभेड़ करते हुए स्व के स्त्री-अधिकारों को पहचानना प्रारम्भ कर दी हैं। दोनों महिला रचनाकारों ने नारी के घर और बाहर दोनों स्थानों पर उसकी मानसिक, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक स्थितियों का बखूबी चित्रण किया है। वे मानती हैं कि वर्तमान समय बदलाव का समय है और स्त्री-सशक्तिकरण, स्त्री-मानवाधिकारों की प्रदायगी एवं उनकी आर्थिक सबलता इसकी बुनियाद है। समकालीन चिंतक मृणाल पांडे लिखती हैं, "एक स्त्री कामकाजी महिला तब बनती है जब वह ऐसे कार्यों में भागीदारी लेती है, जो आर्थिक रूप से उत्पादन से जुड़े हों। " आज महिलाएं अपनी अस्मिता को समझते हुए, अपने स्व की ऐसी पहचान बना चुकी हैं जिसमें वह एक ओर घर के कार्यों में माँ, पत्नी, बहन, पुत्री विभिन्न भूमिकाओं को निभा रही हैं और दूसरी ओर घर से बाहर हर क्षेत्र में पुरुषों के कंधे से कंधा मिलाकर हर क्षेत्र में (आर्थिक क्षेत्र में भी) बेहतर कार्य कर रही हैं। पुरानी परिपाटी एवं मानसिक जकड़न से वह स्वतंत्र होकर जीवन यापन कर रही हैं। भारत में संवैधानिक समता एवं संविधान प्रदत्त अधिकारों के तत्वावधान में तथा राष्ट्रीय महिला आयोग, राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग प्रभृति संरक्षक संस्थानों एवं दहेज़ निवारण अधिनियम, सती प्रथा निवारण अधिनियम, अनैतिक व्यापार निवारण अधिनियम, विशेष विवाह अधिनियम, समान पारिश्रमिक अधिनियम, महिला संरक्षण अधिनियम आदि क़ानूनी सुरक्षा के तहत् महिलाएँ स्त्री मानवाधिकारों के सम्पूर्ण लक्ष्य की प्राप्ति की दिशा में अग्रसर एवं आशान्वित हैं।

●●●●

युद्ध की विभीषिका और मानवाधिकार : आधुनिक हिन्दी काव्य-नाटकों के संदर्भ में

डॉ. वीरेन्द्र सिंह*

शोध सारांश- युद्ध इतिहास की सच्चाई है। वैदिक काल से लेकर आधुनिक वैज्ञानिक युग तक युद्ध होते रहे हैं। हाँ, समय के साथ-साथ युद्ध के नियम और तरीके बदलते रहे हैं। प्राचीन समय में जहाँ युद्ध आमने सामने के होते थे वहीं आधुनिक वैज्ञानिक युग में युद्ध रिमोट कंट्रोल चलित परमाणु बमों एवं हाइड्रोजन बमों से होते हैं। प्राचीन समय में युद्ध केवल युद्धरत पीढ़ी को ही प्रभावित करता था वहीं वर्तमान काल में युद्ध युद्धरत वर्तमान पीढ़ी के साथ-साथ आने वाली पीढ़ियों को भी शारीरिक एवं मानसिक रूप से विक्षिप्त कर देता है। युद्ध हमेशा से मानवीय मूल्यों और मानवाधिकारों के लिए एक भीषण संकट के रूप में उपस्थित होता रहा है। युद्ध सदैव ही मानवता का विनाशक एवं मानवाधिकारों के लिए चुनौती उत्पन्न करता है। सार्वभौमिक मानव अधिकारों का जो घोषणा पत्र संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा 10 दिसंबर 1948 ईस्वी को स्वीकार किया गया उसके मूल में द्वितीय विश्व युद्ध से आहत विश्व की पीड़ा ही थी। इससे पूर्व 'राष्ट्र संघ' की स्थापना के पीछे भी प्रथम विश्व युद्ध की विभीषिका ही थी। संयुक्त राष्ट्र संघ के घोषणापत्र में स्वीकार किया गया कि नस्ल, रंग, लिंग, भाषा, धर्म, राजनीति, राष्ट्रीय अथवा सामाजिक विचारधाराओं के बीच मानव सभी प्रकार के अधिकारों एवं स्वतंत्रताओं का अधिकारी है। साहित्य अपने समय एवं समाज के यथार्थ का दस्तावेज होने के साथ-साथ मानवीय मूल्यों के संरक्षण एवं मानवाधिकारों की बात करता है। आधुनिक हिंदी काव्य-नाटकों में युद्ध की विभीषिका एवं विभीषिका से उत्पन्न मानवीय मूल्यों एवं मानवाधिकारों के संकट को मुखर तरीके से अभिव्यक्त किया गया है।

बीज शब्द - युद्ध, विभीषिका, मानवाधिकार, काव्य-नाटक, मौलिक अधिकार, मानवीय गरिमा, अस्मिता, स्वतंत्रता, समानता, स्वत्व।

आज हम जिस युग में जी रहे हैं, युद्ध उसका सबसे भयानक अनुभव है। युद्ध की विभीषिका आधुनिक काल में सबसे भयावह होकर उभरी है। एक ओर भौगोलिक दूरियों के टूट जाने के कारण अंतरराष्ट्रीय क्षितिज का विस्तार हुआ है तो दूसरी ओर एक का संकट दूसरे का भी संकट हो गया है। वैश्विक महाशक्ति बनने की प्रतिस्पर्धा ने इस संकट को और बढ़ा दिया है। एक ओर बहुत से देश विश्व-परिवार की कल्पना करते हैं दूसरी ओर कुछ अपनी राष्ट्रीय सीमाओं के विस्तार में लगे होकर दूसरे राष्ट्रों को भी अपने अंदर लील जाना चाहते

* *सहायक आचार्य, हिंदी विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर - 302004*

हैं। डॉ. मदन गुलाटी लिखते हैं "मनुष्य जाति के तीन हजार वर्षों के छोटे से इतिहास में अनुमानतः पन्द्रह हजार युद्ध हुए हैं। प्रतिवर्ष पांच युद्ध। संपूर्ण संसार का इतिहास एक युद्ध से दूसरे युद्ध तक के बीच के क्रियाकलापों का इतिहास रहा है। युद्ध राज्य विस्तार के लिए लड़े गए हैं, न्याय के लिए युद्ध किए गए हैं, धर्म के लिए युद्ध किए गए हैं और यहां तक की शांति के लिए युद्ध लड़े गए हैं। वस्तुतः युद्ध पूरे संसार के इतिहास का एक घिनौना सत्य है। इतना ही नहीं युद्ध अपनी समाप्ति के पश्चात भी समाप्त नहीं होते वे अपने पीछे मृत्यु, भय, संत्रास, अकाल, भूख की श्रृंखला छोड़ जाते हैं।"

युद्ध के मूल कारणों की अगर चर्चा करें तो साम्राज्यवाद, शोषण, मानवाधिकारों के हनन की प्रवृत्ति, सत्ताधीशों की महत्वाकांक्षा व पड़ोसी राष्ट्र में अशांति उत्पन्न करना ही सदैव युद्धों के मूल में रहा है। दूसरा पक्ष उन्हीं मानवाधिकारों और मानवीय स्वत्व की रक्षा के लिए युद्ध को स्वीकारता है। 'महाप्रस्थान' काव्य-नाटक में नरेश मेहता ने महाभारतीय मिथक के माध्यम से युद्ध की स्थिति उत्पन्न होने के इन्हीं कारणों पर चर्चा करते हुए लिखा है-

"मूल्य और मानवी उदात्तताएँ
जब सार्वजनिक जीवन में
हो जाती हैं शेष
तभी होता है युद्ध
युद्ध का घोष"

बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में लगभग दो दशकों के अंतर में दो महायुद्ध हुए हैं। इन युद्धों के प्रभाव से कोई भी देश अछूता नहीं रहा। दो - दो विश्व युद्धों के अलावा भारत को अपने पड़ोसी देश से भी जब-तब युद्ध का सामना करना पड़ता रहा है, चाहे वह पाकिस्तान से समय-समय पर होते रहे हो अथवा चीन से। इजराइल-फिलिस्तीन युद्ध, इराक- संयुक्त राज्य अमेरिका युद्ध अथवा वर्तमान में चल रहा रूस- यूक्रेन युद्ध। समकालीन परिदृश्य में युद्ध की भयावहता को दिखाने के लिए पर्याप्त है। युद्ध को हारने वाले और यहां तक कि जीतने वाले देश भी उसकी विभीषिका को झेलने के लिए असह्य हो उठता है। वस्तुत: युद्ध भी राजनीतिक दांव पेचों की अंतिम परिणति ही है। रामधारी सिंह दिनकर 'शुद्ध कविता की खोज' में लिखते हैं "युद्ध भी राजनीति का एक रुप है। राजनीति जब सफेद लिबास पहनती है, हम उसे शांति कहते हैं। जब उसके कपड़े लहू से लाल हो जाते हैं तो वह युद्ध कहलाती है। "राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय पृष्ठभूमि पर युद्ध की विभीषिका राजनीतिक युगबोध की दु:खद त्रासदी है। युद्ध अंतिम परिणिति में मानव एवं मानव मूल्यों के साथ-साथ मानवाधिकारों के विरुद्ध षड्यंत्र होता है। युद्ध के उपरांत अराजकता, अशांति, महामारी, भुखमरी, ध्वंस, युद्ध बंदियों के मानवाधिकारों का हनन इत्यादि ही शेष बचे रह जाते हैं। वस्तुतः यह सब विघटनकारी तत्व हैं। विघटन की यह प्रक्रिया बाह्य एवं आंतरिक दोनों ही स्तरों पर उभर कर सामने आती है। बाह्य स्तर पर विघटन का संबंध हत्या, रक्तपात और आतंक के साथ-साथ मानव के मूल अधिकारों के हनन के स्तर पर घटित होती है। आंतरिक स्तर पर मानवीय चरित्र, मर्यादा, सामाजिक-सांस्कृतिक बोध से उत्पन्न हुई विकृति से है। युद्ध में विजय केवल अविवेकी, स्वार्थी, अंधी प्रवृतियों की होती है। मर्यादा, आस्था, विश्वास, मानवीय मूल्य और मानवाधिकारों का हनन दोनों ही पक्षों के द्वारा होता है। आधुनिक हिंदी काव्य-नाटकों में युद्ध जैसी भयावह स्थिति से उत्पन्न विभीषिका एवं युद्धोपरांत मानवीय मूल्यों का क्षरण, मानव अधिकारों के हनन का सवाल मिथकीय-पौराणिक एवं ऐतिहासिक आख्यानों के माध्यम से नाटकीय शैली मे पद्यबद्ध किया है। युद्ध में चाहे

शासक को विजय लाभ ही क्यों न हो,वह शान्ति नहीं पाता। काव्य नाटक 'उत्तरप्रियदर्शी' का नायक अशोक युद्ध में विजय लाभ के बाद भी मानसिक तनाव को जिस रूप में व्यक्त करता है वह यथार्थ है-

"किंतु दिशाएं
क्यों रंजित होती जाती हैं अनुक्षण
युद्ध भूमि के शोणित से?
क्यों संध्या की
स्निग्ध शांति को चीर
भंग कर मंगल गायन का सम्मेलन
उमड़ा आता है चीत्कार स्वरों का।"

'अंधायुग' काव्य नाटक में धर्मवीर भारती इस बात का उद्घाटन करते हुए कहते हैं-

"यह अजब युद्ध है नहीं किसी की भी जय
दोनों ही पक्षों को खोना ही खोना है
दोनों ही पक्षों में विवेक ही हारा
दोनों ही पक्षों में जीता अंधापन।"

प्रथम विश्व युद्ध के कारण चाहे जो भी रहे हो परंतु परिणाम भयंकर रहे। 1914 से 1918 ईस्वी तक हुआ प्रथम विश्वयुद्ध इससे पूर्व के समस्त युद्धों से अधिक भयंकर एवं विनाशकारी था। इसमें 36 देशों ने भाग लिया जिनके एक करोड़ तीस लाख सैनिक हताहत हुए। इस युद्ध में अपार धन व्यय किया गया। दोनों पक्षों ने युद्ध में एक खरब छियासी अरब डॉलर व्यय किए। इसके अतिरिक्त हजारों व्यक्ति हत्याकांड, बीमारी तथा भूख से मारे गए। एक खरब डॉलर की संपत्ति नष्ट हो गई। युद्धों की इस भयंकर विभीषिका को काव्य-नाटककार नरेश मेहता ने महाभारत के युद्ध के माध्यम से काव्य- नाटक 'महाप्रस्थान' में इस प्रकार लिखा है-

"जैसे हमने अपने ही हाथों अपना शवदाह किया।
कैसा शमशान तब जगा-
सब अनाथ विकलांग हो गये
वंश के वंश
धरा से नष्ट हो गये
जयी पराजित सभी अकिंचन।"

प्रथम विश्व युद्ध का विश्व की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक स्थिति पर गंभीर प्रभाव हुए। मानव अस्तित्व और मानवाधिकारों के संरक्षण व वैश्विक शांति के लिए विश्वव्यापी स्तर पर अंतरराष्ट्रीय संस्था की स्थापना की जरूरत महसूस हुई फलस्वरूप विश्व युद्ध के अंतिम क्षणों में अमेरिका के राष्ट्रपति वुडरो विल्सन ने विश्व शांति के लिए चौदह-सूत्रीय कार्यक्रम प्रस्तुत किए। इस कार्यक्रम में विश्व की भावी रचना तथा स्थाई शांति के लिए सभी देशों के एक संगठन स्थापित करने की बात की गई। पेरिस शांति सम्मेलन में विल्सन ने अपनी इस योजना को क्रियान्वित करने का प्रयास किया और उनके इस संकल्प के

फलस्वरूप 'राष्ट्र संघ' अस्तित्व में आया। जिसे आधुनिक काल में मानव अधिकार व विश्व शांति की दिशा में उठाया गया महत्वपूर्ण कदम कहा जा सकता है। 'राष्ट्र संघ' का प्रमुख उद्देश्य अंतरराष्ट्रीय शांति और सुरक्षा की स्थापना अर्थात न्याय और सम्मान के आधार पर अंतरराष्ट्रीय संबंधों के विकास द्वारा भावी युद्ध को टालना, विश्व के राष्ट्रों के बीच भौतिक व मानसिक सहयोग को प्रोत्साहन देना, जिससे मानव सुखी व समृद्ध बन सके। इस प्रकार 'राष्ट्र संघ' की स्थापना के उद्देश्य के पीछे कहीं ना कहीं मानव अस्तित्व, मानव अधिकार व उसके स्वत्व की रक्षा करते हुए वैश्विक शांति कायम करना था। 'राष्ट्र संघ' द्वारा श्रमिकों के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और शैक्षणिक स्तर को सुधारने के लिए 'अंतरराष्ट्रीय श्रम संघ', जनता के स्वास्थ्य में सुधार कर लोगों के शारीरिक विकास के लिए उत्तम वातावरण उपलब्ध कराने हेतु 'अंतरराष्ट्रीय स्वास्थ्य संगठन', अल्पसंख्यकों के संरक्षण एवं उनके अधिकारों की रक्षा, आदि की स्थापना के मूल में मानवाधिकारो की अवधारणा ही थी। इतना ही नही बल्कि 'राष्ट्र संघ' के सदस्य राज्यों से अपने देशों व उन देशों में जिनके साथ उनके व्यापारिक संबंध हैं, उनके स्त्री-पुरुष, बच्चों के लिए न्यायप्रद व मानवतापूर्ण स्थितियां उत्पन्न करने और अधीन देशों की जनता के साथ सहानुभूति पूर्ण व्यवहार करने की बात भी रखी गई। 'राष्ट्र संघ' प्रसंविदा के अंतर्गत एक स्थाई अंतरराष्ट्रीय न्यायालय की भी व्यवस्था की गई, जिसकी स्थापना 13 दिसंबर 1920 को हेग में हुई। जो बाद में सन 1946 में संयुक्त राष्ट्र संघ के न्याय के 'अंतरराष्ट्रीय न्यायालय' के रूप में परिवर्तित हो गया।

नवीनतम हथियारों के प्रयोग के कारण देशों में आधुनिकतम हथियारों के अविष्कार के लिए प्रतिस्पर्धा होने लगी। प्रथम विश्व युद्ध की समाप्ति के पश्चात प्रतिशोध की भावना ने 20 वर्षों के पश्चात ही पूरे विश्व को एक और भयंकर युद्ध में धकेल दिया। सन् 1939 से 1945 ईस्वी तक द्वितीय विश्व युद्ध हुआ। 6 वर्षों तक चली इस विश्वव्यापी विनाश लीला का अंत 6 अगस्त एवं 9 अगस्त 1945 ईस्वी को जापान के हिरोशिमा और नागासाकी नगरों पर अमेरिका द्वारा गिराए अणुबमों से हुआ। अणुबमों की भयंकरता का वर्णन महाभारत युद्ध में प्रयुक्त 'ब्रह्मास्त्र' से करते हुए धर्मवीर भारती काव्य-नाटक 'अंधायुग' में लिखते हैं-

"ज्ञात क्या तुम्हें है परिणाम इस ब्रह्मास्त्र का?
यदि यह लक्ष्य सिद्ध हुआ ओ नरपशु!
तो आगे आने वाली सदियों तक
पृथ्वी पर रसमय वनस्पति नहीं होगी
शिशु होंगे पैदा विकलांग और कुष्ठग्रस्त
सारी मनुष्य जाति बौनी हो जायेगी
जो कुछ भी ज्ञान संचित किया है मनुष्य ने
सतयुग में, त्रेता में, द्वापर में
सदा सदा के लिए होगा विलीन वह
गेहूं की बालों में सर्प फुफकारेंगे
नदियों में बह बह कर आयेगी पिघली आग।"

लगभग 6 वर्षों तक लड़ा जाने वाला द्वितीय विश्वयुद्ध मानव इतिहास का सबसे भयानक और विनाशकारी युद्ध था। इसने संपूर्ण विश्व को प्रभावित किया। इसके प्रभाव इतने व्यापक थे कि विश्व इतिहास में एक युग का अंत हो गया। आम नागरिकों के मानवाधिकारों के हनन के साथ-साथ सैनिकों, महिलाओं, बच्चों,

युद्ध बंदियों और सम्पूर्ण मानव समुदाय का अस्तित्व खतरे में पड़ गया। मानवीय अस्तित्व खतरे में ही नहीं पड़ गया अनिश्चितता की निश्चितता ने मानवीय विश्वासों, परंपराओं, धार्मिक आस्थाओं तथा जीवन मूल्यों से त्रासद संक्रमण उपस्थित कर दिये।

द्वितीय विश्वयुद्ध की इस भयंकर विनाश लीला से उत्पन्न मानवीय अस्तित्व के संकट एवं आम नागरिकों के मानवाधिकारों की अवहेलना के फलस्वरूप मानव अधिकारों की अवधारणा नए रूप में उत्पन्न हुई। सर्वप्रथम अमरीकन तत्कालीन राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने 16 जनवरी, 1941 में कांग्रेस को संबोधित अपने प्रसिद्ध संदेश में 'मानव अधिकार' शब्द का प्रयोग किया, जिसमें उन्होंने चार मूलभूत स्वतंत्रताओं पर आधारित विश्व की घोषणा की। इसमें थे- वाक् स्वातंत्र्य, धर्म स्वातंत्र्य, गरीबी से मुक्ति और भय स्वातंत्र्य। इस अनुक्रम में राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने घोषणा की, कि 'स्वातंत्र्य से हर जगह मानव अधिकारों की सर्वोच्चता अभिप्रेत है। हमारा समर्थन उन्हीं को है जो इन अधिकारों को पाने के लिए या बनाए रखने के लिए संघर्ष करते हैं। ' अटलांटिक चार्टर-1941 में पुनः 'मानव अधिकार' एवं 'मूलभूत स्वतंत्रताओं' का प्रयोग किया गया। इसके पश्चात मानव अधिकारों का लिखित प्रयोग संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर में किया गया। इसकी उद्देशिका में घोषणा की गई कि अन्य बातों के साथ-साथ संयुक्त राष्ट्र संघ का उद्देश्य मूल मानव अधिकारों के प्रति निष्ठा को पुनः अभिपुष्ट करना होगा। साथ ही चार्टर के अनुच्छेद 1 में कहा गया कि "संयुक्त राष्ट्र के प्रयोजन मूल वंश, लिंग, भाषा या धर्म के आधार पर विभेद किए बिना मानव अधिकारों और मूल स्वतंत्रताओं के प्रति सम्मान की अभिवृद्धि करने और उसे प्रोत्साहित करने के लिए अन्तरराष्ट्रीय सहयोग प्राप्त करना होगा। " यद्यपि मानव अधिकारों की संकल्पना उतनी ही पुरानी है जितनी कि प्राकृतिक विधि पर आधारित प्राकृतिक अधिकारों का प्राचीन सिद्धांत। प्रथम विश्व युद्ध के बाद 'राष्ट्र संघ' की स्थापना के पीछे भी उद्देश्य मानव अधिकार एवं मानव अस्तित्व का संरक्षण ही था। तथापि 'मानव अधिकार' पदों की उत्पत्ति द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात अंतरराष्ट्रीय चार्टरों और अभिसमयो से हुई।

आधुनिक युद्ध सत् और असत् पक्ष के बीच नहीं होता क्योंकि दोनों पक्षों के बीच करोड़ों अबोध, युद्ध के कारणों से अज्ञात, शोषित, गरीब, दीन आम नागरिक भी रहते हैं। ये लोग कुछ व्यक्तियों से चलने वाली सत्ता के हवन कुंड के हविष्य बनते हैं। इनके मानव अधिकार और मानव अस्तित्व को खतरे में डाला जाता है। इनके रक्त से पगडंडियां बनाई जाती हैं। काव्य-नाटक 'एक कंठ विषपाई' का पात्र 'सर्वहत' और 'अंधा युग' का 'अश्वत्थामा' उसी आम नागरिक का प्रतीक है जो युद्ध से टूट चुके हैं तथा उनमें आतंक के अलावा कुछ भी शेष नहीं है। सर्वहत युद्ध की विभीषिका के बीच आम मानव के अधिकारों एवं उनके अस्तित्व के खतरे की बात करते हुए इस प्रकार कहता है-

"पर अब मैं
एक पगडंडी के सिवा और क्या हूँ
धूल भरी विस्मृत सी पगडंडी एक
जिस पर थके और जख्मी
पदचिन्ह हैं अनेक
और जो परंपरा की तरह
एक दायरे में
चक्कर लगाती हुई चलती है

अब तो मैं खेत भी नहीं हूँ
और अगर खेत हूँ भी तो
अब मुझ में फसल कहां फलती है?"

युद्ध परत्व के विकास की परिसीमा है, जो मानवीय मूल्यों के लिए एक भीषण संकट के रूप में दिखता रहा है। किंतु अहंकार, भोग, राज्य- विस्तार की लिप्सा सदैव युद्ध के रूप में सामाजिक मूल्यों और मानवाधिकारों को चुनौती देती रही है। इससे सदैव एक आम मनुष्य आहत होता रहा है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत को भी अपने पड़ोसी मुल्क पाकिस्तान से तीन-तीन युद्धों का सामना करना पड़ा (1965, 1971, 1998-99 करगिल युद्ध)। पड़ोसी मुल्क चीन से भी भारत युद्ध की विभीषिका झेल चुका है। इन युद्धों में पड़ोसी मुल्कों की साम्राज्यवादी नीति एवं पड़ोसी देश में अशांति पैदा करना ही था। इन युद्धों का परिणाम भी वही हुआ जो युद्धों में होता है। आम नागरिक मारे गए तथा युद्ध बंदियों में नागरिकों को बंदी बनाया गया। आम नागरिकों के मानवाधिकारों का हनन किया गया, मानव अस्तित्व खतरे में पड़ गया। दोनों देशों के अनगिनत सैनिक लापता हुए तथा विकासशीलता के पथ पर अग्रसर इन देशों की अर्थव्यवस्था की विकास दर में गिरावट दर्ज की गई। युद्ध के बाद का मानसिक पश्चाताप दोनों मुल्कों के नागरिकों को अलग झेलना पड़ा।

जीवन भर चलने वाले इन युद्धों में कितनी विद्रूपता समाई हुई है। युद्ध के मूल में सदैव से ही प्रतिशोध विराजमान रहा है। युद्ध की विभीषिका में, उसके उदर ज्वाल में सभी को स्वाह हो जाना होता है। फिर भी उसके उदर की ज्वाला शांत नहीं होती। एक के बाद पुनः दूसरा युद्ध इस प्रकार निरंतर इसकी गति चलती रहती है। विधवाओं का आर्तनाद और जीवितों का विषाद ही युद्ध का भक्ष्य है। काव्य-नाटक 'महाप्रस्थान' में नरेश मेहता लिखते हैं-

"कैसा था वह युद्ध
सब स्वाहा हो गया
युद्ध की उदर ज्वाल में
और शेष बचा
विधवाओं का आर्तनाद
जीवितो का विषाद"
साथ ही यह भी-
"प्रत्येक युद्ध-
जिसमें से एक राज्य जन्म लेता है
कितनी स्त्रियों को विधवा
और बच्चों को अनाथ कर जाता है
और वे जीवन संघर्ष में
दिशाहीन खो जाने के लिए
बाध्य हो जाते हैं"

दो- दो विश्व युद्धों के तांडव- नृत्य से उपजी विभीषिकाओं से त्रस्त मानवता यदि तीसरे विश्वयुद्ध से बचने का विकल्प खोजना चाहती है तो उसे महाभारतीय युद्ध के पश्चात उपजी त्रासदी और युधिष्ठिर की दृष्टि

की तरह मानव में विश्वास करना होगा, मानव के स्वत्व की रक्षा करने में विश्वास करना होगा, मानव अधिकारों की रक्षा करने में विश्वास करना होगा। आत्मसाक्षात्कार द्वारा मँजा हुआ मनुष्य ही विश्व शांति स्थापित कर सकता है। आज बड़े बड़े वैज्ञानिक और समाजशास्त्री भी यही मानते हैं 'रिकंस्ट्रक्शन ऑफ ह्यूमैनिटी पुस्तक' में सोरोकिन जैसा विश्वविख्यात समाजशास्त्री आत्मसाक्षात्कार को ही विश्व शांति का एकमात्र विश्वसनीय मार्ग स्वीकार करता है। नोबेल पुरस्कार विजेता एलेविसस कैरल जैसे वैज्ञानिक ने 'मैन दी अननोन' पुस्तक में कहा कि 'आत्माश्रयण का पाठ भोगासिक्त पश्चिमी सभ्यता ने नहीं सीखा तो समाप्त हो जाएगी।' काव्य-नाटक 'एक कंठ विषपाई' के पात्र 'ब्रह्मा' की तरह विश्व मानवता एवं विश्वसत्ताधीशों को सोचना होगा-

"इसका है ये अर्थ
दृष्टि के बिना अकारण युद्ध ने ठानें
युद्ध अधिक से अधिक एक कारण है
उसको सत्य न मानें
प्राणों की आहुति
युद्ध के नहीं
सत्य के लिए होती है।"

काव्य-नाटक की उपर्युक्त पंक्तियों में व्यक्त विश्वास के साथ ही मनुष्य युद्ध और युद्ध की विभीषिका से बच सकता है। मानवता, मानव स्वत्व और मानव अधिकारों की रक्षा कर सकता है।

●●●●

सशस्त्र संघर्षों में बच्चे: मानवाधिकारों का अंतरराष्ट्रीय और राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य

सोनू*

परिचय : राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर, 'बच्चों के लिए न्याय' ने हमेशा ही सभी वर्गों का ध्यान आकर्षित किया है। हालांकि बच्चों से सम्बंधित कानून और नीतियां उनके अनुकूल बनाई गई है, परन्तु बहुत सारे क्षेत्रों में व्यावहारिक वास्तविकता कुछ और ही है। ऐसा ही एक क्षेत्र है- युद्ध, जो बच्चों का जीवन तबाह करता है, जब वे मजबूर परिस्थितियों में या जबरदस्ती युद्धों में शामिल किये जाते हैं। इतिहास गवाह है कि युद्ध हमेशा ही एक विध्वंसकारी और विनाशकारी घटना रही है,जिसके परिणामस्वरूप मानव जाति, विशेष रूप से बच्चों के अस्तित्व, विकास और कल्याण के मामले में भारी और कभी-कभी अपूरणीय क्षति होती है। खासकर लड़कियां इस विध्वंसकारीघटना का अधिक शिकार होती हैं।

बाल सैनिक: अर्थ और परिभाषा

बाल अधिकारों की कन्वेंशन 1989 के अनुच्छेद 1 के अनुसार बाल का अर्थ है "18 वर्ष से कम आयु का हर मनुष्य जो कि उस पर लागू कानून के तहत व्यस्क नहीं है। इसलिए अंतरराष्ट्रीय कानूनी मानकों के अनुसार 18 वर्ष से कम आयु का कोई भी व्यक्ति बच्चा है"। और जब उसे लड़ाकू गतिविधियों में शामिल किया जाता है तो वह बाल सैनिक है। पेरिस सिद्धांत मानवीय दृष्टिकोण के आधार पर, सशस्त्र बलों से जुड़े बच्चों की, संघर्ष के बीच अथवा बाद में, बिना शर्त रिहाई पर बल देता है।

मानवाधिकारों पर विश्व सम्मेलन 1993, बच्चों के अधिकारों के संरक्षण और संवर्धन में यूनिसेफ की भूमिका के महत्व को रेखांकित करता है। बाल अधिकारों को बढ़ावा देने के लिए संयुक्त राष्ट्र बाल कोष द्वारा नई धारणा दी गई- 'मानव अधिकार बच्चों के अधिकारों से शुरू होता है'। यूनिसेफ के अनुसार 'बाल सैनिक' का मतलब,18 वर्ष से कम आयु का कोई भी बच्चा, लड़का या लड़की, जो कि पारिवारिक रूप से किसी बल से सम्बंधित ना हो, परन्तु किसी भी नियमित या अनियमित सशस्त्र बलों या सशस्त्र समूह का हिस्सा हो या फिर उनका मददगार हो। इस परिभाषा को अंतरराष्ट्रीय पटल पर बाल अधिकारों पर कन्वेंशन के वैकल्पिक प्रोटोकॉल में भी अपनाया गया। युद्ध में बच्चों पर दो सबसे प्रभावशाली रिपोर्ट भी विश्व पटल पर पेश की गयी- ग्राका मचेल रिपोर्ट तथा बाल अधिकारों संयुक्त राष्ट्र कन्वेंशन रिपोर्ट।

* *सह-आचार्य, विधि विभाग, महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा*

सशस्त्र संघर्षों में बच्चों के शामिल होने के कारण:

1. स्वेच्छा अथवा जबरदस्ती

सशस्त्र संघर्षों में बच्चों के शामिल होने के कई कारण हो सकते है। कभी उनका स्वेच्छा से तथा कभी धमकी, जबरदस्ती या हेरफेर से मजबूर होकर शामिल होना मुख्य कारण हैं। बच्चों का युद्धों में शामिल होना ना केवल अंतरराष्ट्रीय कानूनों का उल्लंघन है अपितु इसके परिणाम बच्चो एवं समाज दोनों के लिए घातक हो सकते हैं। मानवाधिकार कानून में बच्चों को युद्ध में शामिल करने की न्यूनतम कानूनी आयु18 वर्ष निर्धारित की गयी है। इससे कम उम्र के बच्चो का उपयोग करना अंतरराष्ट्रीय मानवीय कानून-संधि और प्रथा के तहत निषिद्ध है और इसे अंतरराष्ट्रीय आपराधिक न्यायालय द्वारा युद्ध अपराध के रूप में परिभाषित किया गया है।

2. वयस्कों की तुलना में बच्चों की अधिक उपलब्धता

यह कारक सार्वभौमिक अनुप्रयोग का नहीं है, लेकिन यह दुनिया के कुछ क्षेत्रों के बारे में सच है। उदहारणतया, अफ्रीका महाद्वीप में दुनिया की सबसे कम उम्र की आबादी है, जिसमें उप-सहारा अफ्रीका का 70% हिस्सा 30 साल से कम उम्र का है। परिणामस्वरूप, विद्रोही समूह और सरकारी बल दोनों के लिए बच्चों को बाल सैनिक के रूप में भर्ती करना बेहद आसान काम है।

3. अनाथ बच्चे

अनाथ बच्चे मानसिक रूप से प्रबल नहीं होते, इसलिए वे खुद युद्धों में उनका उपयोग करने का विरोध नहीं कर पाते। ऐसे बच्चो का ब्रैनवॉश करना आसान होता है तथा ऐसे बच्चो का युद्ध के बाद बच जाने पर इनका प्रयोग दूसरे तरह के कामो में किया जाता है। जबरन बाल वेश्यावृत्ति और दुर्व्यवहार अनाथ बच्चों के जीवन के वास्तविक और दुखद तथ्य हैं।

4. बच्चों की आज्ञा मानने की प्रवृत्ति

बाल सैनिकों की भर्ती के संबंध में, एक मुख्य कारण यह भी है कि बच्चों को आसानी से समझाया जा सकता है। बच्चे भोले, मासूम, खतरे से अनजान होते हैं तथा आज्ञा मानने की प्रवृत्ति भी रखते हैं और अधिकार को चुनौती नहीं देते हैं। अंत में, एक कठिन परिस्थिति में रहने वाले बच्चे अक्सर इस भर्ती को अपनी समस्याओं को हल करने के तरीके के रूप में देखने लगते हैं।

5. गरीबी

हम सभी जानते हैं कि गरीबी एक अभिशाप है, जो एक व्यक्ति को उसकी बुनियादी जरुरतें पूरी करने के लिए कठोर कदम उठाने को मजबूर करता है। बहु-राष्ट्रीय कंपनियों के आगमन तथा वैश्वीकरण के प्रभाववश, स्थानीय रोजगार के अवसरों में इजाफा हुआ है, परन्तु अशिक्षित व अकुशलता के कारण, ये अवसर गरीबो की पहुंच से दूर होते हैं। बच्चे युद्ध में लड़ना चुनते हैं क्योंकि उनका और उनके परिवारों का अस्तित्व इस पर निर्भर करता है। इसलिए गरीबी को कभी-कभी बाल सैनिक के कारण के रूप में भी उद्धृत किया जाता है। कोहन और गुडविनगिल का दावा है कि कई युवा सैनिक अपनी असहायता, भेद्यता और निराशा की भावनाओं का मुकाबला करने के प्रयास में भर्ती होते हैं।

6. शैक्षिक सुविधाओं की कमी

कई अध्ययनों में पाया गया कि शैक्षिक अवसरों की कमी की वजह से बच्चो का युद्धों में शामिल होना एक बड़ा कारण है। पीटर्स ने कांगो में अपने विस्तृत नृवंशविज्ञान अनुसंधान के आधार पर इस कथन को मूर्त रूप दिया और तर्क दिया कि जब भी सामान्य शैक्षिक अवसर अनुपलब्ध होते हैं या अवरुद्ध हो जाते हैं, तो युवा अन्य अवसरों की तलाश करना शुरू कर देते हैं, जो अक्सर सैन्य स्कूलों में समाप्त हो जाते हैं।

विभिन्न उद्देश्यों के लिए सशस्त्र संघर्षों में बच्चों का उपयोग:

युद्ध के दौरान या बाद में, सशस्त्र बलों या सशस्त्र समूहों द्वारा बच्चों का उपयोग कुछ दूसरे कामो के लिए भी किया जाता है:

1. जासूसी के लिए

युद्ध से पहले, दौरान अथवा बाद में, बच्चों को जासूसों के रूप में इस्तेमाल किया जाना एक आम बात है। जासूसी के लिए, बच्चों को बाकायदा प्रशिक्षण भी दिया जाता है ताकि उन पर संदेह न किया जा सके। इतिहास के पन्नो से भी पता चलता है कि विभिन्न देशों की सेनाओं द्वारा बच्चों को आत्मघाती मिशन के लिए इस्तेमाल किया जाता रहा है। जैसे 1945 की शुरुआत में जर्मनी में किशोरों को अनिवार्य रूप से आत्मघाती मिशन पर भेजा गया था। हिटलर के शासनकाल के दौरान भी युवाओं को हथगोले फेंकनाऔर खाइयां खोदना सिखाना, उनकी विभिन्न गतिविधियों और प्रशिक्षणों का हिस्सा होती थी। दूसरे विश्व युद्ध के दौरान ओकिनावा द्वीप में 14-17 वर्ष की आयु के स्कूलों के छात्रों को जापान के दुश्मनों के खिलाफ लड़ने के लिए प्रोत्साहित किया गया। रिपोर्टों से यह भी पता चलता है कि अफगानिस्तान में तालिबान, बच्चों को आत्मघाती हमलावर के रूप में इस्तेमाल करते हैं।

2. नियमित कामो के लिए

युद्ध के दौरान बच्चे नियमित काम जैसे खाना पकाने, बर्तन धोने और सफाई का काम करते है। ह्यूमन राइट्स वॉच की जांच में पाया गया है कि बाल रंगरूटों को अक्सर शारीरिक रूप से दंडित करने और बच्चों सहित अन्य सैनिकों को मारने के लिए मजबूर किया जाता है, जो कि निर्वासन और अन्य अपराधों के आरोपी हैं।

3. दूत तथा गार्ड के रूप में

युद्ध के दौरान आमतौर पर बच्चों को गुप्त संदेशवाहक के रूप में इस्तेमाल किया जाता था। गुप्त संदेश जटिल भाषा में एन्कोडेड होते थे जिनसे बच्चे भी अनजान होते थे। बच्चों पर कोई शक नही करता इसी बात को ढाल बनाकर बच्चो का इस्तेमाल दूत के रूप में किया जाता था। इसके अलावा युद्ध के दौरान सैनिक समूहों की संपत्तियों और हथियारों की सुरक्षा के लिए भी बच्चों को गार्ड के रूप में तैनात किया जाता था।

4. यौन उद्देश्य

चूंकि युद्ध के दौरान सशस्त्र बलों के लड़ाके और अन्य कर्मी अनिश्चित समय के लिए अपने घरों से दूर रहते हैं, इसलिए उन्हें शारीरिक संतुष्टि की आवश्यकता होती है। महिलाओं के अलावा, बच्चे विशेष रूप से बालिकाएं उनके लिए एक आसान विकल्प बन जाती हैं, क्योंकि उनकी ओर से बिना किसी प्रतिरोध के

उनके साथ आसानी से दुर्व्यवहार किया जा सकता है।

युद्ध में बच्चों की भर्ती और अन्य सुरक्षा पर प्रतिबंध के लिए अंतरराष्ट्रीय कानूनी ढांचा

1. जिनेवा कन्वेंशन IV, 12 अगस्त 1949- युद्ध के समय नागरिकों की सुरक्षा से संबंधित कन्वेंशन

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद, अंतरराष्ट्रीय मानवीय कानून में नागरिक आबादी के साथ बच्चों को कानूनी सुरक्षा देने की आवश्यकता महसूस की गयी। इस क्षेत्र में ICRC के प्रयासों के परिणामस्वरुप, 1949 के चौथे जिनेवा कन्वेंशन को अपनाया गया। उस समय से ही, नागरिक आबादी के सदस्यों के रूप में बच्चे, उस कन्वेंशन के लाभ के हकदार हैं। इस कन्वेंशन के अनुसार बच्चे, "संरक्षित व्यक्तियों" की श्रेणी में आते हैं तथा एक सामान्य नागरिक की तरह ही युद्ध गतिविधियों से सुरक्षित माने जाते हैं तथा उन्हें मारने के आदेश नहीं दिए जा सकते है। अतिरिक्त प्रोटोकॉल-I के अनुच्छेद 75 व 77 के तहत बच्चों को किसी भी तरह की यातना, अंग-भंग, सामूहिक दंड और जबरदस्ती से सुरक्षा प्रदान की गयी तथा उन्हें विशेष सम्मान का अधिकारी माना गया है।

2. बच्चे के अधिकार पर कन्वेंशन, 1989ववैकल्पिक प्रोटोकॉल

बाल अधिकार पर कन्वेंशन का अनुच्छेद 38(3), 1989, पंद्रह वर्ष से कम उम्र के बच्चों की किसी भी सशस्त्र संघर्ष एवं युद्ध में भर्ती पर रोक लगाता है। वर्ष 2000 में, संयुक्त राष्ट्र महासभा ने CRC कन्वेंशन के वैकल्पिक प्रोटोकॉल को अपनाया तथा प्रतिबद्धता जताई कि- राज्य 18 साल से कम उम्र के सैनिकों की भर्ती नहीं करेंगे, उन्हें युद्ध के मैदान में नहीं भेजेंगे तथा राज्यों को उनसे सम्बंधित कानून बनाने होंगे। बच्चों को मनोवैज्ञानिक सेवाएं प्रदान कर उनका सामाजिक पुन: एकीकरण करना भी इसमें शामिल है। यह प्रोटोकॉल 2002 में लागू हुआ और अब दुनिया के अधिकांश देशों द्वारा इसकी पुष्टि की गई है।

3. अंतरराष्ट्रीय कानून के तहत निषेध

मानवाधिकार कानून द्वारा, युद्धों में बच्चों की भर्ती और उपयोग के लिए न्यूनतम कानूनी आयु 18 वर्ष घोषित की गयी है। इससे कम उम्र के बच्चों को सैनिकों के रूप उपयोग करना, अंतरराष्ट्रीय मानवीय कानून-संधि और प्रथा के तहत निषिद्ध है और इसे अंतरराष्ट्रीय आपराधिक न्यायालय द्वारा युद्ध अपराध के रूप में परिभाषित किया गया है। 17 जुलाई 1998 को अंतरराष्ट्रीय आपराधिक क़ानून न्यायालय स्थापित किया गया तथा यह सशस्त्र संघर्षों में कम उम्र के बच्चों की भागीदारी को युद्ध अपराधों के रूप में सूचीबद्ध करता है।

4. अभियान –"बच्चे है हम सैनिक नहीं"

वर्ष 2014 में राज्यों के प्रतिनिधियों ने यूनिसेफ के साथ एक विशेष अभियान "बच्चे हैं हम सैनिक नहीं" शुरू किया जिसके अनुसार बाल सैनिकों को संघर्ष में इस्तेमाल नहीं किया जाना चाहिए। संघर्ष की स्थितियों में राष्ट्रीय सुरक्षा बलों द्वारा बच्चो की सेना में भर्ती पर रोक लगाने वाले इस अभियान को गति देने, राजनितिक इच्छा शक्ति और अंतरराष्ट्रीय समर्थन उत्पन्न करने के लिए तैयार किया गया था।

राष्ट्रीय कानूनी व्यवस्था

किशोर न्याय अधिनियम की धारा 83 में कहा गया है कि यदि कोई भी गैर-राज्य, स्वयंभू उग्रवादी समूह या संगठन, किसी उद्देश्य से किसी बच्चे का उपयोग करता है तो वह इसके लिए उत्तरदायी होगा और उसे सात साल की कठोर कारावास से गुजरना होगा।

भारतीय संविधान, 1950 के अनुच्छेद 39(e) के अनुसार राज्य का यह कर्तव्य है कि वह सुनिश्चित करे कि कम उम्र के बच्चों के साथ दुर्व्यवहार न हो और आर्थिक आवश्यकता के कारण उन्हें अपनी उम्र और ताकत के विपरीत व्यवसायों में प्रवेश करने के लिए मजबूर न होना पड़े। संविधान का अनुच्छेद 24 प्रावधान करता है कि चौदह वर्ष से कम आयु के बच्चों को खतरनाक रोजगार में नियोजित नहीं किया जा सकता है। हालाँकि, चौदह वर्ष से अधिक आयु के बच्चे को खतरनाक रोजगार में भी लगाया जा सकता है, क्योंकि संविधान इसे प्रतिबंधित नहीं करता है। फिर भी, जैसा कि भारत सीआरसी, 1989 के लिए हस्ताक्षरकर्ता है, वह अपने नियमित सशस्त्र बलों में पंद्रह वर्ष से कम उम्र के बच्चों की भर्ती नहीं करने के लिए बाध्य हो गया है। भारतीय नीति दर्शाती है कि वायु सेना, नौसेना या सुरक्षा बलों जैसे अन्य अर्धसैनिक बलों में शामिल होने के लिए न्यूनतम आयु सीमा 18 वर्ष है। लेकिन यह संदिग्ध है कि भारत में माओवादी और नक्सली इस नियम का पालन करते हैं।

निष्कर्ष

युद्धों में शामिल होने वाले बच्चों के लिए जिम्मेदार सभी कारकों का विश्लेषण करने के बाद, यह आसानी से निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि यह समस्या मूल रूप से तीसरी दुनिया के कुछ पिछड़े देशों जैसे अफगानिस्तान, पाकिस्तान, कांगो और कोलंबिया में मौजूद है जहां राज्य अपने नागरिकों की बुनियादी जरूरतों को पूरा करने में विफल रहा है। शिक्षा की कमी के कारण बच्चों के पास कोई विकल्प नहीं है, लेकिन एक संगठित सशस्त्र समूह में मजदूरी आसानी से उपलब्ध है। रोजगार के अवसरों की कमी भी समान रूप से जिम्मेदार है क्योंकि दुनिया में कई परिवार अपने बच्चों की कमाई पर गुजारा कर रहे हैं, जो अगर रोजगार छोड़ देते हैं, तो भुखमरी होगी। साहसिक कार्य एक अन्य कारक है जहां बच्चे सशस्त्र बलों में शामिल होने के लिए इसके परिणामों को जाने बिना गर्व महसूस करते हैं। बालिकाएं विशेष रूप से यहां शिकार बनती हैं क्योंकि उन्हें सैनिकों की शारीरिक आवश्यकता को पूरा करने के लिए मजबूर किया जाता है। बच्चों को बाल सैनिक के रूप में भर्ती होने से रोकने के लिए, अंतरराष्ट्रीय स्तर कानून उपलब्ध है। हालाँकि, जैसा कि सर्वविदित है, अंतरराष्ट्रीय कानून कमजोर कानून हैं, जिनका निष्पादन राज्यों की मधुर इच्छा पर निर्भर करता है। इसलिए उपलब्ध एकमात्र उपाय यह है कि प्रत्येक राज्य अपने सभी नागरिकों को सभी बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध कराएं। यदि अंतरराष्ट्रीय समुदाय वास्तव में दुनिया के सभी कोनों से युद्धों एवं सशस्त्र संघर्षों में बच्चों के उपयोग के अभिशाप को समाप्त करना चाहता है, तो उसे गरीब राज्यों को उस राज्य की संप्रभुता और गरिमा से समझौता किए बिना, आसान परिस्थितियों में या बिना शर्तों के सहायता प्रदान करानी चाहिए, अन्यथा प्रतिबद्धता केवल जुबानी सेवा है।

●●●●

जनजातीय क्षेत्रों में बाल मजदूरी और मानवाधिकार

श्यानी बुंदेला*

**कहते हैं कि बच्चे ही किसी देश का भविष्य होते हैं। किसी भी समाज में बच्चों को अगर उनके समग्र विकास के उचित अवसर न देकर उन्हें कामकाज की दुनिया में भेज दिया जाए तो यह मानवाधिकारों का सबसे बड़ा हनन है। एक बाल श्रमिक अच्छी शिक्षा, स्वास्थ्य और विकास की सभी संभावनाओं से वंचित रह जाता है। हम कल्पना नहीं कर सकते कि खेलने-कूदने और सीखने की उम्र में अगर बच्चों के नन्हें हाथ श्रम कर अपने परिवार के लिए आजीविका का संसाधन बन जांए तो उन बच्चों का भविष्य क्या होगा। दरअसल बाल श्रम विश्व में बहुत बड़े पैमाने पर अब भी बदस्तूर चल रहा है। आंकड़े बताते हैं कि दुनिया में हर 10वां बच्चा बाल मजदूरी करने पर विवश है। आर्थिक रूप से पिछड़े और विकासशील देशों में यह स्थिति और भी भयावह है। दुनियाभर में बाल अधिकार और उनके कल्याण के लिए काम करने वाली संस्था यूनिसेफ ने भारत की जनगणना 2011 के हवाले से बताया है कि देश में बाल मजदूरों की संख्याफ 1.01 करोड़ है। अनुमान है कि इसमें 56 लाख लड़के और 45 लाख लड़कियां हैं।

दुनिया भर में कुल मिलाकर 15.20 करोड़ बच्चे बाल श्रमिक के बतौर काम कर रहे हैं। अधिकांश बाल श्रमिक अपने परिवारों की तंगहाली के चलते नन्हीं उम्र से ही काम करने लग जाते हैं। भारत में जनजातियां आर्थिक तौर पर पिछड़ी हैं और गरीबी तथा आर्थिक असमानता इन समुदायों में जबरदस्त तौर पर व्याप्त है। स्वाभाविक तौर पर आर्थिक तौर से पिछड़े इन जनजातीय समुदायो में बाल श्रमिक अधिक हैं। बाल श्रम कानूनी तौर पर तो प्रतिबंधित है लेकिन इस सबके बावजूद बच्चों से श्रम और जोखिम तथा कठिन कार्यों में अभी भी काम लिया जाता है। बच्चों से बंधुआ मजदूरी, अनैतिक देह व्यातपार आदि काम करवाए जाते हैं। भारत में विभिन्ने उद्योगों सहित ईंट भट्टों, कपड़े बनने के कारखानों, कालीन तथा गलीचा बुनने वाले कारखानों, घरेलू कामकाज, दुकानों इत्यादि पर बाल मजदूर बतौर काम करते हुए देखा जा सकता है। इसके अलावा कई राज्यों में खेती, पशुपालन और मछली पालन आदि कामों में भी बड़ी संख्या में बाल मजदूर काम करते हुए मिल जाते हैं। इसके अलावा कई बच्चे ऑनलाइन एवं अन्य चाइल्ड पोर्नोग्राफी सेक्टर के चंगुल में फंसकर यौन उत्पीड़न झेलते हुए काम करने पर विवश हैं।

* *स्वतंत्र पत्रकार और शोधार्थी, खंडवा – 450001 मध्यप्रदेश*

भारत समेत दुनिया के कई अन्य मुल्कों में करोड़ों बच्चे बाल श्रम के दलदल में धंसे हुए हैं। बाल श्रम भारतीय जनजातियों में भी एक बहुत बड़ी समस्या है। भारत में आज भी बाल श्रम के मामलों में उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र आदि राज्यों में बाल श्रमिकों की सर्वाधिक संख्या है। जनजातीय क्षेत्रों में अशिक्षा और गरीबी के कारण बाल श्रम के मामले अधिक होते हैं। हालांकि इन क्षेत्रों से बाल श्रम के मामलों के आधिकारिक आंकड़े मिलना बेहद कठिन होता है लेकिन व्यवहार में जब हम इन जनजातीय बहुल इलाकों में जाते हैं तो अनेकों गावों में कई ऐसे घर मिलते हैं जिनके बच्चे काम के लिए कहीं शहरों या कस्बों में अपने परिवारों से दूर रहते हैं। बंधुआ मजदूरी के मामले भी जनजातीय इलाकों में अधिक होते हैं। मध्यप्रदेश के पश्चिमी निमाड़ क्षेत्र में कोरकू, भील, गोंड आदि जनजातियो के गावों में बहुत बड़ी आबादी अपने परिवारों सहित गुजरात और अन्य राज्यों में आजीविका की तलाश में जाते हैं। ये परिवार जिनमें आम तौर पर पति, पत्नी और बच्चे होते हैं निर्माण, खेती आदि क्षेत्रों में कार्य करते हैं। इनके बच्चे भी अमूमन बिल्डिंग्स के निर्माण आदि में लगे हुए मिल जाते हैं। कई बार तो बातचीत अच्छी हो जाने पर किसी उद्योग या खेतिहर जमींदार के पास अपने बच्चे को एक निश्चित राशि के बदले लंबे समय के लिए गिरवी रखकर काम करवाने के मामले भी सामने आते हैं।

जनजातियों के ये नन्हें बच्चे हर तरह के मानवाधिकारों से वंचित होते हैं। शिक्षा जैसे महत्वपूर्ण अधिकार का तो उन्हें पता भी नहीं होता। ऐसे में हम सहज ही इन बाल श्रमिकों के भविष्य के बारे में सोच सकते हैं। बालश्रम, बच्चों से स्कूल जाने का अधिकार छीन लेता है और पीढ़ी दर पीढ़ी गरीबी के चक्रव्यूह से बाहर नहीं निकलने देता। अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन याने आई एल ओ द्वारा बाल श्रम बच्चों के ऐसे काम रूप में परिभाषित किया गया है जिसके चलते उनके बचपन, उनकी क्षमता और गरिमा प्रभावित होती है और जो उनके शारीरिक एवं मानसिक विकास में बाधक होते हैं। बाल श्रम संशोधन अधिनियम 2016 के अनुसार 14 साल से कम उम्र के बच्चों के लिए परिवार से जुड़े व्यवसाय को छोड़कर विभिन्न क्षेत्रों में कामकाज पर पूरी तरह रोक का प्रावधान है। इसके साथ ही 14 साल से कम उम्र का कोई भी बच्चा किसी फैक्ट्री या खदान में काम करने के लिए नहीं लगाया जा सकता और ना ही उसे किसी भी तरह के खतरनाक कार्यों में नियुक्त किया जा सकता है। लेकिन उड़ीसा, छत्तीसगढ़, आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र आदि राज्यों के जनजातीय इलाकों में हकीकत स्पष्ट तौर पर देखी जा सकती है।

यह अधिनियम साफ तौर पर कहता है कि बच्चे केवल स्कूल से आने के बाद स्कूल की छुट्टियों के दौरान काम कर सकते हैं और बच्चों को परिवार के स्वामित्व वाले सुरक्षित क्षेत्रों में ही काम करने कि केवल अनुमति होती है। लेकिन व्यवहार में हम देखते हैं कि अनगिनत बच्चे कारखानों में काम करते हैं। वे ऐसे खतरनाक क्षेत्रों में भी काम करते हैं जिससे उनके स्वास्थ्य पर और विकास शारीरिक विकास पर सीधे तौर पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ते हैं। भारत के संविधान के अनुच्छेद 23 के अंतर्गत किसी भी तरह की बंधुआ मजदूरी पूरी तरीके से प्रतिबंधित है। लेकिन हम देखते हैं कि हमारे समाज में बेहद गरीबी आर्थिक तंगी और सामाजिक पिछड़ेपन में अपना जीवन यापन करने वाले जनजातीय वर्गो में आज भी बच्चों को किसी जमीदार या बड़े किसान के पास नाम मात्र के वेतन या किसी निश्चित एक रकम के बदले बंधुआ मजदूरी करने के लिए गिरवी रखा जाता है। यह एक खतरनाक लेकिन आज भी प्रचलित चलन है।

कुल आबादी की तुलना में जनजातियों की आबादी में विकास दर (प्रतिशत में)

क्रमांक	वर्ष	शहरी क्षेत्र	ग्रामीण क्षेत्र	कुल
1	1991	10.1	2.3	8.1
2	2001	10.4	2.4	8.2
3	2011	11.3	2.8	8.6

स्रोत: जनगणना रिपोर्ट 1991, 2001 एवं 2011 तालिका क्रमांक 1

आमतौर पर यह धारणा है कि बंधुआ मजदूरी केवल ग्रामीण क्षेत्रों में ही है और वह भी खासकर कृषि आदि क्षेत्रों में प्रचलन में होगी लेकिन हमें ध्यान देने की आवश्यकता है कि कस्बाई और शहरी इलाकों में खदान ईट भट्टा तथा अनेक लघु और मध्यम उद्योग इकाइयों में व्यापक तौर पर बाल श्रमिक बंधुआ मजदूर बतौर काम करते हैं। यह सब बातें सैद्धांतिक तौर पर भले ही न दिखती हों लेकिन महानगरों की ह्यूमन रिर्सोस एजेंसियों में घरेलू काम-काज के लिए किशोर अवस्था वाले बच्चे आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं। इनमें से अधिकतर जनजातीय इलाकों के होते हैं। कई तो मानव तस्करी का शिकार भी होते हैं। मानव तस्कर गिरोहों के नेटवर्क आदिवासी गांवों तक फैले होते हैं। ये काम-काज और अच्छे कपड़े, खाने आदि का लालच देकर गरीब परिवारों से उनके बच्चों को काम के लिए भेजने का प्रबंध करते हैं। बाद में बच्चों को काम के लिए अन्य शहरों में भेज देते हैं। वहां उनका खूब शोषण होता है।

इसका कोई आधिकारिक दस्तावेजीकरण तो उपलब्ध नहीं है लेकिन अमानवीय परिस्थितियों में काम करने के कारण कई बच्चे गंभीर रोगों का शिकार हो जाते हैं। बाद में बहुत अल्प आयु में ही वे मरते भी हैं। इस तरह बाल श्रम एक बहुत ही खतरनाक जाल है जिसमें श्रमिक बच्चे का पूरा भविष्य अंधकारमय हो जाता है। बच्चों का बंधुआ मजदूर बन कर काम करना किसी भी तरह से सभ्य समाज में स्वीकार्य नहीं हो सकता है। जहां एक ओर हमारे यहां शिक्षा का अधिकार अधिनियम है जिसके अंतर्गत राज्य अपने प्रत्येक 6 से 14 साल की उम्र के बच्चे को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था करता है वहीं दूसरी ओर इसी उम्र के असंख्य बच्चे स्कूलों के बजाय काम पर जाते हैं। यह पूरी तरह से बच्चों के मौलिक और मानवाधिकारों का हनन है। हर साल मानव तस्करों द्वारा मासूम छोटे बच्चों को उनके परिवारों से अलग कर बाल मजबूत बना दिया जाता है, जहां बच्चों के हाथ में बहुत कम उम्र में कॉपी कलम होनी चाहिए वे अपने नन्हे हाथों में औजार लिए काम करने को मजबूर होते हैं।

भारत में जनजातियों की आबादी

(मिलियन में)

क्रमांक	वर्ष	शहरी क्षेत्र	ग्रामीण क्षेत्र	कुल
1	1991	5	62.8	68
2	2001	7	77.3	84
3	2011	11	93.8	104

स्रोत: जनगणना रिपोर्ट 1991, 2001 एवं 2011

तालिका क्रमांक 2

सत्य है कि बाल श्रम में बच्चों के निरंतर श्रम संबंधी कार्यों में लगे रहने से उनके शोषण की एक अंतहीन श्रृंखला बन जाती है। इससे कहीं न कहीं देश की अर्थव्यवस्था पर भी गंभीर नकारात्मक परिणाम दिखाई पड़ते हैं। बाल श्रम के लिए तस्करी भी एक आम बात है। दरअसल बाल श्रमिक सस्ते पड़ते हैं और उनसे उन्हें डरा धमका कर कई घंटों तक लगातार काम करवाया जा सकता है इसीलिए अनेक उद्योग तथा असंगठित क्षेत्रों की इकाइयां अपने यहां बाल श्रमिकों को काम पर लगाती हैं। तस्करी का शिकार बनने वाले बाल श्रमिक सारे मानसिक और यौन शोषण का शिकार बनते हैं। कई रिपोर्ट बताती है कि तस्करी के शोषण में फंस कर बच्चों को जबरदस्ती वेश्यावृत्ति तथा शादी आदि के लिए मजबूर किया जाता है गैरकानूनी तरीकों से कई बार बच्चों को भिक्षावृत्ति आदि कार्य भी करवाए जाते हैं। इस तरह बाल तस्करी का शिकार बनने वाले बच्चों के लिए उनका जीवन हिंसा यौन उत्पीड़न तथा अनेक संक्रामक रोगों से भरा हुआ हो जाता है।

बाल मजदूरी निषेध एवं नियमन अधिनियम 1986 के अनुसार 14 साल तक से कम उम्र के किसी बच्चे को किसी कारखाने या खान में काम में नहीं लगाया जाना चाहिए या उसे किसी जोखिम पूर्ण रोजगार में भी नियुक्त नहीं किया जाना चाहिए। बच्चों के अधिकारों संबंधी कई नियम समय-समय पर बने है। प्रत्येक बच्चे को जीने का अधिकार प्राप्त है। बच्चों को हानिकारक प्रभावों, दुर्व्यवहार तथा शोषण से सुरक्षा है। पारिवारिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक जीवन में पूर्णरूपेण भागीदारी करने के उन्हें अवसर दिए जाने चाहिए। बच्चों के अस्तित्व एवं विकास को यथासंभव अधिक से अधिक सुनिश्चित किया जाना चाहिए। बच्चों के अभिभावक कानूनी संरक्षण व परिवार के सदस्यों की गतिविधि, विश्वास के आधार पर सभी प्रकार के भेदभाव से उन्हें सुरक्षा मिलनी चाहिए।

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग द्वारा प्रकाशित मानवाधिकार एवं बाल मजदूरी नामक एक ग्रंथ में कहा गया है कि विश्व में कामगार बच्चों की सर्वाधिक संख्या भारत में है उन्हें काम से हटाना तथा उनका पुनर्वास सुनिश्चित करना है देश के सामने एक महत्वपूर्ण चुनौती है। रिपोर्ट 2001 की अनुसार देशभर में 79.7 मिलियन बच्चे ना तो स्कूल जाते थे और ना ही काम पर जाते थे। यह आंकड़ा 1991 की जनगणना के मुकाबले काफी अधिक था, जिसमें 5 से 14 वर्ष तक के बच्चों के समूह में कुल 203.3 मिलियन बच्चे स्कूल नहीं जाते थे। आज देश को आजाद हुए सात दशक से अधिक का समय हो गया है हमारे देश ने लगभग सभी क्षेत्रों में विशिष्ट उपलब्धियां हासिल की हैं। आज भारत विज्ञान, कृषि, अर्थ, चिकित्सा आदि क्षेत्रों में विकासशील देशों में शामिल है। लेकिन इन सब आंकड़ों के बीच एक तथ्य यह भी है कि देश में एक करोड़ से अधिक बाल श्रमिक अपने तमाम मानवाधिकारों से वंचित रहते हुए काम कर रहे हैं यह एक पूरी प्रजातांत्रिक व्यवस्था में बहुत बड़ी चुनौती है।

भारत में कामकाजी बच्चों की संख्या (करोड़ में)

क्रमांक	वर्ष	5 से 14 आयुवर्ग में शहरी क्षेत्र	5 से 14 आयुवर्ग में ग्रामीण क्षेत्र
1	2001	0.13	1.14
2	2011	0.20	0.84

स्रोत: जनगणना रिपोर्ट 2011 एवं 2001 तालिका क्रमांक 3

बाल श्रम को हमें जिस गंभीरता से लेना चाहिए संभवत है हमने इतनी गहराई से और संजीदगी से इस विषय पर सोचा नहीं है। हमें यह बात बिल्कुल समझ लेनी चाहिए कि जिस देश में बच्चों का कोई भविष्य नहीं होता उस देश का भी भविष्य बहुत सुरक्षित और सुनहरा नहीं होता है। जब तक हमारे समाज में बाल श्रम जैसी अमानवीय गतिविधियां संचालित है, तब तक हमारे देश के भविष्य को भी हम बेहतर नहीं आंक सकते हैं। बाल श्रम को खत्म करने के लिए निश्चित तौर पर सरकारी, गैर सरकारी संगठन, स्वयंसेवी संस्थाएं लगातार प्रयासरत हैं। सभी की मिली जुली कोशिश है कि किसी भी तरह बाल श्रम को खत्म किया जाए। नोबेल पुरस्कार विजेता और बच्चों के सामाजिक और समग्र विकास के क्षेत्र में कार्यरत कैलाश सत्यार्थी के संगठन बचपन बचाओ आंदोलन ने अपने एक दस्तावेज में कहा है कि बाल श्रम सस्ता होने की वजह से कई क्षेत्रों में बाल श्रमिकों की मांग होती है और दरअसल उनके द्वारा अर्जित की गई आय की कहीं गणना नहीं होती है इस तरह से देश की अर्थव्यवस्था में यह एक नुकसान भी है। इस तरह बाल श्रम किसी भी तरह से ठीक नहीं कहा जा सकता। यह एक ऐसा दुष्चक्र है जिसमें हमारे बच्चे पिसते चले जाते हैं। बाल श्रम न सिर्फ बच्चों का बचपन उजाड़ता है बल्कि यह उनके समूचे भविष्य को रौंदकर नष्ट कर देता है।

बालश्रम के क्षेत्र में अब तब किये गए हमारे देश के प्रयासों को देखें तो स्थिति संतोषजनक कही जा सकती है। एक भी बाल श्रमिक अगर कहीं किसी समाज में काम कर रहा है तो यह एक शुभसंकेत नहीं है। जहां तक जनजातीय समुदायों में बाल श्रम के प्रश्न हैं तो इन पर नए सिरे से सोचने की गुंजाइश है। जनजातीय समुदायों में इस तरह के आंकड़ों पर शोध किया जाना चाहिए और रिपोर्ट्स के आधार पर उनके बच्चों की बेहतरी के लिए प्रयास किये जाने चाहिए। इस बारे में हमें तुरंत सोचना होगा। ऐसा इसलिए क्योंकि पूरी दुनिया में कहा जा रहा है कि कोविड-19 की महामारी की परिस्थितियों के बाद से बालश्रम बढ़ जाएगा। आजीविका और गरीबी के चलते जनजातियों में पलायन अब भी बदस्तूर जारी है। बाल श्रम के क्षेत्र में काम करने वाली सरकारी और गैर -सरकारी एजेंसियों को इस दिशा में ध्यान देकर और बेहतर प्रयास करने होंगे।

संदर्भ सूची

1. https://bba.org.in/wp-content/uploads/2020/01/capital-corruption-child-labour-in-india.pdf से पुनः प्राप्त
2. http://www.ilo.org/wcmsp5/groups/public/---asia/---ro-bangkok/---sro-new_delhi/documents/publication/ से पुनः प्राप्त
3. https://tribal.nic.in/downloads/Statistics/Statistics8518.pdf से पुनः प्राप्त
4. https://tribal.nic.in/downloads/Statistics/3-STinindiaascensus2011_compressed.pdf से पुनः प्राप्त
5. https://tribal.nic.in/Statistics.aspx से पुनः प्राप्त
6. https://www.ilo.org/global/topics/child-labour/campaignandadvocacy/wdacl/lang--en/index.htm से पुनः प्राप्त

●●●●

भारतीय कानून में प्रदान किए गए अधिकार के रूप में पर्याप्त आवास के मानवाधिकार का संरक्षण और नीति

उर्मिला*

परिचय

आधिकारिक आँकड़ों के अनुसार, देश में लगभग 25.85 मिलियन लोग आवासीय गरीबी का सामना कर रहे हैं, जिसमें से लगभग 82 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों में हैं और शेष शहरी क्षेत्रों में। ग्रामीण क्षेत्रों और शहरी क्षेत्रों में आवासीय गरीबी के अनुपात का अंतर काफी अधिक है और यह ग्रामीण क्षेत्रों की स्थिति को स्पष्ट रूप से प्रदर्शित करता है।

ग्रामीण क्षेत्रों में अकुशल मज़दूर तथा कम आय वाले लोग गरीबी के इस प्रकार से सबसे अधिक प्रभावित होते हैं। आवासीय गरीबी के विभिन्न पक्षों की बात करें तो ग्रामीण क्षेत्रों के लगभग 45 प्रतिशत परिवार बिना बिजली, बायोगैस और एलपीजी के जीवन व्यतीत कर रहे हैं, जबकि 69 प्रतिशत परिवारों के पास खुद का शौचालय नहीं है। इसके परिणामस्वरूप ग्रामीण क्षेत्रों में आवासीय व्यवस्था से असंतोष तथा अन्य जगहों पर बेहतर आवास की संभावना के कारण आंतरिक प्रवास की दर भी काफी उच्च रहती है।

1. भारत का संविधान और पर्याप्त आवास अधिकार

भारत का संविधान दृढ़ता से स्वतंत्रता, बंधुत्व, समानता और न्याय के सिद्धांतों पर आधारित है। जबकि पर्याप्त आवास के अधिकार को मानव अधिकार के रूप में स्पष्ट रूप से व्यक्त नहीं किया गया है, यह संविधान के मौलिक अधिकारों और निर्देशक सिद्धांतों के अंतर्गत आता है।

भारत के संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकार, जो मानव अधिकार की सुरक्षा और गारंटी से जुड़े हैं, में शामिल हैं:

- अनुच्छेद 21: कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता की सुरक्षा का अधिकार।
- अनुच्छेद 14: भारत के क्षेत्र में प्रत्येक नागरिक को कानून के समक्ष समान व्यवहार करने या कानूनों का संरक्षण दिए जाने का अधिकार।

* *68, जय अपार्टमेंट्स, आई पी एक्सटेंशन, पटपड़गंज, दिल्ली-110092*

- अनुच्छेद 15 (1): लिंग, धर्म, नस्ल, जाति या जन्म स्थान के आधार पर किसी भी भेदभाव के खिलाफ प्रत्येक नागरिक को संरक्षित करने का अधिकार।
- अनुच्छेद 19 (1) (डी): भारत के पूरे क्षेत्र में प्रत्येक नागरिक को स्वतंत्र रूप से घूमने का अधिकार।
- अनुच्छेद 19 (1) (ई): भारत के राज्य क्षेत्र के किसी भी हिस्से में रहने और बसने के लिए प्रत्येक नागरिक का अधिकार।
- अनुच्छेद 19 (1) (जी): प्रत्येक नागरिक को किसी भी पेशे का अभ्यास करने, या कोई व्यवसाय, व्यापार या व्यवसाय करने का अधिकार।

संविधान निर्देशक सिद्धांतों का प्रावधान करता है, जिसके अनुसार भारतीय राज्य को अपनी नीतियां बनानी चाहिए। इनमें शामिल हैं:

- अनुच्छेद 39 (1): राज्य की नीति को पुरुषों और महिलाओं दोनों के लिए समान रूप से आजीविका के पर्याप्त साधन के अधिकार को सुरक्षित करने के लिए निर्देशित किया जाना है।
- अनुच्छेद 42: काम की न्यायोचित और मानवीय दशाओं को सुनिश्चित करने और प्रसूति राहत के लिए राज्य द्वारा किए जाने वाले प्रावधान।
- अनुच्छेद 47: पोषण के स्तर और जीवन स्तर को ऊपर उठाने और सार्वजनिक स्वास्थ्य में सुधार करने के लिए राज्य का कर्तव्य।

2. प्रासंगिक राष्ट्रीय कानून

क). भूमि अधिग्रहण, पुनर्वास और पुनर्वास अधिनियम (2013) में उचित मुआवजा और पारदर्शिता का अधिकार

भूमि अधिग्रहण, पुनर्वास और पुनर्वास अधिनियम में उचित मुआवजे और पारदर्शिता का अधिकार 1 जनवरी 2014 को लागू हुआ। यह अधिनियम भूमि अधिग्रहण की एक पारदर्शी और भागीदारी प्रक्रिया सुनिश्चित करने का प्रयास करता है, और उचित मुआवजा और पर्याप्त पुनर्वास प्रदान करने का दावा करता है। अधिनियम का उद्देश्य यह भी सुनिश्चित करना है कि अधिग्रहण का परिणाम यह होना चाहिए कि, "प्रभावित व्यक्ति विकास में भागीदार बनें, जिससे उनकी अधिग्रहण के बाद की सामाजिक और आर्थिक स्थिति में सुधार हो। "

ख). अनुसूचित जनजाति और अन्य पारंपरिक वनवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम (2006)

अनुसूचित जनजाति और अन्य पारंपरिक वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम 2006 अनुसूचित जनजातियों (एसटी) और अन्य पारंपरिक वनवासियों को उनकी आजीविका और खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए वन भूमि पर अधिकार देता है। अधिनियम की शुरूआत में, राज्य की विकास-

आधारित गतिविधियों के कारण बलपूर्वक विस्थापित हुए लोगों सहित अनुसूचित जनजातियों और अन्य पारंपरिक वनवासियों को किरायेदारी और पहुंच अधिकार प्रदान करना है। जबरन बेदखली के मामले में, अनुसूचित जनजातियों और अन्य पारंपरिक वनवासियों को धारा 3 (1) (एम), 4 (2), और 4 (8) के तहत पुनर्वास और 'भूमि मुआवजे' का दावा करने का विशिष्ट अधिकार दिया जाता है।

अधिनियम की धारा 3 (1) (एम) वन भूमि से अवैध बेदखली या विस्थापन के मामलों में वैकल्पिक भूमि सहित स्वस्थानी (स्थल पर) पुनर्वास का अधिकार प्रदान करती है। धारा 4 (8) उन लोगों के वन भूमि के अधिकार की रक्षा करती है जो राज्य के विकास हस्तक्षेपों के परिणामस्वरूप 'भूमि मुआवजे' के बिना अपने आवास और खेती से विस्थापित हुए थे और जहां अधिग्रहण के पांच साल के भीतर अधिग्रहित भूमि का उपयोग नहीं किया गया है।

धारा 4 (2) में प्रावधान है कि किसी भी वन अधिकार धारकों का पुनर्वास नहीं किया जाएगा या उनके अधिकारों को किसी भी तरह से प्रभावित नहीं किया जाएगा जब तक: (ए) एक पुनर्वास या वैकल्पिक पैकेज तैयार नहीं किया गया है, जो प्रभावित व्यक्तियों के लिए आजीविका सुरक्षित करता है; (बी) संबंधित ग्राम सभाओं (ग्राम परिषदों) की सहमति प्राप्त की गई है, और; (ग) पुनर्वास स्थल/स्थान पर सुविधाएं और भूमि का आवंटन पूरा हो गया है।

ग) मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम (1993)

मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम भारत में राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग और राज्य मानवाधिकार आयोगों के निर्माण के लिए प्रदान करता है, और उनकी शक्तियों और कार्यों को भी निर्धारित करता है। इन आयोगों की उत्पत्ति जून 1993 में अपनाई गई वियना घोषणा और कार्रवाई के कार्यक्रम और दिसंबर 1993 में मानवाधिकारों के लिए संयुक्त राष्ट्र के उच्चायुक्त के कार्यालय के निर्माण के लिए खोजी जा सकती है। अधिनियम ने वियना घोषणा के अनुसार अपने सभी नागरिकों के मानवाधिकारों को साकार करना, जहां यह कहा गया है (भाग I, पैराग्राफ 1) कि, "(ज) मानव अधिकार और मौलिक अधिकार सभी मनुष्यों का जन्मसिद्ध अधिकार हैं; उनकी सुरक्षा और पदोन्नति है सरकारों की पहली जिम्मेदारी।"

धारा 2 (डी) में अधिनियम मानव अधिकारों के लिए एक परिभाषा प्रदान करता है:

..."मानवाधिकार" का अर्थ व्यक्ति के जीवन, स्वतंत्रता, समानता और सम्मान से संबंधित अधिकारों से है जो संविधान द्वारा गारंटीकृत या अंतरराष्ट्रीय अनुबंधों में सन्निहित है और भारत में अदालतों द्वारा लागू किया जा सकता है। इस अधिनियम द्वारा स्थापित राष्ट्रीय और राज्य मानवाधिकार आयोगों को नागरिक प्रक्रिया संहिता 1908 के तहत एक मुकदमे की सुनवाई करते हुए एक दीवानी अदालत की शक्ति प्रदान की गई है। ये आयोग स्वयं या पीड़ित द्वारा प्रस्तुत याचिकाओं के आधार पर पूछताछ कर सकते हैं। या किसी भी व्यक्ति को उसकी ओर से, किसी लोक सेवक द्वारा इस तरह के उल्लंघन की रोकथाम में मानवाधिकारों के उल्लंघन या लापरवाही की शिकायतों में, जांच के बाद, आयोग संबंधित सरकार या प्राधिकरण को मुआवजे का भुगतान करने, अभियोजन के लिए कार्यवाही शुरू करने और / या ऐसे निर्देशों के लिए भारत के सर्वोच्च न्यायालय या संबंधित उच्च न्यायालय से संपर्क करने की सिफारिश कर सकता है।

घ.) स्लम क्षेत्र (सुधार और निकासी) अधिनियम (1956)

स्लम क्षेत्र (सुधार और निकासी) अधिनियम 1956 का उद्देश्य "कुछ केंद्र शासित प्रदेशों में स्लम क्षेत्रों के सुधार और निकासी के लिए और ऐसे क्षेत्रों में किरायेदारों की बेदखली से सुरक्षा प्रदान करना है। " चूंकि अधिनियम केंद्र सरकार का कानून है, यह केवल केंद्र के नियंत्रण वाले क्षेत्रों में लागू होता है, जो भारत के केंद्र शासित प्रदेश हैं। कई अन्य राज्यों, जैसे कि तमिलनाडु ने इसी तरह के कानून बनाए हैं या अधिनियम को अपने राज्यों में विस्तारित किया है। अधिनियम में 'मानव निवास के लिए अनुपयुक्त' भवनों के विध्वंस या सुधार के मामले में अधिसूचना और मुआवजे के प्रावधान शामिल हैं। अधिनियम की धारा 19 विशेष रूप से अधिसूचित स्लम क्षेत्रों में किरायेदारों को बेदखली से बचाने से संबंधित है, और पर्याप्त अधिसूचना और वैकल्पिक आवास के लिए प्रक्रियाओं का प्रावधान करती है।

ङ) स्ट्रीट वेंडर (आजीविका का संरक्षण और स्ट्रीट वेंडिंग का विनियमन) अधिनियम (2014)

स्ट्रीट वेंडर्स (आजीविका का संरक्षण और स्ट्रीट वेंडिंग का नियमन) अधिनियम 2014 को भारतीय संसद द्वारा फरवरी 2014 में एक कानून के रूप में प्रख्यापित किया गया था। यह टाउन वेंडिंग समितियों के निर्माण का प्रावधान करता है जो अपने अधिकार क्षेत्र के भीतर सभी स्ट्रीट वेंडरों का सर्वेक्षण करने और यह सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक हैं कि चिन्हित विक्रेताओं को वेंडिंग जोन में समायोजित किया जाए।

3. प्रासंगिक राष्ट्रीय नीतियां

कई राष्ट्रीय नीतियां बेहतर आवास और आश्रय प्रदान करने और बेदखली और विस्थापन के मामलों में पुनर्वास के लिए सरकार की आवश्यकता को भी पहचानती हैं।

मसौदा राष्ट्रीय स्लम नीति (2001)

भारत में अभी भी राष्ट्रीय स्लम नीति नहीं है। जो मौजूद है वह एक मसौदा है जिसमें पुनर्वास से संबंधित कुछ प्रावधान हैं। इसमें शामिल है:

आजीविका पर प्रभाव को कम करने के लिए पुनर्वास दूरी को कम किया जाना चाहिए;

निवासियों को वैकल्पिक स्थलों का कुछ विकल्प प्रदान किया जाना चाहिए, और जहां संभव हो, एक वैकल्पिक पुनर्वास पैकेज;

सभी पुनर्वास स्थलों को पर्याप्त रूप से सेवित किया जाना चाहिए और पुनर्वास से पहले सार्वजनिक परिवहन के लिए प्रावधान किया जाना चाहिए;

प्रभावित व्यक्तियों की आजीविका को एक निश्चित अवधि के भीतर पर्याप्त मुआवजा दिया जाना चाहिए;

किसी भी पुनर्वास प्रक्रिया के लिए योजना बनाने और निर्णय लेने में प्राथमिक हितधारकों, विशेष रूप से महिलाओं की भागीदारी एक पूर्वापेक्षा है;

कोई भी शहरी विकास परियोजना जो समुदायों के अनैच्छिक पुनर्वास की ओर ले जाती है, को

पुनर्वास और पुनर्वास की लागत को कवर करने के लिए प्रावधान करना चाहिए; तथा, हस्तक्षेपों का समय भी अव्यवस्था और परेशानी को कम करना चाहिए, खासकर खराब मौसम की अवधि के दौरान।

3.1 प्रधान मंत्री आवास योजना

प्रधानमंत्री आवास योजना भारत सरकार की एक योजना है जिसके माध्यम से नगरों व ग्रामीण इलाकों में रहने वाले निर्धन लोगों को उनकी क्रयशक्ति के अनुकूल घर प्रदान किये जाएँगे। सरकार ने, राज्यों के 305 नगरों एवं कस्बों को चिह्नित किया है जिनमें ये घर बनाए जाएंगे। केंद्र सरकार द्वारा प्रधानमंत्री आवास योजना का शुभारम्भ 25 जून, 2015 को हुआ। इस योजना का उद्देश्य 2022 तक सभी को घर उपलब्ध करना है। इस के लिए सरकार 20 लाख घरो का निर्माण करवाएगी जिनमे से 18 लाख घर झुग्गी–झोपड़ी वाले इलाके में, बाकी 2 लाख शहरों के गरीब इलाकों में किया जायेगा।

- प्रधानमंत्री आवास योजना को स्वच्छ भारत योजना से भी जोड़ा गया है इसके अंतर्गत बनने वाले शौचालयो के लिए स्वच्छ भारत योजना के तहत 12,000 रूपए अलग से आवंटित किये जायेंगे। इस योजना के तहत मिलने वाली राशि और सब्सिडी राशि डायरेक्ट उम्मीदवार के बैंक खाते में आएगी जो कि आधार कार्ड से लिंक होगा जिससे कि उसे इसका सम्पूर्ण फायदा मिल सके।
- प्रधान मंत्री आवास योजना के तहत बनने वाले पक्के मकान 25 वर्गमीटर (लगभग 270 वर्गफिट) के होंगे जो की पहले से बड़ा दिए गए है पहले इनका आकर 20 वर्गमीटर (लगभग 215 वर्गफिट) तय किया गया था।
- इस योजना में लगने वाला खर्चा केंद्र सरकार और राज्य सरकार के द्वारा मिलकर किया जायेगा। मैदानी क्षेत्रोँ में इस शेयर की जाने वाली राशि का अनुपात 60:40 होगा वहीं उत्तर-पूर्व और हिमालय वाले तीन राज्यों जम्मू कश्मीर, हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड में यह अनुपात 90:10 होगा।
- प्रधान मंत्री आवास योजना को स्वच्छ भारत योजना से भी जोड़ा गया है इसके अंतर्गत बनने वाले शौचालयो के लिए स्वच्छ भारत योजना के तहत 12,000 रूपए अलग से आवंटित किये जायेंगे।
- लाभार्थी को संपूर्ण सुविधा जैसे टॉयलेट, पीने का पानी, बिजली, सफाई खाना बनाने के लिए धुआ रहित ईंधन, सोशल और तरल अपशिष्टों से निपटने के लिए इस योजना को अन्य योजनाओं से जोड़ा भी गया है।

4. न्यायालय के निर्णय

क) भारत के सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय

भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने, कई निर्णयों में, यह माना है कि पर्याप्त आवास का मानव अधिकार भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 द्वारा संरक्षित जीवन के अधिकार से उत्पन्न एक मौलिक अधिकार है

("किसी भी व्यक्ति को उसके जीवन या व्यक्तिगत जीवन से वंचित नहीं किया जाएगा। कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार स्वतंत्रता")। कई महत्वपूर्ण अदालती फैसलों ने आवास के अधिकार और जीवन के अधिकार के बीच संबंध को स्पष्ट रूप से स्थापित किया है, जैसा कि अनुच्छेद 21 द्वारा गारंटी दी गई है।

यूपी आवास विकास परिषद बनाम फ्रेंड्स कॉप के मामले में। हाउसिंग सोसाइटी लिमिटेड (1996), सुप्रीम कोर्ट ने पुष्टि की कि: आश्रय का अधिकार एक मौलिक अधिकार है, जो अनुच्छेद 19 (1) (ई) के तहत निवास के अधिकार और अनुच्छेद 21 के तहत जीवन के अधिकार से उत्पन्न होता है।

1981 में, सुप्रीम कोर्ट ने फ्रांसिस कोरली बनाम केंद्र शासित प्रदेश दिल्ली के मामले में कहा: हम सोचते हैं कि जीवन के अधिकार में मानवीय गरिमा के साथ जीने का अधिकार शामिल है और जो कुछ भी इसके साथ जाता है, अर्थात् जीवन की न्यूनतम आवश्यकताएं जैसे पर्याप्त पोषण, कपड़े और आश्रय और पढ़ने, लिखने और खुद को व्यक्त करने की सुविधाएं शामिल हैं। चमेली सिंह और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (1996) के मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने आश्रय और पर्याप्त आवास के अधिकार की समग्र समझ प्रदान की। यह घोषित किया:

इसलिए, मनुष्य के लिए आश्रय उसके जीवन और अंग की सुरक्षा मात्र नहीं है। यह वह घर है जहां उसे शारीरिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक रूप से विकसित होने के अवसर मिलते हैं। इसलिए, आश्रय के अधिकार में पर्याप्त रहने की जगह, सुरक्षित और सभ्य संरचना, स्वच्छ और सभ्य परिवेश, पर्याप्त प्रकाश, शुद्ध हवा और पानी, बिजली, स्वच्छता और सड़क आदि जैसी अन्य नागरिक सुविधाएं शामिल हैं ताकि उनके दैनिक व्यवसाय तक आसान पहुंच हो सके। आश्रय का अधिकार मौलिक अधिकार के रूप में गारंटीकृत माना जाना चाहिए। 1990 में, अहमदाबाद नगर निगम बनाम नवाब खान गुलाब खान और अन्य मामले में, सुप्रीम कोर्ट ने राज्य को गरीबों के लिए किफायती घर बनाने का निर्देश दिया।

ख). राज्य उच्च न्यायालयों के निर्णय

दिल्ली उच्च न्यायालय, पीके कौल और अन्य के मामले में। (2010), पर्याप्त आवास के अधिकार को बरकरार रखा और पुष्टि की कि: भारत के संविधान के अनुच्छेद 19(1) (ई) के तहत देश के किसी भी हिस्से में रहने और बसने का अधिकार प्रत्येक नागरिक को एक मौलिक अधिकार के रूप में सुनिश्चित किया गया है... भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत जीवन के अधिकार के सार्थक आनंद के लिए एक अभिन्न अंग माना गया है। यह नोट करना आवश्यक है कि वास्तव में कोई भी नया अधिकार अंतरराष्ट्रीय लिखतों या उक्त दिशानिर्देशों द्वारा निर्मित, मान्यता प्राप्त या दोहराया नहीं जा रहा है। भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत प्रत्येक व्यक्ति के आश्रय के अधिकार को जीवन के अधिकार के अनिवार्य सहवर्ती के रूप में मान्यता दी गई है। यह स्पष्ट रूप से मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993 की धारा 2(1)(डी) के तहत "मानवाधिकार" की परिभाषा के तहत कवर किया जाएगा, जिसमें जीवन, स्वतंत्रता, समानता और गरिमा से संबंधित अधिकार शामिल हैं। आश्रय का अधिकार, जीवन के अधिकार का एक अनिवार्य हिस्सा, इसलिए भी 1993 के अधिनियम की धारा 2(1)(डी) के तहत एक वैधानिक रूप से मान्यता प्राप्त अधिकार होगा और इसे लागू भी किया जा सकता है।

1995 (2) एसएलआर 72 पीजी गुप्ता बनाम गुजरात राज्य में सुप्रीम कोर्ट ने आगे घोषित किया था कि उचित लागत पर घरों का निर्माण करना और उन्हें गरीबों के लिए आसानी से सुलभ बनाना राज्य का कर्तव्य था,

और इस तरह के सिद्धांतों को सामाजिक आर्थिक लोकतंत्र सुनिश्चित करने के लिए हमारे संविधान में स्पष्ट रूप से शामिल किया गया है ताकि प्रत्येक व्यक्ति को जीवन, स्वतंत्रता और व्यक्ति की सुरक्षा का अधिकार हो। अदालत ने बेहतर रोजगार के अवसर के लिए भारत के किसी भी हिस्से में प्रवास करने और बसने के प्रत्येक नागरिक के संवैधानिक अधिकार पर जोर दिया है और यह राज्य का कर्तव्य होगा कि वह समाज में वंचितों को आश्रय का अधिकार प्रदान करे (संदर्भ: अहमदाबाद नगर निगम बनाम। नवाब खान गुलाब खान और अन्य)। सभी व्यक्तियों के मानवाधिकारों और मौलिक अधिकारों की रक्षा करना राज्य का संवैधानिक कर्तव्य है। ऐसे अधिकारों और कानूनी अधिकारों के बीच अंतर, जिनके लिए उपयुक्त कार्यवाही में निर्णय की आवश्यकता हो सकती है, पर भी कई अवसरों पर जोर दिया गया है।

मानवाधिकार और मौलिक अधिकार अविभाज्य हैं; उनके उल्लंघन अक्षम्य हैं। इन अधिकारों की रक्षा के लिए राज्य का एक संवैधानिक दायित्व और कर्तव्य के अधीन है। सभी के लिए मौलिक और बुनियादी मानवाधिकारों की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए वैधानिक कर्तव्य और सार्वजनिक कानून दायित्वों के साथ मिलकर है। सुदामा सिंह और अन्य बनाम दिल्ली सरकार और अन्य (2010) के मामले में, दिल्ली उच्च न्यायालय ने यह भी स्थापित किया कि आवास एक मानव अधिकार है। पर्याप्त आवास मानव कल्याण और विकास के लिए है, पारिस्थितिकी, सतत और सतत विकास से संबंधित तत्वों को एक साथ लाता है। निवास और बंदोबस्त के अधिकार को अनुच्छेद 19 (1) (ई) के तहत मौलिक अधिकार के रूप में और अनुच्छेद 21 के तहत उपलब्ध जीवन के अविभाज्य सार्थक अधिकार के रूप में देखा गया था।

5. आगे की राह

यदि देश के ग्रामीण क्षेत्रों में हमें आवास विभाजन या असमानता को कम करना है तो इसके लिये एक 'एकीकृत आवासीय विकास' रणनीति की आवश्यकता होगी, जिसे 'मिशन मोड' में लागू किया जाएगा।

शासन के विभिन्न स्तरों पर सामाजिक अंकेक्षण के साथ-साथ इस तरह के मिशन को लागू करने के संबंध में जवाबदेही तय की जानी चाहिये। पेयजल आपूर्ति, घरेलू शौचालय, ऊर्जा और जल निकासी से संबंधित अन्य लागतों के अलावा नई आवासीय इकाइयों के पुनर्विकास को ध्यान में रखकर संसाधनों के सही आवंटन की आवश्यकता है और सार्वजनिक-निजी-साझेदारी परियोजनाओं को प्रोत्साहित किये जाने की आवश्यकता है।

●●●●

एलजीबीटीक्यू समुदाय के अधिकार

चेतना शुक्ला*

शोध सार- भारतीय समाज को उसकी विविधता ही उसे अद्वितीय बनाती है। किन्तु जब बात यौनिक विविधता की जाती है तो तथाकथित सभ्य समाज में सन्नटा पसर जाता है। उनके अधिकारों का उन्हें मिलना तो दूर की बात है समाज उनके अस्तित्व को ही स्वीकार नहीं करता है। भारतीय समाज में एलजीबीटीक्यू समुदाय अभी अपनी स्वीकृति की लड़ाई लड़ रहा है। हालांकि विगत कुछ वर्षों में उनके संघर्ष के परिणाम स्वरूप संवैधानिक फलक पर सकारात्मक बदलाव की झलक नजर आने लगी तो है, जैसे धारा 377 का समलैंगिकों के लिए गैर अपराधिक होना हो या थर्डजेंडर की रूप में अलग पहचान का अधिकार हो या ट्रांसजेंडर व्यक्ति (अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, 2019का पारित होना हो। माना अभी इन संवैधानिक अधिकारों में भी सुधार की गुजाइश है किन्तु इस संवैधानिक पहल ने समाज में एलजीबीटीक्यू समूहों के लिए स्वीकृति की एक अलख तो जगा ही दी है। इस लेख में यौनिक अल्पसंख्यक एलजीबीटीक्यू समूहों के अधिकारों के बारे में चर्चा करेंगे।

मुख्य शब्द- समलैंगिकता, विषम लैंगिकता, यौनिकता, मानवाधिकार

प्रस्तावना-भारतीय समाज विविधता में एकता की संस्कृति का उत्सव मनाता रहा है किन्तु जब इसी विविधता को किताबों से आम जीवन में उतारने की बात आती है तो उस पर भारतीय समाज का दोगला व्यवहार नजर आता है फिर वह लैंगिक विविधता हो या यौनिक। भारतीय समाज यह मान कर चलता है कि वह सिर्फ महिला पुरुषों के समूह से मिलकर बना है और उन सभी का यौनिक रुझान विषम लैंगिक है। विषम लैंगिकता ही प्राकृतिक और सामान्य है इसे इतर जो लोग हैं वो आप्राकृतिक हैं और बीमार हैं। जिसके कारण अल्पसंख्यक एलजीबीटीक्यू समूहों को परिवार और समाज के स्तर पर विभिन्न प्रकार के भेदभाव और हिंसा का सामना करना पड़ता है। इसी भेदभाव से मुक्ति के लिए अल्पसंख्यक एलजीबीटीक्यू समूह लम्बे अरसे से संघर्ष कर रहे हैं। इस संघर्ष में कई भारतीय संस्थाओं का परोक्ष या प्रत्यक्ष रूप से सहयोग रहा जैसे- नाज़ फाउंडेशन (इंडिया) ट्रस्ट, राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण संगठन, भारतीय विधि आयोग, केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय, राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग और भारत के योजना आयोग जैसे कई संगठन गैर-अपराधीकरण के समर्थन

* *शोधार्थी, स्त्री अध्ययन विभाग, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली*

में सामने आए हैं। हालांकि विगत कुछ वर्षों में संवैधानिक स्तर पर आए बदलावों के कारण अल्पसंख्यक एलजीबीटीक्यू समूहों को उम्मीद की एक किरण मिली है।

एलजीबीटीक्यू समुदाय के साथ होने वाला भेदभाव–

भारतीय समाज पितृसत्तात्मक विचारधारा से संचलित होता है। पितृसत्ता अपना वर्चस्व कायम रखने के लिए लैंगिक और यौनिक भेदभाव को बढ़ावा देती है वह मनुष्य की उपयोगिता प्रजनन या पुनरुत्पादन के द्वारा तय करती है जो भी महिला पुरुष प्रजनन कर सकते हैं और विषम लैंगिक विवाह में बंधकर प्रजनन करते हैं सिर्फ वही बहुसंख्यक समाज को स्वीकार हैं, वही लोग अपने अधिकारों का उपभोग कर सकते हैं और सम्मान पूर्वक जीवन जीने के अधिकारी हैं। इनसे भिन्न जो भी लैंगिक और यौनिक अस्मिताएँ हैं। वह अप्राकृतिक और बीमार मानी जाती हैं और समाज उन्हें उनकी पहचान के साथ स्वीकार भी नहीं करता है। उसमें फिर लेस्बियन, गे, बाई सेक्सुअल, ट्रांसजेंडर, क्वीर और किन्नर या इंटरसेक्स सभी लोग आते हैं। यदि बच्चे के जन्म के बाद पता चलता है कि वह किन्नर है तो परिवार उसे त्याग देता है जिन्हें परिवार ही स्वीकार नहीं करता समाज क्या खाक करेगा। इस कारण वह अपने संवैधानिक और सामाजिक अधिकार से वंचित हो जाते हैं। जिसके कारण न उन्हें शिक्षा मिलती है और न ही किसी प्रकार का व्यवसायिक प्रशिक्षण। और यदि वो कभी किसी प्रकार के कार्य को करने का प्रयास करते भी हैं तो लोग उन्हें स्वीकार नहीं करते हैं। जिसके कारण उनके पास जीविकोपार्जन के लिए पारम्परिक पेशे (भीख मंगना, शुभ अवसरों पर बधाई देने जाना, देह व्यापार आदि) में जाने अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं बचता। इनके अतिरिक्त इस समूह के अन्य लोग जिन्हें उनके यौनिक रुझान के कारण कहीं अपराधी तो कहीं मनोरोगी की तरह देखा जाता है और उनकी यौनिक पसंद को मनोविकृति के रूप में देखा जाता है। कुछ वर्षों पूर्व विख्यात योगाचार्य रामदेव ने अपने साक्षात्कार में कहा था 'ऐसे लोग समाज को चरित्रहिन बनना चाह रहे हैं। ये बीमार लोग हैं, नियमित योग के माध्यम से इनका इलाज हो सकता है। ' कई जगहों पर इनके परिवार या समूह के द्वारा उनकी यौनिक पसंद को बदलने के लिए कनवर्जन थेरपी का उपयोग किया जाता है। बहुसंख्यक विषम लैंगिक आबादी में समलैंगिकता की गलत जानकारी और समझ कई परिवार और समूह को ऐसे उपचारों की ओर ले जाती है। ऐसे मुद्दों का संज्ञान लेते हुए मद्रास उच्च न्यायलय ने इस पर रोक लगा दी है और ऐसे काम में सम्मिलित प्रोफेशनल लोगों के खिलाफ कार्यवाही का भी प्रावधान कर दिया है। समाज के तिरस्कार और नफरत के कारण इस समूह के अन्य लोग भी अपनी वास्तविक पहचान के साथ समाज में भागीदारी नहीं कर पाते यदि संस्थाओं में उनके यौनिक रुझान के बारे में पता चलता है तो कई बार उनका शारीरिक और मानसिक शोषण किया जाता है।

सार्वजनिक स्थलों की बनावट लगभग महिला या पुरुष के अनुरूप ही होती है जिसके कारण एलजीबीटीक्यू समूह के लोगों को असहजता, कभी हिंसा और शोषण का सामना करना पड़ता है फिर वह सार्वजनिक शैचालय हों या ट्रायल रूम्स हों। एयरपोर्ट, मॉल, अस्पताल, मेट्रो स्टेशन में जाँच के समय अधिकांशत महिला पुरुष ही होते हैं ऐसी जगहों पर अपने समुदाय की अनुपस्थिति भी कई बार एलजीबीटीक्यू समुदाय को असहज करती है।

भारतीय समाज में विवाह अनिवार्य और आवश्यक काम माना जाता है किन्तु पसंद का चुनाव का अधिकार नहीं देती। सिर्फ सामाजिक ही नहीं एलजीबीटीक्यू समुदाय को कानून भी चुनाव का अधिकार नहीं देती। भारत में आज भी समलैंगिक विवाहों को संवैधानिक मान्यता नहीं मिली है।

भारत में एलजीबीटीक्यू समुदाय से सम्बन्धित कानूनों में आए बदलाव-

हमारी पहचान को कानून द्वारा आकार दिया जाता है उदाहरण के लिए 2014 से पूर्व व्यक्तियों के पास लैंगिक पहचान के लिए महिला-पुरुष के अतिरिक्त विकल्प नहीं था भले वो लोग इस पहचान से स्वयं को सम्बोधित करना चाहते हों या नहीं किन्तु सर्वोच्च न्यायालय के 2014 के निर्णय के बाद लोगों को अन्य या थर्डजेंडर का भी विकल्प मिला। कानून ने सिर्फ एलजीबीटीक्यू समूहों की कानूनी स्थिति निर्धारित नहीं कि बल्कि उनके आस्तित्व का अवमूल्यन भी किया था। एलजीबीटीक्यू समूह की लैंगिकता पर महिला-पुरुष की लैंगिकता को तरजीह दी। जिसके कारण उनसे उनके अधिकार छिन गए और वह स्वयं को मानसिक और संवैधानिक रूप से बाकियों की अपेक्षा कमतर मनाने लगे और बाकियों ने भी इस बात का लाभ उठते हुए उन्हें उनके अधिकारों से वंचित कर दिया। जिस कारण एलजीबीटीक्यू समूह अधिकांश समय अपने वास्तविक पहचान के साथ जीवन नहीं जीते बल्कि समाज में स्वीकार लैंगिक पहचान को अपना कर झूठा जीवन जीते रहते हैं और कानून सिर्फ पहचान ही नहीं देता बल्कि सामाजिक परिवर्तन के लिए भी एक अत्यंत महत्वपूर्ण उपकरण है। कानून और समाज का सहजीवी सम्बन्ध है कानून को समाज द्वारा आकार दिया जाता है और बदलें में वह इसे आकार देता है। यही कारण है कि एलजीबीटीक्यू समुदाय लम्बे अरसे से सामाजिक स्वीकृति के लिए कानूनी लड़ाई लड़ रहा है। भारत में समलैंगिकों के अधिकारों की रक्षा के लिए1994 से संघर्ष शुरू हुआ, जब एड्स भेदभाव विरोधी आंदोलन (ABVA) ने धारा 377 की संवैधानिकता के खिलाफ आवाज उठाई और उस के लिए दिल्ली उच्च न्यायालय में एक याचिका दायर की। 2009 में दिल्ली उच्च न्यायालय ने कहा कि "समलैंगिकता और विषम लैंगिकता के आधार पर भेदभाव एक आधारहीन वर्गीकरण बनाता है और यह अनुच्छेद 14 के तहत समानता का अधिकार और भारतीय के अनुच्छेद 15 के तहत लिंग के आधार पर समानता का अधिकार छीनता है। 11 दिसंबर 2013 को, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने "2009के दिल्ली उच्च न्यायालय के आदेश" को अमान्य कर दिया, यह कहते हुए कि "धारा 377 संवैधानिक सीमाओं के अंतर्गत थी और इसे असंवैधानिक घोषित करने के लिए कोई ठोस आधार नहीं था"। लेकिन न्यायपालिका इस धारा को नहीं हटाएगी, पर इसे चर्चा के लिए संसद में पारित किया जा सकता है। 28 जनवरी 2014 को, भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने धारा 377 पर अपने 11 दिसंबर के फैसले के खिलाफ केंद्र सरकार, नाज़ फाउंडेशन और कई अन्य लोगों द्वारा दायर समीक्षा याचिका को खारिज कर दिया। बेन्च ने यह दावा करते हुए फैसला सुनाया कि "धारा 377 को पढ़ते समय, उच्च न्यायालय ने इस बात को नजरअंदाज कर दिया कि देश की आबादी का एक मामूली हिस्सा लेस्बियन, गे, बाइसेक्शुअल या ट्रांसजेंडर लोगों का प्रतिधिनित्व करता है और पिछले 150 से अधिक वर्षों में, 200 से कम लोगों पर धारा 377 के तहत अपराध करने के लिए मुकदमा चलाया गया है।

18 दिसंबर 2015 को, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस पार्टी के सदस्य, शशि थरूर ने धारा 377 को निरस्त करने के लिए एक विधेयक पेश किया, लेकिन इसे सदन में 71-24 के मत से खारिज कर दिया गया। 2 फरवरी 2016 को, सुप्रीम कोर्ट ने समलैंगिक गतिविधि के अपराधीकरण की समीक्षा करने का निर्णय लिया। अगस्त 2017 में, सर्वोच्च न्यायालय ने सर्वसम्मति से फैसला सुनाया कि व्यक्तिगत निजता का अधिकार भारतीय संविधान के तहत एक आंतरिक और मौलिक अधिकार है। न्यायालय ने यह भी फैसला दिया कि एक व्यक्ति का यौन रुझान गोपनीयता का मुद्दा है, जिससे एलजीबीटी कार्यकर्ताओं को उम्मीद थी कि अदालत जल्द ही धारा 377 को समाप्त करेगी।

6 सितंबर 2018 को, सुप्रीम कोर्ट ने अपना फैसला जारी किया। न्यायालय ने सर्वसम्मति से फैसला दिया कि धारा 377 असंवैधानिक है क्योंकि यह स्वायत्तता, अंतरंगता और पहचान के मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करता है, इसलिए धारा 377 के तहत एकांत में बलिगों के मध्य सहमति से बनाए गए सम्बन्ध अब से गैरअपराधिक होगें।

सुप्रीम कोर्ट ने एक ऐतिहासिक आदेश में 2014 में ट्रांसजेंडरों के लिए केंद्र और राज्य सरकार को निर्देश दिया था कि उनके साथ 'सामाजिक और शैक्षिक तौर पर पिछड़े वर्ग के नागरिकों के तौर पर व्यवहार करें और उन्हें शिक्षण संस्थानों और सार्वजनिक नियुक्तियों में सभी तरह का आरक्षण उपलब्ध करवाएं। ' गौरतलब है कि ट्रांसजेंडर को थर्ड जेंडर के रूप में कानूनी मान्यता देते हुए कोर्ट ने कहा था कि, 'यह मानव जाति का अधिकार है कि वह अपना जेंडर चुने। 'वैसे 2019 में केंद्र सरकार ट्रांसजेंडर पर्सन (प्रोटेक्शन ऑफ राइट्स) एक्ट लेकर आई, लेकिन आरक्षण के विषय को छोड़ दिया। साथ ही नए बिल के अनुसार ट्रांसजेंडर व्यक्ति को अपने ट्रांस अधिकारों के लिए मेडिकल सर्टिफिकेट की जरूरत पड़ेगी। जबकि नाल्सा जजमेंट में सुप्रीम कोर्ट का कहना था कि जेंडर से जुड़ी पहचान किसी भी व्यक्ति के अंदर से आती है। इसके चलते सरकार को आलोचनाओं का भी सामना करना पड़ा और ट्रांसजेंडर के लिए काम कर समूह बिल का घोर विरोध कर रहे हैं। उनका कहना है कि अभी इस कानून में बहुत बदलाव की जरूरत है तब ही असल में एलजीबीटीक्यू समूह को उनके अधिकार मिल सकेंगें।

भारत में एलजीबीटीक्यू समुदाय को प्राप्त अधिकार

भारतीय संविधान के तहत प्राप्त सभी मौलिक और कानूनी अधिकार एलजीबीटीक्यू समुदाय को भी प्राप्त हैं और साथ ही मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा के तहत सभी मानवाधिकारों में जीवन का अधिकार, स्वास्थ्य का अधिकार, कानून के समक्ष समानता का अधिकार और निजता का अधिकार शामिल हैं। साथ ही अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार और अत्याचार सहित भेदभाव और हिंसा से सुरक्षा, यह सभी अधिकार मिलने के बाद भी जब धारा 377 एलजीबीटीक्यू समूह के मौलिक अधिकारों अनुच्छेद 14,15,19 और 21 का हनन कर रही थी तो सर्वोच्च न्यायालय ने इस धारा 377 का गैर-अपराधीकरण करके समलैंगिकों के अधिकारों की रक्षा की इसी प्रकार ही ट्रांसजेंडर के अधिकारों की रक्षा के लिए ट्रांसजेंडर व्यक्ति (अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, 2019 पारित किया गया 'जिसके तहत ट्रांसजेंडर व्यक्तियों की परिभाषा किया गया, कोई भी सार्वजनिक संस्था उन्हें रखने से इंकार नहीं कर सकती न ही किसी प्रकार का शोषण कर सकती है,ट्रांसजेंडर व्यक्तियों की पहचान की मान्यता इसके तहत व्यक्ति अपने लिंग का निर्धारण स्वयं कर सकता है। सरकार द्वारा कल्याणकारी उपाय किए जाए। वो भी शिक्षा, सामाजिक सुरक्षा और स्वास्थ्य का लाभ उठा सकते हैं। ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय परिषद की स्थपना की जाए। यदि कोई व्यक्ति ट्रांसजेंडर के अधिकारों का हनन करता है या उनका शोषण करता है तो उसे 6 महीने से लेकर 2 साल तक की सजा का प्रावधान है'।

चूँकि कानून समाज के लोगों द्वारा ही बताया जाता है जिसके कारण हमेशा उसमें बदलाव की गुंजाइश बनी रहती है।

भारत के संविधान की प्रस्तावना स्वयं न्याय की वकालत करती है - सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक और देश के सभी नागरिकों के लिए समानता की स्थिति। संविधान प्रत्येक व्यक्ति को कानून के

समक्ष समान दर्जा और भारत के क्षेत्र में कानूनों के समान संरक्षण की गारंटी देता है। प्रत्येक व्यक्ति को बिना किसी भेदभाव जिसमें धर्म, पंथ, जाति, लिंग, भाषा इत्यादि शामिल हैं, जीवन जीने का अधिकार देता है।

भारत का संविधान सम्मान के साथ जीने का अधिकार प्रदान करता है और अपनी यौन पहचान का चयन करना भी इस मौलिक अधिकार का एक अनिवार्य तत्व है और इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को हिंसा से सुरक्षा का अधिकार प्राप्त है। समलैंगिकों की यौन पहचान की कानूनी और सामाजिक मान्यता उनके सम्मान के अधिकार को मान्यता प्रदान करती है और अपराधीकरण उसी का उल्लंघन करता है, उन्हें अपने पसंद को बिना किसी डर के व्यक्त करने और जीने का पूरा अधिकार है।

जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार में निजता का अधिकार शामिल है। एक वयस्क द्वारा किसी भी प्रकार की यौन गतिविधि अत्यंत गोपनीयता का मामला है और किसी व्यक्ति की यौनिकता और यौन रुझान का फैसला करना उस व्यक्ति की गोपनीयता का उल्लंघन है। इस प्रकार, समलैंगिकों को भी उनके यौन कृत्यों और यौनिक रुझान की गोपनीयता का पूरा सम्मान किया जाएगा जैसा कि विषमलैंगिकों की गोपनीयता का किया जाता है।

उपसंहार-

किसी भी समाज या संस्कृति को विकसित तभी माना जाता है जब उस समाज का हर तबका अपने अधिकारों और कर्तव्यों का पालन और उपभोग कर सके। इसलिए भारत के विकास के लिए आवश्यक है कि लोग एलजीबीटीक्यू समुदाय के लोगों को भी महिला पुरुष की भांति ही स्वीकार करें। सिर्फ लैंगिक और यौनिक रुझान की भिन्नता के कारण कोई मनुष्यता के पैमाने पर कम या ज्यादा नहीं हो सकता है। सभी को सम्पूर्ण मनुष्य और नागरिक के अधिकार मिलने चाहिए और कर्तव्य निभाने का मौका भी मिलना चाहिए। यह तभी सम्भव है जब बचपन से बच्चों को एलजीबीटीक्यू समुदाय से परिचित कराया जाए उनकी किताबों में लड़का-लड़की के साथ थर्ड जेंडर के बारे में भी बातचीत हो। परिवार के नाम पर सिर्फ विषम लैंगिक परिवार के उदाहरण न मिले बल्कि कुछ समलैंगिक कुछ थर्डजेंडर के परिवार भी मिले। तब ही बच्चा इन अस्मिताओं के साथ भी सहज होंगे और अपने बीच उपस्थित ऐसे लोगों को सहर्ष स्वीकार पाएंगे। हालांकि धीरे ही सही किन्तु पिछले कुछ वर्षों में कई सकारात्मक कदम उठाए जा रहें है जैसे-केरल राज्य ने थर्डजेंडर समूहों के लिए G-Taxi की शुरुआत की जिसका मालिक और चालक दोनों ही थर्डजेंडर के लोग होंगे। साल 2019 में उड़ीसा के जिला मुख्यालय अस्पताल में ट्रांसजेंडरों को सिक्योरटी गार्ड नियुक्त किया गया। नोएडा मेट्रो रेल कॉर्पोरेशन ने सेक्टर 50 का नाम बदल कर 'प्राइड स्टेशन' किया गया और छह ट्रांसजेंडर को टिकट काउंटर और हॉउस कीपिंग की ट्रेनिंग दिलाकर इस स्टेशन पर नियुक्त किया गया है। 2021 में लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी और आर्यन पाशा ने मिलकर ट्रांसजेंडर लोगों के लिए सलून खोला जिसके पीछे उनका मकसद ट्रांस जेंडर लोगों को काम देने का है। आर्यन पाशा कहती हैं कि इसके लिए बहुत पढ़े लिखे होने की जरूरत नहीं होती है कोई भी ट्रेनिंग लेकर काम कर सकता है। इस सलून के सारे कर्मचारी ट्रांस जेंडर हैं पर ग्राहक कोई भी हो सकता है। किन्तु ऐसी कोई भी पहल कामयाब तभी हो सकती है जब ज्यादा से ज्यादा व्यवहार में लाई जाए।

सन्दर्भ सूची:

- मानव अधिकार: नई दिशाएं, प्रकाशन- राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, भारत-2020
- Rohit K Dasguptal Queer Sexuality: A Cultural Narrative of India's HistoricalA
- प्रकाश केरे (3 जुलाई 2011) समलैंगिकता: बहस के कुछ सन्दर्भ। https://bargad। org/: समलैंगिकता: बहस के कुछ सन्दर्भ। Bargadlll बरगदlll से, 20 अप्रैल 2017 को पुनर्प्राप्त
- साधना आर्य, निवेदिता मेनन, जिनी लोकनिता। (2001)। नारीवादी राजनीति: संघर्ष और मुद्दे। दिल्ली : हिंदी माध्यम कार्यन्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय।
- रंजीत अभिज्ञान और योगेन्द्र दत्त। (2010)। जेंडर और शिक्षा रीडर भाग 1। दिल्ली। निरंतर।
- रंजीत अभिज्ञान और पूर्वा भरव्दाज। (2011)। जेंडर और शिक्षा रीडर भाग 2। दिल्ली। निरंतर।
- Radhika Ramasubban Culture, Politics, and Discourses on Sexuality: A History of Resistance to the Anti-Sodomylaw in India
- Transgender Persons (Protection of Rights) Act, 2019

●●●●

ग्रामीण बाल मजदूर और मानव अधिकार

डॉ. धनंजय चोपड़ा*

पिछले दिनों मई 2022 में वह एक अप्रतिम दृश्य था, जब डरबन में आयोजित अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन के पांचवें सम्मेलन में बाल मजदूरी से मुक्त हुए भारत के बच्चों ने न केवल बाल मजदूरी के खिलाफ अपनी आवाज बुलंद की, बल्कि सम्मेलन में उपस्थित दुनिया भर के प्रतिनिधियों को 2025 तक बाल श्रम के खात्मे के लिए सार्थक प्रयास किए जाने की शपथ भी दिलाई। यह किसी से नहीं छिपा है आजादी के बाद से ही अपने देश में बाल श्रम के खिलाफ लगातार प्रयास किए जा रहे हैं। भारत ने इस दिशा में सफलताएं भी अर्जित की हैं। फिर भी कहीं कुछ बाकी बचा रह गया है। अभी भी बहुत से ऐसे बच्चे हैं, जो स्कूल नहीं जाते हैं। उनके हमउम्र दोस्त भी नहीं हैं, जो उन्हें खेल के लिए आवाज देते हों। उनकी आकांक्षाओं को विस्तार ही नहीं मिल पाया, सो वे अपनी सीमाओं को समय से पहले ही समझने लगे हैं। वे बड़ों के साथ काम करते है, सो उनके चेहरे और व्यवहार से बचपन गायब है। और, शायद यही वजह है कि हमारी सामाजिक-व्यवसायिक व्यवस्थाएं, उन्हें बच्चों के रूप में न देखकर कामगारों के रूप में देखती हैं और ये कामकाजी बच्चे ढेर सारे कानूनी संरक्षण के बावजूद शोषण से मुक्त न हो पाने के लिए अभिशप्त से हैं।

आज बदलती दुनिया और बदलते समय में सभी की निगाहें बच्चों की परवरिश और उन्हें दिए जाने वाले परिवेश पर है। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, रोबोटिक्स, वर्चुअल रियलिटी और ऑगमेंटेड रियलिटी के इस समय में दुनिया के कई देश बच्चों के जीवन से जुड़े नवाचारों को अमल में लाने में जुटे हैं। सच यह भी है हमारे इस समय में एक ऐसी पीढ़ी तैयार हो रही है, जिसके कल्पना-लोक को इन्हीं टेक्नोलॉजी के बलबूते नित नए आयाम दिए जा रहे हैं। जाहिर है आने वाले समय में वे बच्चे बहुत पीछे छूट जाएंगे, जिन्हें हम विकास संचार का प्रतिभागी नहीं बना पाएंगे। जब हम विकास संचार की बात करते हैं, तब उनमें मजदूर वर्ग भी शामिल होते हैं जो विकास के टूल्स की तरह इस्तेमाल तो होते हैं, लेकिन वे विकास के सहभागी या उपभोगकर्ता नहीं बन पाते। इन मजदूर वर्गों में एक बहुत बड़ा हिस्सा ग्रामीणों का होता है, रोजी-रोटी की तलाश में खेत-खलिहानी विशेष समय निकालकर मजदूरी करते हैं। ये वही लोग होते हैं, जो अपने बच्चों को चाह कर भी नहीं पढ़ा पाते और ना ही उन्हें कोई ऐसा हुनर सिखा पाते हैं कि वे अपनी रोजी-रोटी के जुगाड़ को स्वालम्बन से जोड़ सकें। यहां मैं एक बार द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद के उस समय को दोहरा देना चाहता हूं, जिसे हमने तीसरी दुनिया की शुरुआत का समय माना था। उस समय दुनिया के नीति निर्धारकों ने यह सोचा

* *पाठ्यक्रम समन्वयक, सेन्टर ऑफ मीडिया स्टडीज, इलाहाबाद विश्वविद्यालय*

था कि तीसरी दुनिया को हम अशिक्षा, भुखमरी और बेरोजगारी से मुक्त करके एक विकसित दुनिया बना लेंगे। 21वीं सदी के दूसरे दशक के बीच जाने के बावजूद यह सब कुछ एक स्वप्न जैसा ही है। इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि हमने विकास संचार से जिन ग्रामीण मजदूरों को जोड़ा, उनकी और उनके परिवार के सर्वांगीण विकास पर कोई ध्यान नहीं दिया। आज जब 21वीं सदी में दुनिया भर में बहुत तेजी से बदलाव की बयार बह रही है, तब लगता है कि इस दिशा में बहुत तेजी से कुछ नया और सार्थक सोचे जाने की जरूरत है।

सन 2011 की जनगणना के आंकड़ों के अनुसार, भारत में बाल मजदूरों की संख्या 1.01 करोड़ थी, जिसमें 56 लाख लड़के और 45 लाख लड़कियां थीं। उस समय दुनिया भर में कुल मिलाकर 15.20 करोड़ बच्चे बाल मजदूरी का शिकार थे। हाल ही में इंटरनेशल लेबर आर्गनाइजेशन और यूनीसेफ ने अपनी रिपोर्ट में कहा है कि दुनिया का हर दसवां बच्चा किसी न किसी तरह की मजदूरी करने पर मजबूर है। यदि आंकड़ों में इसे देखें तो दुनिया में 16 करोड़ से अधिक बच्चे मजदूर हैं। इनमें तकरीबन 6 करोड़ लड़कियां और दस करोड़ लड़के शामिल हैं। रिपोर्ट में बताया गया है कि 2020 में बाल मजदूरी के मामलों में दुनिया में तकरीबन 84 लाख बाल मजदूरों की बढ़ोत्तरी हो गई है। कई सालों की गिरावट के बाद यह आंकड़ा एक बार फिर आश्चर्यजनक रूप से बढ़ने लगा है। इससे पहले बालमजदूरी के आंकड़े लगातार कम हो रहे थे। रिपोर्ट के मुताबिक 2000 में करीब 24.6 करोड़ बच्चे बाल मजदूर थे, 2004 में इसमें तकरीबन 2 करोड़ कम होकर 22 करोड़ बच्चे बाल मजदूर रह गए, 2008 में 21 करोड़, 2012 में 16 करोड़ और 2015 में 15.2 करोड़ बच्चे बाल मजदूरी कर रहे थे, 2020 में यह वापस 16 करोड़ पर जा पहुंचे हैं। इसका एक बड़ा कारण कोविड-19 के समय फैली बेरोजगारी को बताया जा रहा है।

सन 2013 में एसोचैम की सर्वे रिपोर्ट के आंकड़ों को माने तो मुंबई में 1,25,000, बेंगलुरु में 1,10,000, कोलकाता में 55,000 और दिल्ली में 1,00,000 से अधिक बच्चे सड़कों पर मारे-मारे फिर रहे थे। यह बच्चे स्कूल नहीं जाते और भीख मांगने, कबाड़ बटोरने, बाल मजदूरी करने या फिर खतरनाक धंधों और अपराधों में शामिल होने के लिए अभिशप्त है। बहरहाल अपने देश में ग्रामीण इलाकों की स्थिति और भी अधिक खराब है। अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन की रिपोर्ट के आंकड़ों की मानें तो भारत में लगभग 80% बाल मजदूरी की जड़ें ग्रामीण इलाकों में ही हैं। देश में 2011 की जनसंख्या पर आधारित आंकड़े बताते हैं कि बच्चों की सबसे बड़ी, जो कि लगभग आबादी 33 लाख है, खेती से जुड़े कामों में लगी हुई है। लगभग 30 लाख बच्चे मजदूर हैं। देश में बाल मजदूरों की इस बड़ी संख्या का 55% हिस्सा उत्तर प्रदेश, बिहार, राजस्थान, महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश में है। यह आंकड़े बताते हैं देश के ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लगभग बच्चे बाल मजदूरी कर रहे हैं। यह सच है कि बाल मजदूरी और शोषण के अनेक कारण हैं, जिनमें गरीबी, सामाजिक मापदंड, वयस्कों तथा किशोरों के लिए अच्छे कार्य करने के अवसरों की कमी तो शामिल हैं ही, लेकिन सबसे बड़ा कारण है बच्चों द्वारा सस्ता श्रम उपलब्ध कराना जहां एक और ग्रामीण अभिभावक शिक्षा को रोजगार की गारंटी नहीं मानता, वहीं दूसरी ओर उसे लगता है यदि उसका बच्चा खेत में या उसके साथ मजदूरी में हाथ बँटाएगा तो वह पारिवारिक आमदनी बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा देगा। दूसरी ओर ढेर सारी नियोक्ताओं की निगाह बच्चों पर इसलिए टिकी होती है कि उन्हें वे सस्ते श्रम मूल्य पर मिलने वाले मजदूर नजर आते हैं। ग्रामीण इलाकों में ऋण अदायगी में फंसे अभिभावक भी अपने बच्चों को बाल मजदूरी की ओर धकेल देते हैं।

आज हम आजादी के 75 वर्ष में ग्रामीण बाल मजदूरी की बात कर रहे हैं, तब यह आश्वस्ति तो मिलती ही है कि हमने आजाद भारत में इस बुराई को मिटाने की बात पहले दिन से ही करनी शुरू कर दी थी।

संविधान में मिले मौलिक अधिकारों में कई ऐसे प्रावधान किए गए, जो बाल मजदूरी को हतोत्साहित ही नहीं करते, बल्कि उसे समाप्त करने की दिशा में बढ़ने को प्रेरित भी करते हैं। संविधान के अनुच्छेद 21ए में कहा गया है कि राज्य अवश्य ही कानून बनाकर 6 वर्ष से 14 वर्ष तक की उम्र के सभी बच्चों के लिए निशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध कराएगा। इसके अमल के रूप में 4 अगस्त 2009 को निशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा हेतु बच्चों का अधिकार अधिनियम 2009 संसद में पारित कर दिया गया। इसी तरह अनुच्छेद 23 (1) किसी भी मनुष्य से अवैध व्यापार, बेगारी या जबरन मजदूरी अपराध घोषित करता है। अनुच्छेद 24 में 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को फैक्ट्री अथवा खदान में जोखिम भरे रोजगार में काम कराने से रोकता है। सविधान ने तो अभिभावकों के बच्चों के प्रति दायित्व को भी नियत किया है। मौलिक दायित्व संबंधी अनुच्छेद 51ए इस बात का उल्लेख करता है कि भारत के प्रत्येक नागरिक, जो माता-पिता अथवा अभिभावक है, का दायित्व है कि वह 6 से 14 वर्ष की आयु के अपने बच्चे शिक्षा के लिए अवसर प्रदान करें। यही नहीं भारत सरकार ने बाल मजदूरी (निषेध एवं विनियमन) अधिनियम 1986 के अंतर्गत 14 वर्ष की आयु से कम बच्चों के रोजगार को निषेध -प्रतिबंधित किया है। भारत सरकार ने घरेलू नौकर के रूप में अथवा ढाबों, रेस्टोरेंट, होटलों, चाय की दुकानों आदि में बच्चों के रोजगार को निषिद्ध किया है।

राष्ट्रीय बाल मजदूरी नीति, 1987 में रोजगार से छुड़ाए गए बाल मजदूरों के पुनर्वास की बात कही गई है। यह भी कहा गया है कि शिक्षा की औपचारिक अथवा अनौपचारिक व्यवस्था के माध्यम से बच्चों को बेहतर और तत्काल उपलब्ध शिक्षा मुहैया कराई जाए। बाल विकास सेवाओं के माध्यम से बच्चों के स्वास्थ्य और पोषण पर ध्यान दिया जाए। गरीबी उन्मूलन के कार्यक्रमों को तेजी से अमल में लाया जाए और बाल मजदूरी के क्षेत्रों पर ध्यान केंद्रित करके काम किया जाए। तब से लेकर अब तक ढेर सारे प्रयास और जागरूकता अभियान चलाए गए। मानव अधिकार आयोग की ओर से भी ढेर सारी पहल की गई। आयोग की सक्रियता ने सरकारों को भी चौकन्ना बनाया। नतीजा यह है कि 21वीं सदी के तीसरे दशक में कुछ सार्थक कदम उठाए जाने के समाचार मिलने लगे हैं। पिछले दिनों मई 2022 में ऐसे ही एक बाल-श्रम से जुड़े एक समाचार ने सभी का ध्यान अपनी ओर खींचा। देश के प्रमुख समाचार पत्रों में छपा यह समाचार इस बात की तस्दीक कर रहा था कि अब भारत में बाल श्रम के दिन खत्म होने की ओर है। इस समाचार के अनुसार उत्तर प्रदेश के 20 जनपदों के 1197 बाल श्रमिक बाहुल्य क्षेत्रों में एक अभियान चलाकर बाल श्रमिकों के पुनर्वास और उनकी शिक्षा की व्यवस्था करने की पहल होने जा रही है। बाल श्रमिकों के जीवन में नया सवेरा लाने वाले इस अभियान के अंतर्गत प्रदेश के 31 ब्लाकों व 16 नगर पंचायतों व वार्डों का चयन किया गया है। उत्तर प्रदेश के श्रम विभाग द्वारा नया सवेरा योजना के अंतर्गत शुरू हुए इस अभियान में शहरी व ग्रामीण इलाकों के बाल श्रमिकों व उनके परिवारों को समाज की मुख्यधारा से जोड़ने की पहल की जा रही है। इस पहल में बेसिक शिक्षा विभाग, बाल विकास विभाग, महिला कल्याण विभाग, जिला पंचायत राज विभाग, पुलिस बाल कल्याण अधिकारी, ग्राम प्रधान और सभासदों की भागीदारी सुनिश्चित की गई है। दरअसल अब इसी तरह फोकस होकर काम करने की जरूरत आन पड़ी है। जब तक जमीनी स्तर पर रूपरेखा तैयार करके काम नहीं होगा तब तक बेहतर परिणाम नहीं दिखाई देंगे।

हमें यह बखूबी समझना होगा भारतीय ग्रामीण परिवेश इन दिनों कई चुनौतियों से जूझ रहा है। एक ओर अपना खेत और खेती बचाने की चिंता है तो दूसरी ओर संयुक्त परिवार के विघटन को रोकने की। एक ओर 'डिजिटल डिवाइड' से उबरने की समस्या है तो दूसरी ओर शहर की ओर भागते गांव और गांव के युवाओं को रोकने की। यह किसी से नहीं छिपा है कि 2011 की जनगणना में ही ग्रामीण भारत सिकुड़ता नजर

आ गया था, क्यों कि ग्रामीण भारत की जनसंख्या की विकास दर मे कमी दर्ज की गई थी। 2001 में जहां यह दर 18.1 थी, वहीं 2011 में बढक़र यह 12.2 हो गई थी। तब इस मुद्दे को टालते हुए यह कहा गया कि रोजगार की तलाश में ग्रामीण युवाओं का पलायन शहरों की ओर हो रहा है। इस बात पर तो बहस ही नहीं हुई कि आखिर शहरों की सीमाएं फैलती-पसरती रहीं और बेहतर जीवन की तलाश में लोग शहरों की ओर भागते रहे तो हमारी खेती-बारी का क्या होगा और हम पर्यावरण के मामले में खुद को पिछड़ते जाने से कैसे रोक पाएंगे। अब जबकि नई जनगणना की शुरूआत होने को है, तब यह तय है कि आंकड़े और भी अधिक चौंकाने व डराने वाले होंगे ही। बड़ी समस्या डिजिटल डिवाइड से पनप रही है। नेशनल स्टेटिस्टिकल ऑफिस के सर्वे के आधार पर चला है कि शिक्षा से लेकर स्कूलों तक और बाकी सुविधाओं तक ग्रामीण और शहरी भारत में एक बड़ा अंतर है। ग्रामीण और शहरी भारत डिजिटल आधार पर बंटा हुआ है। ग्रामीण भारत में सिर्फ 4 फीसदी आबादी के पास ही कंप्यूटर है, जबकि शहरी इलाके में 23 फीसदी आबादी के पास कंप्यूटर है। ग्रामीण भारत में 15 फीसदी लोगों तक इंटरनेट की पहुंच है, जबकि 42 फीसदी लोगों को शहरी इलाकों में इंटरनेट की पहुंच है। यह आंकड़े तब और डरा रहे थे, जब देश में कोरोना महामारी के दौर में हमने ऑनलाइन शिक्षा का सहारा लेना शुरू कर दिया था। कहना न होगा कि उन दिनों लगभग सभी ग्रामीण इलाकों में स्कूली शिक्षा ध्वस्त हो गई थी। बहरहाल देश की केन्द्र व प्रदेश सरकारों के प्रयास से स्थिति में अब लगातार सुधार हो रहा है। नील्सन इंडिया की एक रिपोर्ट को सही माने तो देश में इन दिनों ग्रामीण इलाकों में भी इंटरनेट के सक्रिय उपयोगकर्ताओं की संख्या तेजी से बढ़ रही है। इस रिपोर्ट के अनुसार सन 2019 की तुलना में गांवों में इंटरनेट का प्रयोग करने वालों में 45 फीसदी की वृद्धि देखी गई है। इनमें सबसे ज्यादा उपयोगकर्ता महिलाएं हैं। 2019 के बाद इनकी संख्या 61 फीसदी तक बढ़ गई है, जबकि पुरुष की संख्या 24 फीसदी तक बढ़ी है। ग्रामीण इलाकों में इंटरनेट का उपयोग करने वाली हर तीन में एक महिला सक्रिय उपयोगकर्ता है। जाहिर है कि आने वाले दिनों में हम ग्रामीण बच्चों के जीवन में सकारात्मक सुधार देख सकते हैं। यह सुधार ग्रामीण बाल-श्रम से मुक्ति पाने में भी कारगर होंगे।

यह सही है कि आजादी के पचहत्तरवें वर्ष में यह कह पाने में समर्थ हुए हैं कि हमने बाल मजदूरी के उन्मूलन में बहुत सी उपलब्धियां हासिल की हैं और अपने देश के नौनिहालों के बेहतर भविष्य की ओर ले जा रहे हैं। वास्तव में बहुत कुछ हुआ है और बहुत कुछ किया जाना बाकी है। हमें बार-बार भारत सरकार की बच्चों को लेकर बनी नीति को दोहरा लेने की जरूरत है, जिसका भाव-सारांश यह उद्घोष करता हुआ मिलता है कि "बच्चे राष्ट्र की सर्व-प्रमुख धरोहर हैं। उनकी बेहतर परवरिश और देखभाल हमारी जिम्मेदारी है। बच्चों से जुड़ी योजनाएं और कार्यक्रम मानव संसाधन के विकास की योजना का प्रमुख भाग होना चाहिए, ताकि हमारे बच्चे शारीरिक रूप से अधिक स्वस्थ, मानसिक रूप से अधिक सतर्क, नैतिक रूप सेअधिक मजबूत यानी पूर्ण स्वस्थ नागरिक के रूप में विकसित हो सकें। अपने विकास क्रम में सभी बच्चों को समान अवसर प्राप्त हों और इसके लिए हमारा उद्देश्य असमानता समाप्त करना और सामाजिक न्याय सुनिश्चित करना होना चाहिए। " भारतीय समाज अपेक्षाकृत अधिक मानवीय संवेदनाओं से भरा हुआ है और मानव अधिकारों के प्रति अधिक सचेत है। जाहिर है कि सरकार, मानव अधिकार आयोग और भारत के लोग मिलकर बाल-श्रम के दंश को हमेशा के लिए समाप्त कर ही देंगे। हम उम्मीद करें कि बेरंगी दुनिया में एक दिन हम खुशियों के हर रंग को भर ही देंगे।

●●●●

भारत में मानवाधिकार परिप्रेक्ष्य में महिला कैदियों के विभिन्न प्रकार के संवैधानिक और वैधानिक अधिकार

शंकर सिंह*

1. परिचय

भारत अपनी बहुसांस्कृतिक, बहु-जातीय और बहु-धार्मिक आबादी में विविधतापूर्ण है। मानव अधिकारों की घटना न केवल राज्य की ज्यादतियों से व्यक्तियों की सुरक्षा से संबंधित है, बल्कि राज्य द्वारा सामाजिक परिस्थितियों की संरचना के लिए भी है जिसमें व्यक्ति अधिकतम विकास कर सकते हैं।

मानवाधिकार शब्द को उन अधिकारों के रूप में मान्यता दी गई है जिन्हें उनकी नागरिकता, निवास, जातीयता, लिंग या अन्य विचारों की परवाह किए बिना मानवता के लिए सार्वभौमिक माना जाता है। यह विभिन्न मूल्यों और क्षमताओं को भी संदर्भित करता है जो मानव परिस्थितियों और इतिहास की विविधता को दर्शाता है। मानवाधिकारों की कल्पना सार्वभौमिक के रूप में की जाती है, वे हर जगह सभी मनुष्यों पर लागू होते हैं और बुनियादी मानवीय जरूरतों के लिए एक मौलिक मध्यस्थता के रूप में ये उस प्रकार के अधिकार हैं जो अंतर्निहित हैं और शुरू से ही प्राप्त होते हैं।

किसी भी तरह से बलात्कार जैसे जघन्य अपराध को रोकने के लिए शैक्षिक जागरूकता और मानवाधिकारों का सम्मान सर्वोत्तम प्रथाएं हैं। जब एक समाज में, एक व्यक्ति अपने अधिकारों के बारे में सीखता है, अधिकारों के लिए सम्मान प्राप्त करता है और दूसरों की गरिमा के रखरखाव का समर्थन करता है, जो अधिक सहिष्णु और शांतिपूर्ण नागरिकों का प्रबंधन करने के लिए समर्थन करता है,जो अंततः शांतिपूर्ण नागरिक समाज की ओर बढ़ने में मदद करता है। मानवाधिकार आश्वासन के लिए, आंतरिक गरिमा के लिए स्वीकृति और सम्मान की मांग करता है कि हर कोई ऐसे सभी दुर्व्यवहारों से सुरक्षित है जो किसी की गरिमा को कमजोर करते हैं और बिना किसी भेदभाव के अपनी पूरी क्षमता का एहसास करने के अवसर प्रदान करते हैं।

* *शैक्षिक परामर्शदाता, इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली*

2. जेल में महिला कैदियों पर आंकड़े

महिला कैदियों का भौगोलिक फैलाव देश भर में अलग-अलग है। उत्तर प्रदेश में अब तक जेल में महिलाओं की संख्या(3,533) सबसे अधिक है, इसके बाद पश्चिम बंगाल (1,506), महाराष्ट्र (1,336) और मध्य प्रदेश (1,322) हैं। केंद्र शासित प्रदेशों में दिल्ली (579) के अलावा जेल में खासतौर पर महिलाओं की संख्या कम है।

जेल स्टैटिस्टिक्स इंडिया 2015, एन सी आर बी के अनुसार, 2015 के अंत से, भारत में जेल में 4,19,623 लोग हैं। इसमे महिलाओं की संख्या 17,834 है। इनमें से 66.8% (11,916) विचाराधीन कैदी हैं। भारत में, पांच साल के अंतराल पर जेल के आंकड़ों के विश्लेषण से महिला कैदियों की संख्या में वृद्धि का पता चलता है। 20000 में सभी कैदियों में से 3.3 %, 2005 में 3.9%, 2010 में 4.1 % और 2015 में 4.3% महिलाएं थीं। दुनिया के सभी भागों में महिला कैदियों की संख्या (10%से कम) है, महिला जेल की आबादी में पुरुष जेल की आबादी की तुलना में तेजी से वृद्धि हुई है। अधिकांश महिला कैदी 30 -50 वर्ष (50.5%) आयु वर्ग में हैं, इसके बाद 18-30 वर्ष (31.3%)। भारत में कुल 1401 जेलों में से केवल 18 जेल महिलाओं के लिए हैं।

3. महिलाओं द्वारा अपराध

2016 में, भारतीय दंड संहिता (आई पी सी) और विशेष और स्थानीय कानूनों (सी एल एल) के तहत अपराधों के लिए 3 लाख से अधिक महिलाओं को गिरफ्तार किया गया था। इनमें से बड़ी संख्या में महिलाओं को मद्य निषेध अधिनियम के तहत अपराधों, पति के रिश्तेदारों द्वारा क्रूरता और दंगा आदि के लिए गिरफ्तार किया गया था। दोनों सजायाफ्ता और विचाराधीन कैदियों के संयुक्त आंकड़े देख कर हम देखते है कि 37% महिलाओं का एक बड़ा हिस्सा हत्या के लिए जेल में हैं। इसके बाद 15% महिलाएं दहेज हत्या के लिए क़ैद हैं। पिछले 15 वर्षों में विभिन्न अपराधों के लिए गिरफ्तार की गई महिलाओं की संख्या अधिक है। हालांकि यह संख्या अपेक्षाकृत बढ़ी है।

4. महिलाओं के खिलाफ हिरासत में यातना

लंबे समय से पुलिस की ज्यादतियों, महिलाओं सहित संदिग्धों के साथ दुर्व्यवहार और प्रताड़ना की कई खबरें आई हैं। इसके बाद, इन आरोपों ने बड़े आयाम ले लिए, जबकि हिरासत के दौरान यातना, हमला, बलात्कार और मौत की घटनाओं में खतरनाक अनुपात में वृद्धि हुई। महिलाओं के खिलाफ हिरासत में यातना के परिणामस्वरूप उनके जीवन के अधिकार, उनकी व्यक्तिगत स्वतंत्रता, उनकी गरिमा और सम्मान आदि से वंचित किया जाता है। कई मामलों में, इसका परिणाम अप्राकृतिक मौतों में होता है। अधिकारों का हमेशा उन अधिकारियों द्वारा उल्लंघन किया जाता है जिन्हें उनकी रक्षा करनी चाहिए, अर्थात्, संरक्षक (पुलिस, न्यायपालिका, जेल प्रहरी, पालक देखभाल या किसी भी अपराध के खिलाफ गिरफ्तार और पूछताछ करने वाले व्यक्तियों को गिरफ्तार करने के लिए अधिकृत अन्य प्राधिकरण)। पुलिस हिरासत एक नागरिक समाज में मानवाधिकारों का सबसे संवेदनशील क्षेत्र है।

जेलों में मानवाधिकारों के अधिकांश उल्लंघन उस एजेंसियों के द्वारा किए गए अपराध के परिणामस्वरूप होते हैं जो मानवाधिकार प्रबंधन में शामिल होते हैं और समाज में अपराधों को रोकने की

प्रक्रिया में शामिल होते हैं और स्वीकारोक्ति या सार जानकारी प्राप्त करने के लिए हिरासत में तीसरे दर्जे के तरीकों को लागू करते हैं। उपचार केंद्रों में पीड़ित महिला के यौन शोषण जैसे यातना, उत्पीड़न, मानहानि, क्रूर, अमानवीय या अपमानजनक व्यवहार और दंड के कई मामले भी हैं। हिरासत में होने वाले अत्याचार आजकल इतने आम हो गए हैं कि पुलिस और नौकरशाही के अलावा आम लोग भी इसे पुलिस पूछताछ की एक नियमित प्रथा के रूप में मान लेते हैं। नतीजा यह होता है कि इस तरह के क्रूर व्यवहार की खबर समाज में एक क्षणिक सामान्य सदमे के अलावा कुछ नहीं देती।

5. महिला कैदियों के विभिन्न प्रकार के संवैधानिक अधिकार और वैधानिक अधिकार :

5.1 खोज और परीक्षा

महिला बंदियों की तलाशी एवं जांच चिकित्सा अधिकारी के संबंधित आदेश के तहत मैट्रन द्वारा की जाएगी;

5.2 महिला बंदियों के लिए अलग स्थान

प्राकृतिक नियम के आधार पर यह स्पष्ट हो गया है कि महिला कैदियों को पुरुष कैदियों से अलग रहने का अधिकार है। 1894 के जेल अधिनियम के अनुच्छेद 27 (1) में कहा गया है कि हिरासत में ली गई महिलाओं और पुरुषों वाली जेल में, महिलाओं को अलग-अलग इमारतों में या एक ही इमारत के अलग-अलग हिस्सों में कैद किया जाना चाहिए।

पुरुष कर्मचारी महिलाओं के लिए आरक्षित संस्था के उस हिस्से में प्रवेश नहीं कर सकता जब तक कि उसके साथ कोई महिला न हो। दूसरे शब्दों में महिला बंदियों का इलाज और देखरेख केवल महिलाएं ही करेंगी।

मॉडल जेल मैनुअल महिला कैदियों के लिए एक अलग स्थान का भी समर्थन करता है। इसमें कहा गया है कि राज्य सरकार कैदियों के लिए अलग जेल बनाएगी। जब तक महिलाओं के लिए अलग-अलग जेलों की स्थापना नहीं की जाती तब तक बंदियों और महिलाओं दोनों को एक ही जेल में बंद किया जा सकता है बशर्ते कि बंदियों को पूरी तरह से अलग-थलग महिला बाड़े में रखा जाए। यह बाड़, जहां तक संभव हो, बुनियादी ढांचे के विन्यास के मामले में स्वतंत्र होना चाहिए।

हैंडबुक के अनुसार, कैदियों को अलग से वर्गीकृत और बनाए रखा जाना चाहिए:

(i) घायल कैदियों के लिए अलग से व्यवस्था की जानी चाहिए, उसे सजायाफ्ता अपराधियों से पूरी तरह से अलग रखा जाना चाहिए।
(ii) नियमित कैदियों को अनौपचारिक अपराधियों से अलग करना
(iii) नियमित अपराधियों, वेश्याओं और वेश्यालय प्रजनकों को अलग करना
(iv) किसी भी परिस्थिति में महिलाओं को कैदियों तक सीमित नहीं रखना चाहिए
(v) राजनीतिक और नागरिक कैदियों और नाबालिग कैदियों को अलग करना।

इस तथ्य के बावजूद कि महिलाओं के लिए एक अलग स्थान स्थापित करने पर बहुत जोर दिया गया है।

5.3 महिला कैदियों के माता के रूप में अधिकार

माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने फैसला सुनाया है कि बंदियों को छह साल की उम्र तक अपने बच्चों को जेल में अपनी हिरासत में रखने की अनुमति दी जाएगी उन्हें कैदी की इच्छा के अनुसार एक उपयुक्त प्रतिस्थापन को सौंप दिया जाएगा या उन्हें एक को सौंप दिया जाएगा। सामाजिक सुरक्षा विभाग द्वारा संचालित उपयुक्त संस्था। जहां तक संभव हो, बच्चे को शहर या शहर के बाहर किसी संस्थान में स्थानांतरित नहीं किया जाएगा जहां जेल स्थित है, ताकि शारीरिक दूरी के कारण मां और बच्चे के लिए अनुचित कठिनाइयों को कम किया जा सके। सामाजिक सुरक्षा विभाग के एक घर में सुरक्षात्मक हिरासत में बच्चे सप्ताह में कम से कम एक बार अपनी मां से मिल सकते हैं।

5.4 एक महिला कैदी के बच्चे का अधिकार

कारागारों में विभिन्न आयु वर्ग के बच्चों के लिए बाल शैक्षिक कार्यक्रम लागू किए जाने चाहिए न केवल शैक्षिक सरोकार बल्कि मनोरंजन की सुविधा भी जेलों में उपलब्ध होनी चाहिए जो विभिन्न आयु वर्ग के बच्चों की मनोरंजक जरूरतों को पूरा कर सके।

माताओं की अपने बच्चों के लिए स्वास्थ्य देखभाल, शैक्षिक, मनोरंजक और अन्य कार्यक्रमों के बारे में मिश्रित धारणाएँ हैं जबकि उनमें से अधिकांश ने बच्चों के लिए चिकित्सा, मनोरंजन और अन्य (धार्मिक) सुविधाओं पर असंतोष व्यक्त किया। कुछ क्षेत्रों में उनके असंतोष के बावजूद जेल में बंद अधिकांश माताओं का मानना है कि ये कार्यक्रम उनके बच्चों के लिए उपयोगी हैं। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अपने विचाराधीन कैदी या दोषी माताओं के साथ जेल में पल रहे बच्चों के विकास के लिए निर्देश जारी किए हैं।

5.5 कैदियों के इलाज के लिए मानक न्यूनतम नियम के तहत प्रावधान है- नियम 53

(1.) **महिला पुलिस अधिकारी महिला प्रकोष्ठ की प्रभारी होंगी.**

केवल महिला पुलिस अधिकारी ही संस्था के उस सभी हिस्से की चाबियों की हिरासत का अधिकार लेती है जो महिलाओं के लिए आरक्षित है।

(2.) **किसी भी पुरुष सदस्य को महिला प्रकोष्ठ के परिसर में प्रवेश करने की अनुमति नहीं होगी**

कोई भी पुरुष सदस्य महिला प्रकोष्ठ के परिसर में प्रवेश नहीं करेगा: पुरुष स्टाफ का कोई भी सदस्य महिलाओं के लिए आरक्षित संस्था के हिस्से में प्रवेश नहीं करेगा जब तक कि एक महिला के साथ न हो।

नियम

(3.) विशिष्ट आवास:

यह स्थापित किया गया है कि महिला जेल में सभी आवश्यक प्रसवपूर्व और प्रसवोत्तर देखभाल और उपचार के लिए विशेष व्यवस्था की जाएगी। साथ ही कारागार परिसर के बाहर अस्पताल में जन्म लेने वाले बच्चों के लिए भी विशेष व्यवस्था की जाए। यदि किसी बच्चे का जन्म कारागार परिसर में हुआ है तो जन्म प्रमाण पत्र में इस तथ्य का उल्लेख नहीं होगा।

(4) क्रेच सुविधाएं

ऐसी स्थिति में जहां बच्चों को उनकी माताओं के साथ संस्था में रहने की अनुमति दी जाती है, योग्य और जिम्मेदार कर्मियों के साथ एक उचित नर्सरी के लिए उपयुक्त उपाय किए जाएंगे, जिसमें बच्चों को उनकी माताओं की देखरेख में नहीं रखा जाएगा।

(5) चिकित्सा अधिकारी द्वारा रिपोर्टिंग

चिकित्सक कैदियों के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के लिए जिम्मेदार हैं और उसे प्रतिदिन सभी बीमार कैदियों और उन सभी लोगों को देखना चाहिए जो किसी बीमारी की शिकायत करते हैं।

(ii) चिकित्सक को संबंधित प्राधिकारी को सूचित करना चाहिए जब भी उसे लगता है कि एक कैदी के शारीरिक या मानसिक स्वास्थ्य को लंबे समय तक हिरासत में रखने या हिरासत की किसी भी शर्त से समझौता किया गया है या होगा।

6. बच्चे के जन्म के मामले में गोपनीयता का अधिकार

कोर्ट ने जन्म प्रमाण पत्र पर जन्म स्थान पर "जेल" शब्द लिखने से मना किया है। जबकि उपाध्याय मामले में सर्वोच्च न्यायालय की न्यायिक सक्रियता सराहनीय है।

7. विशेष चिकित्सा सुविधाएं

जेलों में बंद कई महिलाएं समाज के सबसे गरीब सदस्यों में से हैं और कई पहले से मौजूद विभिन्न शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य समस्याओं के साथ जेल जाती हैं। अंतरराष्ट्रीय क्षेत्र में सर्वोत्तम अभ्यास यह स्थापित करते हैं कि कैदियों को प्रदान की जाने वाली चिकित्सा सेवाएं उसी गुणवत्ता और मानक की होनी चाहिए जो बाहरी समुदाय के लिए उपलब्ध हैं। इन सेवाओं में एचआईवी/एड्स की जांच, स्तन और गर्भाशय ग्रीवा के कैंसर की जांच, परिवार नियोजन सेवाएं और यौन स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं शामिल होनी चाहिए।

8. माहवारी के दौरान सुविधाएं:

मैनुअल यह भी स्थापित करता है कि प्रत्येक वयस्क कैदी को मासिक धर्म के दौरान पहनने के लिए पर्याप्त मात्रा में सैनिटरी पैड उपलब्ध कराए जाने चाहिए। हालांकि, यह केवल एक सिद्धांत है और कैदियों के लिए ऐसी सुविधाएं प्राप्त करना बहुत मुश्किल है और आम तौर पर उन्हें इस आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए रिश्तेदारों और दोस्तों पर निर्भर रहना पड़ता है।

9. महिला बंदियों के लिए महिला चिकित्सक

कैदियों का इलाज और देखरेख केवल महिलाओं द्वारा ही की जानी चाहिए। हालांकि, यह पुरुष स्टाफ सदस्यों, विशेष रूप से डॉक्टरों और शिक्षकों को संस्थानों या महिलाओं के लिए आरक्षित संस्थानों के कुछ हिस्सों में अपने पेशेवर कर्तव्यों को पूरा करने से नहीं रोकता है। भारत में अधिकांश जेलों की स्थिति अभी भी खराब है, अमानवीय है और आम तौर पर कैदियों के अवशिष्ट अधिकारों का उल्लंघन करती है।

कई वर्षों में, जेल खराब दृश्यता के स्थान बन गए हैं जहाँ अमानवीय और यहाँ तक कि क्रूर स्थितियाँ भी बनी हुई हैं। इन बंद संस्थानों में कैदियों पर चोट और अन्याय करने की संभावना हमेशा बनी रहती है। दुर्भाग्य से इन संस्थाओं का राज्य पर्यवेक्षण मात्र एक औपचारिकता बनकर रह गया है और इसके अभाव से समाज की सतर्कता का पता चलता है। सिफारिश निकायों और न्यायिक प्रणाली दोनों से इन स्थितियों में सुधार के लिए कई सिफारिशें की गई हैं, लेकिन इन सिफारिशों का एक बड़ा हिस्सा नहीं आया है।

10. सुरक्षा की दृष्टि से महिला जेल

माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पुलिस लॉक-अप और विशेष रूप से महिला संदिग्धों में सुरक्षा और सुरक्षा प्रदान करने के लिए संबंधित प्राधिकरण को विस्तृत निर्देश दिए हैं। महिला संदिग्धों को एक अलग लॉक-अप में रखा जाना चाहिए, न कि उसी में जिसमें पुरुष अभियुक्तों को हिरासत में लिया गया है और महिला कांस्टेबल द्वारा संरक्षित किया जाना चाहिए। साथ ही आईजी जेल और स्टेट बोर्ड ऑफ लीगल एड एडवाइस कमेटी को गरीब और निर्धन अभियुक्तों (पुरुष या महिला) को कानूनी सहायता प्रदान करने का भी निर्देश दिया, चाहे वे विचाराधीन कैदी हों या सजायाफ्ता कैदी हों।

एनसीपीसीआर द्वारा विस्तृत दिशा-निर्देशों में कहा गया है कि हालांकि अपराध की प्रकृति को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है, महिला कैदियों की स्थिति पर विचार किया जा सकता है जब उनके पास कम साधन हों और वे छोटे बच्चों के लिए जिम्मेदार हों।

निष्कर्ष

जेल को एक सुधारात्मक उद्देश्य के लिए बनाया गया स्थान माना जाता है। हालाँकि, पूरा उद्देश्य विफल हो जाता है जब कैदियों को उन अधिकारों से वंचित कर दिया जाता है जो उनके एक इंसान होने के लिए मौलिक हैं। कुछ दशक पहले, कैदियों को नीची नज़र से देखा जाता था और माना जाता था कि उन्होंने अपने सभी अधिकारों को त्याग दिया है। हालाँकि, आधुनिक समाज एक कैदी के अधिकारों को मान्यता देता है। इसलिए, किसी अपराध के लिए दोष सिद्धि उस व्यक्ति को एक गैर-व्यक्ति में कम नहीं करती है जिसके अधिकार जेल प्रशासन और अधिकारियों के अधीन हैं।

यह समय की आवश्यकता है कि हम यह सुनिश्चित करने के लिए सकारात्मक कदम उठाएं कि कैदियों के बुनियादी मानवाधिकारों का उल्लंघन न हो और वे सम्मान के साथ रहें क्योंकि मनुष्य अन्य मनुष्यों को उनके मूल अधिकारों से वंचित करने के अलावा कुछ नहीं करता है। जेल की स्थिति में सुधार का मतलब यह नहीं है कि जेल जीवन को आसान बनाया जाए, इसका मतलब है कि इसे मानवीय और समझदार बनाया जाए। न्यायपालिका के कामकाज से पता चलता है कि उसने अपनी शक्तियों का सबसे रचनात्मक तरीके से प्रयोग किया है और कैदियों के मानवाधिकारों की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए नई रणनीति तैयार की है।

यह जानकर प्रसन्नता हो रही है कि हाल के दशकों में सर्वोच्च न्यायालय ने कैदी के न्याय के अधिकार और उचित व्यवहार के लिए गहरी चिंता दिखाई है और जेल अधिकारियों को उपाय शुरू करने की आवश्यकता है।

●●●●

बच्चों के विरुद्ध अपराध और बाल अधिकार

राकेश शर्मा 'निशीथ'*

संयुक्त राष्ट्र बाल कोष (यूनिसेफ) के अनुसार वर्ष 2017 से 2020 के बीच दुनिया भर में पांच साल से कम उम्र के 6 करोड़ से अधिक बच्चों की मौत ऐसी वजहों से हो हुई हैं, जिन्हें टाला जा सकता था। मानव तस्करी के पीड़ितों में करीब एक तिहाई बच्चे हैं। वर्ष 2018 में सशस्त्र संघर्षों के दौरान दुनिया भर में लगभग 12,000 बच्चे या तो मारे गए हैं या अपंगता के शिकार हुए हैं। 20 नवम्बर 1989 को संयुक्त राष्ट्र की आम सभा द्वारा बाल अधिकार के पहले अंतरराष्ट्रीय समझौते को पारित किया गया था। इस समझौते पर विश्व के 193 देशों की सरकारों ने हस्ताक्षर करते हुए अपने देश में सभी बच्चों को जाति, धर्म, रंग, लिंग, भाषा, संपत्ति, योग्यता आदि के आधार पर बिना किसी भेदभाव के संरक्षण देने का वचन दिया था। भारत ने इस पर वर्ष 1992 में हस्ताक्षर किए थे।

बच्चों के विरुद्ध अपराधों की श्रेणियां

किशोरावस्था न्याय कानून-2000 के अनुसार बच्चे की आयु 18 से कम परिभाषित की गई है। भारतीय दंड संहिता और विभिन्न निरोधात्मक एवं सुरक्षात्मक, विशेष और स्थानीय कानून में विशेषकर ऐसे अपराधों का उल्लेख किया गया है। इनके अनुसार बच्चों के विरुद्ध अपराध से संबंधित विशेष धाराएं/कानून इस प्रकार हैं -

- हत्या (302)
- भ्रूणहत्या के विरुद्ध धारा 315 और 316
- शिशुहत्या (नवजात शिशु 0-1 वर्ष के विरुद्ध अपराध) धारा 315
- आत्महत्या के लिए उत्प्रेरण (बच्चों को आत्महत्या के लिए दूसरे व्यक्ति द्वारा उकसाना) धारा 305
- अरक्षित और परित्यक्त (परित्याग की मंशा से अभिभावकों या अन्य द्वारा बच्चों को आश्रय न देना या हमेशा के लिए छोड़ना) धारा 317

---

* *पूर्व–प्रधान निजी सचिव, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार*

- अपहरण और फुसलाकर या धमकाकर भगा ले जाना
  - (ए) बाहर भेजने (कबूतरबाजी)/ तस्करी के लिए अपहरण (धारा 360)
  - (बी) विधिक संरक्षत्व से अपहरण (361)
  - (सी) फिरौती के लिए अपहरण (धारा 363 धारा 384 के साथ पठनीय)
  - (डी) ऊंट दौड़ आदि के लिए अपहरण (धारा 363)
  - (ई) भिक्षावृत्ति के लिए अपहरण (धारा 363 ए)
  - (एफ) विवाह के लिए बाध्य करने के उद्देश्य से अपहरण (धारा 366)
  - (जी) गुलामी के लिए अपहरण (धारा 367)
  - (एच) संबंधित व्यक्ति से चुराने के मकसद से 10 वर्ष तक के बच्चे का अपहरण (धारा 369)
- छोटी आयु की लड़की की मुख्तारी या दलाली (बलपूर्वक उकसाने या अवैध संभोग के लिए ललचाने के निमित्त)(366-ए)
- वेश्यायवृत्ति के लिए लड़कियों की बिक्री (धारा 372)
- वेश्यावृत्ति के लिए लड़कियों को खरीदना (धारा 373)
- बलात्कार (धारा 376)
- अप्राकृतिक अपराध(धारा 377)

  विशेष और स्थानीय कानूनों के अंतर्गत दंडनीय, बच्चों के विरुद्ध किए जाने वाले अपराध
- अनैतिक अवैध क्रय-विक्रय निरोधक कानून 1956 (जहां छोटे बच्चों को वेश्यावृत्ति में अपमानित किया जाता है।)
- बाल विवाह निरोध (संशोधन) कानून 1929
- बाल श्रम (निवारण एवं विनियमन) कानून 1986

बच्चों के प्रति विभिन्न अपराध

राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो के आंकड़ों के अनुसार पिछले एक दशक (2007-2017) के दौरान बच्चों के खिलाफ अपराध के मामलें में जबरदस्त तेजी देखने को मिली है और यह आंकड़ा 1.8 से बढ़कर 28.9 प्रतिशत हो गया है। वर्ष 2018 में देश में हर चौथी दुष्कर्म पीड़िता नाबालिग थी, जबकि 50 प्रतिशत से अधिक पीड़िताओं की उम्र 18 से 30 थी। लगभग 94 प्रतिशत मामलों में आरोपी पीड़ितों के परिचित, परिवार के सदस्य, दोस्त, सह जीवन साथी, कर्मचारी या अन्य थे। बच्चों के प्रति विभिन्न अपराध इस प्रकार हैं -

बच्चों के प्रति हिंसा

भारत में बच्चों की संख्या 41.4 करोड़ से अधिक है, जो दुनिया के अन्य किसी भी देश में बच्चों की संख्या की तुलना में अधिक है। उनमें से अधिकांश बच्चे सामाजिक, आर्थिक तथा ऐतिहासिक कारणों से अभावों से ग्रस्त है और वे भेदभाव, उपेक्षा और शोषण के सहज शिकार हो जाते हैं। राष्ट्रासंघ के अध्ययन

के अनुसार 18 साल तक की उम्र के बच्चों को दुनिया के लगभग हर भाग में 2 स्तरों पर हिंसा का शिकार होना पड़ रहा है। एक है घरवालों और रिश्तेदारों द्वारा किया जा रहा जुर्म और दूसरा है समाज एवं राज्य की अन्य संस्थाओं द्वारा किया जा रहा अत्याचार व शोषण।

बच्चों का यौन उत्पीड़न

मानवीय सहायता के लिए फंड उपलब्धा कराने वाली एक संस्था वर्ल्ड विजन इंडिया द्वारा 12 से 18 वर्ष आयु वर्ग के 26 राज्यों में 45,000 बच्चों पर एक सर्वेक्षण किया गया। इसकी रिपोर्ट के अनुसार देश में हर दूसरा बच्चा यौन शोषण का शिकार होता है। इसमें यह भी बताया गया है कि हर चौथा पीड़ित परिवार बच्चों के साथ हुई ऐसी घटना को दबा देता है। वर्ष 2018 में दुष्कर्म के 33,356 मामले दर्ज किये गए जिनमें 33,977 पीड़ितएं थी और औसतन 89 दुष्कर्म प्रतिदिन हुए। वर्ष 2017 में दुष्कर्म के 32,559 मामले दर्ज किए गए थे, जबकि 2016 के लिए यह आकड़ा 38,947 था। कुल मिलाकर 72.2 प्रतिशत दुष्कर्म पीड़ितएं 18 साल से अधिक उम्र की थी, जबकि 27.8 प्रतिशत की उम्र 18 साल से कम थी। वर्ष 2018 में 14.1 प्रतिशत दुष्कर्म पीड़ितएं (4,779) 16 से 18 आयुवर्ग के बीच की थी। इसके बाद 10.6 प्रतिशत (3,616) 12 से 16 आयु वर्ग की थी। 2.2 प्रतिशत (757) की उम्र छह से 12 साल के बीच थी, जबकि 0.8 प्रतिशत (281) की उम्र छह साल से कम थी।

चाइल्ड पॉर्नोग्राफी

वर्ष 2019 में केरल पुलिस की बाल यौन उत्पीड़न निरोधक इकाई (सीसीएसई) द्वारा राज्य में 21 स्थानों पर छापा मारे जाने के बाद केरल में सोशल मीडिया के माध्यम से बाल अश्लीलता फैलाने के आरोप में 12 लोग गिरफ्तार हुए। मुम्बई पुलिस ने भी पांच ऐसे लोगों को गिरफ्तार किया जिन पर इंटरनैशनल व्हाट्सएप ग्रुप पर चाइल्ड पॉर्नोग्राफी सर्कुलेट करने का आरोप है। इनमें तीन कॉलेज स्टूडेंट भी शामिल हैं। इस ग्रुप में ओमान, यूके और यूएसए सहित कई अन्य देशों के लोग शामिल थे। चाइल्ड पॉर्नोग्राफी के एक मामले में जर्मन पुलिस की जांच में बाल यौन शोषण का एक अंतरराष्ट्रीय गिरोह सामने आया। इसमें भारत सहित कई देशों के नागरिक शामिल पाए गए। सीबीआई ने देश के अलग-अलग राज्यों के 7 लोगों के खिलाफ एफआईआर दर्ज की।

बाल वेश्यावृत्ति

अक्सर गरीब, पिछड़े और अकालग्रस्त इलाकों में लड़कियों को, लुभावने सपनों में फंसा कर शहरों में लाया जाता है और उन्हें देहव्यापार में ढकेल दिया जाता है। कई बार शादी के झांसे में भी लड़कियों को फंसाया जाता है। एक अधिकारिक अध्ययन से पता चलता है कि भारत में 5 लाख बच्चे वेश्यावृत्ति में संलग्न हैं। इसके साथ ही भारत के 5 विभिन्न राज्यों में 1000 बालिकाओं पर किए गए अध्ययन में 50 प्रतिशत बालिकाओं ने कहा कि जब वह 12 वर्ष की आयु के नीचे थी, दुर्व्यवहार का शिकार हुई, जबकि 35 प्रतिशत बालिकाएं 12 से 16 वर्ष के बीच दुर्व्यवहार का शिकार हुई। यौन अपराध का औसतन 76 प्रतिशत है। न केवल लड़कियां बल्कि लड़के भी इसका शिकार होते हैं।

बाल बलात्कार

महिलाओं पर हिंसा को लेकर इंडियाज हेल होल्स चाइल्ड सेक्सुअल असॉल्ट इन जेबुनाइल जस्टिस होम्स नामक रिपोर्ट के अनुसार बच्चों के साथ बलात्कार की गई घटनाएं बाल जेलों और अनाथालयों में होती हैं। 56 पृष्टों की रिपोर्ट में बाल जेलों में हुए 39 केसों का जिक्र हैं, जहां बच्चों के यौन शोषण के बारे में बताया गया है। इसके अनुसार भारत में बाल अपराध महामारी की तरह बढ़ रहा है। इनमें अधिकतर मामले सरकार द्वारा संचालित एवं सहायता प्राप्त 733 बाल जेलों में घटित हुए। कुछ बालिका आश्रय गृहों में जिस तरह बालिकाओं से यौन व्यापार कराने के प्रमाण आ रहे हैं उससे पूरा देश व्यथित है। वर्ष 2019 में एक जनवरी से 30 जून के बीच देश भर में बच्चों के बलात्कार से जुड़े मामलों मे 24,212 एफआईआर दर्ज हुई। इनमें से 11,981 मामलों की जांच की गई और 12,231 में चार्जशीट दायर हुई।

कुपोषण का चक्र

आज की बच्ची कल की निर्मात्री है। यदि उसकी शादी कम उम्र में ही दी जाती है तो इसका प्रभाव भावी संतान के स्वास्थ्य पर पड़ता है। एक बच्ची बचपन से ही कम पोषक तत्वों वाला खाना खाकर बड़ी होकर कुपोषित किशोरी फिर युवा और फिर एक मां बनती है। भारत में 57 प्रतिशत मांए और पांच साल तक के 75 प्रतिशत बच्चे खून की कमी के शिकार हैं। यूनिसेफ की रिपोर्ट स्टेट ऑफ द वर्ल्ड चिल्ड्रन में बताया गया है कि दुनिया में पांच वर्ष से कम आयु का हर तीसरा बच्चा या तो अल्पोषित है या अधिक वजन वाला। विश्व में ऐसे बच्चों की संख्या 20 करोड़ से अधिक है।

बाल विवाह

दुनियाभर के मानव अधिकार संगठनों, स्वयंसेवी संस्थाओं एवं सरकारी प्रयासों के बावजूद बाल विवाह कुप्रथा कई देशों में आज भी जारी है। संयुक्त राष्ट्र की एक रिपोर्ट के अनुसार दुनिया में हर तीसरी बालिका वधु भारत में है। इन देशों में बालिका वधु का क्रमांक इस प्रकार है, नाइजर, बांग्लादेश, चाड, माली, मध्य अफ्रीकी गणराज्य, भारत, गिनी, इथोपिया, बुरकीना फासो और नेपाल। बाल विवाह निषेध अधिनियम, 2006 में बाल विवाह घोर दंडात्मक अपराध माना गया। लेकिन इसके बावजूद एक रिपोर्ट के अनुसार दुनिया के 40 प्रतिशत बाल विवाह भारत में ही होते हैं। कानून बना देना एक बात है और उस पर अमल करना दूसरी बात है।

गुम होते बच्चे

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग हर वर्ष एक्शन रिसर्च ऑन ट्रैफिकिंग इन वुमेन एंड चिल्ड्रेन रिपोर्ट जारी करता है। भारत में हर साल दर्ज होने वाली 45,000 से अधिक बच्चों की गुमशुदगी की रिपोर्ट में से लगभग 11,000 बच्चों का कोई नामोनिशान नहीं मिलता। इनमें से आधे बच्चे जबरन देह व्यापार में धकेल दिए जाते हैं। अनेक बच्चों से बंधुआ मजदूरी करवाई जाती है या उन्हें भीख मांगने पर मजबूर किया जाता है। गुम हुए बच्चों में से 20 प्रतिशत बच्चे विरोध और प्रतिरोध के कारण मार दिए जाते हैं तो कुछ बच्चे अंग तस्करों के हाथों में फंसते हैं। साल 2018 के दौरान कुल 67,134 बच्चों के लापता होने की रिपोर्ट दर्ज की गई है। गुमशुदा बच्चों के मामलों में मध्य प्रदेश पहले स्थान पर है, जबकि पश्चिम बंगाल 8205, बिहार

6950, दिल्ली 6541 और तमिलनाडु 4271 हैं। बचपन बचाओ आंदोलन द्वारा आरटीआई के तहत देश के प्रत्येक जिले से जुटाई गई जानकारियों से यह तथ्य उजागर हुआ कि लगभग 1.20 लाख बच्चे हर साल लापता होते हैं।

भारतीय संविधान में बच्चों के अधिकार

भारतीय संविधान में बच्चों के विभिन्न अधिकारों को स्वीकार किया गया। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 के अनुसार शिक्षा प्राप्त करने का बच्चों को मौलिक अधिकार प्राप्त है। वर्ष 2002 में किए गए 86 वें संविधान संशोधन से जोड़े गए अनुच्छेद 21-क के अनुसार राज्य 6 से 14 वर्ष के आयु वर्ग वाले सभी बालकों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा देने का ऐसी रीति से उपबंध करेगा, जो वह विधि द्वारा अवधारित हो। संविधान का अनुच्छेद 24 चौदह वर्ष से कम आयु के बच्चों को कारखाने, खान अथवा अन्य जोखिम भरे कार्यों में लगाने के विरुद्ध है।

संविधान के अनुच्छेद 39(च) में राज्य का निर्देश दिया गया है कि बालकों को स्वतंत्र और गरिमामय वातावरण में स्वस्थ विकास के अवसर और सुविधांएं दी जाए। संशोधित अनुच्छेद 45 के अनुसार राज्य पर 6 वर्ष की आयु पूरी करने तक बालकों के लिए प्रारंभिक बाल्यावस्था देख-रेख और शिक्षा देने के लिए उपबंध करने का दायित्व भी है। 86वें संविधान संशोधन से ही अनुच्छेद 51-क में खंड (ट) जोड़कर माता-पिता या संरक्षक का यह मूल कर्तव्य निर्धारित किया गया है कि वे 6 वर्ष से 14 वर्ष तक आयु वाले अपने बालक या प्रतिपाल्य के लिए शिक्षा के अवसर प्रदान करें।

भारत में बाल अधिकारों के प्रति प्रतिबद्धता

वर्ष 1974 में एक राष्ट्रीय नीति बनी थी, जिसमें बच्चों को देश की अमूल्य धरोहर घोषित किया गया था। दुनिया के 174 देशों, जिनमें भारत भी शामिल है, के संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार समझौते की धारा 34 में स्पष्ट उल्लेख है कि बच्चों को सभी प्रकार के यौन उत्पीड़न से बचाने की जिम्मेदारी सरकार पर है। आपराधिक कानून (संशोधन) अधिनियम -2013 तथा दूसरे बाल यौन अपराध रोकथाम अधिनियम (पॉक्सो 2012) का पारित होना इस दिशा में महत्वपूर्ण कदम है। इस कानून में पहली बार मानव तस्करी को परिभाषित किया गया है। वर्ष 2019 में संसद ने पॉक्सो कानून में संशोधन कर चाइल्ड पॉर्न यानी कि बच्चों से जुड़े अश्लील विडियो को परिभाषित किया है। पॉक्सो कानून के नए संशोधन के तहत सेक्शन 2-ए में चाइल्ड पोर्नोग्राफी को परिभाषित किया गया है। इसमें बताया गया है कि जो भी व्यक्ति किसी भी ऐसे विजुअल्स को, जो बच्चों को सेक्शुअल रूप में दिखाता है, चाहे वह किसी भी रूप में हों, वह चाइल्ड पॉर्न माना जाएगा। इसमें फोटो, वीडियो, पोस्टर या किसी तरह के डिजिटल, कंप्यूटराइज्ड फार्म या अन्य मॉडिफाइड फॉर्म (जैसे कि ईमेल आदि) शामिल हैं।

बाल अधिकारों की सुरक्षा हेतु सुझाव

बच्चों के साथ होने वाली शारीरिक शोषण की घटनाएं न हो इसके लिए आईपीसी और सीआरपीसी के तहत कानून बनाए गए हैं। लेकिन इन पर लगाम लगाने में ये कानून नाकाफी है। बच्चों की सुरक्षा के लिए बनाया गया जुवेनाइल जस्टिस (क्राइम एंड प्रोटेक्शन) एक्ट, 2000 सिर्फ खानापूरी भर रह गया है। मानव

तस्करी के खतरे से निपटने के लिये गैर-सरकारी संगठनों के साथ-साथ पुलिस का क्षमता निर्माण आवश्यक है।

देशभर में लगभग 2.3 करोड़ बच्चों की स्थिति सोचनीय है। इनके बचाव और सुरक्षा के लिए स्वैच्छिक संगठनों (एनजीओ) को भी आगे आना चाहिए। हमारे पास जरूरतमंद बच्चों के पुनर्वास के लिए आश्रय नहीं है, जो हैं वे अपराधी बच्चों के सुधारगृह हैं। मजबूरी में हम मासूम बच्चों को भी अपराधी या आरोपित बच्चों के साथ रखते हैं। पुनर्वास व्यवस्था की कमी के चलते ही हम फुटपाथों पर बच्चों को भीख मांगते देखते हैं, पर कुछ हस्तक्षेप नहीं कर पाते।

गुमशुदगी की सूचना मिलते ही बच्चों की तलाश के साथ एफआईआर दर्ज की जानी चाहिए। गुमशुदा बच्चों के मामले में पुलिस ऐसी मानक संचालन प्रक्रियाएं अमल में लाएं, जिससे उन्हें तलाश करने में मदद मिले। पुलिस बरामद बच्चों का रिकार्ड उनके फोटोग्राफ के साथ रखे। गुमशुदा बच्चों, सड़क व फुटपाथी बच्चों, खेत-खलिहानों, फैक्ट्रियों, खानों आदि में लगे बाल मजदूरों, किशोर गृहों, बाल सुधार गृहों, अनाथालयों, बाल पुनर्वास केन्द्रों या बाल आश्रय स्थलों आदि में प्रत्येक बच्चे की पहचान करके राष्ट्रीय स्तर पर एक केन्द्रीकृत डाटा बेस बनाकर उसे सभी राज्यों से जोड़ा जाना बहुत आवश्यक हैं।

अंत में

सुप्रीम कोर्ट ने अपने एक फैसले में कहा कि दुष्कर्म और तेजाब पीड़ितों को मुआवजा देने की योजना में नाबालिग लड़कों को भी शामिल किया जाए। सर्वे बताते हैं कि लड़कियों के यौन शोषण के मामले में पुलिस अब जल्दी सक्रिय होती जा रही है लेकिन लड़कों के ठीक ऐसे ही मामले में कुछ खास ध्यान नहीं दिया जाता है, जबकि लड़कों के साथ हो रहे यौन अपराधों के लिए भी कानूनी पहल और सामाजिक सोच की आवश्यकता है। समाज मानकर चलता है कि यौन शोषण तो लड़कियों का ही हो सकता है, जबकि इसके शिकार लड़के भी होते हैं।

सरकार को कुछ निवारक कदम उठाने की ज़रूरत है, जैसे तस्करी के अपराध के बारे में बच्चों को शिक्षित करने हेतु उनके स्कूली पाठ्यक्रम में इन विषयों को शामिल करना। लोगों को एक समाज के रूप में जागरूक करना अर्थात् यदि कोई व्यक्ति किसी भी संदिग्ध गतिविधि के साथ सामने आता है, तो संबंधित अधिकारियों को इसकी सूचना देनी चाहिये। बच्चों को उनके अधिकार तभी मिल सकते हैं जब उन्हें केवल अत्याचार पीड़ित और समस्याग्रस्त मानने के स्थान पर उन्हें मानवाधिकार रखने वाली स्वतंत्र इकाई के रूप में देखा जाए।

●●●●

ग्रामीण बाल मजदूर और मानवाधिकार - एक परिदृश्य

डॉ. अमिता पाण्डेय*

बच्चों को देश का भविष्य कहा जाता है। बच्चे समाज के बगीचे में खिल रहे फूल हैं। आज के बच्चे कल के संभावित नागरिक के रूप में देश की सबसे मूल्यवान संपत्ति हैं। यह सत्य ही कहा गया है कि कल की दुनिया का उत्कर्ष और जीवित रहना संभवतः इस बात से निर्धारित होगा कि हम आज अपने बच्चों का कल्याण, सुरक्षा और विकास कैसे करते हैं। यह बच्चे हैं जिनका वैयक्तिक विकास और सामाजिक योगदान भावी दुनिया को आकार प्रदान करेगा।

बच्चों को भगवान का प्रतिरूप माना जाता है। बचपन हमारे जीवन का सबसे सुनहरा समय होता है, जब न किसी बात की चिन्ता होती है न कोई परेशानी होती है। यही बच्चे बड़े होकर नेता, अभिनेता, शिक्षक, इंजीनियर, वैज्ञानिक, कुशल कारीगर, विद्वान एवं अधिकारी का रूप लेंगे। इन्हीं में कोई राष्ट्रपति बनेगा तो कोई प्रधानमंत्री। सबकी आंखों के तारे, मासूम राजदुलारे तथा ईश्वर के प्रतिरूप समझे जाने वाले बच्चे-बच्चियों के साथ तरह-तरह से शोषण करने की प्रवृत्ति विश्व में तेजी से बढ़ती जा रही है। बाल श्रम से तात्पर्य बच्चों को किसी भी ऐसे कार्य में लगाना है जो उन्हें बचपन से वंचित करता है। नियमित स्कूल जाने की उनकी क्षमता में हस्तक्षेप करता है और यह मानसिक, शारीरिक, सामाजिक और नैतिक रूप से खतरनाक और हानिकारक है।

किसी को क्या समझाएं कितने मजबूर हैं हम।
बस इतना समझ लीजिए कि बाल मजदूर हैं हम।।

यह सत्य है कि भूख और गरीबी ऐसी चीज है जो इंसान से कुछ भी करा सकती है। शायद यही वजह है कि अपने खेलने कूदने और स्कूल जाने की उम्र में दुनिया का हर दसवां बच्चा मजदूरी करने को मजबूर है जो न केवल उनके आज बल्कि उनके भविष्य को भी बर्बाद कर रहा है। यह आंकड़ा करीब 16 करोड़ है। इनमें से लगभग 39.4 प्रतिशत (6.3 करोड़) बच्चियां और 60.6 प्रतिशत (9.7 करोड़) बच्चे हैं। यह जानकारी हाल ही में अन्तरराष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO) और यूनिसेफ द्वारा जारी रिपोर्ट में सामने आई।

कौन सा बच्चा किस काम में लगा है, यदि इस आधार पर देखें तो 70 फीसदी से ज्यादा बाल मजदूर

* *एसोसिएट प्रोफेसर (दर्शनशास्त्र), ईश्वर सरन पीजी कॉलेज, प्रयागराज, इलाहाबाद विश्वविद्यालय*

कृषि कार्य में लगे हुए हैं जिनकी कुल संख्या करीब 11.2 करोड़ है। वहीं 19.7 फीसदी बच्चे सेवा क्षेत्र में और पांच से 17 वर्ष की उम्र के10.3 फीसदी बाल मजदूर कारखानों, खानों और अन्य उद्योगों में लगे हुए हैं। बाल मजदूरी में शहरी ग्रामीण असमानता भी साफ देखी जा सकती है। जहां ग्रामीण क्षेत्र का मुख्य व्यवसाय कृषि तथा पशुपालन ही है, इसलिए इन व्यवसाय में अधिकतर बाल श्रमिक ग्रामीण क्षेत्र के होते हैं। आज भी हमारे देश में करोड़ो बच्चे खेलने कूदने और पढ़ने लिखने की उम्र में खेतों से लेकर होटलों और खतरनाक उद्योगों तक में अत्यंत विकट परिस्थितियों में जी तोड़ मेहनत करने के लिए मजबूर हैं। बेफिक्री की उम्र में ही इनके ऊपर इतनी तरह की फिक्र लदी हुई है कि उनके बोझ तले दबकर वे अपने सोचने समझने और यहां तक कि सुख-दुःख को महसूस करने की क्षमता भी खोते जा रहे हैं। बालश्रम के लिए जिम्मेदार लोग बच्चों से उनका बचपन तो छीन ही रहे हैं, इससे भी अधिक चिन्ताजनक इसके साथ जुड़े मानव व्यापार और यौन शोषण का पहलू भी है।

अन्तरराष्ट्रीय श्रम संगठन के निदेशक ने बाल श्रम मजदूरी को परिभाषित करते हुए कहा है कि - ये वे किशोर नहीं हैं जो दिन के कुछ घण्टे खेल और अध्ययन से निकालकर जेब खर्च के लिए काम करते हैं। ये वह बच्चे भी नहीं है जो वयस्कों की जिन्दगी व्यतीत करने को मजबूर करते हैं। दस से अठारह घंटे काम करके कम वेतन पर अधिक श्रम बेचते, बुनियादी शिक्षा और खेल से वंचित और कभी कभी परिवार से अलग अलग होकर रहते हुए ये बच्चे हैं।

दुनिया में ऐसे 71 देश हैं जहाँ बच्चों से मजदूरी करवाई जाती है, अन्तरराष्ट्रीय श्रम संगठन (आई0एल0ओ0) की नई रिपोर्ट में 140 देशों का आकलन किया गया है। ''फाइंडिग्स ऑन द वर्स्ट फॉर्म्स ऑफ चाइल्ड लेबर'नाम की इस रिपोर्ट में ऐसी 30 चीजों की सूची बनाई गई है जिन्हें बनाने के लिए बच्चों से काम करवाया जाता है, इस रिपोर्ट में बताया गया है कि ईंटे बनाने से लेकर मोबाइल फोन बनाने तक के कई काम बच्चों से लिए जाते हैं।

संयुक्त राष्ट्र का लक्ष्य बाल श्रम के संबंध में काम करने वालों बच्चों का शोषण एवं ऐसी खतरनाक दशाओं में कार्य करने से संरक्षण करना है, जिससे उनके शारीरिक अथवा मानसिक विकास के लिए खतरा पैदा होता है। बच्चों को शिक्षा की न्यूनतम स्तर, पोषण, स्वास्थ संरक्षण सुनिश्चित करना एवं बाल श्रम की समाप्ति करना भी संयुक्त राष्ट्र का लक्ष्य है। उपर्युक्त लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए संयुक्त राष्ट्र के विभिन्न निकायों ने कई उपाय किये हैं जो निम्नलिखित है-

1. अन्तरराष्ट्रीय श्रम संगठन ने 1990 में बालश्रम की समाप्ति पर अंतरराष्ट्रीय कार्यक्रम (International Programme on the Elimination of childlabour) (IPEC) की शुरूआत की थी। यह कार्यक्रम व्यक्तियों की प्रार्थना पर बच्चों के सबसे अधिक दुरूपयोग, खतरनाक परिस्थितियों में कार्य, बलात् श्रम, गली कूचों के बच्चों बालिकाओं एवं 13 वर्ष से कम आयु के बच्चों के नियोजन (Employment) की समस्याओं सम्बन्धी सेवायें प्रदान करता है।

2. महासभा ने 1992 में सरकार एवं मानव अधिकार आयोग से गलियों के ऐसे बच्चों की समस्याओं पर कार्यवाही करने के लिए कहा जो गम्भीर अपराध, नशे सम्बन्धी आदतों, हिंसा एवं वेश्यावृत्ति जैसे कार्यो द्वारा प्रभावित एवं अंतर्ग्रस्त है।

3. भेदभाव के निवारण एवं अल्पसंख्यकों के संरक्षण हेतु आयोग (Sub- Commission on

Prevention of Discrimination and Protection of minorities) ने बच्चों के सशस्त्र बलों पर अनिवार्य भर्ती के चयन पर रोक लगाने के लिए कदम उठाने की अपेक्षा की है।

4. मानवाधिकार आयोग ने एक विशेष रिपोर्टियर (Repporteer) की नियुक्ति बच्चों के विक्रय, बाल-वेश्यावृत्ति, बाल-अश्लील साहित्य (Child Pronography) और वाणिज्यिक उद्देश्य हेतु दत्तक ग्रहण के प्रयोग के लिए की है।

बाल श्रमिकों के रूप में समाज में अपनी उपस्थिति दर्ज कराने वाले नन्हें मासूम बच्चों का त्रासदीपूर्ण जीवन भारत ही नहीं आज समस्त विश्व की समस्या बन चुका है। हँसने खेलने और स्कूल जाने की जिम्मेदारी का बोझ उठाए, कुपोषण और अन्य अनेक बिमारियों के शिकार ये बच्चे चिंता का विषय है। बाल श्रम का विरोध करने तथा इसके प्रति जागरूकता का प्रसार करने के उद्देश्य से अन्तरराष्ट्रीय श्रम संगठन ने 2002 से 12 जून को 'विश्व बाल श्रम निषेध दिवस' के रूप में मनाना प्रारम्भ किया।

बाल श्रमिक पर चर्चा केवल हम
सब करते
हालात उनकी देख के झूठी आहें
भरते
सोचो अपने बच्चों से भी, क्या हम ये
करवाते
करवाना तो दूर, सोचकर
नयन भर आते
आँखों में 'छोटू' स्थान पे पुत्र को
लाओ
फिर उस बालक को अपना
इन्साफ दिलाओ
बाल श्रमिक निषेध दिवस है,
आज मना लो
निष्ठुर हाथों के जुल्मों से बाल
बचा लो

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सर्वप्रथम 1990 में न्यूयार्क में एक विश्व शिखर सम्मेलन का आयोजन किया गया। जिसमें 151 देशों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया तथा गरीबी और भुखमरी के शिकार विश्वभर के करोड़ों बच्चों की समस्याओं पर विचार किया गया।

भारत में ऑल इन्डिया ट्रेड यूनियन संघ, भारतीय मजदूर संघ, सेंटर ऑफ इन्डिया ट्रेड यूनियंस, हिंद मजदूर सभा, बालश्रम उन्मूलन एवं कल्याण कार्यक्रम आदि संगठन बाल श्रम के सम्बन्ध में अपना महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। भारतीय संविधान का अनुच्छेद 23 खतरनाक उद्योगों में बच्चों के रोजगार पर प्रतिबंध लगाता है। 1950 का अनुच्छेद 24 स्पष्ट करता है कि 14 वर्ष से कम उम्र के बच्चों को कारखाने इत्यादि में न रखा जाये, जहाँ उनकी सुरक्षा को खतरा हो।

1. आजकल बालश्रम कानून की खुलेआम धज्जियाँ उड़ती दिखाई देती हैं। जिसमें बाल श्रमिकों का बचपन छिनता जा रहा है। पेट की भूख शान्त करने के लिए बच्चे जूठे बर्तन धो रहे हैं। लेकिन बाल श्रमिक को बचाने के लिए कोई भी ठोस कदम नहीं उठाया जा रहा है।

2. सड़क के किनारे स्थित होटल, ढाबा व घरों में बाल श्रमिक काम करते देखे जा सकते हैं। ये बच्चे पढ़-लिखकर कुछ कर सके इस दिशा में प्रयास किया जाना जरूरी है। इसके लिए समाज के प्रत्येक वर्ग को प्रयास करना होगा।

3. काम करने वाले बाल श्रमिकों की मजबूरी है कि यदि वे काम नहीं करें तो वे भूखे रह जायेंगे और उनके ऊपर आश्रित छोटे भाई बहनों की पढ़ाई भी बन्द हो जायेगी।

   उनकी आँखे तरसती हैं दो वक्त के खाने को
   और धिक्कार के धक्के से कभी भूखा ही सो
   जाता है।
   बाल मजदूरी महापाप है नियम तो बना दिया
   यदि देश का भविष्य बनाना है तो
   मजदूरी को तो हटाना है।

   अगर किसी भी बाल श्रमिक से बात की जाये तो पता चलता है कि उनका भी मन पढ़ने को करता है लेकिन गरीबी के कारण काम करना पड़ रहा है।

4. बाल श्रमिकों को आठ घण्टे से ज्यादा काम करना पड़ता है उसके बाद भी मालिक की झिड़कियाँ सुननी पड़ती है। अधिकांश होटलों पर बाल श्रमिक ही काम करते हैं।

   भारत में यह स्थिति बहुत ही भयावह है। दुनिया में सबसे ज्यादा बाल मजदूर भारत में ही हैं एक आकलन के अनुसार भारत में बाल श्रमिकों का अनुमानित आंकड़ा डेढ़ करोड़ के लगभग है भारत जैसे देश में जहां की संस्कृति में बच्चों को भगवान का रूप माना जाता रहा है बाल श्रमिकों का अस्तित्व है जहां ध्रुव, प्रहलाद, लव-कुश एवं अभिमन्यु जैसे बालचरित भारतीय संस्कृति का हिस्सा रहे आज भारत देश में वर्तमान परिस्थितियों में गरीब बेसहारा बच्चों की जो छवि दिखाई देती है वह हृदय विदारक है।

यदि वास्तव में भारत में बच्चों की स्थिति को सुधारना है, उन्हें देश का भावी नागरिक बनाना है और उनके कंधों पर देश के भार को डालना है तो उनको दी जाने वाली योजनाओं का क्रियान्वयन सही ढंग से कराना होगा जिससे उसका उन्हें लाभ मिल सके और यह बच्चे देश का कर्णधार बन सके। बाल कल्याण का रास्ता बड़ा लंबा है गंतव्य दूर है परंतु इसके लिए उठाए गए कदम पर्याप्त नहीं कहे जा सकते, फिर भी यह नहीं कहा जा सकता कि सरकार और भारत के लोग इसके प्रति संवेदनशील और सचेत नहीं है। कई राष्ट्रीय संस्थाओं जैसे वीवी गिरी राष्ट्रीय श्रम संगठन और राष्ट्रीय ग्रामीण विकास संस्थान तथा कुछ राज्यस्तरीय संस्थानों ने सरकारी कर्मियों, कारखाना निरीक्षकों, पंचायती राज संस्थाओं के अधिकारियों, एनसीएलटी के परियोजना निदेशक और गैर सरकारी संगठनों के प्रमुखों के क्षमता निर्माण और प्रतिरक्षण में महत्वपूर्ण क्षमता निभाई है। इन संस्थानों ने शोध और सर्वेक्षण के साथ जागरूकता बढ़ाने व संवेदनशील बनाने के क्षेत्र में भी

महत्वपूर्ण योगदान किया है जिससे इस मुद्दे पर बहस पूरी तरह सामने आ चुकी है।

बाल मजदूरी की समस्या के समाधान के क्षेत्र में एमबी फाउंडेशन द्वारा एक अलग दृष्टिकोण विकसित किया गया है। यह संस्थान स्कूल छोड़े हुए नामांकन से वंचित तथा अन्य जगह कार्यरत बच्चों के लिए संयोजन पाठ्यक्रम चला रहा है तथा उनकी उम्र के अनुरूप औपचारिक शिक्षा पद्धति के अंतर्गत स्कूल में नामांकन करा रहा है। यह पद्धति काम करने वाले बच्चों को स्कूल की ओर लाने में काफी हद तक सफल रही है और इसे आंध्र प्रदेश सरकार के साथ प्रथम सिनी-आशा, लोक जुम्बिश जैसे गैर सरकारी संस्थाओं ने भी अपनाया है।

आज बाल श्रम समाज पर कलंक है इसके खात्मे के लिए सरकारों और समाज को मिलकर काम करना होगा। साथ ही साथ बाल मजदूरी पर पूर्णतया रोक लगनी चाहिए। बच्चों के उत्थान और उनके अधिकारों के लिए अनेक योजनाओं का प्रारंभ किया जाना चाहिए, जिससे बच्चों के जीवन पर सकारात्मक प्रभाव दिखे और शिक्षा का अधिकार भी सभी बच्चों तक पहुँचना चाहिए। गरीबी दूर करने वाले सभी व्यावहारिक उपाय उपयोग में लाए जाने चाहिए। बाल श्रम की समस्या का समाधान तभी होगा जब प्रत्येक बच्चे के पास उसका अधिकार पहुंच जाएगा। इसके लिए जो बच्चे अधिकार से वंचित हैं उनके अधिकार उनको दिलाने के लिए समाज और देश को सामूहिक प्रयास करने होंगे। आज देश के प्रत्येक नागरिक को बाल मजदूरी का उन्मूलन करने की जरूरत है और देश के किसी भी हिस्से में कोई भी बच्चा बाल श्रमिक दिखे तो देश के प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है कि वह बाल मजदूरी का विरोध करें और इस दिशा में उचित कार्यवाही करें और साथ ही साथ उनके अधिकार दिलाने का प्रयास करें क्योंकि बच्चे ही भारत के भविष्य हैं। जब तक बच्चों को उनके अधिकार और शिक्षा से वंचित रखा जाएगा तब तक देश के उज्जवल भविष्य की कल्पना करना निरर्थक है।

मां की ममता और पिता के दुलार से महरूम इन बच्चों के लिए स्कूल, शिक्षा, खेल खिलौने आदि का कोई अर्थ ही नहीं है। वेल्डिंग की चमक से अपनी आंखों की रोशनी को खो देना, फैक्ट्री के खतरनाक धुंए को श्वांस के साथ शरीर का अंग बना लेना, जहरीली गैसों के संपर्क में रहने के कारण टीबी, कैंसर आदि रोगों का शिकार होना एवं यौन शोषण के कारण अन्य यौन रोगों से ग्रस्त होकर श्रापित जीवन जीना इनकी नियति बन जाती है।

सबसे ज्यादा दयनीय स्थिति है बंधुआ मजदूरों की। जिनके माता-पिता जमीदारों या सेठों से ऋण लेकर उसे चुका नहीं पाते और बदले में बच्चों को बंधक बनाकर रख देते हैं। ब्याज दर इतनी ऊंची होती है कि उसे चुकाने में पीढ़ियों की बलि चढ़ जाती है। कुछ बच्चे फुटपाथ, रेलवे स्टेशनों पर रहने को मजबूर होते हैं या फिर मां बाप द्वारा छोड़े हुए होते हैं। यह बच्चे भी सर्वाधिक शोषित हैं। कितने भी कानून बने जब तक प्रत्येक व्यक्ति नहीं सोचेगा तब तक बालश्रम समाप्त नहीं होगा। यदि हमारे पास प्रभावकारी व्यवस्था और प्रशासनिक तंत्र हो, दृढ़ इच्छा शक्ति हो और समाज का प्रत्येक व्यक्ति अपने स्तर पर कुछ करने की इच्छा रखे तो बाल श्रम का उन्मूलन संभव है। जब तक पेट भूखा और जरूरतें अधूरी रहेगी बाल मजदूरी का यह सिलसिला चलता ही रहेगा। हालात से मजबूर इन बच्चों की विडंबना को यह पंक्तियां बखूबी बयां करती हैं—

क्यों ऐसा है मां कि हर गरीब झुकता है
मैं जब भी काम पर होता हूं पेट दुखता है
नसीब होती है उस वक्त गालियां मुझको

हाथ मेरा जो कभी काम पर से रुकता है
मैं जब भी काम पर होता हूं पेट दुखता है

वर्तमान परिवर्तित परिस्थितियों में बाल श्रम के उन्मूलन के लिए एक सतत एवं अधिक प्रभावशाली नीति अपनाए जाने की आवश्यकता है। जिसका आधार व्यापक होने के साथ-साथ आर्थिक भी हो और जो परिवारों एवं समुदायों, श्रम, बाजारों, गरीबी संबंधित नीतियों, मौजूदा विकास मॉडलों, व्यापार, उदारीकरण प्रक्रियाओं, निजीकरण एवं वैश्वीकरण से संबंधित हो। बाल श्रम की समस्या के उन्मूलन की स्थिति में ही बच्चे अपने भावी दायित्वों का कुशलतापूर्वक निर्वाह करते हुए विकसित भारत की संकल्पना को साकार कर सकते हैं।

संदर्भ ग्रन्थः

1- Burra, Neera (1995): 'Born to childlabour in India', oxford University press, Delhi.
2- Das, D.K.L (1992): Child workers-An Analysis of their Term of Employment, India Journal of Social work. Vol-I-III. No.-1 June.
3. अग्रवाल, उमेश चन्द्र (2007): ग्रामीण बच्चों के लिए कल्याणकारी योजनाएँ, कुरूक्षेत्र, नई दिल्ली, नवम्बर।
4. बाजपेयी, आशा (2003) चाइल्ड राइट्स इन इण्डिया, लॉ पॉलिसी ऐन्ड प्रैक्टिस, दिल्ली, ऑक्सफोर्ट यूनिवर्सिटी प्रेस।
5. चोपड़ा, जी (2015) चाइल्ड राइट्स इन इंडियाःचैलेंजेज ऐंड ऐक्शन न्यू दिल्लीः स्प्रिंगर।
6. पिल्ले, माइकेल विमल (2008), चाइल्ड प्रोटेक्शनः चैलेंजेज एण्ड इनीशीएटिवस हैदराबादः द आई, सी,एफ,ए,आई यूनिवर्सिटी प्रेस।
7. वाल्डफोजेल, जे (1988) द फ्यूचर ऑफ चाइल्ड प्रोटेक्शनः हाड टू ब्रेक द साइकल ऑफ एब्यूस एण्ड नेगलेक्ट कैम्ब्रिजः हार्वड यूनिवर्सिटी प्रेस (2004)।
8. Mishra, R.N (2004) Problems of childlabour in India, Common wealth Publishers
9. सारस्वत, ऋतु, मानव अधिकार और भारत, योजना, अप्रैल 2006।
10. ह्यूमन राइट्स, इयोन सीवेल्ड, ऐन इण्टरनेशनल इनसाइक्लोपीडिया ऑफ सोशल साइंस, वाल्यूम 5-6।
11. भारतीय संविधान, भारत सरकार प्रकाशन, नई दिल्ली।
12. कुमार, सर्वेश, बाल श्रमिकों के मानवाधिकार (2019), पॉइन्टर पब्लिसर्श, जयपुर।
13. भारद्राज, कमलेश, गुप्ता, सुभाष चन्द्र बाल श्रमिक (2018) अर्जुन पब्लिशिंग हाउस।
14. वोहरा, अमित, बालश्रम और अपराध, (2014) बालजी पब्लिकेशन।
15. देवांगन, वीरेन्द्र कुमार (2019) बाल श्रमिक, नेशनलप्रेस।

●●●●

समान लिंग विवाह की विधिक मान्यता की अपेक्षा

सुदर्शन वर्मा*
नीतेश कुमार चतुर्वेदी**

1. सामान्य परिचय

21वीं शताब्दी में यौन उदारता का स्वतंत्रता एवं मानवाधिकार के रूप में प्रचार नैतिकता पर आक्रमण ना होकर वैश्विक वाणिज्य संस्कृति का संवाहक बन गई है। भविष्य में एलजीबीटीक्यू समुदाय को भी सामान्य नागरिक अधिकारों जिनमें विवाह का अधिकार, गोद लेने का अधिकार, सरोगेसी का अधिकार तथा उत्पीड़न से मुक्ति आदि सम्मिलित होगा, भारतीय सर्वोच्च न्यायपालिका द्वारा घोषित निर्णय के आलोक में यदि हम अध्ययन करें तो यह विरोधाभासी प्रतीत होता है। यदि हम वास्तव में एलजीबीटीक्यू समुदाय के लोगों के संदर्भ में समानता के सिद्धांत का पालन करना चाहते हैं तो हमें विवाह का अधिकार, संपत्ति, वसीयत, बीमा आदि के अधिकारों का भी मान्यता देना पड़ेगा। क्योंकि केवल यौन अभिविन्यास के आधार पर इनके मूल अधिकारों से वंचित करना आपत्तिजनक और असंवैधानिक होगा क्योंकि समानता का अधिकार, जीवन तथा दैहिक स्वतंत्रता एवं संवैधानिक अधिकारों के संरक्षण का अधिकार सभी व्यक्तियों को प्राप्त है।

भारतीय संविधान के अनुसार मौलिक अधिकार (भाग-3) के अंतर्गत सभी व्यक्तियों को अधिकतम सुरक्षा उपलब्ध है, कुछ अधिकार केवल नागरिकों के लिए सीमित है इस वर्गीकरण से परे संविधान, अधिकार धारकों के बीच कोई और विभेद नहीं करता है, हमारे भारतीय संविधान की प्रस्तावना मूल रूप से न्याय को अनिवार्यतः सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक समानता की स्थिति को तय करने के लिए राज्य को निर्देशित करती है। संविधान अतिरिक्त रूप से प्रत्येक नागरिक को राजनीतिक अधिकारों को और अन्य लाभों की गारंटी देता है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14 विधि के समक्ष समानता प्रदान करता है। अनुच्छेद 15 धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर नागरिकों के बीच भेदभाव का प्रतिषेध करता है, अनुच्छेद 21 सभी व्यक्तियों की निजता के अधिकार तथा व्यक्तिगत स्वतंत्रता एवं मानव गरिमा के

* *पूर्व-विभागाध्यक्ष, विधि विभाग, पूर्व-संकायाध्यक्ष, विधि अध्ययन विद्यापीठ, बी.बी.ए.यू. लखनऊ*
** *शोध छात्र, विधि विभाग, बी.बी.ए.यू., लखनऊ*

साथ जीवन जीने की गारंटी देता है। अनुच्छेद 23 बलातश्रम और मानव तस्करी के रूप में किसी भी व्यक्ति की शारीरिक शोषण पर रोक लगाता है।

2. समान लिंग विवाह की मान्यता के सन्दर्भ में न्यायिक हस्तक्षेप की मांग

लता सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य के वाद में जो वर्ष 2006 में सर्वोच्च न्यायालय ने एक अंतर्जातीय विवाह से संबंधित वाद को निर्णीत किया था। न्यायालय ने कहा कि चूंकि याचिकाकर्ता वयस्क है, इसलिए वह अपनी स्वेच्छा से विवाह करने का अधिकारी है और कोई भी कानून अंतर्जातीय विवाह पर रोक नहीं लगाता है, न्यायालय ने याचिकाकर्ता के अपनी पसंद का साथी चुनने के अधिकार को स्पष्ट रूप से मान्यता दी।

न्यायाधीश केएस पुट्टास्वामी (सेवानिवृत्त) और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य के वाद में सर्वोच्च न्यायालय की नौ न्यायाधीशों की संविधान पीठ ने सर्वसम्मति से कहा कि "निजता के अधिकार को अनुच्छेद 21 के अन्तर्गत जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार के आंतरिक भाग के रूप में संरक्षित किया गया है, आखिर में अपने निष्कर्ष, यह कहा कि, गोपनीयता में इसके मूल में व्यक्तिगत अंतरंगता, पारिवारिक जीवन की पवित्रता, विवाह, प्रजनन, और यौन अभिविन्यास का संरक्षण शामिल है। गोपनीयता भी स्वतंत्र छोड़े जाने के अधिकार को दर्शाती है।

इस वाद के तुरंत बाद, सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दो निर्णय दिए गए जिसमें यह माना गया कि एक व्यक्ति की पसंद का अधिकार जिससे वह विवाह करना चाहती है, व्यक्तिगत गरिमा के एक अंतर्निहित भाग में और अनुच्छेद 21 के आंतरिक भाग के रूप में स्वीकार है।

(क) शक्ति वाहिनी बनाम भारत संघ के वाद में याचिकाकर्ता ने सर्वोच्च न्यायालय से राज्यों और केंद्र को ऑनरकिलिंग पर अंकुश लगाने के लिए एक योजना बनाने का दिशानिर्देश जारी करने की मांग की थी। 27 मार्च, 2018 को, सर्वोच्च न्यायालय ने एक ऐतिहासिक फैसला सुनाया कि खाप पंचायतों या किसी अन्य सभा द्वारा दो वयस्कों को विवाह करने से रोकने या रोकने का कोई भी प्रयास वयस्कों को विवाह करने से मना करना पूरी तरह से अवैध है और इस संबंध में निवारक, उपचारात्मक और दंडात्मक उपाय निर्धारित किए गए हैं।

(ख) शफीनजहां बनाम अशोकन के एम के वाद में इस अधिकार को दोहराया और मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा, 1948 के अनुच्छेद 16 और पुट्टास्वामी मामले का जिक्र करते हुए, बहुमत की राय रखते हुए कहा कि, "अपनी पसंद के व्यक्ति से विवाह करने का अधिकार संविधान के अनुच्छेद 21 का अभिन्न अंग है। संविधान, जीवन के अधिकार की गारंटी देता है, इस अधिकार को तब तक छीना या न्यून नहीं किया जा सकता जब तक कि एक ऐसे कानून जो मूल रूप से प्रक्रियात्मक रूप में निष्पक्ष, न्यायसंगत और उचित हो।"

जबकि पूर्वोक्त निर्णयों ने अनिश्चित शब्दों में यह पुष्टि नहीं की है कि विवाह का अधिकार एक मौलिक अधिकार है, उनमें से कोई भी समान लिंग विवाह से संबंधित नहीं है। इसलिए क्या यह तर्क दिया जा सकता है कि विवाह का अधिकार केवल विषम लैंगिक जोड़ों पर लागू होगा, समान लिंग वाले जोड़ों पर नहीं? इस प्रश्न का उत्तर नवतेज सिंह जौहर के निर्णय में पाया जा सकता है।

3. समान लिंग विवाह की मान्यता की न्यायिक मांग

दिल्ली उच्च न्यायालय में विशेष विवाह अधिनियम, 1954 तथा विदेशी विवाह अधिनियम, 1969 के अंतर्गत समलैंगिक विवाह को मान्यता प्रदान करने संबंधी याचिका दाखिल की गई। एक समान लिंग वाले युगल द्वारा दायर याचिका पर दिल्ली उच्च न्यायालय की दो सदस्यीय खंडपीठ में सुनवाई करते हुए, मुख्य न्यायाधीश डी.एन. पटेल तथा न्यायमूर्ति ज्योति सिंह की पीठ ने केंद्र सरकार को इस विषय पर अपना पक्ष रखने तथा जवाब दाखिल करने का समय दिया, मामले को 3 फरवरी 2022 को अगली सुनवाई के लिए सूचीबद्ध किया गया था।

याचिकाकर्ताओं की मांग है कि हिंदू विवाह अधिनियम 1956, विशेष विवाह अधिनियम 1954 तथा विदेशी विवाह अधिनियम, 1969 के अंतर्गत एक समान लिंग विवाह को मान्यता प्रदान की जाए। याचिकाकर्ताओं का प्रतिनिधित्व करते हुए वरिष्ठ अधिवक्ता नीरज किशन कौल ने पक्ष रखते हुए कहा कि यह विषय देश की कुल आबादी के 6 से 7 प्रतिशत व्यक्तियों से संबंधित है तथा यह विषय राष्ट्रीय संवैधानिक महत्व का मामला है।

महिलाओं द्वारा दायर याचिका में भी विशेष विवाह अधिनियम, 1954 के प्रावधानों को उस मात्रा तक चुनौती दी गई जिसमें एक समान लिंग की विवाह को मान्यता नहीं प्रदान किया गया है। वरिष्ठ अधिवक्ता मेनका मूरू स्वामी और अरूंधती काटजू, गोविंदा मनोहरण तथा सुरभि धर द्वारा दो महिलाओं का प्रतिनिधित्व करते हुए याचिका दाखिल की गई जिसमें 2 महिलाएं जो 47 एवं 36 वर्ष की थी, वर्षों से एक जोड़े के रूप में एक साथ रहकर जीवनयापन करते हुए प्रसन्नता पूर्वक रह रही थी परंतु विवाह करने में असमर्थ हैं क्योंकि दोनों ही समान लिंग की हैं। उनका तर्क था कि विवाह को मान्यता ना होने से उनके विधिक अधिकारों का हनन हो रहा है जैसा कि सामान्य परिस्थितियों में विपरीत लिंग के युगलों के सांविधिक अधिकार आसानी से प्राप्त हो जाता है।

दो पुरुषों द्वारा दाखिल याचिका में भी विदेशी विवाह अधिनियम के अंतर्गत विवाह पंजीकरण से मना कर दिया गया, जबकि दोनों समलैंगिक अमेरिका में विवाह करने के बाद एक साथ रह रहे थे। अधिवक्ताओं के एक अन्य वर्ग ने दो पुरुषों का प्रतिनिधित्व करते हुए न्यायालय को अवगत कराया कि यह दोनों पुरुष अमेरिका में एक साथ रहते हैं उन्होंने अमेरिका में विवाह भी कर लिया परंतु उनके विवाह को भारतीय वाणिज्य दूतावास द्वारा विदेशी विवाह अधिनियम के अंतर्गत पंजीकृत नहीं किया जा रहा था।

केंद्र सरकार का प्रतिनिधित्व करते हुए सॉलिसिटर जनरल तुषार मेहता ने पहले तर्क दिया कि पति-पत्नी का अर्थ पति या पत्नी है और विवाह भी समलैंगिक युगल से जुड़ा एक शब्द है, उनका तर्क था कि विधि जैसा है वैसा ही है जैसा कि व्यक्तिगत विधियों में तय हो गया है विवाह जैविक पुरुष और जैविक महिला के बीच होना तय किया गया है। सरकार ने समलैंगिक विवाह का इस आधार पर विरोध किया कि भारत में विवाह केवल दो व्यक्तियों का मिलन नहीं है बल्कि विवाह जैविक पुरुष और महिला के बीच एक संस्था है तथा किसी भी प्रकार का एक न्यायिक हस्तक्षेप व्यक्तिगत कानूनों को नाजुक संतुलन के साथ पूर्ण तबाही का कारक बन जाएगा। विवाह अनिवार्य रूप से दो व्यक्तियों का एक सामाजिक रूप से मान्यता प्राप्त एक संस्था है, जो कि असंहिताबद्ध वैयक्तिक कानूनों तथा संहिताबद्ध विभिन्न नियमों द्वारा प्रशासित होता है।

4. न्यायालय द्वारा समलैंगिकता को अपराध की श्रेणी से बाहर करना

नाज फाउंडेशन बनाम गवर्नमेंट आफ एनसीटी दिल्ली के वाद में दिल्ली उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने 2 जुलाई सन 2009 को निर्णय देते हुए कहा कि, भारतीय दंड संहिता की धारा 377 को उस सीमा तक असंवैधानिक घोषित कर दिया गया जहां तक अवयस्को द्वारा प्राइवेट में किए गए लैंगिक कृत्य को अपराधी घोषित करती है।

सुरेश कुमार कौशल बनाम नाज फाउंडेशन के वाद में सर्वोच्च न्यायालय की दो सदस्यीय पीठ ने 11 दिसंबर 2013 को दिल्ली उच्च न्यायालय के फैसले को पलट दिया और समलैंगिक अभिविन्यास को फिर से अपराध की श्रेणी में प्रतिस्थापित कर दिया।

राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण बनाम भारत संघ के वाद में सर्वोच्च न्यायालय के दो न्यायाधीशों की पीठ ने अपने फैसले में कहा ट्रांसजेंडर को तीसरे लिंग के रूप में मान्यता देना कोई सामाजिक या चिकित्सीय मुद्दा नहीं बल्कि मानवाधिकार का मुद्दा है। ट्रांसजेंडर भी भारतीय नागरिक हैं और उन्हें जीवन में आगे बढ़ने का समान अवसर प्रदान किया जाना चाहिए, पहली बार उन्हें तीसरे लिंग के रूप में मान्यता दी गई थी।

नवतेज सिंह जौहर बनाम भारत संघ के वाद में पुनः भारतीय दंड संहिता की धारा 377 की संवैधानिकता को चुनौती देते हुए सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष याचिका प्रस्तुत की। सर्वोच्च न्यायालय के पांच न्यायाधीशों की संवैधानिक पीठ ने 6 सितंबर 2018 को अपना फैसला सुनाते हुए निम्न टिप्पणी की-

1. भारतीय दंड संहिता की धारा 377 आंशिक रूप से और असंवैधानिक है, क्योंकि अंतरंगता स्वायत्तता और पहचान के मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करती है और समान लिंग के वयस्कों के बीच सहमति से समागम ना करने देने के कारण धारा 377 को समलैंगिकता के अपराध की श्रेणी से बाहर कर दिया।
2. न्यायालय ने कहा कि धारा 377 अस्पष्ट है और यह प्राकृतिक/अप्राकृतिक के बीच में अंतर स्थापित नहीं करती है।

5. समलैंगिक विवाह को मान्यता ना देने पर वैयक्तिक विधियों पर प्रभाव

भारत में राष्ट्रीय विधिक प्राधिकरण एवं नवतेज सिंह जौहर के वाद के फैसले का महत्व केवल तीसरे लिंग की पहचान और समलैंगिकता को अपराध से मुक्त करने तक ही सीमित नहीं है। यह निर्णय प्रगतिशील भी हैं क्योंकि इन मुद्दों पर निर्णय देने के अलावा उन्होंने कई अन्य नागरिक अधिकारों को प्रदान करने के लिए बुनियादी आधारभूत कार्य भी निर्धारित किया जो पहले एलजीबीटीक्यू समुदाय के लिए उपलब्ध नहीं थे। इस पद्धति को अपनाने में कई समस्याएं उत्पन्न हो सकती हैं जिनकी चर्चा इस प्रकार की जा रही है-

(क) विवाह और विवाह विच्छेद के सन्दर्भ में

शब्द 'पति' और 'पत्नी' चूंकि, यह एक सामान्य समझ है कि पति को पुरुष माना जाता है और पत्नी को महिला माना जाता है। लेकिन एलजीबीटीक्यू समुदाय के व्यक्तियों के विवाह के मामले में चूंकि दोनों साथी एक ही लिंग के हैं, इसलिए इस परिभाषा को लागू नहीं किया

जा सकता है। इसके अलावा, यदि पति और पत्नी की शर्तों का अर्थ ठीक से व्याख्या नहीं किया गया है तो इसका परिणाम कानून के आवेदन के संबंध में अस्पष्टता में होगा। उदाहरण के लिए, विशेष विवाह अधिनियम, 1954 की धारा 27(1-ए) उन आधारों को प्रदान करती है जिन पर पत्नी विवाह विच्छेद कर सकती है लेकिन एलजीबीटीक्यू विवाह के मामले में पत्नी शब्द को लेकर भ्रम है। इसलिए, एलजीबीटीक्यू समुदाय में समान लिंग विवाहों में अस्पष्टता को दूर करने के लिए अधिनियम की धारा 3 यानी परिभाषा खंड की पुनर्व्याख्या की जा सकती है।

विशेष विवाह एवं (हिंदू विवाह अधिनियम, 1956)के अनुसार, कुछ निषिद्ध संबंध हैं, जिनके बीच विवाह नहीं हो सकता है। हालाँकि, इन रिश्तों की डिग्री पुरुषों और महिलाओं दोनों के मामले में भिन्न होती है। लेकिन चूंकि एलजीबीटीक्यू समुदाय में विवाह पुरुष और महिला के बीच नहीं होते हैं, इसलिए इन शर्तों को फिर से परिभाषित करने की आवश्यकता होगी। विशेष विवाह अधिनियम (हिंदू और पारसी विवाह कानून) के मामले में, गुदामैथुन विवाह विच्छेद का आधार है, लेकिन धारा 377 को खत्म करने के बाद इन शर्तों को पुनः परिभाषित करने की जरूरत है। इस प्रकार समलैंगिक विवाह के मामले में इस शक्ति असंतुलन को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया जाना चाहिए।

(ख) दत्तकग्रहण, संरक्षकता, सरोगेसी और उत्तराधिकार

भारत में, दत्तकग्रहण धर्मनिरपेक्ष और धार्मिक दोनों कानूनों द्वारा शासित होता है। हिंदुओं के मामले में, यह हिंदू दत्तकग्रहण और संरक्षण अधिनियम, 1956 द्वारा शासित है, जबकि मुसलमानों, ईसाइयों, पारसियों आदि के मामले में दत्तकग्रहण के संबंध में कोई व्यक्तिगत कानून नहीं हैं। किशोर न्याय देखभाल और बच्चों की सुरक्षा अधिनियम, 2015 जिसे केंद्रीय दत्तकग्रहण संसाधन एजेंसी (सीएआरए) द्वारा बनाए गए 2017 के दत्तकग्रहण के नियमों के साथ पढ़ा जाता है।

यह अधिनियम प्रावधान करता है कि एक हिंदू विवाहित पुरुष या महिला साथी की सहमति से बच्चे को दत्तकग्रहण कर सकती है यदि साथी विकृत दिमाग का है, या उसने दुनिया को त्याग दिया है, इसी तरह, यह कानून एकल पुरुषों और महिलाओं को भी बच्चा दत्तकग्रहण की अनुमति देता है, बशर्ते कि वे वयस्कता की आयु प्राप्त कर चुके हों और विकृत दिमाग के न हों। एलजीबीटीक्यू समुदाय के व्यक्तियों को पूरी तरह से बच्चों को दत्तकग्रहण से रोकता है। यह दर्शाता है कि समलैंगिक युगल कानून के समक्ष समान नहीं हैं।

दत्तकग्रहण के कानून एलजीबीटीक्यू समुदाय के जोड़ों के साथ कैसे भेदभाव करते हैं

1. दत्तकग्रहण विनियम अधिनियम, 2017 के नियम 5(3) के अनुसार, केवल दो साल के स्थिर संबंध वाले दंपति ही बच्चा दत्तकग्रहण लेने के पात्र हैं। इसके अलावा, अनुभाग पति और पत्नी शब्दों का उपयोग करता है जिसका मूल रूप से अर्थ है कि यह समान-लिंग वाले जोड़ों के मामले में दत्तक ग्रहण के अधिकार को मान्यता नहीं देता है।

2. चूंकि पुरुषों और महिलाओं के मामले में दत्तकग्रहण के नियमों की एक अलग व्यवस्था लागू होती है, इसलिए ट्रांस-जोड़ों के संबंध में ऐसे कानूनों के लागू होने से अस्पष्टता पैदा होगी।

संरक्षकता अनिवार्य रूप से अधिकारों और दायित्वों के एक समूह को संदर्भित करता है,भारत में, हिंदुओं के मामले में संरक्षकता हिंदू अल्पव्यस्कता एवं संरक्षकता अधिनियम 1956 द्वारा शासित होती है, जबकि संरक्षकता और वार्ड अधिनियम 1956 एक धर्मनिरपेक्ष कानून है जो सभी नागरिकों पर लागू होता है। परंपरागत रूप से केवल पिता को एक प्राकृतिक अभिभावक माना जाता था और बच्चे पर उसका एकमात्र अधिकार था। इसके अलावा, हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 6 के अनुसार, माता को पिता के बाद ही बच्चे पर अभिभावक का अधिकार हो सकता है।

गीता हरिहरन बनाम भारतीय रिजर्व बैंक के मामले में इसकी पुनर्व्याख्या की गई, जहां न्यायालय के तीन सदस्यीय पीठ ने कहा कि "पिता के बाद" अभिव्यक्ति का अर्थ यह नहीं लगाया जाना चाहिए कि पिता की मृत्यु के बाद मां की संरक्षक हो सकती है।

6 जुलाई 2015 में, दिल्ली के एबीसी बनाम एनसीटी के वाद में, सर्वोच्च न्यायालय के दो न्यायाधीशों की पीठ ने एक बहुत ही उदार निर्णय दिया और अविवाहित मां के संरक्षकता अधिकारों को मान्यता दी और आगे यह निर्धारित किया कि मां के लिए पिता के नाम को प्रकट करना आवश्यक नहीं है। इस प्रकार, एलजीबीटीक्यू माता-पिता या ट्रांसजेंडर माता-पिता का अस्तित्व जहां लिंग स्पष्ट नहीं है, इन कानूनों के लागू होने से कुछ समस्याएं पैदा होंगी, इसलिए ऐसी शर्तों को परिभाषित करना महत्वपूर्ण है।

सरोगेसी अधिनियम के अनुसार, एकल लोगों और एलजीबीटीक्यू समुदाय के जोड़ों को सरोगेसी के माध्यम से अपने बच्चे पैदा करने की मनाही है। यह कानून सरोगेसी के व्यवसायीकरण पर रोक लगाने और मां और बच्चे के शोषण को रोकने के उद्देश्य से पारित किया गया है, लेकिन उद्देश्य को पूरा करने के बजाय इसे एक अनम्य कानून में बदल दिया गया है जो पुरातन परिवार प्रणाली की धारणा को दोहराता है।

महत्वपूर्ण बिंदु जिस पर यहां विचार किया जाना चाहिए, वह यह है कि एलजीबीटीक्यू समुदाय से संबंधित व्यक्तियों के अलावा अन्य लोग, जैसे कि एकल महिला, एकल पुरुष आदि को कम से कम गोद लेने का अधिकार है या कानूनी अभिभावक बन सकते हैं, जबकि एलजीबीटीक्यू समुदाय के युगलों को दत्तकग्रहण या अभिभावक बनने की भी अनुमति नही दी गई है।

भारत में उत्तराधिकार कानून व्यक्तिगत कानूनों और धर्मनिरपेक्ष कानूनों के मिश्रण से शासित होते हैं। हिंदू, हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 द्वारा शासित हैं, जबकि मुस्लिम और पारसियों के अपने प्रथागत कानून हैं और फिर एक भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 है, जो संशोधनों की एक श्रृंखला के बाद अब उन सभी भारतीयों पर लागू होता है जो विशेष विवाह अधिनियम, 1954 के अन्तर्गत विवाहित हैं। अन्य कानूनों के समान उत्तराधिकार अधिनियम में भी उत्तराधिकार के सम्बन्ध में विवाह शब्द केवल विषम लैंगिक विवाहों तक ही सीमित है। इसलिए एलजीबीटीक्यू युगल के मामले में इस कानून को लागू करने से पहले यह आवश्यक है कि कानून समलैंगिक विवाहों को मान्यता दे।

6. समलैंगिक विवाह को मान्यता देने के लिए विधायी प्रयास

राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी की एक सांसद सुप्रिया सुले ने नए आधारों को जोड़ते हुए समलैंगिक विवाह को वैध बनाने के लिए लोकसभा में एक निजी सदस्य विधेयक पेश किया और विवाहित एलजीबीटीक्यू जोड़ों को वही कानूनी अधिकार प्रदान किए, जिसके वे हकदार हैं, जबकि वर्ष 2018 में, भारत के सर्वोच्च

न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 377 को रद्द कर दिया और समलैंगिकता को अपराध की श्रेणी से बाहर कर दिया।

सुप्रिया सुले द्वारा पेश किए गए विधेयक में ऐसे विवाहों को संपन्न करने के लिए विशेष विवाह अधिनियम, 1954 में संशोधन का प्रस्ताव दिया है और दोनों पक्षों के पुरुष होने की स्थिति में विवाह की उम्र 21 वर्ष और दोनों के महिला होने की स्थिति में 18 वर्ष निर्धारित करने का प्रस्ताव है। यह विशेष विवाह अधिनियम, 1954 की विभिन्न धाराओं में संशोधन करके पति और पत्नी के शब्दों को पति या पत्नी से बदलने का भी प्रस्ताव करता है। उन्होंने विधेयक के उद्देश्य के बारे में कहा कि समलैंगिक, उभयलिंगी, ट्रांसजेंडर, क्वीर, इंटरसेक्स व्यक्तियों को अभी भी समाज के भीतर उत्पीड़न, भेदभाव और सामाजिक कलंक का सामना करना पडता है।

7. निष्कर्ष

भारतीय सामाजिक व्यवस्था के विस्तार और नई मांगों को स्वीकार करने के बाद यदि हम सांस्कृतिक विचारों, सामाजिक मूल्य तथा लोक नीति के आधार पर सब कुछ ही सही ठहराना शुरू कर देते हैं तो हमारे देश में कई प्रगतिशील कानून नहीं बनते और हम आज भी बाल विवाह, शिशु हत्या, सती प्रथा एवं अन्य सामाजिक बुराइयों को खत्म कर पाने में सफल नहीं होते। एलजीबीटीक्यू समुदाय के अधिकारों को मानवाधिकार के रूप में विशेषकर समान लिंग विवाह को मान्यता दी जानी चाहिए। यदि ऐसी अनुमति नहीं दी जाती हैं तो दत्तकग्रहण, उत्तराधिकार संरक्षकर्ता, सरोगेसी आदि कानून प्रभावित होंगे। जिसका परिणाम दूरगामी होगा और भविष्य में व्यक्तिगत विधियों में विवाद की संख्या ज्यादा होगी।

वर्तमान परिस्थितियों में सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने के लिए दत्तकग्रहण, संरक्षकता, उत्तराधिकार को प्रभावी तरीके से लागू करने के लिए तथा विधिक मान्यता देने के लिए विधायिका को नए कानून बनाने चाहिए। इस प्रकार के विधायी कृत्य एलजीबीटीक्यू समुदाय के लोगों को अधिक समावेशित और समानता की ओर ले जाएगा।

●●●●

मानव अधिकार की अमृत उपलब्धियां

(लोकतांत्रिक चुनाव और मानव अधिकार)

संदीप कुमार पाठक*

चुनाव या सरकार को चुनने का अधिकार व्यक्ति के अधिकारों के निर्धारण में सबसे महत्वपूर्ण तत्वों में से एक है। राजनीतिक और नागरिक अधिकारों का प्रयोग करने का यही पहलू सरकार के लोकतांत्रिक स्वरूप की सबसे महत्वपूर्ण विशेषताओं में से एक है। आम आदमी का सार्वभौमिक मताधिकार या सामान्य मताधिकार धन, आय, लिंग, सामाजिक स्थिति आदि की परवाह किए बगैर सभी नागरिकों को मत देने का अधिकार देता है। दूसरी ओर मानवाधिकारों को नैतिक सिद्धांतों या मानदंडों के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।

मानव व्यवहार के मानक

वोट देने और निर्वाचित होने का अधिकार आंतरिक रूप से कई अन्य मानवाधिकारों से जुड़ा हुआ है। इनमें विचार और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, आंदोलन की स्वतंत्रता, भेदभाव के खिलाफ स्वतंत्रता कुछ नाम शामिल हैं।

मानव अधिकार की अमृत उपलब्धियां

मानव अधिकार के क्षेत्र में देश ने कई उपलब्धियां हासिल की हैं। जब यह मानव अधिकारों की बात करते हैं तो सर्वप्रथम हम लोकतांत्रिक चुनावों का मनन करते हैं। स्वतंत्र भारत में लोकतांत्रिक मत का अधिकार, सभी वर्गों को बिना किसी भेदभाव के, बिना किसी लिंग भेद के, बराबरी के अधिकार के स्वरूप, मत का अधिकार भी प्राप्त हुआ था। यह मत का अधिकार किसी भी मौलिक अधिकार से कम नहीं है। यह उस देश की जनता के लिए सबसे बड़ा मानव अधिकार है जहां अभी भी अमीर और गरीब का अंतर साफ साफ नजर आता है। एक ओर गरीब अपनी दिन प्रतिदिन की भौतिक जरूरतों को पूरा करने के लिए जद्दोजहद करता है वही अमीर अपनी जरूरतों से अलग अपनी मनचाही सभी इच्छाओं को पूरा कर पाता है। परंतु जब बात लोकतांत्रिक चुनावों की आती है तो दोनों को बराबरी का अधिकार दिया जाता है। भारतीय लोकतंत्र

* *सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी*

में मताधिकार अमृत उपलब्धियों में से एक है जहां मानव अधिकारों का चयन लोकतांत्रिक चुनावों के जरिए किया जा सकता है।

आज की 21वीं सदी की विशेषता में मानव अधिकारों की बात करें तो सर्वप्रथम हमारे मस्तिष्क में राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग का ख्याल आता है साथ ही जब हम मानव अधिकारों की बात करते हैं तो हमारे मस्तिष्क में राष्ट्रीय स्तर पर सरकार, राज्य स्तर पर सरकार, पुलिस प्रशासन, जिला स्तर पर प्रशासन एवं ग्रामीण स्तर पर पंचायतें और शहरी तंत्र में नगर निगम का ख्याल आता है।

जब हम जमीनी स्तर पर नगर निगम, ग्राम पंचायत, जिला प्रशासन, पुलिस प्रशासन की ओर देखते हैं तब हमें हकीकत का आभास होता है किस प्रकार हमारे मानव अधिकार कुछ लोगों के हाथ में बटेर लगने के समान है। कुछ लोग चाहे तो हमारे अधिकारों को हमें पूर्ण रूप से प्रदान भी कर सकते हैं और चाहे तो सभी अधिकारों को पल भर में खत्म भी कर सकते हैं परंतु मत देने का अधिकार अर्थात चुनने का अधिकार वह मानव अधिकार है जो कोई भी प्रशासन हमसे किसी भी कीमत पर छीन नहीं सकता।

चुनाव और मानवाधिकारों के बारे में

मतदान का अधिकार और चुनाव में खड़े होने या प्रत्याशी बनने के साथ-साथ चुनाव में भाग लेने का अधिकार लोगों की इच्छा पर आधारित लोकतांत्रिक सरकारों के मूल में है जहां सभी को बराबरी का हक है। वहीं सभी को मत देने का अधिकार है, साथ ही साथ सभी को उस मत को पाने का भी अधिकार है। कोई भी व्यक्ति किसी भी जाति धर्म अथवा किसी भी लिंग का होने के बावजूद वह अपने मत का इस्तेमाल भी कर सकता है और उस मत को पाने के लिए प्रत्याशी भी बन सकता है। वास्तविकता में देखें तो चुनाव एक ऐसे पर्यावरण का निर्माण करता है जो आवश्यक और मौलिक रूप से मानवाधिकारों की रक्षा करने के साथ-साथ उन्हें बढ़ावा देने की ओर भी अग्रसर होता है।

जब हम मतदान के अधिकार का ख्याल करते हैं, तो चुनावों में निर्वाचित होने की आंतरिक एवं बाह्य प्रक्रिया को एक सार्थक चुनावी प्रक्रिया के साथ जोड़कर देखते हैं। तब हम मानवाधिकारों से जुड़े कुछ अधिकारों को पूर्व अपेक्षित मानकर शामिल कर लेते हैं जैसे भेदभाव से मुक्त अधिकार, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार, शांतिपूर्ण सभा की स्वतंत्रता का अधिकार और आवाजाही की स्वतंत्रता का अधिकार इत्यादि।

लोकतंत्र संयुक्त राष्ट्र के सार्वभौमिक मूल्यों में से एक है। संयुक्त राष्ट्र चार्टर संयुक्त राष्ट्र के लोगों के नाम पर घोषित किया गया है और मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा इस बात पर जोर देती है कि लोगों की इच्छा सरकार के अधिकार का आधार है। मानवाधिकारों और मौलिक स्वतंत्रता का सम्मान और समय-समय पर वास्तविक चुनाव कराने का सिद्धांत लोकतंत्र के आवश्यक तत्व हैं।

लोकतांत्रिक शासन, कानून के शासन, सामाजिक समावेश और आर्थिक विकास और सभी मानवाधिकारों की उन्नति के लिए राजनीतिक और सार्वजनिक भागीदारी महत्वपूर्ण है। व्यक्तियों और हाशिए पर समूहों को सशक्त बनाने में भागीदारी अधिकार महत्वपूर्ण हैं, और भेदभाव को खत्म करने के लिए आवश्यक है। ये अधिकार अन्य मानवाधिकारों से भी अविभाज्य रूप से जुड़े हुए हैं जैसे शांतिपूर्ण सभा और संघ के अधिकार, राय और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और शिक्षा और सूचना के अधिकार।

अमृत उपलब्धियों में सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि व्यक्ति द्वारा हासिल किया गया मताधिकार है। मतदान के माध्यम से सभी सरकारी निर्णय को प्रभावित कर सकता है साथ ही साथ उन सभी व्यक्तियों पर प्रभाव डाल सकता है जो सरकारी निर्णय को लेने में सक्षम है। मतदान का अधिकार किसी भी उम्मीदवार के पद के लिए या किसी मुद्दे के प्रस्तावित समाधान के लिए औपचारिक अभिव्यक्ति मात्र नहीं है बल्कि उसे एक वरीयता के रूप में देखा जाना चाहिए जहां एक आमजन अपने मतदान का इस्तेमाल कर आम तौर पर बड़े स्तर पर राष्ट्रीय क्षेत्रीय चुनाव के संदर्भ में सभी मुद्दों को प्रभावित करने की क्षमता रखता है यहां तक कि स्थानीय और छोटे पैमाने पर भी सामुदायिक चुनाव में व्यक्तिगत भागीदारी के लिए उतना ही महत्वपूर्ण है जितना राष्ट्रीय स्तर की सरकारों का निर्माण करने के लिए।

जब भी हम मतदान के अधिकार की बात करते हैं तो हम उन सभी निर्णय को वरीयता देने की कोशिश करते हैं जिनका आम जनमानस पर प्रभाव पड़ता है। आम जनमानस अपने अधिकारों का इस्तेमाल कर उन निर्णयों को अपने पक्ष में बदल सकता है और मतदान जैसे अधिकार का इस्तेमाल कर अच्छी सरकार का चुनाव कर अपने सभी मौलिक अधिकारों के साथ-साथ मानव अधिकारों का भी हनन होने से बचा सकता है।

1948 में संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा सर्वसम्मति से अपनाई गई मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा, भागीदारी सरकार के मौलिक अधिकार को सुनिश्चित करने में पारदर्शी और खुले चुनावों द्वारा निभाई जाने वाली अभिन्न भूमिका को मान्यता देती है। अनुच्छेद 21 में मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा में कहा गया है:

प्रत्येक व्यक्ति को अपने देश की सरकार में प्रत्यक्ष रूप से या स्वतंत्र रूप से चुने हुए प्रतिनिधियों के माध्यम से भाग लेने का अधिकार है।

अपने देश में सभी को सार्वजनिक सेवा में समान पहुंच का अधिकार है।

लोगों की इच्छा सरकार के अधिकार का आधार होगी; यह समय-समय पर और वास्तविक चुनावों में व्यक्त किया जाएगा, जो सार्वभौमिक और समान मताधिकार द्वारा होगा और गुप्त मतदान या समकक्ष मुक्त मतदान प्रक्रियाओं द्वारा आयोजित किया जाएगा।

मतदान के अधिकार को व्यापक रूप से एक मौलिक मानव अधिकार के रूप में मान्यता प्राप्त है। यह अधिकार दुनिया भर के लाखों व्यक्तियों के लिए पूरी तरह से लागू नहीं है। लगातार वंचित समूहों में गैर-नागरिक, युवा लोग, अल्पसंख्यक, अपराध करने वाले, बेघर, विकलांग व्यक्ति, और कई अन्य शामिल हैं जिनके पास गरीबी, निरक्षरता, धमकी, या अनुचित चुनाव प्रक्रियाओं सहित कई कारणों से वोट की पहुंच नहीं है। मताधिकार से मुकाबला करने में एक महत्वपूर्ण ताकत चुनाव निगरानी में लगे संगठनों की वृद्धि है। दुनिया भर में, सरकारें स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनावों से संबंधित सार्वभौमिक घोषणा की चुनौती का सामना करने के लिए संघर्ष करती हैं। चुनाव निगरानी समूह, स्थानीय या पार्टी मॉनिटर से लेकर संयुक्त राष्ट्र की टीमों तक, सरकारों और स्थानीय समूहों को शुरू से ही प्रक्रिया का अवलोकन करके स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव कराने में सहायता करते हैं (मतदाता शिक्षा, उम्मीदवार अभियान, मतपत्र की योजना)

लोकतंत्र की कमियों को संबोधित करना

लोकतंत्र की कमियों के बावजूद लोकतंत्र और चुनाव की प्रक्रिया के द्वारा मिलने वाला मताधिकार एक स्थिति में सीपी में मोती की भांति है। जिसमें कितने भी अधिकारों को बाहर से लपेट दिया जाए परंतु

मताधिकार सर्वश्रेष्ठ मानव अधिकारों में से एक कहलाएगा। इस मानव अधिकार का इस्तेमाल कर हम सभी मानवाधिकारों का हनन होने से बचा सकते हैं। मौलिक अधिकारों को तो कोई भी छीन सकता है परंतु मानव अधिकारों को छीनने के लिए सबसे बलशाली तंत्र अगर कोई है तो वह सरकारें हैं चाहे वह केंद्र सरकार हो या राज्य सरकार हो या अंतरराष्ट्रीय स्तर पर गठित किए गए संगठन हो। परंतु चुनने का अधिकार, चुनाव में भागीदारी का अधिकार, मत देने का अधिकार ऐसा अधिकार है जिसके द्वारा हम सभी सरकारों को पलट सकते हैं, न्यायिक प्रक्रिया को बदल सकते हैं, और साथ ही साथ लोकतंत्र को मजबूत बना सकते हैं और सार्वजनिक संस्थाओं को मजबूत करने, भ्रष्टाचार को मिटाने और भ्रष्टाचारी सरकारों को जड़ से खत्म करने और यह सुनिश्चित करने के लिए कि सभी का समावेशी भागीदारी और विकास हो तथा स्थानीय स्तर पर समावेशी शासन और विकास का समर्थन कर सकते हैं।

लोकतांत्रिक प्रक्रिया में सबसे बड़ी चुनौती है महिलाओं द्वारा सही मायने में लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं का इस्तेमाल किया जाना अर्थात सही मायने में चुनाव में महिलाओं की भागीदारी, महिलाओं द्वारा अपने मत का सही इस्तेमाल करना लोकतंत्र के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण चुनौती है। महिलाओं को लोकतंत्र की अत्यधिक जरूरत है और वे लोकतंत्र का इस्तेमाल कर उन प्रणाली और कानूनों को बदलवा सकती हैं जो उन्हें समाज से बाहर करने में अहम भूमिका अदा करता है। स्थानीय निकायों में भी निर्णय लेने में महिलाओं का प्रतिनिधित्व खराब है। राजनीतिक दलों और चुनाव आयोग में यह सुनिश्चित करने की क्षमता का अभाव रहता है कि महिलाओं के हितों को स्पष्ट कैसे किया जाए।

मानवाधिकार सार्वभौमिक है और सभी पर लागू होते हैं। मानव अधिकार स्थापित करते हैं कि सभी मनुष्य देश संस्कृति के बावजूद स्वतंत्र और अधिकारों में समान पैदा होते हैं। लोकतांत्रिक नीति में आम चुनाव हर एक व्यक्ति पर प्रभाव डालते हैं और हर एक व्यक्ति को अवसर देते हैं कि वह अपने चुनाव के अधिकार का इस्तेमाल कर मानवाधिकारों के सम्मान को बढ़ावा देने और गारंटी देने के उपाय को आगे बढ़ाएं।

●●●●

युद्ध की विभीषिका और मानव अधिकार

रजनी गोसाईं*

विश्व में जितने भी युद्ध हुए हैं वह अपने साथ भीषण त्रासदी ही लाए हैं और अपने पीछे एक अंतहीन पीड़ा ही छोड़कर जाते हैं आखिर इन युद्धों से हासिल क्या होता हैं? त्रासदी, अपनी जमीन जड़ों से छूटे हुए शरणार्थी, जन धन की हानि, मानव अधिकारों का हनन किसी भी युद्ध का परिणाम अंत: यही होता हैं।

इतिहास के पन्ने पलटे तो इस शताब्दी में दो बार का विश्व युद्ध लड़ा जा चुका हैं। जिसमें भारी जन धन की हानि हुई थी। द्वितीय विश्व युद्ध में क्रूरता, हिंसा, अत्याचारों की पराकाष्ठा पूरी दुनिया ने देखी थी। लाखों लोगों को इस युद्ध के कारण अमानवीय यातनाएं झेलनी पड़ी। अमेरिका ने जापान के हिरोशिमा तथा नागासाकी शहरों पर परमाणु बम द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान ही गिराए थे। परमाणु बम ने जापान के इन शहरों को पूरी तरह से तबाह कर दिया था। दूसरे विश्व युद्ध की भयानक त्रासदी के बाद ही विजेता देशों ने मिलकर संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना की थी। विश्व में शांति स्थापित करने के उदेशय से संयुक्त राष्ट्र की स्थापना 24 अक्टूबर 1945 को संयुक्त राष्ट्र अधिकारपत्र पर 50 देशों के हस्ताक्षर के साथ हुई थी। इसकी स्थापना अंतरराष्ट्रीय संघर्षों में हस्तक्षेप करने के उदेशय से ही की गई थी, जिससे भविष्य में फिर कभी प्रथम या द्वितीय विश्व युद्ध उभर कर न आए। और सभी देशों के नागरिकों के मानव अधिकारों की रक्षा ससम्मान हो सकें। इस प्रकार कहा जा सकता हैं संयुक्त राष्ट्र एक अंतरराष्ट्रीय संगठन हैं जिसका मुख्य उदेश्य अंतरराष्ट्रीय कानून को सुविधाजनक बनाने के साथ साथ अंतरराष्ट्रीय सुरक्षा, आर्थिक विकास, विश्व शांति,मानव अधिकार की रक्षा, सामाजिक प्रगति के लिए कार्य हैं। दुनिया दशकों तक द्वितीय विश्व युद्ध की हिंसा से उबर नहीं सकी थी। इसी लिए संयक्त राष्ट्र ने मानव अधिकारों के लिए एक घोषणापत्र भी जारी किया जिससे भविष्य में इस प्रकार के विध्वंसकारी युद्ध न हो और मानवता की रक्षा सुनिश्चित हो सकें।

मानव अधिकार की रक्षा और संयुक्त राष्ट्र के समक्ष चुनौतियां

लेकिन वर्तमान परिदृश्य में देखे तो विश्व में शांति स्थापित करने के लिए बना विश्व का सबसे बड़ा संगठन संयुक्त राष्ट्र युद्धों, देशो की आपसी टकराहट को रोकने में अधिक सफल नहीं हैं। कुछ राजनैतिक विद्वान, विश्लेषक, मानव अधिकार कार्यकर्ता आदि अपने वक्तव्यों में यह चिंता जाहिर करते रहे हैं कि सुपर पावर देश अर्थात विकसित देशों का संयुक्त राष्ट्र की नीतियों, फैसलों पर जरूरत से ज्यादा हस्तक्षेप हैं या ये

* *स्वतंत्र लेखिका, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश*

देश राष्ट्र संघ का कोई भी निर्णय नहीं मानते हैं, इसी कारण राष्ट्र संघ की युद्ध रोकने की नीतियां या निर्णय ज्यादा प्रभावकारी नहीं होते हैं। केवल वर्ष 2000 से लेकर अब तक के परिदृश्य में देखे तो तस्वीर साफ़ दिखाई देती हैं जिसे हम इन उदाहरणों से समझ सकते हैं।

वर्ष 2001 में अमेरिका में आंतकी हमला होने के बाद अमेरिका ने अफगानिस्तान के खिलाफ युद्ध लड़ा जिसमें आंतकियों के साथ साथ कई निर्दोष नागरिक भी मारे गए। इतने वर्षों तक यह युद्ध अफगानिस्तान की जमीन पर लड़ा गया। नित मिसाइलों, बमों के हमले से जन धन की हानि तो हुई ही अफगानिस्तान का अंदरूनी ढांचा आर्थिक, सामाजिक, शैक्षिक, व्यापारिक बुरी तरह से चरमरा गया। इतने वर्षो तक चलने वाले इस युद्ध का परिणाम क्या मिला वही ढाक के तीन पात। जिस आंतक को ख़त्म करने के लिए अमेरिकी सेना अफगानिस्तान में घुसी थी वही संगठन अब फिर से सत्ता पर काबिज हैं, जिसका भयावह परिणाम वहां की निर्दोष जनता भुगत रही हैं। उनके जीने के मूलभूत मानव अधिकारों शिक्षा,न्याय, रोजगार, ससम्मान जीने के अधिकार की सुध लेने वाला कोई नहीं हैं। इसकी परिणीति यह हुई कि एक आम अफगानी नागरिक दूसरे देशों की शरण लेने को मजबूर हैं। लगभग यही परिणाम अमेरिका और इराक के मध्य हुए युद्ध (वर्ष 2003) का रहा हैं।

हाल ही में यूक्रेन और रूस के मध्य छिड़ा युद्ध हैं। रूस यूक्रेन के मध्य जो जंग छिड़ी हुई हैं उससे भी यह कयास लगाए जा रहे हैं संयुक्त राष्ट्र केवल मूकदर्शक बनकर नागरिकों के मानव अधिकारों का हनन होते हुए देख रहा हैं। यूक्रेन के कई बड़े शहर रूसी मिसाइलों के हमले से मलबे के ढेर में बदल चुके हैं। लाखों नागरिकों को अपने घर आशियाने छोड़कर दूसरे देशों की शरण में जाना पड़ा। भय अराजकता बन्दूक तोपों के साए में निरीह नागरिकों को अपने बाल बच्चों सहित अपना देश छोड़कर अपनी जान बचाकर भागना पड़ता हैं। इस पीड़ा को कोई भी संवेदनशील मनुष्य महसूस कर सकता हैं। प्रकृति ने प्रत्येक मनुष्य को जीने का अधिकार दिया हैं और इन्हीं अधिकारों की रक्षा के लिए मानव अधिकारों की व्याख्या की गई। क्या इन नागरिकों के मानव अधिकार नहीं हैं? इनके अधिकारों की रक्षा करने के उत्तरदायित्व किसका हैं। वर्तमान में विश्व के सम्मुख कई गंभीर चुनौतियां हैं। समाचार पत्रों आदि में लगातार युद्ध से प्रभावित क्षेत्रों के नागरिकों की दिल दहला देने वाली घटनाओं के चित्र प्रकाशित होते हैं। यह दृश्य दर्शाते है कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मानव अधिकारों और कानूनों का उल्लंघन कितने व्यापक स्तर पर और गंभीर रूप से हो रहा हैं। युद्ध ग्रस्त देशो में मानवीय नियमों को ताक पर रखकर सीधे सीधे नागरिकों को ही निशाना बनाया जा रहा हैं। इजराइल और फिलस्तीन के मध्य चलने वाला विवाद जिसके कारण दोनों देश एक दूसरे पर जब तब मिसाइल हमले करते हैं या लम्बे समय से सीरिया में चलने वाला गृहयुद्ध, दोनों ही परिस्थितियों में बेगुनाह नागरिक मारे जाते हैं। वर्ष 2015 में तुर्की के समुद्र के किनारे सीरिया के दो साल के मृत बच्चे का शव मिला था, यह बच्चा तुर्की में शरणार्थी कैंप के लिए शरण लेने के लिए अपना देश सीरिया छोड़कर अपने माता पिता के साथ निकला था लेकिन समुद्र में डूबने से इसकी मृत्यु हो गई थी। इस हृदयविदारक चित्र ने पूरी दुनिया को झकझोर कर रख दिया था। आंतक ग्रस्त क्षेत्रों, युद्ध ग्रस्त क्षेत्रों में इस तरह की अमानवीय तस्वीरें आम हैं। इन देशों की सरकारों प्रतिनिधियों की भी यह जिम्मेदारी बनती हैं कि वह अपने नागरिकों की सुरक्षा करें उनके मानव अधिकारों की रक्षा करें।

विकसित देशो का विश्व में अपना वर्चस्व बढ़ाना और विश्व में युद्ध की परिस्थितयां एवं आंतकवाद

यह सर्वविदित हैं जब सुपरपावर देश अपनी विस्तारवादी नीति, राजनैतिक शक्ति, वैश्विक शक्ति बनने की चाह, अन्य देशों पर अपना दबाव बनाना, राजनेताओं की उच्च महत्वाकांक्षा, वैश्विक स्तर पर अपना

दबदबा कायम रखने की होड़ करती हैं, तो यह सभी कारक आपस में मिलकर दो देशों के बीच किसी युद्ध को जन्म देते हैं तो इसके सबसे अधिक भयावह और दुखद परिणाम उन देशों की जनता को ही भुगतने पड़ते हैं और इस पर भी जिस देश की जमीन पर युद्ध लड़ा जाता हैं वह देश आर्थिक भौगोलिक रूप से पिछड़ जाता हैं। देश की राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक व्यवस्था बुरी तरह से चरमरा जाती हैं और जान माल की क्षति होती हैं वह अलग दुखद पहलू हैं। इराक अफगानिस्तान इसके सबसे ज्यादा ज्वलंत उदाहरण हैं।

दुनिया में बढ़ता अलगाववाद व आतंकवादी संगठन भी चिंता के विषय हैं। कुछ देश दूसरे देशों की आर्थिक, भौगोलिक, राजनैतिक क्षमता को विश्व में कमजोर करने के लिए चोरी छुपे इन आंतकी संगठनों की मदद करते हैं। इन्हें फलने फूलने में मदद करते हैं, जिसकी परिणीति कई बार युद्ध में होती हैं। आंतकवाद के खतरे को भी अब नकारा नहीं जा सकता हैं क्योंकि देशो के मध्य युद्ध भड़काने में अब आंतकवाद भी एक मुख्य घटक हो चला हैं। यहाँ इस तथ्य को सही ठहराया जा सकता हैं कि किसी भी देश को अपनी सम्प्रभुता, अखंडता की रक्षा करने के अधिकार हैं। कोई भी देश किसी दूसरे देश की तानाशाही या दखलन्दाजी सहन नहीं करेगा, ऐसी स्थिति में वह अपनी सैन्य ताकत का प्रयोग करेगा। यहाँ एक प्रश्न मुख्यतया प्रकट होता हैं, क्या ऐसी स्थिति में युद्ध को टाला नहीं जा सकता हैं। सैन्य रूप से ताकतवर देश अपना वर्चस्व कायम करने के लिए युद्ध क्यों थोपते हैं। कभी कभी इस प्रकार के युद्ध बिना कोई जीत हार के परिणाम निकले बिना स्वतः समाप्त कर दिए जाते हैं लेकिन तब तक हजारों लाखों की संख्या में बेगुनाह नागरिकों की मौत हो जाती हैं। कितने ही अपनी मातृभूमि अपने घरों से बेघर हो चुके होते हैं। युद्ध की इस विभीषिका को रोकने के लिए यह आवश्यक है कि सभी देश अंतरराष्ट्रीय मानवीय कानून का सम्मान और पालन करें। दुनिया के सभी देश इस कानून का पालन करने के लिए प्रतिबद्ध हैं। यह कानून ही युद्ध कि विभीषिका से उपजी नृशंसता बर्बरता के खिलाफ नागरिको को सुरक्षा प्रदान करता हैं। पर यह तभी पूर्ण रूप से सफल माना जाएगा जब तक कि विश्व के सभी देश व्यवाहरिक रूप से इनका पालन करें।

हम सभी जानते हैं विज्ञान के इस युग में जबकि लगभग सभी देशों के पास एटमी हथियारों से लेकर जैविक रासायनिक हथियार हैं। यदि ऐसे में तृतीय विश्वयुद्ध होता है तो युद्ध की विभीषका भयानक हो सकती हैं। आज हर देश अपनी सैन्य ताकत बढ़ाने के लिए नित नए परमाणु परीक्षण, आकाश में मिसाइल का परीक्षण कर रहा है जोकि पृथ्वी के पर्यावरण के लिए भी हानिकारक हैं। ऐसे में विश्व में शांति स्थापित करने वालीं संस्थाओं, मानव अधिकारों की रक्षा करने वाले संगठनों की भूमिका बढ़ जाती हैं। यह संस्थाए व संगठन सुनिश्चित करें कि वह अपना वर्चस्व, अपनी भूमिका के दायरे को बढ़ाए, जिससे दो देशों के तनाव को कम करने के लिए युद्ध की बजाय शांति वार्ता से राजनैतिक आर्थिक मसले हल हो। यह सुनिश्चित करें कि कोई भी देश अपनी विस्तारवादी नीति, दूसरे देश के अंदरूनी राजनैतिक, आर्थिक मामलों में अनावश्यक रूप से दखलंदाजी व आंतकवाद को बढ़ावा न दे। विश्व में शांति स्थापित करने के लिए बने इन संस्थाओं को कुछ कठोर नियम बनाने ही होंगे जिससे विश्व के सभी नागरिकों के मानव अधिकारों की रक्षा हो सके व युद्ध की विभीषिका को भी रोका जा सके।

●●●●

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की कोरोना काल में प्रवासी मजदूरों के मानव अधिकारों के संरक्षण में भूमिका

शीतल प्रसाद मीना*
क्षेत्रपाल सिंह**

प्रस्तावना-

कोरोना महामारी के संक्रमण चलते सम्पूर्ण विश्व की अर्थव्यवस्था मंदी के प्रभाव में है। इसका सबसे ज्यादा प्रभाव उद्योग व कारखानों में काम करने वाले प्रवासी मजदूरों पर पड़ा है। इस महामारी को रोकने के लिए विश्व की सरकारों ने कठोर लॉक डाउन तक लागू कर दिए जिसके कारण भारत में काम करने वाले मजदूरों के साथ-साथ विदेशों में काम करने वाले मजदूर भी बेरोजगार हो गए। भारत में सबसे ज्यादा प्रवासी मजदूर उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल, राजस्थान, मध्य प्रदेश जैसे राज्यों से गुजरात, महाराष्ट्र के साथ दक्षिण के राज्यों में रोजगार के लिए जाते हैं। वर्ष 2020 में केंद्रीय सरकार द्वारा लगाये गये प्रथम लॉकडाउन के कारण इन राज्यों में काम कर रहे प्रवासी मजदूर अपने घर जाने के लिए पैदल ही चल दिए।

प्रथम एवं द्वितीय लॉकडाउन में केंद्रीय सरकार व राज्य सरकारों के द्वारा परिवहन सेवायें पूरी तरह से बंद कर दिए जाने के कारण प्रवासी श्रमिकों को बहुत ज्यादा दिक्कतों का सामना करना पडा। राजस्थान पत्रिका और दैनिक भास्कर समाचार पत्र में प्रकाशित एक खबर में बताया गया कि अहमदाबाद में काम कर रहा एक राजस्थान का प्रवासी मजदूर राजस्थान-गुजरात सीमा पर स्थित रतनपुर बोर्डर से अपनी पत्नी, जिसका पैर टूट गया था और जिसके पैर पर प्लास्टर चढ़ा रखा था, को 50 किलो मीटर दूर अपने घर तक अपने कंधे पर बिठा कर लेकर गया। इसके अलावा कई और मामले जैसे: गर्भवती महिलाओं को रास्ते में प्रसव की परेशानी, बालकों को सूटकेस पर बिठाकर ले जाना, कहीं भूख प्यास के कारण मौत, कहीं रेल की पटरियों पर सो रहे मजदूरों की रेल से कटने से मृत्यु आदि घटनाओं में मानव अधिकारों का हनन हुआ।

* *सहायक प्रोफेसर, विधि विभाग, श्रमजीवी कॉलेज परिसर, जनार्दन राय नगर राजस्थान विद्यापीठ, उदयपुर 313001 राजस्थान*
** *डॉ. अनुष्का विधि महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)*

कोरोना महामारी बनाम मानवाधिकारों की सार्वभौमिक उद्घोषणा-

प्रवासी मजदूरों के साथ कोरोना महामारी के समय संपूर्ण विश्व में मानव अधिकारों के उल्लंघन की घटनाएं देखी गई। जहाँ एक तरफ कोरोना जैसी गंभीर महामारी से पूरा देश लड़ रहा था ववी ऐसे में राज्य प्रवासी मजदूर के पलायन से दो-चार हाथ कर रहे थे। संयुक्त राष्ट्र संघ ने मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा, 1948 के अनुच्छेद-25 में राज्य द्वारा प्रत्येक व्यक्ति के स्वास्थ्य की देखभाल करने का प्रावधान किया है। जीवन स्तर बनाये रखने के लिए खाना, कपड़ा, मकान, चिकित्सा सम्बन्धी सुविधाएं और आवश्यक सामाजिक सेवाएँ राज्य के द्वारा उपलब्ध कराई जायेगी। अर्थात् राज्यों पर इस महामारी से संक्रमित व्यक्तियों की देखभाल एवं समुचित उपचार का दायित्व होगा।

इस सम्बन्ध में संयुक्त राष्ट्र संघ के महासचिव एंटोनियो गुटेरेस ने कोविड-19 महामारी के चलते शरणार्थी, आंतरिक रूप से विस्थापित और प्रवासियों के सर्वाधिक प्रभावित होने का जिक्र किया। उन्होने कहा कि ऐसे वक्त में ''सभी राष्ट्र मानवता की गरिमा बनाये रखें और मानवाधिकारों का सम्मान करें।''

संविधान प्रदत्त मूल अधिकारों का उल्लंघन—

भारतीय संविधान में मूल अधिकारों को काफी महत्व दिया गया है। मूल अधिकारों के साथ ही नीति निर्देशक तत्वों को समाहित कर राज्य की जिम्मेदारी तय की गई है कि राज्य नीति निर्धारण के माध्यम से सभी को स्वच्छ जल, वायु एवं सुरक्षित पर्यावरण प्रदान करें।

भारत के माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा समय-समय पर दिए गये अपने विभिन्न निर्णयों में स्वास्थ्य के अधिकार को अनुच्छेद-21 में प्राण एवं दैहिक स्वतंत्रता के मूल अधिकार में समाहित माना है। उच्चतम न्यायालय के द्वारा अनुच्छेद-21 का विस्तृत रूप से निर्वचन करते हुए स्पष्ट किया कि इसके अंतर्गत व्यक्ति को गरिमापूर्ण जीवन जीने के लिए अधिकार प्राप्त है। इसमें उचित उपचार का प्राप्त करने अधिकार भी सम्मिलित है।

उच्चतम न्यायालय ने निर्णित किया है कि अनुच्छेद-21 के अंतर्गत स्वास्थ्य तथा चिकित्सा सहायता प्राप्त करना एक मूल अधिकार है क्योंकि यह मानव के जीवन को अर्थपूर्ण बनाता है जो एक व्यक्ति की गरिमा को बनाए रखने के लिए आवश्यक है। एक कर्मकार को स्वास्थ्य का अधिकार अनुच्छेद 21 के अन्तर्गत एक मूल अधिकार के रूप में प्राप्त हैं। अनुच्छेद-21 राज्य पर यह कर्तव्य आरोपित करता है कि वह प्रत्येक व्यक्ति के जीवन की रक्षा करे। राज्य द्वारा संचालित सरकारी अस्पतालों में कार्यरत चिकित्सकों का यह कर्तव्य है कि वे मानव जीवन की रक्षा के लिए सभी को समय पर चिकित्सा सहायता प्रदान करे।

इसके अलावा अनुच्छेद-21 में भोजन के अधिकार को भी मूल अधिकार माना गया है। लॉक डाउन के समय केंद्रीय एवं राज्य सरकारों की जिम्मेदारी थी कि वे प्रवासी मजदूरों को क्वैरान्टेंन सेंटरों पर भोजन पानी की उचित व्यवस्था करें। अनुच्छेद 47 - लोक स्वास्थ्य में सुधार आदि करना राज्य का प्राथमिक कर्तव्य माना गया है।

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग की भूमिका:

कोरोना काल में प्रवासी मजदूरों के मानव अधिकारों के संरक्षण में राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग ने केन्द्र व राज्य सरकारों को कई बार दिशा-निर्देश जारी किये। प्रवासी मजदूरों के प्रति होने वाले उत्पीड़न एवं शोषण की घटनाओं को लेकर स्वयं प्रसंज्ञान भी लिया है। पुलिस के द्वारा अक्षम नाबालिग की पिटाई का

मामला हो या ट्रेनों में अव्यवस्था, भूख से मौत, गर्भवती महिलाओं द्वारा सड़क पर प्रसव का मामला, रेल की पटरियों पर प्रवासियों की मौत के मामलों में आयोग ने सजगता दिखाई एवं पीड़ितों को न्याय दिलाया।

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग द्वारा कोरोना काल में निम्न मामलों में संज्ञान लिया-

पुलिस ने 21 जुलाई को गुवाहाटी के भरलुमुख इलाकों में एक अक्षम नाबालिग लड़के को बेरहमी से पीटा। आयोग ने इस मामले में स्वतः संज्ञान लेते हुये राज्य सरकार को चार सप्ताह में रिपोर्ट प्रस्तुत करने को कहा। इस मामले में प्रवासी अक्षम नाबालिग के अधिकारों के हनन की शिकायत प्राप्त होने पर संज्ञान लिया।

कोरोना काल में केंद्रीय सरकार द्वारा चलाई जा रही श्रमिक स्पेशल ट्रेनों के समय पर नहीं पहुंचने व यात्रियों को हो रही असुविधाओं पर आयोग द्वारा संज्ञान लिया तथा गुजरात और बिहार सरकार के मुख्य सचिवों को नोटिस जारी कर असुविधाओं को सही करने के लिए किये जाने वाले प्रयासों की जानकारी मांगी गई। प्रथम लॉक डाउन के दौरान मई में प्रारंभ की गई स्पेशल ट्रेनें नौ दिनों की देरी से पहुंची। एक अन्य मामले में राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग ने लुधियाना से सहारनपुर पैदल लौट रहे युवक की भूख से मौत पर उत्तर प्रदेश सरकार से जबाब माँगा गया था।

आगरा हाईवे पर एक प्रवासी महिला द्वारा पैदल चलते हुये सूटकेस पर बैठा कर बच्चे को ले जाए जाने के मामले को राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग ने गंभीरता से लेते हुए मानवाधिकारों का हनन बताया है। लॉक डाउन के दौरान प्रवासी मजदूरों को अपने गाँव लौटने के दौरान अनेक गंभीर समस्याओं का सामना करना पडा। कई गर्भवती महिलाओं ने सामान को सिर पर रखकर करीब 500 किलोमीटर से लेकर 2500 किलोमीटर की दूरी पैदल ही तय की। मध्य प्रदेश के सतना की निवासी गर्भवती मजदूर महाराष्ट्र के नासिक से पति के साथ सतना जा रही थी। रास्ते में धुले में उसे प्रसव पीड़ा हुई। सड़क पर ही उसने बच्चे को जन्म दिया और महज दो घंटे के आराम के बाद फिर पैदल मई की भीषण गर्मी में नवजात शिशु के साथ सफर पर निकल पड़ी। इस घटना को राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग ने प्रशासन की घोर लापरवाही बताया। आयोग ने इसे महिला और नवजात शिशु के मानवाधिकार हनन का मामला माना और मातृत्व के प्रति अमानवीयता बताया। इस मामले के प्रकाश में आने के बाद आयोग ने लॉक डाउन के दौरान प्रवासी मजदूरों के उत्पीड़न और मुश्किलों से बचाने के सरकारी उपायों की जानकारी मांगी। आयोग ने हैरानी जताई कि जिस गर्भवती महिला को आराम, समुचित देखभाल, दवा और पौष्टिक आहार दिया जाना चाहिए था उसे गर्मी में सैकड़ों किलोमीटर पैदल सफर करने को मजबूर किया गया।

प्रथम लॉक डाउन के दौरान महाराष्ट्र के औरंगाबाद जिले में रेल की पटरियों के साथ-साथ पैदल सफ़र करने के बाद थकने के कारण रेल की पटरियों पर सो रहे 16 प्रवासी मजदूरों की मालगाडी की चपेट में आने से मौत हो गई। इस मामले में 20 प्रवासी मजदूरों का दल जालना से भुसावल के लिए पटरियों के रास्ते पैदल ही निकला था। कोरोना काल में ट्रेन नहीं चल रही हैं यह मानकर ये प्रवासी मजदूर रेल की पटरियों पर ही सो गये। मालगाडी के आने से 20 में से 16 सभी प्रवासी मजदूरों की मृत्यु हो गई। केवल चार मजदूर जो पटरियों से दूर थे वो ही बच सके थे।

कोरोना काल के दौरान राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग ने सड़क के किनारे मिलने वाले शवों के मामले में संज्ञान लेते हुए सरकार को निर्देष जारी किए कि सरकार इस संबंध में नई गाइडलाइन बनाए।

निष्कर्ष:

भारत सहित विश्व के सभी देश कोरोना महामारी के संक्रमण से पीड़ित हैं। इस महामारी के समय सबसे ज्यादा प्रभाव प्रवासी मजदूरों पर पड़ा जो रोजगार की तलाश में दूसरे देशों में गये। भारत में भी एक राज्य से दूसरे राज्य जैसे उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश, राजस्थान एवं ओडिशा राज्यों से गुजरात एवं महाराष्ट्र जैसे राज्यों में रोजगार की तलाश में जाते है। लॉकडाउन के दौरान उद्योग धंधे बंद होने के कारण एवं सार्वजनिक परिवहन पूर्णतया बंद होने के कारण ये प्रवासी मजदूर पैदल ही अपने घरों को चल दिए। इस दौरान किसी प्रवासी की भूख से, किसी प्रवासी की प्यास से तो किसी प्रवासी की पर्याप्त चिकित्सा सहायता के अभाव में रास्ते में ही जान चली गई जो इनके मानव अधिकारों का हनन था। शिकायतें प्राप्त होने पर राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग ने इन घटनाओं पर स्वतः संज्ञान लिया और केन्द्र व राज्यों को दिशा-निर्देश जारी किए।

●●●●

महिला तस्करी और मानवाधिकार : समस्याएं एवं समाधान

विश्वास पटेल*
तुहिना जौहरी**

"लोगों को उनके मानवाधिकारों से वंचित करना उनकी मानवता को चुनौती देना है।"

-नेल्सन मंडेला

'न्यायमूल स्वराज्य स्यात' अर्थात 'स्वराज के मूल में न्याय होता है' जब न्याय की चर्चा होती है, तो मानव अधिकार का भाव उसमें पूरी तरह से समाहित रहता है। शोषित, पीड़ित और वंचित जनों की स्वतंत्रता, शांति और उन्हें न्याय सुनिश्चित कराने के लिए यह विशेष रूप से अनिवार्य है।

गरिमा के साथ जीवन यापन करना और अपने अधिकारों की रक्षा करना एक बुनियादी मानव अधिकार है। लेकिन हमारी सामाजिक व्यवस्था में महिलाओं की स्थिति हमेशा दोयम दर्जे की ही रही है। वे हमेशा आक्रामकता, हिंसा, शोषण, भेदभाव आदि का शिकार होती रही हैं क्योंकि पितृसत्तात्मक समाज ने उन्हें हमेशा अपने अधिकारों से वंचित रखा और उन्हें कठोर और रूढ़िवादी रीतिरिवाजों का पालन करने के लिए मजबूर किया जाता रहा है, और यही कारण है कि महिलाओं के खिलाफ कई तरह के अपराध होते रहे हैं। ऐसे ही गम्भीर अपराध का एक ज्वलंत उदाहरण महिलाओं की तस्करी है जो अपने आप में मानवाधिकारों का गंभीर उल्लंघन है। वर्तमान समय में महिलाओं की तस्करी वैश्विक स्तर पर एक गंभीर एवं संवेदनशील समस्या बनकर उभरी है। यह एक ऐसा अपराध है जिसमें महिलाओं और लड़कियों को उनके शोषण के लिये खरीदा और बेचा जाता है। इसमें पीड़ित महिलाओं व लड़कियों से देह व्यापार, घरेलू काम तथा गुलामी इत्यादि के कार्य उनकी इच्छा के विरुद्ध करवाए जाते हैं। महिला तस्करी या अवैध व्यापार का शिकार होना किसी भी त्रासदी से कम नहीं है। इससे मानवता कलंकित होती है और सभ्य समाज को शर्मिन्दा होना पड़ता है। मानव तस्करी मानवता के विरुद्ध ऐसा भयावह कृत्य है, जो मनुष्य के स्वतंत्रता जैसे मूलभूत अधिकार को ही छीन लेता है।

* *सहायक प्राध्यापक, सन्त अलायसियस स्वशासी महाविद्यालय, जबलपुर*
** *सहायक प्राध्यापक, सन्त अलायसियस स्वशासी महाविद्यालय, जबलपुर*

महिलाएँ मानव तस्करी के लिए सबसे अधिक संवेदंशील माने जाने वाले समूहों में से एक है। यौन या व्यावसायिक शोषण के उद्देश्य से दुनिया के लगभग हर देश में महिलाओं और लड़कियों का अपहरण एएं विक्रय किया जाता है जिसके कारण उन्हें लगातार मानसिक और शारीरिक प्रताड़नाओं को झेलना पड़ता है। पीड़ित महिलाएँ अनचाहे गर्भ, यौनजनित संक्रामक बीमारियों से भी जूझती हैं। यह एक ऐसा तथ्य है जिससे मानवाधिकार और सरकारी संगठन भी सहमत है और मानते हैं कि महिलाओं व लड़कियों की तस्करी मानवाधिकारों के उल्लंघन का एक गंभीर मामला है और जिस पर समय रहते प्रभावी कार्रवाई करने की जरूरत है। वैसे तो महिलाओं का अवैध व्यापार एक प्राचीन उद्यम है, जब वेश्या, रखैल या अधिक दासों के प्रजनन के लिए महिला दासों को अक्सर अत्यधिक महत्व दिया जाता था और आज भी महिलाओं की तस्करी के मूल कारणों में वेश्यावृत्ति ही दिखाई देती है। तस्करी के इस घृणित कार्य के दौरान महिलाओं को मानसिक एवं शारीरिक यातनाओं के दौर से गुजरना पड़ता है जो इनके नैसर्गिक विकास में अवरोध का कार्य करती है जिससे महिलाएँ न तो अपना विकास कर पाती हैं और न ही सामाजिक और राष्ट्रीय विकास में अपना यथोचित योगदान दे पाती हैं और यह मानवीय दृष्टिकोण से मानवाधिकार का घोर उल्लंघन है।

महिलाओं और लड़कियों की तस्करी भारत में बड़ा मानवाधिकार संबंधी अपराध है। तस्करी का तंत्र देश भर में लगभग हर राज्य में फैला हुआ है। इन लड़कियों और महिलाओं की आपूर्ति थाईलैंड, केन्या, दक्षिण अफ्रीका, मध्यपूर्व के देशों जैसे बहरीन, दुबई, ओमान, ब्रिटेन, दक्षिण कोरिया और फिलिपींस को की जाती है। जहाँ पर उनके साथ मानसिक एवम् शारीरिक शोषण किया जाता है। इस संदर्भ में राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो, एनसीबी के अनुसार 2020 के आँकड़े बताते हैं कि लगभग 1,714 मानव तस्करी के मामले दर्ज किये गए। रिपोर्ट के अनुसार, महाराष्ट्र और तेलंगाना में मानव तस्करी के सर्वाधिक 184, आन्ध्रप्रदेश में 171, केरल में 166, झारखंड में 140, और राजस्थान में 128 केस दर्ज किए गए। महिला तस्करी गंभीर अपराध होने के बाद भी एनसीआर के आँकड़े यह बताते हैं कि ऐसे मामलों में दोषसिद्धि की दर 10.6 फीसदी है।

महिला तस्करी की शिकार महिलाएँ न तो अपने अधिकारों के प्रति सजग होती हैं और न ही आर्थिक रूप से सक्षम। ऐसी स्थिति में ऐसी असहाय और निर्धन महिलाओं को शोषण से बचाना किसी भी सभ्य समाज और नागरिक सरकार की प्राथमिक जिम्मेदारी होनी चाहिये।

भारत में महिला तस्करी से संबंधित संवैधानिक और विधायी प्रावधान

महिला तस्करी की समस्या के निदान के लिए भारतीय संविधान में महिलाओं के अधिकारों की सुरक्षा और उनकी स्थिति में सुधार के लिये कई प्रावधान किए गए हैं। इसके साथ ही विधायी प्रावधानों की भी व्यवस्था की गई है जिससे नारी सम्मान एवं उनकी गरिमा को बनाए रखा जा सके।

भारतीय संविधान के अनुसार

- अनुच्छेद 15 (3) के तहत राज्य को महिलाओं और बच्चों के लिए विशेष प्रावधान करने का अधिकार है।
- अनुच्छेद 23 (1) मानव तस्करी और जबरन श्रम को प्रतिबंधित करता है। इसके अंतर्गत- मानव तस्करी और भिखारी और इसी तरह के अन्य प्रकार के जबरन श्रमनिषेध है और इस प्रावधान का कोई भी उल्लंघन कानून के अनुसार दंडनीय अपराध है।

- अनुच्छेद 39 राज्यों को निर्देशित करता है कि पुरुषों और महिलाओं को समान रूप से आजीविका के पर्याप्त साधन का अधिकार होगा।
- अनुच्छेद 51 A (e) के अनुसार भारत के प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य होगा कि वह उन प्रथाओं का त्याग करे जो महिलाओं की गरिमा के लिए अपमानजनक है।

भारतीय दंड संहिता (IPC) धारा –

- आपराधिक कानून (संशोधन) अधिनियम 2013 में भारतीय दंड संहिता की धारा 370 को धारा 370 (A) आईपीसी के साथ प्रतिस्थापित किया गया है, जो मानव तस्करी से बचाव के लिये व्यापक उपाय मुहैया कराती है। जिसके तहत शारीरिक शोषण या किसी भी रूप में यौन शोषण, गुलामी, दासता या अंगों को जबरन हटाने सहित किसी भी रूप में शोषण के लिए बच्चों की तस्करी शामिल है।
- धारा 327 और 373 वेश्यावृत्ति के उद्देश्य से लड़कियों को बेचने और खरीदने से संबंधित है।

अन्य विधान

- अनैतिक व्यापार (रोकथाम) अधिनियम, 1956 (ITPA) व्यावसायिक यौन शोषण के लिए तस्करी की रोकथाम के लिए प्रमुख विधान है।
- महिलाओं और बच्चों में तस्करी से संबंधित अन्य विशिष्ट कानून है –
- बाल विवाह निषेध अधिनियम, 2006
- बंधुआ श्रम प्रणाली (उन्मूलन) अधिनियम, 1976
- बालश्रम (निषेध और विनियम) अधिनियम, 1986
- मानव अंग प्रत्यारोपण अधिनियम, 1994
- यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण (POCSO) अधिनियम, 2012 बच्चों को यौन शोषण से बचाने के लिए विशेष कानून।
- राज्य सरकारों ने भी विशिष्ट कानूनों का निर्माण किया -
- पंजाब मानव तस्करी रोकथाम अधिनियम, 2012

भारतीय सरकार द्वारा किये गये उपाय

मध्यवर्तन अवैध व्यापार प्रतिकार प्रकोष्ठ (एटीसी) : मानव तस्करी के अपराध से निपटने के लिए विभिन्न निर्णयों को संप्रेषित करने और राज्य सरकारों द्वारा की गई कार्रवाई के लिए गृह मंत्रालय (सीएस प्रभाग) में अवैध व्यापार प्रतिकार प्रकोष्ठ की स्थापना की गई। गृह मंत्रालय सभी राज्यों/ केंद्र शासित प्रदेशों में नामित मानव तस्करी रोधी इकाइयों के नोडल अधिकारियों के साथ समय-समय पर समन्वय बैठकें आयोजित करता है।

मानव तस्करी रोधी इकाई (AHTU) : गृह मंत्रालय ने एक व्यापक योजना 'स्ट्रेन्थनिंग लॉ एनफोर्समेंट रिस्पांस इन इंडिया अगेंस्ट ट्रैफिकिंग इन पर्संस' 2010 के तहत देश के कई जिलों में मानव तस्करी रोधी इकाई की स्थापना के लिये फंड जारी किया है। इसकी प्राथमिक भूमिका पीड़ितों की देखभाल और पुनर्वास के लिए कानून प्रवर्तन और अन्य संबंधित एजेंसियों के साथ करना है।

एडवाइजरी : मानव तस्करी के अपराध से निपटने और कानून प्रवर्तन तंत्र की जवाबदेही बढ़ाने में प्रभावशीलता में सुधार करने के लिए गृह मंत्रालय ने सभी राज्यों/ केंद्र शासित प्रदेशों को निम्नलिखित एडवाइजरी जारी की है –

- मानव तस्करी के अपराध को रोकने के लिए एडवाइजरी दिनांक 9.9.2009
- बच्चों के विरुद्ध अपराध पर एडवाइजरी दिनांक 14.7.2010
- लापता बच्चों पर 31 जनवरी, 2012 की एडवाइजरी
- बच्चों के विरुद्ध साइबर अपराध को रोकने और उसका प्रतिकार करने पर एडवाइजरी दिनांक 4.1.2012
- संगठित अपराध के रूप में मानव तस्करी पर 30 अप्रैल, 2012 को एडवाइजरी
- भारत में मानव तस्करी को रोकने और उसका मुकाबला करने- विदेशी नागरिकों से व्यवहार एडवाइजरी 1.5.2012
- बाल श्रम के लिए बच्चों की तस्करी की रोकथाम के लिए एसओपी दिनांक 12.08.2013
- मानव तस्करी विरोधी पर गृह मंत्रालय के वेब पोर्टल पर एडवाइजरी दिनांक 23.7.2015

ये एडवाइजरी/एसओपी www.stophumantrafficking-mha.nic.in में मानव तस्करी विरोधी पर गृह मंत्रालय के वेब पोर्टल पर उपलब्ध है।

गृह मंत्रालय की योजना - प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण के माध्यम से व्यक्तियों के अवैध व्यापार के विरुद्ध भारत में कानून प्रवर्तन प्रतिक्रिया को सुदृढ करने के लिए एक व्यापक योजना के अंतर्गत गृह मंत्रालय ने देश के 270 जिलों में मानव तस्करी विरोधी यूनिटों की स्थापना के लिए निधि प्रदान की है।

क्षमता निर्माण सुदृढ करना – कानून प्रवर्तन एजेंसियों के क्षमता निर्माण संवर्धन और उनके बीच जागरूकता पैदा करने के लिए पूरे देश में क्षेत्रीय स्तर, राज्य स्तर और जिला स्तर पर पुलिस अधिकारियों और अभियोजको के लिए मानव के अवैध व्यापार का प्रतिकार, मुकाबला करने के लिए विभिन्न प्रशिक्षण कार्यशालाओं का आयोजन किया।

न्यायिक संगोष्ठी- निचली अदालत के न्यायिक अधिकारियों को प्रशिक्षित करने और उन्हें जागरूक करने के लिए उच्च न्यायालय स्तर पर मानव तस्करी पर न्यायिक गोष्ठी का आयोजन किया जाता है। इसका उद्देश्य न्यायिक अधिकारियों को मानव तस्करी से संबंधित विभिन्न मुद्दों के बारे में जागरूक करना और त्वरित अदालती प्रक्रिया सुनिश्चित करना है। अब तक चंडीगढ़, दिल्ली, हिमाचल प्रदेश, महाराष्ट्र, छत्तीसगढ़, तमिलनाडु, आंध्रप्रदेश, उत्तर प्रदेश, झारखंड और ओडिशा में ग्यारह संगोष्ठियाँ आयोजित की जा चुकी हैं।

महिला एवं बाल विकास मंत्रालय के द्वारा किए गए प्रयास

- महिलाओं और बच्चों के अवैध व्यापार और व्यावसायिक यौन शोषण से निपटने के लिए राष्ट्रीय कार्य योजना 1998, अवैध व्यापार के पीड़ित को मुख्य धारा में लाने और उन्हें फिर से जोड़ने के उद्देश्य से तैयार की गई।
- समस्या के समाधान के तरीकों और युक्तियों पर सलह देने के लिए केंद्रीय सलाहकार समिति (सीएबी) का गठन किया गया।

वैश्विक स्तर पर महिला तस्करी पर अंकुश लगाने की दिशा में भारत द्वारा किए गए प्रयास

संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन – भारत ने (वर्ष 2011 में) अंतरराष्ट्रीय संगठित अपराध पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन (UNCTOC) की पुष्टि की है, जिसमें अन्य लोगों के बीच विशेष रूप से महिलाओं और बच्चों की तस्करी को रोकने और दंडित करने के लिए एक प्रोटोकॉल है।

सार्क सम्मेलन – भारत ने वेश्यावृत्ति के लिए महिलाओं और बच्चों की तस्करी को रोकने और इसका मुकाबला करने हेतु सम्मेलन की पुष्टि की है।

द्विपक्षीय तंत्र – यह तंत्र सीमा पार से होने वाली तस्करी से निपटने और रोकथाम से संबंधित विभिन्न मुद्दों को हल करने के लिए किया गया था। महिलाओं और बच्चों में मानव तस्करी की रोकथाम, बचाव, पुनर्प्राप्ति, प्रत्यावर्तन और तस्करी के पीड़ित के पुन: एकीकरण के लिए भारत और बांग्लादेश के बीच एक समझौता ज्ञापन (MOU) पर जून 2015 में हस्ताक्षर किये गए थे।

उपाय

महिला तस्करी मानवाधिकारों का सर्वाधिक व्यापक उल्लंघन है जिसके द्वारा महिलाओं तथा लड़कियों को सुरक्षा, सम्मान और आत्मउत्कर्ष और बुनियादी आजादी के अधिकारों से वंचित रखा जाता है। इस समस्या के निदान के लिए निम्नलिखित उपायों को कार्यान्वित करने की आवश्यकता है।

1. वेश्यावृत्ति में जबरदस्ती लाई गई महिलाओं को वेश्या के रूप में न देखा जाय। उनकी मानसिक स्थिति का गहनता से अध्ययन किया जाये तथा उन्हें इस धंधे से बाहर निकालने के लिए अन्य सभी संबंधित संस्थाओं का सहयोग लेना चाहिये।
2. पीड़ित महिलाओं व उनसे संबंधित मुकदमों में शामिल किए गए गवाहों की सुरक्षा के लिए पर्याप्त साधन जुटाने चाहिये।
3. एंटी मानव तस्करी यूनिट स्थापित करने चाहिए तथा इनमें विशेष प्रशिक्षण प्राप्त किए हुए तथा उच्च चरित्र वाले अधिकारियों/कर्मचारियों को तैनात करना चाहिये और इन यूनिट्स की मॉनिटरिंग पुलिस अधीक्षक रैंक के अधिकारियों द्वारा की जानी चाहिये।
4. इस धंधे मे संलिप्त एजेंटों(पिम्प्स) पर कडी निगरानी रखनी चाहिये तथा उनके द्वारा अर्जित की गई संपत्ति का संज्ञान लेते रहना चाहिये।
5. पुलिस कर्मचारियों/अधिकारियों का ऐसे संवेदनशील अपराधों के प्रति अपने नजरिये व सोच

में परिवर्तन लाना होगा, जिसके लिए उन्हें निरंतर प्रशिक्षण दिया जाना चाहिये।

6. कानूनी जागरूकता पैदा करना जिससे महिलाओं और बच्चों में शोषण के प्रति जीरो टालरेंस की सोच को विकसित किया जा सके।
7. अवैध व्यापार की रोकथाम के लिए पुलिस और गैर सरकारी संगठनों के बीच एक कार्यशील भागीदारी की आवश्यकता है। कम्यूनिटी पुलिसिंग के माध्यम से भी प्रभावी नियंत्रण रखा जा सकता है।
8. महिला तस्करी को रोकने के लिए इसके अभियोजन एवं संरक्षण के साथ एकीकरण करने की आवश्यकता है।
9. पीड़ितों की रक्षा करने और अपराधियों को न्याय दिलाने हेतु सभी देशों का समर्थन करने के लिए तकनीकी सहायता बढ़ाने और सहयोग को मजबूत करने आवश्यकता है।
10. आंतरिक रूप से प्रशासन में या पुलिस या गैर- सरकारी संगठनों जैसी एजेंसियों के बीच या विभिन्न देशों के बीच भी उचित डेटा साझाकरण सुनिश्चित करने की आवश्यकता है।

महिला तस्करी एक सभ्य समाज के लिए त्रासदी की तरह है, जिसने महिलाओं एवं लड़कियों को मानवाधिकार से वंचित किया है, और इस त्रासदी के समाधान हेतु कानून को और प्रभावी व मजबूत बनाने की अति आवश्यकता है। इस प्रकार की व्यवस्था निर्मित की जानी चाहिये जिसमें पीड़ित को त्वरित न्याय और प्रभावी पुनर्वास की उचित व्यवस्था हो। इस समस्या के उन्मूलन हेतु समाज एवं सरकार के समन्वित प्रयास की जरूरत है। क्योंकि यह समस्त मानव समाज के सामने मूलभूत मानव अधिकारों को स्थापित करने की चुनौती है, जिसे हम सभी को स्वीकार कर, एक निर्णायक पहल करनी होगी।

संदर्भ

- मानव तस्करी और कानून, ह्यूमन राइट्स लॉ नेटवर्क, नई दिल्ली। ISBN : 81-89479-41-5
- मानव तस्करी, https://mea.gov.in/human-trafficking-hi.htm.
- चैतन्य मल्लापुर 2015 महिलाओं एवम बच्चियों की तस्करी कर बढ़ता दर, इंडियास्पेंड
- https://indiaspendhindi.com/
- सुशील शर्मा 2017, भारतीय महिलाएँ और मानवाधिकार, हिंदकुंज https://www.hindikunj.com/2017/12/women-empowerment.html
- अनिल कुमार 2018, महिलाएँ खरीदी और बेची जाती है तो देश बिकता है, चौक
- https://www.ichowk.in/society/after-rapes-human-trafficking-is-another-problem-which-women-in-our-society-are-facing/story/1/10599.html
- राजेंद्र शर्मा 2021, मानव तस्करी रोकने के लिए अभी बहुत प्रयासों की जरूरत, पंजाब केसरी
- https://www.punjabkesari.in/blogs/news/much-effort-is-still-needed-to-stop-human-trafficking-1456964
- https://thewirehindi.com

●●●●

किन्नर कथा : व्यथा ही व्यथा

सर्वेश कुमार*

समाज का ताना-बाना स्त्री और पुरुष से मिलकर बना है किंतु एक तीसरा भी लिंग होता है जिसे ट्रान्सजेण्डर कहते हैं। भारत में आम बोलचाल में ट्रांसजेंडर को हिजड़ा या किन्नर कहा जाता है किंतु ट्रांसजेन्डर या किन्नर में तकनीकी अंतर होता है। किन्नर एक विशिष्ट लैंगिक समूह होने के साथ-साथ एक सामाजिक समूह भी है। सभी ट्रांसजेण्डर किन्नर नहीं होते हैं अपितु एक खास तरह की जीवन पद्धति को अपनाने वाले ट्रांसजेण्डर किन्नर कहलाते हैं। ट्रांसजेण्डर शब्द का प्रयोग अधिकांशतया पश्चिमी देशों में होता है। भारत के अलग-अलग हिस्सों में इस तरह की लैंगिक पहचान वाले लोगों के लिए किन्नर, हिजड़ा, अरावनि, कोथी, मंगलामुखी, शिव-शक्ति, जोगती, छक्का आदि संज्ञाओं का प्रयोग होता है क्योंकि भारत में ट्रान्सजेण्डर समूह की अधिकांश आबादी किन्नर समुदाय की संस्कृति से जुड़ी होती है। किन्नर संस्कृत भाषा का शब्द है। किम्+नर अर्थात् जो कुछ-कुछ नर जैसा है। वहीं हिजड़ा उर्दू भाषा का शब्द है। यह अरबी शब्द हिज्र से बना है, जिसका मतलब है-कबीले से पृथक रहना। किन्नर समाज की अपनी खास संस्कृति होती है। बधियाकरण की पीड़ादायी एवं अनिवार्य प्रक्रिया से गुजरना होता है। यहाँ गुरु-शिष्य परंपरा का पालन बड़ी प्रबलता से होता है। किन्नरों के लिए गुरु ही सब कुछ होता है और गुरु की वाणी ब्रह्मवाणी होती है। किन्नर समाज के अपने घराने भी हैं जिनमें बादशाहवाला घराना और वजीरवाला घराना प्रसिद्ध है।

इतिहासविद भले ही मानव इतिहास के किसी कालखण्ड को स्वर्णकाल की संज्ञा दें किंतु किन्नर समाज के लिए हर दौर अंधकार से भरा रहा है। आदिकाल से किन्नर समाज उत्पीड़न और सामाजिक अपवंचना का सामना कर रहा है। किसी दौर में यह उत्पीड़न कम रहा तो कभी ज्यादा रहा। रामायणकाल में किन्नरों को भगवान राम का स्नेह और आशीर्वाद मिला। महाभारतकाल में किन्नर बृहन्नला और शिखण्डी के रूप में युद्धभूमि में आया। प्राचीन भारत में वैदिक काल में तृतीय लिंग के लोग समाज का ही हिस्सा थे और समाज के साथ ही इनकी बसावट भी थी। इस काल में किन्नर समाज के हुनर की पहचान थी। किन्नर नृत्य, गायन, अभिनय, मालिश, केश सज्जा और पुष्प विक्रय के काम में पारंगत थे और समाज में इनके काम की कद्र थी। वैदिक काल में मांगलिक अवसरों पर किन्नरों की उपस्थिति को शुभ माना गया और गृहस्थी द्वारा बधाई के रूप में इनको मुद्रा, वस्तु, आभूषण आदि दिए जाते थे। 'कामसूत्र' में भी महर्षि वात्स्यायन लिखते हैं कि किन्नरों का कार्य मालिश और केश सज्जा करना था।

* *सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान, बी.एन.डी.राजकीय कला महाविद्यालय, चिमनपुरा (शाहपुरा), जयपुर*

मुगलकाल में किन्नर अपनी विशिष्ट लैंगिक पहचान के चलते राजपरिवार के करीब आये। इस काल मे किन्नरों को हरम की रक्षा की जिम्मेदारी दी गई। रनिवास में हरम की रक्षा करने वाले किन्नरों को 'ख्वाजासरा' की उपाधि से नवाजा गया। ख्वाजासरा बादशाह और रानी के बड़े विश्वासपात्र होते थे। विश्वास पात्र होने की वजह से किन्नर समुदाय की शासन और प्रशासन में पहुँच भी बढ़ी। इस काल में मक्का और मदीना जैसे पवित्र स्थलों की सुरक्षा में किन्नरों को भी शामिल किया गया। अतः मुगलकाल में किन्नरों की प्राचीनकाल से चली आ रही भूमिका में बदलावा आया। भारत में औपनिवेशिक काल किन्नरों के लिए बड़ा अपमान और दर्द ले कर आया। इसी काल में भारतीय दण्ड संहिता-1860 के अन्तर्गत धारा-377 का प्रावधान किया गया। यह धारा हैट्रोसेक्शुअल संबंध के अलावा स्थापित यौन संबंधों को अप्राकृतिक और दण्डनीय अपराध करार देती है। इस धारा का दुरुपयोग किन्नरों के साथ-साथ संपूर्ण एलजीबीटीक्यू समुदाय को प्रताड़ित करने के लिए हुआ। पुलिस द्वारा अप्राकृतिक सेक्स के झूठे मुकदमें औपनिवेशिक काल में भी दर्ज किए और आज भी हो रहे हैं। यद्यपि 6 सितंबर 2018 को सर्वोच्च न्यायालय ने अपने ऐतिहासिक निर्णय में भारतीय दण्ड संहिता-1860 की धारा-377 के कुछ उपबंधों को निरस्त करार कर ट्रांसजेण्डर सहित संपूर्ण एलजीबीटीक्यू समुदाय को राहत दी है।

औपनिवेशिक काल में ब्रिटिश सरकार द्वारा लाया गया क्रिमिनल ट्राइब्स एक्ट-1871 किन्नरों के लिए सबसे ज्यादा प्रताड़ित करने वाला कदम था। इस एक्ट को जरायम पेशा कानून भी कहा जाता है। दरअसल जरायम पेशा कानून उन जनजातियों पर अंकुश रखने के लिए लाया गया था जो ब्रिटिशराज की नजर में आपराधिक प्रवृति की थी। ब्रिटिश सरकार ने 500 से अधिक तथाकथित अपराधी जनजातियों को चिह्नित कर इस कानून के अन्तर्गत रखा। सरकार ने किन्नरों को भी इस कानून में अपराधी जनजाति के रूप में दर्ज किया। जिन जनजातियों को इस कानून में शामिल किया गया है उन पर चोरी, डकैती और मानव तस्करी के आरोप थे। किन्नरों पर लड़ाई-झगड़ा और बच्चा चोरी के आरोप थे। इस क़ानून के प्रावधानों के अनुसार इसमें वर्णित जनजातियों के 12 वर्ष से अधिक आयु के समस्त पुरूषों को प्रतिदिन थाने में हाज़िरी देनी होती थी। तथा किसी व्यक्ति को एक ज़िले से दूसरे ज़िले में जाने से पूर्व प्रशासन से अनुमति लेनी होती थी। घर में जन्मे नवजात शिशु की सूचना तुरंत प्रशासन को दी जानी होती थी। इस तरह यह कानून मानवीय गरिमा का हनन करने वाला था। आजादी के बाद नेहरू सरकार ने औपनिवेशिक काल से चले आ रहे जरायम पेशा कानून को रद्द किया। किंतु किन्नर समाज आज भी इस कलंक से मुक्त नहीं हो पाया है। आज भी कहीं बच्चा चोरी होता है तो पुलिस किन्नर अखाड़ों पर निगरानी बढा देती है।

आधुनिक समय वैश्वीकरण और बाजारवाद का है। भारत में उदारीकरण की प्रक्रिया 1990 के बाद से बहुत तेजी से आगे बढी। इस घटना ने लैंगिक न्याय के सवाल को भी विस्तार दिया। वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने दुनिया भर में न केवल ट्रांसजेण्डर समुदाय अपितु संपूर्ण एलजीबीटीक्यू समुदाय को एकजुट होने और हक की लड़ाई हेतु प्रेरित किया। यही वजह है कि भारत में राजव्यवस्था ने 1990 के बाद न केवल ट्रांसजेण्डर अपितु पूरे यौन अल्पसंख्यक समुदाय के सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सशक्तिकरण लिए कदम उठाए। इन सब के बावजूद बाजारवाद का दौर किन्नरों के लिए मुश्किलें भी ले कर आया है। अब आमजन में किन्नरों से मिलने वाले आशीर्वाद पर भरोसा घट रहा है, ऐसे में मांगलिक अवसरों पर मिलने वाली बधाई की प्रथा लुप्त हो रही है। बधाई प्रथा कम होने से किन्नर समाज के लिए रोजी-रोटी का संकट आया है। इसीलिए किन्नर समाज में बहुत से व्यक्ति भिक्षावृति और देह व्यापार में उतर आये हैं। अतः किन्नर समाज का अतीत और वर्तमान तकलीफ भरा रहा है हमारे समक्ष चुनौती है इनके बेहतर भविष्य के निर्माण की, जहां मानवीय गरिमा मिले।

मानवाधिकार का हनन-

विशिष्ट लैंगिक पहचान के चलते किन्नर समुदाय को लैंगिक भेदभाव का सामना करना पड़ रहा है और समाज में इनका समावेशीकरण नहीं हो पा रहा है। सामाजिक अलगाव और बहिष्कार की स्थिति में किन्नर समुदाय के लोगों को निम्नलिखित अधिकारों से वंचित होना पड़ रहा है:-

- रोटी-रोजी का संकट- आज बहुत कम लोग हैं जो किन्नर समाज के लोगों को अपने यहाँ रोजगार देना पसंद करते हैं। हर कोई इनसे दूरी बनाये रखना चाहता है। सुप्रीम कोर्ट ने ट्रांसजेण्डर समुदाय को अन्य पिछड़ा वर्ग में शामिल करने का निर्णय तो दिया है किंतु औपचारिक शिक्षा के अभाव में यह समुदाय पिछड़ा वर्ग को मिलने वाली सुविधाओं का लाभ नहीं उठा पाता है। ऐसे में रोजगार के अभाव में किन्नरों के लिए बुनियादी जरूरतें पूरी करना ही एक चुनौती है। मांगलिक अवसरों पर मिलने वाली बधाई और भीख से इनका जीवन चलता है।

- यौन हिंसा का खतरा- किन्नर समुदाय के लोगों के साथ मारपीट और यौन हिंसा की खबरें मीडिया में आती रहती हैं। समाज में मनचले लोग किन्नरों पर भद्दी टिप्पणियाँ करते हैं और उनका यौन उत्पीड़न करते हैं। भीषण गरीबी के चलते किन्नर समुदाय के कुछ लोग वेश्यावृति में भी उतर आये हैं। ऐसे लोगों के साथ यौन-हिंसा और मारपीट की घटनाएं अक्सर होती रहती हैं। मांगलिक अवसर पर जबरन बधाई मांगने की स्थिति में भी किन्नर समुदाय और मेजबान में झगड़ा हो जाता है। ऐसे में एक किन्नर का जीवन हिंसक परिस्थितियों में गुजरता है।

- स्वास्थ्य के अधिकार का हनन- ट्रांसजेण्डर व्यक्तियों के लिए पृथक से कोई चिकित्सालय नहीं हैं और सामान्य चिकित्सालयों में ट्रान्सजेण्डर व्यक्तियों के साथ सामान्यतया भेदभाव होता है। चिकित्सक एवं नर्सिंग स्टाफ इनसे दूरी बनाने की कोशिश करते हैं। गरीबी के चलते ट्रांसजेण्डर निजी अस्पतालों से महंगा उपचार नहीं ले सकते। ऐसे में किन्नर झोला छाप नीम हकीमों से उपचार लेते हैं जिसकी भारी कीमत जीवन में कई दफा चुकाते हैं। किन्नर समाज में बधियाकरण की प्रथा के कारण भी बहुत से लोगों को जान गंवानी पड़ती है। इस प्रथा में अण्डकोश और स्तनों को बहुत दर्दनाक पद्धति से हटाया जाता है। दूसरी ओर वेश्यावृति में शामिल होने के कारण यह समाज एड्स की चपेट में आ रहा है। यही वजह है कि किन्नरों को रक्तदान का हक नहीं है। इस तरह आज इक्कीसवीं सदी में भी एक मानवीय समूह अपनी विशिष्ट लैंगिकता के कारण स्वास्थ्य के बुनियादी अधिकार से वंचित है।

- राजनीतिक सहभागिता नगण्य- 1994 से पूर्व तो ट्रांसजेण्डर समुदाय को वोट ड़ालने और चुनाव लड़ने का हक ही नहीं था। यही वजह है कि सरकारों ने ट्रांसजेण्डर समुदाय के लिए काम पिछले तीन दशक से किए हैं। किंतु ट्रांसजेण्डर समुदाय की राजनीति और सार्वजनिक जीवन में सहभागिता लगभग नगण्य है। ना तो यह समुदाय मतदान में दिलचस्पी दिखा रहा है और ना ही इस समुदाय से जनप्रतिनिधि निकले रहे। 2019 के लोकसभा चुनाव के समय देशभर में करीब पांच लाख ट्रांसजेण्डर व्यक्तियों में से केवल 28 हजार के करीब ट्रांसजेण्डर मतदाता सूची में पंजीकृत थे। इनमें से भी करीब 5 प्रतिशत ने ही मतदान किया।

- शिक्षा के अधिकार से वंचित- किन्नर समुदाय के व्यक्ति अखाड़ों में ही अपने गुरु से शिक्षा अर्जित करते हैं किंतु यह शिक्षा किन्नर समाज की विशिष्ट संस्कृति ज्ञान तक सीमित होती है।

आधुनिक शिक्षा से किन्नर समाज आज भी बहुत दूर है। यही वजह है कि यह समाज शिक्षा, रोजगार व अन्य क्षेत्रों में राज्य द्वारा मिलने वाली सुविधाओं का लाभ नहीं उठा पाता है। ट्रांसजेण्डर समुदाय को शिक्षा प्राप्ति का कानूनन हक तो दिया गया है किंतु अभी तक ऐसी कोई व्यवस्था निर्मित नहीं हो सकी है जिसमें किन्नर लोगों को अखाड़ों से स्कूल तक लाया जा सके और उनका ठहराव सुनिश्चित किया जा सके। जब तक शिक्षण संस्थानों में मानवीय एवं भौतिक संसाधनों का निर्माण लैंगिक न्याय के अनुरूप नहीं किया जायेगा तब तक न केवल ट्रांसजेण्डर अपितु संपूर्ण एलजीबीटीक्यू समूह के लिए आधुनिक और औपचारिक शिक्षा सुलभ कराना संभव नहीं होगा।

- विवाह के हक में बाधा- एक रात के लिए शादी करना और फिर अलग हो जाने की वैवाहिक प्रथा तो किन्नरों में सदियों से चलती रही है किंतु आधुनिक समय में ट्रांसजेण्डर समुदाय में कुछ लोग दांपत्य जीवन में बंधने की कानूनी लड़ाई लड़ रहे हैं। हिन्दू विवाह अधिनियम में ट्रांसजेण्डर शादी को लेकर कोई स्पष्ट व्याख्या नहीं है। यही वजह है कि ट्रांसजेण्डर दंपती को विवाह पंजीकरण में बाधा आ रही है और न्यायपालिका को दखल देना पड़ रहा है।

सरकार और न्यायालय द्वारा किए गए प्रयास-

केन्द्र सरकार, प्रान्तीय सरकारें और न्यायालय ट्रांसजेण्डर समुदाय को समाज की मुख्यधारा में जोड़ने के लिए निरंतर कार्य कर रहे हैं। किन्नर समुदाय के लिए उठाये गए कुछ महत्त्वपूर्ण कदमों का विवरण निम्नवत है:-

- आजादी के बाद नेहरू सरकार ने किन्नरों को औपनिवेशिक काल के जरायम पेशे अधिनियम-1871 से मुक्त किया। इस कानून उन जनजातियों को शामिल किया गया था जिन पर चोरी, डकैती, मानव तस्करी, बच्चा चोरी आदि घटनाओं का आदतन अपराधी समझा गया।
- 1994 में किन्नर समुदाय के लोगों को पहली बार मतदान और चुनाव लड़ने का अधिकार मिला। इस फैसले ने किन्नर समाज को राजनीतिक ताकत दी। इसी का परिणाम था कि राजनीतिक दलों के विमर्श में किन्नर समाज की चिंताएं आने लगी और शबनम मौसी पहली किन्नर विधायक बनी।
- 2011 में जनगणना आयोग ने किन्नर व अन्य लैंगिक समूह के व्यक्तियों के लिए एक अन्य का कॉलम निर्मित किया गया। इससे पूर्व किन्नरों को पुरुष के रूप में गिना जाता था।
- 2014 में सर्वोच्च न्यायालय ने 'भारतीय विधिक सेवा प्राधिकरण बनाम भारत संघ वाद(नालसा केस) में ट्रान्सजेण्डर समूह के लिए दो महत्त्वपूर्ण निर्णय दिए, पहला ट्रान्सजेण्डर को तृतीय लिंग या थर्ड जेण्डर के रूप में पहचान मिलेगी, दूसरा ट्रान्सजेण्डर व्यक्तियों को वे सभी सुविधाएं मिलेंगी जो समाज के अन्य पिछड़ा वर्ग के व्यक्तियों को मिल रही हैं।
- ट्रांसजेण्डर पर्सन (प्रोटेक्शन ऑफ राइट) अधिनियम-2019 ट्रांसजेण्डर समुदाय के अधिकारों के संरक्षण की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम है। इस अधिनियम में ट्रांसजेण्डर व्यक्तियों के लिए राइट टू हैल्थ, राइट टू ऐजुकेशन, राइट टू रेजिडेंस, भावात्मक सुरक्षा, रोजगार का अधिकार आदि का संस्थागत प्रबंध किया गया है। अधिनियम में ट्रांसजेण्डर व्यक्तियों की समस्या व

सुझाव के लिए नेशनल काउंसिल फॉर ट्रांसजेण्डर पर्सन का निर्माण किया गया है। यह परिषद भारत सरकार के सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय के अधीन कार्य कर रही है।

- 2015 में प.बंगाल सरकार ने समाज कल्याण विभाग के अन्तर्गत ट्रांसजेण्डर डेवलपमेंट बोर्ड का गठन किया। इस बोर्ड का उद्देश्य ट्रांसजेण्डर समुदाय के मुद्दों से राज्य सरकार को अवगत कराना और तमाम विकास योजनाओं के लाभों को ट्रांसजेण्डर समुदाय तक विस्तृत करना है। इस बोर्ड की उपाध्यक्ष डॉ.मनोबी बंदोपाध्याय हैं जो प.बंगाल सरकार में उच्च शिक्षा विभाग में एसोसिएट प्रोफेसर भी हैं। डॉ.मनोबी इस पद पर पहुंचने वाली पहली ट्रांसजेण्डर हैं।
- वर्ष 2016 में ओडिसा सरकार ने ट्रान्सजेण्डर समूह के लागों को उन तमाम सुविधाओं से जोड़ा है जो गरीब रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले लोगों को मिल रही हैं।
- अक्टूबर 2017 में कर्नाटक सरकार ने ट्रांसजेण्डर नीति की घोषणा की। इस नीति में ट्रांसजेण्डर समूह के विरुद्ध दुर्व्यवहार को रोकने के साथ-साथ एक ऐसे तंत्र विकसित करने पर बल दिया गया जिसके जरिए शिकायतों की सुनवाई और तीव्र निवारण हो सके।
- ट्रांसजेण्डर समुदाय की सामाजिक सुरक्षा की दिशा में एक बड़ा कदम आंध्रप्रदेश सरकार ने वर्ष 2017 में उठाया। सरकार ने निर्णय लिया कि 18 वर्ष से ऊपर के प्रत्येक ट्रांसजेण्डर को ₹1500 प्रतिमाह दिया जायेगा। वर्ष 2018 में इसी तरह का निर्णय तत्कालीन जम्मू और कश्मीर सरकार ने लिया जब 60 वर्ष से अधिक उम्र के लोगों को मुफ्त जीवन व चिकित्सा बीमा और मासिक पेंशन का प्रावधान किया।
- तमिलनाडु भारत के उन राज्यों में से हैं जहाँ सबसे पहले ट्रांसजेण्डर कल्याण नीति जारी हुई। यहां ट्रांसजेण्डरों को मुफ्त आवास, स्वरोजगार प्रशिक्षण, छात्रवृति, शिक्षण संस्थानों में प्रवेश, सार्वजनिक स्थलों पर शौचालय व स्नानागार निर्माण, मुफ्त चिकित्सा आदि का प्रबंध किया गया है।
- केरल सरकार ने ट्रान्सजेण्डरों की चिकित्सा सुविधा के लिए पृथक से विशेष चिकित्सा क्लिनिक खोले हैं। कोच्चि मैट्रो में हाल ही में 23 ट्रान्सजेण्डरों को नियुक्ति दी गई है।
- फरवरी 2022 में केन्द्रीय सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय ने 'स्माइल' योजना का आरंभ किया है। यह अम्ब्रेला योजना ट्रांसजेण्डर समुदाय और भीख मांगने के काम में संलग्न लोगों को कल्याणकारी उपाय प्रदान करने के मकसद से बनाई गई है। इसके अन्तर्गत दो उप-योजनाएं शामिल हैं -'ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के कल्याण के लिए व्यापक पुनर्वास के लिए केंद्रीय क्षेत्र की योजना' और 'भीख मांगने के कार्य में संलग्न व्यक्तियों के व्यापक पुनर्वास के लिए केंद्रीय क्षेत्र की योजना'।

सरकार और न्यायालय ने पिछले दो दशक से किन्नर समुदाय की चिंताओं को गंभीरता से लिया है। इसका असर भी दिखने लगा है। समाज के विभिन्न क्षेत्रों में ट्रांसजेण्डर समुदाय के लोग अपनी उपस्थिति भी दर्ज करा रहे हैं, चाहे सीमित स्तर पर ही सही। शबनम मौसी, डॉ.मनोबी बंदोपाध्याय, पृथिका यसिनी, गंगा देवी, लक्ष्मी, जोयिता मण्डल आदि वे नाम हैं जिन्होंने लैंगिक रूप से उपेक्षित समूह में जन्म लेने के बावजूद भी समाज में अपने काम से पहचान बनाई है। लोक कल्याणकारी राज्य द्वारा किन्नर समुदाय को दी जा रही सुविधाओं का अपना महत्त्व तो है ही किंतु किन्नर समुदाय की सबसे बड़ी चिंता समाज में अपनी पहचान

बनाने की है। एक किन्नर चाहता है कि समाज में उसके साथ मानवीय व्यवहार हो। अतः किन्नर समुदाय को समाज की मुख्यधारा में जोड़ने के लिए समाज में लैंगिक संवेदनशीलता विकसित करना बहुत अहम है। विद्यालयों में यौन शिक्षा के प्रभावी क्रियान्वयन से हम लैंगिक संवेदनशीलता ला सकते हैं। साथ ही लैंगिक संवेदना के विकास के लिए परिवार, पड़ोस, गैर-सरकारी संगठन, मीडिया, साहित्य, सिनेमा और संत समाज को बड़ी भूमिका निभानी होगी।

संदर्भ-

1. राजेश तलवार, 'थर्ड सेक्स एण्ड ह्यूमन राइट्स' ज्ञान पब्लिशिंग हाऊस नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-1999, पृ.सं.182.
2. आकांक्षा का लेख, 'थर्ड जेण्डर की अस्मिता और मानवाधिकार के सवाल' मानवाधिकार:नई दिशाएं, वार्षिक पत्रिका, राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग नई दिल्ली, अंक-15, वर्ष-2018, पृ.सं.-75.
3. सर्वोच्च न्यायालय का 'नालसा जजमैण्ट-2014
4. ट्रांसजेण्डर पर्सन(प्रोटेक्शन ऑफ राइट) अधिनियम-2019
5. ट्रांसजेंडर समुदाय और भिखारियों के लिए 'स्माइल' योजना शुरू, जनसत्ता अखबार, 14 फरवरी 2022.

●●●●

लोकतंत्र चुनाव में मतदाता को उम्मीदवार के संबंध में जानने का अधिकार

प्रीति सक्सेना*

प्रस्तावना:

लोकतंत्र में न सिर्फ मतदाता परंतु उसके मानव अधिकारों का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। किसी भी लोकतंत्र की चुनावी प्रक्रिया में मतदाता का बहुत बड़ी भूमिका होती है। ऐसे में वह मतदाता अपने मानव अधिकारों के बारे में क्या जानकारी रखता है एवं किस प्रकार से अपने मत का प्रयोग करता है जिससे एक सुदृढ़ सरकार का निर्माण हो सके, मतदाता को अपने अधिकारों की जानकारी होना आवश्यक है। सरकार के कार्य सुशासन को बढ़ावा दें एवं सरकार द्वारा अच्छी तरह से शासित होना एक नागरिक का अधिकार है। समाज कल्याण एवं सामाजिक हित की भावना का विकास हो उसके लिए आवश्यक है मतदाता चुनाव में अपने मत का भली-भांति प्रयोग करें जो कि उसका मानव अधिकार भी है।

मतदाता एवं उसके जानने का मानव अधिकार लोकतंत्र के उज्जवल भविष्य में सहायक है। मतदाता का लोकतंत्र में क्या महत्व है इसके लिए सर्वप्रथम अब्राहम लिंकन की लोकतंत्र पर दी गई परिभाषा बहुत महत्वपूर्ण हो जाती है जिसमें वह कहते हैं कि लोकतंत्र का मतलब है जनता के द्वारा चुनी हुई, जनता के लिए, एवं जनता की सरकार जहां प्रत्येक मतदाता को यह अधिकार है कि वह अपने लिए एक सरकार का चयन करें और उस सरकार में जनता से ही वह लोग उसका प्रतिनिधित्व करें जिनको वह चुनकर सरकार में भेजें। ऐसे लोकतंत्र में जहां मतदाता की भूमिका अपने लिए सरकार को चुनने में महत्वपूर्ण है साथ ही साथ बहुत बड़ी जवाबदेही मतदाता पर भी है कि वह किस प्रतिनिधि को चुनकर सरकार बनाने के लिए भेज रहा है, अर्थात अपने मत का प्रयोग कैसे कर रहा है। इस संदर्भ में जब की पूरा दायित्व मतदाता पर है कि वह ऐसे प्रतिनिधि चुने जिससे एक अच्छी सरकार का निर्माण हो सके, एवं लोकतंत्र में रहने वाले हर व्यक्ति को सामाजिक सुख सुविधाएं प्राप्त हो, सभी का सामाजिक कल्याण हो, व्यक्ति के सामाजिक आर्थिक एवं राजनीतिक विकास के लिए कार्य हो, ऐसे में यह आवश्यक है कि मतदाता जिसको अपना मत दे रहा है उस प्रतिनिधि के संबंध में अवश्य ही कुछ सूचनाओं को प्राप्त करें।

* *निर्देशिका, परास्नातक विधि अध्ययन केंद्र, बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर विश्वविद्यालय लखनऊ-25*

मानवाधिकार और लोकतंत्र:

मानवाधिकार और लोकतंत्र का मौजूदा दौर में कोई विकल्प नहीं है। मानवाधिकार अर्थात 'मानव' और 'अधिकार'। इन दोनों शब्दों का निश्चित रूप से अर्थ है मानवीय अस्तित्व के लिए वह अधिकार जिनका उपयोग एवं संरक्षण सरकार सुनिश्चित करा सके। अतः सरकार एवं मानवीय अस्तित्व का महत्वपूर्ण संबंध है। मानव अधिकार मानवीय अस्तित्व के लिए वह बुनियादी अधिकार हैं, जिन के अभाव में एक मानव, मानव की तरह अपना जीवन यापन नहीं कर सकता है। मानवाधिकारों में शिक्षा, स्वास्थ्य, मकान, पर्यावरण, अल्पसंख्यक, स्त्री, बालक, मीडिया, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक एवं राजनीतिक स्वतंत्रता, राष्ट्रीय संप्रभुता की रक्षा, इत्यादि आते हैं। मानवाधिकार मनुष्य के अस्तित्व से जुड़ी वह घोषणाएं हैं जिनका मनुष्य के अस्तित्व एवं उसकी रक्षा के जितने भी उपाय और तंत्र हैं उनके साथ गहरा संबंध है। सरकार और मानवीय अस्तित्व का धर्मनिरपेक्षीकरण मानवाधिकार की सर्वोच्च अभिव्यक्ति है। मतदाता के जानने के अधिकार से संबंधित हमारे संविधान में स्पष्ट रूप से कोई प्रावधान नहीं होते हुए भी सर्वोच्च न्यायपालिका ने अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अंतर्गत मतदाता के जानने के अधिकार का निर्वचन किया है एवं मतदाताओं को लोकतंत्र को जीवित रखने के लिए एक अधिकार प्रदान किया है जो मानवीय अस्तित्व को बचाए रखने एवं बुनियादी संरचनाओं के निर्माण में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता से भी ज्यादा महत्वपूर्ण है।

लोकतंत्र एक ऐसा वातावरण प्रदान करता है जो मानव अधिकारों और मौलिक स्वतंत्रता का सम्मान करता है, और जिसमें लोगों की स्वतंत्र रूप से व्यक्त की गई इच्छा का प्रयोग किया जाता है। महिलाओं एवं पुरुषों को समान अधिकार हैं और सभी लोग भेदभाव से मुक्त हैं। यह मूल्य मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा में सन्निहित हैं। यह "लोगों की इच्छा सरकार के अधिकार का आधार होगी" कहकर लोकतंत्र की अवधारणा को प्रस्तुत करता है। नागरिक और राजनीतिक अधिकारों पर अंतरराष्ट्रीय वाचा उन्हें और भी आगे विकसित करती है और अंतरराष्ट्रीय विधि में लोकतंत्र के सिद्धांतों के लिए विधिक आधार निर्धारित करती है। उदाहरण के लिए इसमें अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार शामिल है। वैश्विक स्तर पर संयुक्त राष्ट्र द्वारा लोकतंत्र एवं मतदाताओं के मानव अधिकारों से संबंधित विभिन्न प्रस्ताव, प्रपत्र एवं घोषणाएं इत्यादि हैं, जो भारत जैसे विशाल लोकतंत्र के लिए अति आवश्यक है।

संयुक्त राष्ट्र में लोकतंत्र एवं मानव अधिकार से संबंधित प्रस्ताव एवं घोषणाएं :

लोकतंत्र संयुक्त राष्ट्र का एक प्रमुख मूल्य है। संयुक्त राष्ट्र मानव अधिकार विकास और शांति एवं सुरक्षा को बढ़ावा देकर लोकतंत्र का समर्थन करता है। जब संयुक्त राष्ट्र के संस्थापकों ने संयुक्त राष्ट्र चार्टर का मसौदा तैयार किया तो उन्होंने लोकतंत्र शब्द का उल्लेख नहीं किया। 1945 में संयुक्त राष्ट्र के कई सदस्य राज्यों ने एक प्रणाली के रूप में लोकतंत्र का समर्थन नहीं किया, किंतु संयुक्त राष्ट्र महासभा के इक्यावनवें सत्र में अपनी रिपोर्ट में, महासचिव ने कहा कि "लोकतंत्र' शब्द चार्टर में नहीं आता है फिर भी चार्टर के शुरुआती शब्द 'वी द पीपल' लोकतंत्र के मूल सिद्धांत को दर्शाते हैं कि लोगों की इच्छा संप्रभु राज्यों एवं समग्र रूप से संयुक्त राष्ट्र की वैधता का भी स्रोत है। संयुक्त राष्ट्र मूल्यों और सिद्धांतों के एक समूह के रूप में लोकतांत्रिक शासन को बढ़ावा देता है, जिसका पालन अधिक भागीदारी, समानता, सुरक्षा और मानव विकास के लिए किया जाना चाहिए।

1948 में संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा अपनाई गई मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा के अनुसार

"लोगों की इच्छा सरकार के अधिकार का आधार होगी"। सभी को प्रभावी राजनीतिक भागीदारी के लिए आवश्यक अधिकारों की गारंटी देना होगा। नागरिक और राजनीतिक अधिकारों पर अंतरराष्ट्रीय वाचा, 1966 ने सार्वजनिक मामलों के संचालन का गठन करने वाली प्रक्रियाओं में भाग लेने के लिए व्यक्तियों के अधिकार पर बाध्यकारी कानूनी स्थिति प्रदान की, और सहभागी अधिकारों और स्वतंत्रता के लिए दी गई सुरक्षा को और मजबूत किया। मानव अधिकारों पर 1993 के विश्व सम्मेलन ने निष्कर्ष निकाला कि लोकतंत्र, विकास और मानवाधिकारों का सम्मान अन्योन्याश्रित और पारस्परिक रूप से मजबूत है, और लोकतंत्र, विकास और मानवाधिकारों को बढ़ावा देने के लिए राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय कार्यों को प्राथमिकता दी जाए।

1988 में, संयुक्त राष्ट्र महासभा ने पहली बार "समय-समय पर और वास्तविक चुनावों के सिद्धांत की प्रभावशीलता को बढ़ाने" पर एक प्रस्ताव अपनाया और मानवाधिकार आयोग को सिद्धांत की प्रभावशीलता को बढ़ाने के उचित तरीकों और साधनों पर विचार करने के लिए कहा। मानव अधिकार आयोग प्रस्ताव 2000/47 लोकतंत्र को बढ़ावा देने एवं मजबूत करने हेतु किया गया है। मानव अधिकार परिषद प्रस्ताव 19/36 इस बात की पुष्टि करता है कि लोकतंत्र सभी मानवाधिकारों के संवर्धन और संरक्षण के लिए महत्वपूर्ण है। यह लोकतांत्रिक विकास को सतत मानव विकास और विकास के अधिकार सहित सभी मानवाधिकारों की प्राप्ति के व्यापक संदर्भ में देखता है। 1994 में नए या पुनर्स्थापित लोकतंत्रों के दूसरे अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन के बाद दिसंबर 1994 में अपनाए गए महासभा के संकल्प 49/30 को औपचारिक रूप दिया गया। चौथे अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन ने कोटोनो घोषणा के कार्यान्वयन का समर्थन करने के लिए एक निगरानी तंत्र की स्थापना की सिफारिश की एवं 2001 के सत्र में, महासभा ने संकल्प 56/96 को अपनाया, जो औपचारिक रूप से महासचिव से अनुरोध करता है कि वे संयुक्त राष्ट्र प्रणाली द्वारा लोकतंत्र को मजबूत करने के प्रयासों के लिए संयुक्त राष्ट्र प्रणाली द्वारा प्रदान किए गए समर्थन को मजबूत करने के विकल्पों की जांच करें।

इन समानांतर विकासों को ध्यान में रखते हुए, आयोग ने "लोकतंत्र को बढ़ावा देने और मजबूत करने के उपायों पर निरंतर बातचीत" पर संकल्प 2001/41 अपनाया। यह संयुक्त राष्ट्र प्रणाली में सूचना-साझाकरण और बेहतर समन्वय का आह्वान करता है ताकि लोकतंत्र को बढ़ावा मिले।

मतदाता के मानव अधिकार को सुरक्षित रखने में भारतीय न्यायपालिका की भूमिका:

भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है। जहां हर पांचवें वर्ष लोकसभा एवं विधानसभा हेतु चुनाव होते हैं। भारत में एक व्यक्ति-एक मत की व्यवस्था है। 18 वर्ष एवं उससे ऊपर की आयु के सभी नागरिकों को मत देने का अधिकार है, किंतु कर्तव्य नहीं है क्योंकि भारत में किसी मतदाता को मत देने के लिए अन्य देशों की भांति जुर्माना अथवा दंड देने का कोई कानूनी प्रावधान नहीं है। जैसा हम जानते हैं कि लोकतंत्र में चुनाव वहां की जनता की इच्छा को प्रतिबिंबित करते हैं परंतु भारत में वर्तमान चुनावी व्यवस्था के अंतर्गत अधिकांश लोगों को लगता है कि बहुदलीय व्यवस्था के तहत सरकार में इतने सारे और इतने विविधता वाले मतदाता हैं कि मतदाता की इच्छा सरकार बनने में प्रतिबिंबित नहीं हो रही है। आज समाज में इतनी गरीबी, अशिक्षा, स्वास्थ्य देखभाल की कमी, बड़े पैमाने पर भ्रष्टाचार, बढ़ती हिंसा और अपराधीकरण की उपस्थिति शासन की विफलता का संकेत है। देश के कई हिस्सों में चुनाव कई आपराधिक गतिविधियों से जुड़े हुए हैं। मतदाताओं को किसी विशेष उम्मीदवार को वोट देने की धमकी दी जाती है। उन्हें शारीरिक रूप से मतदान केंद्र पर जाने से रोका जाता है- खासकर समाज के कमजोर वर्ग के मतदाता को। देश के कुछ

हिस्सों में चुनाव, हिंसा और हत्याओं के बिना पूरे नहीं होते हैं। मतदान के दौरान बाहुबल का इस्तेमाल, मतदान केंद्र पर कब्जा करना, मतपत्रों पर मुहर लगाना सामान्य आपराधिक गतिविधियां हैं। ऐसा नहीं है कि भारत में इन अपराधिक गतिविधियों को रोकने अथवा अपराधिक प्रवृत्ति के व्यक्तियों को चुनाव हेतु अयोग्य घोषित करने की विधियां नहीं है परंतु विभिन्न राजनीतिक दलों में इच्छा की कमी के कारण इस संदर्भ में पहल उच्चतम न्यायालय द्वारा की गई है।

पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज बनाम भारत संघ वाद में भारत के सर्वोच्च न्यायालय का फैसला भारत में मतदान के अधिकार की स्थिति को परिप्रेक्ष्य में रखता है। सर्वोच्च न्यायालय ने लोक प्रतिनिधित्व (तीसरा संशोधन) अधिनियम, 2002 को संविधान के अनुच्छेद 19(1)(क) के तहत विधायिकाओं के चुनाव लड़ने वाले उम्मीदवारों के पूर्ववृत्त को जानने के मतदाताओं के मौलिक अधिकार के उल्लंघन के आधार पर रद्द कर दिया। न्यायालय ने भारत संघ बनाम एसोसिएशन फॉर डेमोक्रेटिक रिफॉर्म्स में दिए गए अपने निर्णय की पुष्टि की है। जहां चुनाव आयोग को सर्वोच्च न्यायालय ने निर्देश दिया था कि वह अपने नामांकन पत्र के एक आवश्यक हिस्से के रूप में संसद या राज्य विधानमंडल के चुनाव की मांग करने वाले प्रत्येक उम्मीदवार से हलफनामे के बारे में जानकारी मांगे:

(क) क्या उम्मीदवार को अतीत में किसी भी आपराधिक अपराध के लिए दोषी ठहराया गया है, बरी किया गया है या छुट्टी दे दी गई है - यदि कोई हो, चाहे उसे कारावास या जुर्माना से दंडित किया गया हो। (ख) नामांकन दाखिल करने के छह महीने पहले, क्या उम्मीदवार किसी भी लंबित मामले में दो साल या उससे अधिक के कारावास से दंडनीय अपराध का आरोपी है, और जिसमें आरोप तय किया गया है या अदालत द्वारा संज्ञान लिया गया है। यदि हां, तो तत्संबंधी ब्यौरा क्या है। (ग) एक उम्मीदवार और उसके पति / पत्नी और आश्रितों की संपत्ति (अचल, चल, बैंक बैलेंस इत्यादि)। (घ) देयताएं, यदि कोई हों, विशेष रूप से क्या किसी सार्वजनिक वित्तीय संस्थान या सरकारी बकाया राशि से अधिक बकाया हैं। (ड) उम्मीदवार की शैक्षणिक योग्यता।

यद्यपि संशोधन को पूर्वोक्त निर्णय को लागू करने के लिए कहा गया था, लेकिन यह अपने सार में काफी भिन्न था। उम्मीदवार को उन मामलों का खुलासा करने की आवश्यकता नहीं थी जिनमें उसकी संपत्ति और देनदारियां और उसकी शैक्षणिक योग्यता एवं उसे आपराधिक अपराध से बरी कर दिया गया था। जन प्रतिनिधित्व (तीसरा संशोधन) अधिनियम, 2002 की धारा 33-बी में प्रावधान किया गया है कि: "किसी भी न्यायालय के किसी भी निर्णय, डिक्री या आदेश या चुनाव आयोग द्वारा जारी किसी निर्देश, आदेश या किसी निर्देश में कुछ भी शामिल होने के बावजूद, कोई भी उम्मीदवार अपने चुनाव के संबंध में ऐसी कोई भी जानकारी प्रकट करने या प्रस्तुत करने के लिए उत्तरदायी होगा, जिसे अधिनियम या उसके तहत बनाए गए नियमों के तहत प्रकट या प्रस्तुत करने की आवश्यकता नहीं है।

पब्लिक इंटरेस्ट फाउंडेशन और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य के मामले में सर्वोच्च न्यायालय की संविधान पीठ ने फैसला किया कि वह उन उम्मीदवारों को चुनाव लड़ने से अयोग्य नहीं ठहरा सकता, जिनके खिलाफ आपराधिक आरोप तय किए गए हैं। न्यायालय ने सिफारिश की कि राजनीति के बढ़ते अपराधीकरण को रोकने के लिए संसद कानून बनाए। दूसरा, सर्वोच्च न्यायालय ने चुनाव आयोग को निर्देश जारी किए, जिसने राजनीतिक दल के साथ-साथ आपराधिक पृष्ठभूमि वाले उम्मीदवारों को चुनाव से पहले प्रचार अवधि के दौरान तीन मौकों पर वेबसाइट, समाचार पत्रों और टेलीविजन चैनलों के माध्यम से

जानकारी प्रकाशित करने का आदेश दिया।

राजनीतिक दल 2018 पब्लिक इंटरेस्ट फाउंडेशन बनाम भारत संघ के फैसले में जारी निर्देशों का पालन कर रहे थे या नहीं, इसकी निगरानी नहीं करने के लिए विभिन्न वादियों ने चुनाव आयोग के खिलाफ अवमानना याचिकाएं दायर कीं। रामबाबू सिंह ठाकुर बनाम सुनील अरोरा, के वाद में न्यायालय के 2018 के निर्देशों को पीठ ने फिर से दोहराया और चुनाव आयोग को राजनीतिक दलों द्वारा किसी भी गैर-अनुपालन की रिपोर्ट सर्वोच्च न्यायालय को देने का निर्देश दिया। इसने राजनीतिक दलों को लंबित आपराधिक मामलों वाले उम्मीदवार के चयन के कारणों जैसी अतिरिक्त जानकारी प्रकाशित करने का भी निर्देश दिया। राजनीतिक दलों [केंद्र और राज्य चुनाव स्तर पर] के लिए यह अनिवार्य होगा कि वे लंबित आपराधिक मामलों वाले व्यक्तियों के बारे में विस्तृत जानकारी (अपराधों की प्रकृति सहित, और प्रासंगिक विवरण जैसे कि आरोप तय किए गए हैं, संबंधित व्यक्तियों के बारे में अपनी वेबसाइट पर अपलोड करना अनिवार्य होगा। कोर्ट, केस नंबर आदि) जिन्हें उम्मीदवारों के रूप में चुना गया है, साथ ही इस तरह के चयन के कारणों के साथ-साथ यह भी कि आपराधिक इतिहास वाले अन्य व्यक्तियों को उम्मीदवारों के रूप में क्यों नहीं चुना जा सकता है। चयन के कारण संबंधित उम्मीदवार की योग्यता, उपलब्धियों और योग्यता के संदर्भ में होंगे, न कि चुनावों में केवल "जीतने की क्षमता"। यह जानकारी एक स्थानीय समाचार पत्र और एक राष्ट्रीय समाचार पत्र; फेसबुक और ट्विटर सहित राजनीतिक दल के आधिकारिक सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर भी प्रकाशित की जाएगी। ये विवरण उम्मीदवार के चयन के 48 घंटे के भीतर या नामांकन दाखिल करने की पहली तारीख से कम से कम दो सप्ताह पहले, जो भी पहले हो, प्रकाशित किए जाएंगे। संबंधित राजनीतिक दल उक्त उम्मीदवार के चयन के 72 घंटे के भीतर इन निर्देशों के अनुपालन की रिपोर्ट चुनाव आयोग को प्रस्तुत करेगा। एवं यदि कोई राजनीतिक दल चुनाव आयोग के साथ ऐसी अनुपालन रिपोर्ट प्रस्तुत करने में विफल रहता है, तो चुनाव आयोग संबंधित राजनीतिक दल द्वारा इस तरह के गैर-अनुपालन को इस न्यायालय के आदेशों/निर्देशों की अवमानना के रूप में सर्वोच्च न्यायालय के संज्ञान में लाएगा।

सर्वोच्च न्यायालय के इन निर्णयों के उपरांत भी आज मतदाता अपने अधिकारों का पूर्ण रूप से पालन नहीं कर रहा है क्योंकि यदि वह अपने द्वारा चुने हुए उम्मीदवारों के बारे में जानकारी रखता तो आज भी लोकसभा में 43% उम्मीदवार अपराधिक मामलों में लिप्त ना होते।

निष्कर्ष:

प्रत्येक मतदाता का यह अधिकार ही नहीं कर्तव्य भी है कि वह अपने प्रतिनिधियों को सर्वोच्च सत्यनिष्ठा, ईमानदारी और लोगों की सेवा करने की प्रतिबद्धता के साथ चुनें, ताकि अच्छे लोगों का चयन हो जो विधि के शासन के अनुसार काम करें और संविधान में निर्धारित सिद्धांतों और गारंटियों को आगे बढ़ाएं जिससे मतदाता ना सिर्फ सुशासन का अनुभव करें बल्कि अपने मानव अधिकारों का भी प्रयोग कर सकें। अतः मतदाता को अपने जानने के अधिकार का सम्पूर्ण उपयोग करते हुए अच्छे, चरित्रवान एवं अपराधिक प्रवृत्ति से मुक्त प्रतिनिधियों का सही करना चाहिए यही एक अच्छे लोकतंत्र में मतदाता का अधिकार भी है और स्वयं एवं अन्य लोगों के प्रति कर्तव्य भी।

●●●●

ग्रामीण बालिकाओं की औपचारिक शिक्षा : मानवाधिकार के सन्दर्भ में

सतीश कुमार*
अवनीश कुमार**

सारांश

भारत ग्रामीण बहुल देश है, शिक्षा इस देश के संविधान की समवर्ती सूची में होने के बाद भी आज कई गांव शिक्षा से अछूते रह गए हैं। इन क्षेत्रों में शिक्षा के प्रचार-प्रसार के लिए सरकार द्वारा विशेष ध्यान दिया जा रहा है। कहा जाता है कि लड़की की शादी होने के बाद वह परिवार में अलग-अलग लोगों के लिए अलग-अलग भूमिका के रूप में अपना योगदान निभाती है। बालिका शिक्षित होगी तो वह अपने निर्णय स्वयं ले सकती है और उसके द्वारा लिया गया निर्णय स्वयं और परिवार दोनों के लिए उचित एवं सार्थक होगा इसलिए समाज के विकास के लिए लडकियाँ कुंजी के सामान है। इसी दिशा में राज्य और केंद्र सरकार द्वारा बालिका शिक्षा के लिए तरह-तरह की योजनाओं का क्रियान्वयन किया जा रहा है लेकिन ये योजनाएं तभी सार्थक होगी जब इनसे जुड़े अन्य पहलुओं पर ध्यान दिया जायेगा। इस लेख में हाशिये के समाज में ग्रामीण बालिकाओं के सम्मुख शिक्षा में समस्याएं दृष्टिपात है।

प्रस्तावना:

शिक्षा मानव के चहुमुखी विकास, एक बेहतर भविष्य के लिए अनिवार्य है। इस संबंध में केंद्र और राज्य सरकारों ने बालिकाओं की बेहतर शिक्षा और उनकी सुविधाओं के लिए समय-समय पर विभिन्न समितियों का गठन करने के साथ ही अनेक प्रावधान भी बनाए हैं, परंतु सरकारों द्वारा बनाए गए प्रावधानों और दी जा रही विभिन्न प्रकार की सुविधाओं के बावजूद यह भी देखने को मिलता है कि समाज के कुछ वर्ग शिक्षा के क्षेत्र में अति पिछड़े या उससे वंचित हैं। ग्रामीण बालिकाएं किसी तरह प्राथमिक शिक्षा ग्रहण तो कर लेते हैं, लेकिन विभिन्न कारणों से माध्यमिक शिक्षा से वंचित हो जा रही हैं या नामांकन होने के कुछ ही समय में ड्राप आउट हो जा रही हैं। सरकार बालिकाओं की शैक्षिक निरंतरता बनाये रखने और उसके विकास के लिए अनेक

* *शोधार्थी, विधि विभाग, बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, विद्या विहार रायबरेली रोड, लखनऊ 226025*
** *शोधार्थी, विधि विभाग,बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, विद्या विहार रायबरेली रोड, लखनऊ 226025*

योजनाएं चला रही है जैसे पिछड़ा वर्ग कल्याण विभाग द्वारा बालिका छात्रावास, समाज कल्याण विभाग द्वारा अनुसूचित जाति की बालिकाओं के लिए छात्रावास, केंद्र और राज्य सरकार के द्वारा कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालय तथा अनेक छात्रवृत्ति योजना चलाई जा रही है इसके बावजूद ग्रामीण बालिकाओं में शिक्षा का स्तर गिरा हुआ है। इसके पीछे मुख्य कारण इस समाज में रूढ़िगत विचार की व्यापकता तथा शिक्षा के प्रति सचेत्ता का आभाव है। मोदी (2018) ने भी अपने अध्ययन में कुछ कारणों को चिंहित किया है जो इस प्रकार से है "ग्रामीण बालिकाओं के शैक्षिक विकास में समस्या गरीबी, बालविवाह, पर्दा प्रथा, अभिभावकों की निरक्षरता एवं जागरूकता की कमी, दहेज प्रथा, स्कूलों की दूरी एवं स्कूलों में पेयजल व शौचालयों जैसी आधारभूत संरचनाओं की कमी आदि ऐसे तत्व हैं जो बालिका शिक्षा के मार्ग में बाधा साबित हो रहे हैं"। इस प्रकार सरकार के अथक प्रयासों के बाद भी सामाजिक और भौतिक बाधाओं के कारण आज भी आरक्षित वर्ग की बालिकाएँ शिक्षा से वंचित है। ग्रामीण समाज में शिक्षा का विकास पूर्ण रूप से न हो पाने के कारण इस समाज में स्वास्थ्य और स्वच्छता का अभाव है जिसके परिणामस्वरूप यह समाज तंगी और बदहाली की जिन्दगी व्यतीत कर रहा है। परिवार में अज्ञानता होने के कारण बालिकाओं की शिक्षा को कम महत्व देते है उन्हें पढ़ने के लिए प्रेरित नहीं करते जिससे शिक्षा के प्रति बालिकाओं का लगाव कम होने लगता है और वह शिक्षा से दूर हो जाती है। यादव (2017) ने भी अपने अध्ययन में यह पाया कि "अधिकांश ड्राप आउट बालिकाएं अनुसूचित जाति से संबंधित है"। जिससे वर्तमान समय में भी लोग इस समाज को अस्पृश्यता की भावना से देखते है। (हरीराम, 2013) "विशिष्ट समस्या के रूप में अब भी दलीय वर्ग अस्पृश्यता के दंश को झेल रहा है" विद्यालय समाज की एक इकाई होने के कारण अस्पृश्यता की भावना शिक्षकों में भी परिलक्षित होती है। (शर्मा, 2016) "दलित बालिकाओं के शिक्षा छोड़ने के कारण पाठशाला का नीरस वातावरण और शिक्षकों की उपेक्षा, बच्चों में शिक्षा के प्रति उत्साह को कम कर देती जिसके कारण विद्यालय जाना किसी सजा से कम नही लगता।

शिक्षा के संवैधानिक अधिकार-

अनुच्छेद 21क: शिक्षा का अधिकार

- राज्य, छः से चौदह वर्ष तक की आयु वाले सभी बालकों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा देने का ऐसी रीति में, जो राज्य विधि द्वारा, अवधारित करे, उपबंध करेगा।
- अनुच्छेद 51अ (ट): यदि माता-पिता या संरक्षक है, छः से चौदह वर्ष तक की आयु वाले अपने, यथास्थिति, बालक या प्रतिपाल्य के लिए शिक्षा के अवसर प्रदान करें।

बाल अधिकारों पर कन्वेंशन 1989 का अनुच्छेद 28 के अनुसार-

यह शिक्षा को समान अवसर के आधार पर प्रत्येक बच्चे को कानूनी अधिकार के रूप में मान्यता देता है। इसका अनुच्छेद 28 सभी के लिए निःशुल्क अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की गारंटी देता है; प्रगतिशील मुफ्त माध्यमिक शिक्षा जो किसी भी मामले में सभी के लिए उपलब्ध और सुलभ होनी चाहिए; और क्षमता के आधार पर उच्च शिक्षा तक पहुंच।

बालिकाओं की शिक्षा में आने वाली समस्यायें:

परिवारिक समस्याएं–

उल्लेखनीय है कि ग्रामीण समाज में शिक्षा का स्तर निम्न है यह उनमें बालिकाओं की शिक्षा बाधित करने के संदर्भ में और अधिक बल प्रदान करता हैं। यह समाज सदा से ही बालकों की तुलना में बालिकाओं को कम महत्व देता है जितनी स्वतंत्रता बालक के पास होती, कहीं भी अनजाने से लेकर खेलने कूदने के साथ-साथ अपनी इच्छाओं की अभिव्यक्ति की, उतनी स्वतंत्रता एक बालिका के पास नहीं होती है। इसलिए बाल्यावस्था के उत्तरार्ध से ही बालिकाओं को घर के कार्यों के लिए उन्हे प्रेरित करना प्रारम्भ कर देते हैं। उनका मानना है कि जिस घर में ये विवाह करके जाएगी उस घर के लिए एक गृहणी के कौशल ही प्रधान है न की शिक्षा, उसके जीवन की सफलता के लिए एक अच्छे घर और वर की जरूरत है और वह पैसे से प्राप्त किया जा सकता हैं। डॉ. सीमा & प्रो. सुनीता जैन ने अपने लेख में "बालिका शिक्षा साक्षरता दर कम होने के कारणों के रूप में लैंगिक भेदभाव, घर के कार्यों में लगे रहना अभिभावकों को कार्य पर चले जाने पर घर पर भाई-बहनों की देखरेख करना पाया है"।

भारत में महिला शिक्षा की स्थिति:

भारत में महिला शिक्षा की स्थिति में सुधार हो रहा है लेकिन यह संतोष जनक नहीं है। जिसमें ग्रामीण समाज में स्त्रियों की स्थिति तो बहुत ही दयनीय है, और इसके बारे कोई रिकॉर्ड भी नही है, कितनी महिलायें शिक्षित है और कितनी अशिक्षित हैं और उनका कितना शोषण हो रहा है। भारत में महिलाओं की स्थिति को नीचे ग्राफ द्वारा समझा जा सकता है।

स्रोत: https://www.statista.com/statistics/271335/literacy-rate-in-india/

ऊपर दिए गए ग्राफ से स्पष्ट है कि भारत में महिलाओं की शिक्षा में स्थिति सही नहीं है जबकि ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओ की स्थिति तो और भी दयनीय है।

अंतरराष्ट्रीय महिला अधिकार विधेयक के रूप में वर्णित इस अभिसमय में एक प्रस्तावना (preamble) और 30 अनुच्छेद (Article) हैं। यह अभिसमय महिलाओं के प्रति भेदभाव को परिभाषित करता है और इसके अंत के लिये एक राष्ट्रीय कार्य सूची स्थापित करता है। महिलाओं के प्रति भेदभाव को इस प्रकार परिभाषित किया गया है- लिंग के आधार पर किया गया कोई भेदभाव, प्रतिबंध अथवा बहिष्करण, जो महिलाओं (चाहे वे विवाहित हों अथवा नहीं) के राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक अथवा अन्य क्षेत्रों से सम्बद्ध मानवाधिकारों एवं मौलिक स्वतंत्रताओं को निरस्त करता हो अथवा ऐसा करने का उद्देश्य रखता हो।

अभिसमय को स्वीकार करके सदस्य देश स्वयं की महिलाओं के विरुद्ध सभी प्रकार के भेदभावों को मिटाने के लिये कदम बढ़ाने के लिये समर्पित करते हैं। इन उपायों में से कुछ प्रमुख उपाय हैं- देश की कानून व्यवस्था में महिलाओं और पुरुषों की समानता के सिद्धान्त को अपनाना, सभी प्रकार के भेदभावपूर्ण कानूनों को समाप्त करना और महिलाओं के विरुद्ध भेदभावों को रोकने के लिये उपयुक्त कदम उठाना, भेदभाव से महिलाओं की रक्षा सुनिश्चित करने के लिये के द्वारा महिलाओं के विरुद्ध सभी प्रकार के भेदभावों की समाप्ति सुनिश्चित करना। इस तरह के भेदभाव महिलाओ की शैक्षिक स्थिति को भी प्रभावित करता है।

वर्तमान समय राजनीतिक और लोक जीवन, जिनमें मत देने के अधिकार और चुनाव लड़ने के अधिकार भी सम्मिलित हैं तथा शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार में महिलाओं की समान पहुंच तथा समान अवसरों के माध्यम से महिला-पुरुष समानता के सपने को साकार करने के लिये आधार प्रदान करता है। अभिसमय एकमात्र ऐसी मानवाधिकार संधि है, जो महिलाओं को प्रजनन अधिकार प्रदान करती है तथा संस्कृति और परम्परा को एसे प्रभावकारी कारकों के रूप में लक्षित करती है, जो पारिवारिक संबंधों और लिंग जन्य भूमिकाओं के निर्धारण में महत्वपूर्ण होते हैं। यह अभिसमय महिलाओं तथा उनके बच्चों के लिए राष्ट्रीयता प्राप्त करने, परवर्तित करने और बरकरार रखने के अधिकार की पुष्टि करता है। सदस्य देश महिलाओं के सभी प्रकार के देह व्यापार और शोषण के विरुद्ध उपयुक्त कदम उठाने के लिये भी सहमत होते हैं।

बालिका शिक्षा के प्रति अभिभावकों की अनुचित धारणाएं- ग्रामीण समाज में आज भी रुढ़िवादी विचार के लोग देखने को मिल रहे जो बालिकाओं की शादी सोलह से बीस वर्ष के बीच में कर दे रहे है और शादी के लिए बालिकाओं की सहमति को आवश्यक नहीं समझ रहे है उनकी शादी के लिए निर्णय लेने का अधिकार सिर्फ परिवार के मुखिया को रहता हैं। वहीं दूसरी ओर जिस घर में शादी के बाद बहू बनकर जाती है वे भी इनको पढ़ना आवश्यक नहीं समझते है वे मानते हैं कि इनका काम घर की देख-रेख करना, खाना बनाना और खिलाना, पशुओं की देख-रेख करना है। इस प्रकार विवाह के प्रति इस समाज में अनुचित धारणा आज भी बनी हुई है। जहां कुछ ग्रामीण बालिकाएं शिक्षा ले रही है उन बालिकाओं की शिक्षा बाधित होने के लिए अभिभावकों का आर्थिक रूप से कमजोर होना भी एक समस्या का कारण है। जिससे बालिकाओं को अपने रूचि के अनुरूप विषय का चुनाव न करपाने की स्वतंत्रता होती है वह परिवार के रूचि के अनुरूप विषय का चुनाव कर पाती हैं जिसको कम खर्च में, बिना स्कूल गये और विद्यालय के अतिरिक्त शिक्षा (ट्यूशन) के बिना अच्छे अंकों के साथ परीक्षा उत्तीर्ण कर सके। पारिवारिक स्थिति ख़राब होने के कारण अभिभावक छात्रवृति राशि को पारिवारिक कार्यो में खर्च कर लेते है और कुछ अभिभावक तो बालिकाओं के विवाह के लिए संचय कर लेते है। इस प्रकार जिन उद्देश्यों के लिए छात्रवृति दी जाती है वह अधूरी रह जा रही है। बालिकाएं प्राथमिक शिक्षा सर्वसुलभ होने के कारण स्कूली शिक्षा तो प्राप्त कर पा रही है लेकिन माध्यमिक शिक्षा के लिए सरकारी कालेज की दूरी होने के कारण शिक्षा से वंचित रह जा रहे है। मान्यता प्राप्त कालेज तो आसानी से उपलब्ध हो पा रहे है लेकिन उनके शैक्षिक खर्चों का वहन अभिभावक नहीं कर पा रहे है। सरकारी कॉलेजों के लिए आने-जाने की समस्या, समाज में हो रहे घटनाओं (लड़िकयों के साथ छेड़छाड़) से अपने को असुरक्षित महसूस करते है। इस प्रकार उपरोक्त कारणों से ग्रामीण बालिकाओं की शिक्षा के बाधक तत्व के रूप में पाया गया है।

शिक्षा में आने वाली विद्यालयी समस्याएं : सामान्यत यह देखा गया हैं कि ग्रामीण सरकारी स्कूलों में भौतिक सुख सुविधाएं तो सरकार उपलब्ध करा रही है (कक्षा की छत, पेयजल की सुविधा, बिजली की सुविधा, वाचनालय, शौचालय आदि) के बाद भी स्कूलों में भौतिक समस्या बनी हुई है। इसके पीछे मुख्य रूप से सुरक्षा का अभाव पाया गया। पेयजल की सुविधा अधिकांश सभी विद्यालयों में है किन्तु नल के चबूतरे टूटे और गड्डे होने के कारण अपशिष्ट जल वहीं जमा रहता है। विद्यालय में शौचालय जर्जर स्थिति में पाए गए जिसमें पानी की कोई व्यवस्था नहीं थी और महीनों से सफाई भी नहीं हुई। ऐसी स्थिति में बलिकाओं के लिए एक गंभीर समस्या बनी हुई है। विद्यालय में पाठ्य सहगामी क्रियाओं में और बालसभा जैसे कार्यक्रमों से गरीब तबके परिवार वाले बालिकाओं को उपेक्षित रखा गया। शिक्षण कार्यो के समय भी इन बालिकाओं को प्रोत्साहन से दूर रखा गया। प्राथमिक तथा माध्यमिक विद्यालय में हर जगह योग्य

प्रशिक्षित शिक्षिकाओं की कमी देखने को मिलती है ऐसी स्थिति में ग्रामीण विद्यालयों में शिक्षिकाओं की कमी को और अधिक बल मिलता है। विद्यालय में बालिकाएं अपनी समस्या शिक्षक के सम्मुख रखने में अपने को असहज महसूस करती है इस कारण वे समस्या से ग्रसित रह कर शिक्षण कार्य करती है जो शिक्षा को उबाऊ बना देती है। इस प्रकार शिक्षिकाओं की कमी बालिकाओं की शिक्षा के लिए बाधक साबित हो रही है।

निष्कर्ष–

अध्ययन के उपरांत निष्कर्ष के रूप में यह पाया गया कि हाशिये के समाज में बालिकाओं के शिक्षा में आने वाली परिवारिक समस्या के रूप में उनका घर के कार्यो में संलग्नता, शिक्षा का उबाऊ लगना, अभिभावकों की निरक्षरता के कारण शिक्षा को गौण रूप में देखना और रुढ़िवादी सोच के कारण बालिका शिक्षा को कम महत्व देना साथ ही आर्थिक समस्याओं के कारण शैक्षिक सामग्री न उपलब्ध करवा पाना एक विकट समस्या के रूप में पाया गया। ग्रामीण बालिकाओं की शिक्षा में विद्यालय की तरफ से शिक्षिकाओं का अभाव, शौचालयों का जर्जर अवस्था, पाठ्य सहगामी क्रियाओं से उचित जुड़ाव का न हो पाना, शिक्षकों द्वारा पढ़ाई के प्रति प्रोत्साहन का पूर्णतः अभाव का होना ग्रामीण बालिकाओं की शिक्षा में समस्या के रूप में पाया गया है, जो समाज के विकास के लिए विकट समस्या है आने वाले समय में यदि इनका उचित निदान नहीं हुआ तो ग्रामीण क्षेत्रों में बालिका शिक्षा की स्थिति और दयनीय हो जाएगी।

संदर्भ सूची-

1. https://www.prabhatkhabar.com/news/patna/story/721924.html
2. http://www.im4change.org/hindi/न्यूज-क्लिपिंग्स्/हाशिये-का-समाज-और-राज-हरिराम-मीणा
3. शर्मा कु. सु. (2016). दलित बालिकाओं की शिक्षा छोड़ने के कारण. विचार मंथन http://hindi.webdunia.com/current-affairs/dalit-balika-siksha-116052000061_2.html
4. https://gyanapp.in/hindi/answers/2928/बालिकाओं-के-लिए-कौन-से-योजनाए-बनी-है
5. शर्मा. सुशिल. (2016). दलित बालिकाओं की शिक्षा की शिक्षा की स्थिति. रचनाकार http://www.rachanakar.org/2016/04/blog-post_757.html
6. मोदी.अ. (2018). देश के विकास की बुनियाद:ग्रामीण बालिका शिक्षा. शैक्षिक मंथन वर्ष 11.3.
7. http://www.agup.nic.in/pag/en/docs/report-no-02-2017-hin.pdf
8. 14.139.228.232:8080/jspui/bitstream/0522/310/1/पारुल%20यादव.pdf
9. डॉ.सीमा & प्रो. सुनीता जैन के लेख "बालिका शिक्षा साक्षरता दर कम होने के कारणों के रूप में लैंगिक भेदभाव".
10. https://www.statista.com/statistics/271335/literacy-rate-in-india/
11. https://www.right-to-education.org/resource/convention-rights-child.

●●●●

महिला तस्करी, शोषण, मानवाधिकार और मीडिया

भारत के विशेष संदर्भों में

संदीप भट्ट*

मानव तस्करी एक बहुत ही गंभीर वैश्विक समस्या है। वाकई किसी भी समाज में लोगों को वस्तुओं की तरह खरीदना और बेचना किसी भी तरह से नैतिक नहीं हो सकता। प्रमुख तौर पर कहें तो अध्ययन बताते हैं कि विश्व में घरेलू काम-काज से लेकर जबरन विवाह, देह व्यापार, मानव अंगों की खरीदी और पोर्नोग्राफी आदि के लिए मानव तस्करी की जाती है। निश्चित तौर पर यह तस्करी के शिकार लोगों के साथ शोषण का एक आपराधिक कृत्य है। दुनियाभर में फल-फूल रहे इस अनैतिक कारोबार का सबसे भयावह पहलू यह है कि महिलाएं और बच्चियां सबसे अधिक इसी चपेट में आती हैं। मानव तस्करी का सबसे दुखद पहलू है कि एक बार तस्करों के जाल में फंसकर किसी भी महिला के लिए इससे छूटना और निकलना बेहद मुश्किल हो जाता है। साल 2010 में संयुक्त राष्ट्र महासभा ने इस घृणित अपराध के खिलाफ कार्रवाई करने के लिये अंतरराष्ट्रीय समुदाय को प्रोत्साहित करने हेतु मानव तस्करी से निपटने के लिये वैश्विक योजना की घोषणा की। अनेक देशों ने अपने स्तर पर भी महिलाओं की तस्करी जैसे घिनौने अपराध को रोकने के लिए कई प्रयास आरंभ किये हैं। भारत में भी महिलाओं की खरीद-फरोख्त और तस्करी पूरी तरह से गैरकानूनी है। इस तरह के मामलों में केंद्र और राज्य सरकारों के साथ कई गैर सरकारी संगठन भी इस दिशा में कार्य कर रहे हैं।

महिलाओं की तस्करी के मामले में विश्वभर में मानवाधिकार, सामाजिक विकास आदि क्षेत्रों में कार्यरत वैश्विक संगठन संयुक्त राष्ट्र के मादक पदार्थों और अपराध आदि विषयों के मामलों के कार्यालय के आँकड़े चिंता पैदा करते हैं। इस संस्था की आधिकारिक वेबसाइट के अनुसार मानव तस्करी के नज़र में आए मामलों में 72 प्रतिशत पीड़ित महिलाएँ और बच्चे होते हैं। महिलाओं की तस्करी के मामले में भारत में भी परिस्थितियां बहुत अच्छी नहीं कही जा सकती। एनसीआरबी के आंकड़े बताते हैं कि साल दर साल मानव और महिला तस्करी के मामले बढ़ते ही जा रहे हैं। महिला तस्करी और उनके अनंत शोषण के पीछे कई कारण होते हैं। अनेक अध्ययन इस बात पर एकमत दिखते हैं कि हमारे देश में गरीबी, अशिक्षा, देह व्यापार, बंधुआ मज़दूरी, सामाजिक असमानता, सामाजिक सुरक्षा के कार्यक्रमों का सही ढंग से क्रियान्वयन न हो पाना, महानगरों और कस्बाई इलाकों में घरेलू कामों के लिये लड़कियों और महिलाओं की बढ़ती मांग आदि

* *निदेशक, कर्मवीर विद्यापीठ परिसर, एमसीयू, खंडवा-450001 मध्यप्रदेश*

प्रमुख कारणों से महिलाओं की तस्करी भी बढ़ रही है। इसके अलावा बहुत से इलाकों में लिंगानुपात गड़बड़ाने के कारण विवाह आदि के लिए समस्याओं के चलते भी अवैध तरीकों से स्त्रियों की खरीद-फरोख्त बहुत बड़े पैमाने पर होती है। कम उम्र की लड़कियों की तस्करी का एक और महत्वपूर्ण कारण भी है। बीते सालों में पोर्नोग्राफी विशेषकर चाइल्ड पोर्न के बढ़ते दुष्परिणाम भी बच्चियों की तस्करी की घटनाएं होती हैं।

भारत में महिला तस्करी के मामलों में पश्चिम बंगाल, छत्तीसगढ़, झारखंड और असम सर्वाधिक प्रभावित राज्य हैं। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 23 (1) के अंतर्गत मानव या व्यक्तियों का अवैध व्यापार प्रतिबंधित है। व्यक्तियों का अनैतिक यातायात, रोकथाम अधिनियम 1956 आईटीपीए, वाणिज्यिक यौन शोषण के लिए अवैध व्यापार की रोकथाम का प्रमुख विधान है। इसके अलावा आपराधिक कानून संशोधन अधिनियम 2013 में भारतीय दंड संहिता की धारा 370 और 370 क आईपीसी में मानव तस्करी से संबंद्ध अवैध व्यापार सहित शारीरिक शोषण या किसी भी रूप में बच्चों के यौन शोषण, गुलामी, दासता, या अंगों को जबरन हटाने सहित किसी भी रूप में शोषण संबंधी प्रावधान शामिल हैं। हमारे यहां कानूनों में महिलाओं और बच्चों की तस्करी से संबंधित अन्य विशिष्ट विधान हैं। बाल विवाह निषेध अधिनियम 2006, बंधुआ श्रम प्रणाली, उन्मूलन अधिनियम 1976, बाल श्रम निषेध एवं विनियमन, अधिनियम, 1986, और मानव अंग प्रत्यारोपण अधिनियम, 1994 शामिल हैं। भारतीय दंड संहिता में वेश्यावृत्ति के उद्देश्य से लड़कियों को बेचने और खरीदने से संबंधित धारा 372 और 373 सहित अन्य विशिष्ट कानून अधिनियमित किए गए हैं।

देश में अनेक राज्यों में महिलाओं की खरीद-फरोख्त को रोकने के लिए विशिष्ट कानून भी हैं। उदाहरण के लिए पंजाब राज्य में पंजाब मानव तस्करी रोकथाम अधिनियम, 2012 है। इस तरह महिलाओं की तस्करी और शोषण की रोकथाम के लिए कानूनी उपचार तो मौजूद हैं लेकिन इन व्यवस्थाओं के बावजूद महिलाओं की तस्करी अब भी एक बड़ी चुनौती बना हुआ है। तमाम कानूनी व्यवस्थाओं के बावजूद हमारे देश में महिलाओं की तस्करी के मामले थमते नजर नहीं आते। यूनाइटेड नेशंस आफिस आन ड्रग एंड क्राइम(यूएनओडीसी) की 2020 की ग्लोबल रिपोर्ट ऑन ट्रैफिकिंग इन पर्सन 2020 में कहा गया है कि दुनियाभर में मुख्य रूप से लड़कियां यौन शोषण के लिए तस्करी के शिकार होती हैं।

भारत में महिलाओं की तस्करी में एक अहम बात यह है कि यहां अवैध रूप से रह रही महिला शरणार्थी तथा भयंकर गरीबी के चलते आजीविका के लिए अपने मूल राज्यों से अन्यत्र जाने वाले परिवारों की महिलाएं मानव तस्करों का शिकार आसानी से बन जाती हैं। यहां विदेशी महिलाओं की तस्करी के नेटवर्कों का भी जाल फैला हुआ है। कई रिपोर्ट्स बताती हैं कि नेपाल,बंग्लादेश और श्रीलंका आदि देशों से मानव तस्कर वहां से महिलाओं तथा कम उम्र की लड़कियों को अवैध तरीकों से भारत लाते हैं और उन्हें यहां बेच देते हैं। ऐसी शरणार्थी महिलाएं भी मानव तस्करों की आसान शिकार होती हैं जिन्होंने अनेक कारणों से अपने मूल देशों को छोड़ दिया होता है। वे अंजान देश में मदद भी नहीं मांग सकती हैं। किसी समाज सेवी संस्था या पुलिस आदि एजेंसियों द्वारा पकड़े जाने पर भाषाई दिक्कतों के चलते वे अपनी बात ठीक तरीके से भी नहीं रख पाती हैं। निश्चित ही उन्हें तस्करों द्वारा प्रताड़ित और धमकाया भी जाता है। देशभर में मानव तस्करी से जुड़े अपराध के रिकार्ड बताते हैं कि भारतीय महिलाएं और लड़कियां भी तस्करों के नेटवर्क में फंसकर यातनापूर्ण जीवन जीने के लिए विवश हैं। जर्मनी की संस्था डायचे वैले ने 2016 में एक रिपोर्ट प्रकाशित कर कहा कि ''दक्षिण एशियाई क्षेत्र में भारत मानव तस्करी का एक बड़ा केंद्र बनता जा रहा है। उसकी रिपोर्ट में लिखा है कि ''देश के ग्रामीण क्षेत्रों और कस्बाई इलाकों से हर साल हजारों गरीब महिलाओं

और बच्चों को अच्छी जिंदगी का झांसा देकर शहरों में लाया जाता है और यहां इनकी खरीद-फरोख्त की जाती है"। जो लोग इन महिलाओं को खरीदते हैं वे इनमें से कुछ को घरेलू या उद्योगों में कामकाज में धकेल देते हैं। वहीं दूसरी ओर अनेक महिलाओं को जबरन देह व्यापार के लिए भी मजबूर किया जाता है।

महिला तस्करी के दर्ज मामले

(18 वर्ष से से अधिक आयुवर्ग में)

क्रमांक	वर्ष	महिला तस्करी के मामले
1	2020	2797
2	2019	4079
3	2018	3719
4	2017	3538

तालिका क्रमांक-1

मानव तस्करी सभ्यता के इस युग में सबसे बड़ा अपराध है। यह एक ऐसा कृत्य है जो मानवाधिकारों का सबसे बड़ा हनन है। यदि किसी समाज में महिलाओं की वस्तुओं की तरह खरीदी और बिक्री होती हो तथा तस्करी के जरिये उन्हें दर-दर भटकने और अमानवीय जीवन की परिस्थितियों मे धकेला जा रहा हो तो यह समूची मानव सभ्यता पर एक कलंक है। दुर्भाग्य की बात है कि हमारे समाज में भी महिलाओं की तस्करी एक जीवंत सत्य है। हर क्षेत्र के अखबारो में प्रायः किसी महिला या युवती को तस्करों द्वारा कई लोगों को बेच देने की खबरें आती रहती हैं। कोविड महामारी के चलते महिला तस्करी के मामलों में वृद्धि आई है। मीडिया में आई कई ख़बरों के मुताबिक़ महामारी के दौरान मानव तस्करी की घटनाओं में वृद्धि हुई है। लोकप्रिय डिजिटल मीडिया संस्थान द वायर ने साल 2020 के आखिर में प्रकाशित अपनी एक रिपोर्ट में कहा है कि मानव अधिकार आयोग ने इस तरह की खबरें आने के बाद राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों से आग्रह किया है कि कोविड महामारी के संदर्भ में मानव तस्करी रोकने के लिए एंटी ट्रैफिकिंग यूनिट को सक्रिय किया जाए।

महिला तस्करी के दर्ज मामले

(18 वर्ष से कम अधिक आयुवर्ग में)

क्रमांक	**वर्ष**	**महिला तस्करी के मामले**
1	2020	2797
2	2019	1172
3	2018	1247
4	2017	1495

तालिका क्रमांक-2

जानकारों का मानना है कि समूचे दक्षिण एशिया में महिलाओ की तस्करी और अवैध रूप से खरीद-फरोख्त का एक बहुत ही बड़ा बाजार है। मीडिया की तमाम रिपोर्ट्स बताती हैं कि आज भी गरीबी और पिछड़ेपन की बहुलता वाले भारतीय राज्यों के अलग-अलग क्षेत्रों में महिलाओं, खासकर कम उम्र की लड़कियों को काम-काज का लालच देकर शोषण के एक जाल में फंसा लिया जाता है। अनेक शोध रिपोर्ट्स इस बात का खुलासा करती हैं कि इस तरह के काम में संलिप्त लोगों का एक जबरदस्त नेटवर्क है तो सुदूर अंचलों में जाकर अपने लिए ऐसे परिवार चुनता है जहां से किसी लड़की या महिला को चंगुल में फंसाया जा सके।

इस तरह के गिरोह के लोग स्थानीय लोगों से भी मिले हुए होते हैं। थोड़े से रुपयों का लालच देकर स्थानीय लोगों में अपने एजेंट बनाकर ये लोग लड़कियों को चिन्हित करते हैं और फिर उनके परिवार तक पैठ बनाने का काम करते हैं। बाद में ये लोग चिन्हित लड़कियों या महिलाओं और उनके परिवारों को अनेक तरह के प्रलोभन देते हैं। लड़की को किसी शहर में छोटा-मोटा काम दिलवाकर अच्छी कमाई की बात सुनकर अक्सर जबरदस्त आर्थिक विषमताओं का सामना कर रहे परिजन अपनी लड़कियों या किसी महिला सदस्य को उनके साथ भेज देते हैं। बदले में गिरोह के लोग परिवार का भरोसा जीतने के साथ ही एडवांस में अच्छी रकम भी पेश करते हैं। यहां ध्यान देने की आवश्यकता है कि गरीबी से पीड़ित निरक्षर परिवार और अनपढ़ या बहुत कम पढ़ी-लिखी लड़कियां और महिलाएं ही इस तरह के तस्करों के गिरोह के निशाने पर रहती हैं। ये उन्हें अपने चंगुल में फंसाने का हर संभव प्रयास करते हैं। अक्सर लक्षित स्त्रियों तथा उनके परिजन इनके बहकावे में आ जाते हैं। यहीं से उन महिलाओं के शोषण की कथा शुरू हो जाती है। काम के नाम पर लड़कियों और महिलाओं को दूर के शहरों में बड़े एजेंट्स उनकी खरीद-फरोख्त करते हैं। वहां से उन्हें अनैतिक देह व्यापार, बंधुआ मजदूरी और शादी आदि के लिए किसी और को बेच दिया जाता है। मना करने पर शारीरिक प्रताड़ना और यातनाओं का अंतहीन सिलसिला जारी हो जाता है।

वर्ष 2020 में मानव तस्करों से मुक्त कराई गई महिलाएं

एनसीआरबी की रिपोर्ट 2020

क्रमांक	18 वर्ष से अधिक	18 वर्ष से कम आयुवर्ग
1	1976	801

तालिका क्रमांक-3

तस्करी की शिकार महिलाओं की कहानियां बहुत ही दर्द और यातनाओं से भरी होती हैं। उनकी कथाएं सुनकर रोंगटे खड़े हो जाते हैं। टीवी, अखबार और डिजिटल मीडिया पर ऐसी यातनाओं की कहानियां प्रायः आती रहती हैं। यहां सवाल उठता है कि हमारी व्यवस्था इन महिलाओं और उनके मानवाधिकारों के लिए क्या कर रही है और क्या बेहतर किया जा सकता है। मानवाधिकारों से सीधे तौर पर जुड़े इस महत्वपूर्ण प्रश्न के उत्तर में यह कहा जा सकता है कि निश्चित तौर पर सरकार और गैर-सरकारी संगठन अपने स्तर पर इस तरह के अनैतिक और अपराध कृत्य को खत्म करने के लिए प्रयासरत हैं। लेकिन हमारे आधुनिक समाज का एक और महत्वपूर्ण और सजीव तंत्र ''मीडिया'' भी इस कार्य में अहम भूमिका का निर्वाह कर सकता है।

संचार के इस युग में हम सभी मीडिया का महत्व भलीभांति जानते और समझते हैं। मीडिया सिर्फ

संदेशों को भेजने या पाने का जरिया भर नहीं रहा है। आज अपनी असीम ताकत से मीडिया जनमत का निर्माण भी करता है। हम सभी यह जानते हैं कि दुनियाभर में महिलाओं के मुद्दे समाज के विमर्श के केंद्र में लाने में मीडिया की महत्ति भूमिका रही है। भारतीय संदर्भों में देखने पर भी कहा जा सकता है कि महिलाओं के मुद्दे पहले इतनी चर्चा में नहीं होते थे जितने कि आज हैं। लेकिन अगर ऐसा हुआ है तो इसके पीछे का कारण हमारा मीडिया ही है। आज महिलाओं से जुड़ा कोई भी अपराध कहीं भी घटित होता है तो मीडिया तुरंत अपनी खबरों के जरिए पूरे देश में संदेश प्रसारित कर जनता को उद्वेलित करता है। मीडिया व्यवस्था और कानून के क्रियान्वयन की जिम्मेदार संस्थाओं से सवाल पूछता है। किसी भी आपराधिक खबर के मीडिया पर प्रसारित होने के बाद सत्ता, शासन और प्रशासन पर सीधा दबाव पड़ता है। ऐसे में कहना मुनासिब ही होगा कि जब मीडिया महिलाओं से जुड़े अन्याय और अपराध के मामलों में अपनी मुहिम और अभियानों के जरिये उनके लिए न्याय मांगने वाली भूमिका में आ जाता है तो महिलाओं को निश्चित तौर पर न्याय मिलता है। तो एक बड़ा प्रश्न यह भी उठता है कि महिलाओं और लड़कियों की तस्करी के मामलों में भी मीडिया की सक्रियता होने से इस अमानवीय व्यापार पर कोई असर पड़ेगा। इसका उत्तर भी बहुत सरल है कि अवश्य ही मीडिया सरकार, समाज और समूची दुनिया को महिला तस्करी के खिलाफ एकजुट होने में सशक्त भूमिका का निर्वाह कर सकता है।

मीडिया नीति निर्माताओं तक तस्करी की शिकार बनी उन महिलाओं के प्रश्नों को पहुंचा सकता है जिनका जीवन तस्करी के दुष्चक्र में फंसने के बाद नारकीय हो जाता है। वास्तव में हमारा मीडिया उन तमाम स्त्रियों के मानवाधिकारों के संरक्षण में अहम किरदार बन सकता है। चूंकि उसके पास जन समाज तक पहुंचने के संसाधन और नेटवर्क होता है और समूचे समाज को जागरूक करने, शिक्षित करने की शक्ति भी होती है। इसलिए मीडिया से ही तो उम्मीद की जा सकती है कि वह समाज के सच को सामने लाए। पूरे देश में मानव तस्करों की पोल खोले। वह समाज में इस अनैतिक व्यवसाय की जड़ों पर प्रहार करे। हम मीडिया से ही उम्मीद कर सकते हैं कि वह ऐसे मामलों की खबरें प्रमुखता से दे और हमारी सरकारों के साथ पूरे समाज को इस तरफ और सक्रियता से काम करने के लिए बाध्य करे। निश्चित तौर पर कहा जा सकता है कि मीडिया अपनी खबरों से तस्करी का शिकार बनने वाली असंख्य महिलाओं की जिंदगियों के प्रश्नों को समाज के समक्ष प्रस्तुत कर उनके लिए कुछ बेहतर करने का काम कर सकता है। पूरी दुनिया हर वर्ष 30 जुलाई को विश्व मानव तस्करी निरोधक दिवस के बतौर मनाती है। आज अनेक देशों की सरकारें तथा अंर्तराष्ट्रीय संगठन संयुक्त रूप से मानव तस्करी के खिलाफ लड़ रहे हैं। अपनी खबरों से हमारा मीडिया भी महिला तस्करी के अवैध व्यापार के खिलाफ पूरे विश्व समुदाय को संवेदनशील बनाकर एक वातावरण बना सकता है। ऐसे में दुनियाभर की महिलाओं के अंतहीन शोषण का दुष्चक्र खत्म हो सकता है। मीडिया अगर महिलाओं की तस्करी के खिलाफ एक मुहिम चलाए तो मानवाधिकारों के संरक्षण की दिशा में यह उसका बहुत महत्वपूर्ण योगदान होगा। मानव तस्करी हर लिहाज से सभ्य समाज के लिए एक बहुत बड़ा प्रश्न है। हालांकि, आज महिलाओं की तस्करी उस तरह बड़े पैमाने पर नहीं दिखती क्योंकि आज सरकारें, एजेंसियां तथा मीडिया इस विषय पर सजग हैं। फिर भी महिला तस्करी के चंगुल में फंसने वाली हर स्त्री को शोषण के अंतहीन चक्र से बचाने में मीडिया समेत सभी संस्थाओं की भूमिका और सक्रिय तथा और बेहतर हो सकती है। मीडिया इस पहल की दिशा में नेतृत्वकारी भूमिका में हो सकता है। ऐसा होने पर मानवाधिकारों आजादी की अमृत उपलब्धियों में यह बहुत महत्वपूर्ण उपलब्धि होगी।

संदर्भ

1. द वायर की आधिकारिक वेबसाइट से पुनः प्राप्त, https://thewirehindi.com/151061/human-rights-commission-human-trafficking-covid-19/
2. यूएनडीओसी की आधिकारिक वेबसाइट से पुनः प्राप्त, https://www.unodc.org/documents/data-and-analysis/tip/2021/GLOTiP_2020_15jan_web.pdf, 84
3. डायचे वैले की आधिकारिक वेबसाइट से पुनः प्राप्त, https://www.dw.com/hi/a-37882268
4. एनसीआरबी की आधिकारिक वेबसाइट से पुनः प्राप्त, https://ncrb.gov.in/sites/default/files/crime_in_india_table_additional_table_chapter_reports/Table%2014.8.pdf
5. एनसीआरबी की आधिकारिक वेबसाइट से पुनः प्राप्त, https://ncrb.gov.in/sites/default/files/crime_in_india_table_additional_table_chapter_reports/Table%2014.5_3.pdf
6. एनसीआरबी की आधिकारिक वेबसाइट से पुनः प्राप्त, https://ncrb.gov.in/sites/default/files/crime_in_india_table_additional_table_chapter_reports/Table%2014.1_6.pdf
7. एनसीआरबी की आधिकारिक वेबसाइट से पुनः प्राप्त, कीhttps://ncrb.gov.in/sites/default/files/crime_in_india_table_additional_table_chapter_reports/Table%2014.3_3.pdf
8. गृह मंत्रालय की आधिकारिक वेबसाइट से पुनः प्राप्त, https://mea.gov.in/human-trafficking-hi.htm

●●●●

खंड-II

कविता

कुदाली के जख्म

प्रियंका पुरोहित*

कुदरत के गुलशन में आया मैं भी बनकर फूल,
दबा दिया फिर कुचल दिया पत्थर से मेरा नूर।
स्याही भरी कलम ना किस्मत मेरी बन पायी,
कन्धों पर ढोया बोझा पर थाली में झूठन खायी।
शोषण की आँधी ने मेरी रूह को झुका दिया,
कौन देगा उत्तर मैंने क्या गुनाह किया?
मानव होने के नाते ना मिले मुझे अधिकार,
शिक्षा मिली ना मुठ्ठी भर, पर भिक्षा मिली अपार।
सड़कों के कोनों में बीती रातें सारी काली,
कुचल गई सपनों को वह दानवी कुदाली।
हाथों के छालों ने मेरा बचपन मिटा दिया,
कौन देगा उत्तर मैंने क्या गुनाह किया?
प्रभा के तुख्म से जन्मा मैं नन्हा प्रसून,
हाथ छोड़ अपनों ने जीवन बना दिया सून।
मुस्कान भरी फुलवारी हो गई अंधियारी,
रौंदा बगिया को उसने, था जो उसका माली।
गाँव की मिट्टी में मेरा शैशव दबा दिया,
कौन देगा उत्तर मैंने क्या गुनाह किया?

●●●●

* *स्वतंत्र लेखिका, भरतपुर, राजस्थान*

मौन

सृष्टि बरनवाल*

एक मौन विश्व समाज में हाहाकार मचा सकता है
एक मौन दुनिया को तबाह कर सकता है
एक मौन बहुत कुछ बता समझा सकता है
एक मौन तुम्हें कमजोर साबित कर सकता है
एक मौन दर्शाएगा कि तुम प्रताड़नाओं का भी आनंद ले रहे थे
एक मौन बताएगा कि तुम इस दुनिया में हो ही नहीं
एक मौन तुम्हें जीत हासिल करा सकता है
एक मौन दर्शाएगा कि तुम खुश और संतुष्ट हो
एक मौन दर्शाएगा कि तुम खामोश और दुखी हो
एक मौन प्रतीक हो सकता है तुम्हारे अंतर्मन के किसी युद्ध का
एक मौन हो सकता है तूफान से पहले की खामोशी...।

●●●●

* *विद्यार्थी, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय*

खंड-III

कहानियाँ

कोई अंत नहीं

दामोदर खड़से*

शुभ्रा बहुत बेचैनी से माँ के आने का इंतज़ार कर रही थी। उसकी माँ सरिता पहली बार अकेली बाहर गयी थी, पिताजी के बिना। बारह साल की शुभ्रा सारे घर में घूमकर बालकनी में आकर नीचे झाँक लेती। जो भी ऑटो रिक्शा आकर रुकता तो उसे लगता माँ आई है। पर निराशा। माँ की जगह कोई और उतरता। वह भीतर जाती और देखती कि छोटा भाई ऑनलाइन पर ठीक से ध्यान दे पा रहा है या नहीं। सुमीत उससे पाँच साल छोटा है। कभी-कभी वह वीडियो ऑफ कर केवल सुनता है। टीचर के यह ध्यान में नहीं आता कि सुमीत ध्यान से पढ़ाई कर रहा है या नहीं। स्कूल सभी बंद हैं। सब कुछ ऑनलाइन। शुभ्रा तो अपनी क्लास बहुत तत्परता से कर लेती है, पर ये छोटे साहब का मन स्थिर नहीं है। सुमीत रात-दिन अपने पिता को याद करता रहता है। कभी-कभी उसे आभास होता है कि पापा दरवाजे पर आ गए हैं। वह उछलता-कूदता आता है, पर नहीं, वही सूनापन उसके हाथ लगता है। फिर वह माँ को देखने बालकनी में पहुँच जाता है। वहाँ अनमनी-सी दीदी को देखकर रुआँसा सुमीत उससे लिपटकर सुबकने लगता है। शुभ्रा बहुत धैर्य के साथ उसे समझाती-सँभालती है और किसी तरह फिर लैपटॉप पर बैठाकर क्लास से जोड़ देती है। स्कूल बंद, खेलकूद बंद, केवल ऑनलाइन पढ़ाई। सहपाठी नहीं, मैदान नहीं, जाना-आना नहीं कहीं भी...बस चहारदीवारी में बंद... एक घुटन...समय ने सब कुछ काटकर रख दिया। एक कोरोना ही है जो नहीं कट रहा है। शुभ्रा की अब आदत हो गई है। समय से पहले सयानी हो गई। छोटे सुमीत का भी ध्यान रखती है... पर माँ अभी तक नहीं लौटी... अब तो दोपहर के तीन बज रहे हैं। एक बजे तक लौटना था। कम्प्यूटर क्लास का पहला दिन है – आती ही होगी – शुभ्रा ने खुद को समझाया।

शुभ्रा केवल बारह वर्ष की है, पर कम्प्यूटर का उसे अच्छा-खासा ज्ञान है। स्कूल में भी सिखाया जाता है और पिताजी से भी उसने काफी कुछ सीखा था। ई-मेल, पत्र लिखना, निबंध लिखना, यहाँ तक कि पिताजी ने उसे बैंकिंग भी ऑनलाइन सिखा दी थी। वह थोड़ा-बहुत खाना भी बना लेती है – कूकर में दाल-चावल या खिचड़ी। आज माँ नाश्ता बनाकर गई थी। शुभ्रा ने एक बजे तक राह देखी फिर दाल-चावल चढ़ा दिया। पर माँ अभी तक नहीं आई। माँ को बाहर की दुनिया की कोई जानकारी नहीं है। कभी ज़रूरत ही नहीं पड़ी। सब पिताजी करते थे। इसलिए बस, रिक्शा की उसे आदत नहीं। पुणे जैसे महानगर में अकेले बाहर जाने की कभी ज़रूरत ही नहीं पड़ी। हालाँकि, कम्प्यूटर की क्लास नज़दीक ही है, फिर भी पैदल की दूरी से कुछ आगे

* *वरिष्ठ साहित्यकार एवं लेखक, पुणे, महाराष्ट्र*

ही। तीन चौराहे पार करने होते हैं। बस के केवल दो स्टॉप हैं। फिर भी, रिक्शा लेने के लिए कहा था। शुभ्रा कभी सोचती है कि साइकिल उठाकर माँ को देखने निकल पड़े। इतने में सड़क पर रिक्शे से उतरता कोई दिखता है बाल्कनी से...पर वह माँ नहीं है। पिछले कुछ दिनों से उसमें कुछ अतिरिक्त साहस और धैर्य आ गया था। पर आज माँ की बात थी। वह दुःखी हो रही थी। तभी दरवाजे की बेल बजी। शुभ्रा और सुमीत भागते हुए दरवाजे की ओर लपके...पर सीधे दरवाजा नहीं खोला...शुभ्रा ने 'मैजिक होल' से देखा और उछल पड़ी - 'मम्मा'! दोनों माँ से लिपट पड़े।

सरिता ने दोनों को बाँहों में समेट लिया। उसके चेहरे पर थकान और चिंता थी। उसने अपने आँसू आँचल में छिपा लिए और बच्चों को सहलाने लगी।

'कैसा था पहला दिन...?' शुभ्रा ने पूछा।

'.....' केवल सिर हिलाकर सरिता ने बताया – अच्छा था। पहला दिन था। बहुत कुछ उसके मन में था। पर बच्चों से क्या कहे। अचानक उसने पूछा.

'खाना खाया तुम लोगों ने....?'

'आपने मोबाइल क्यों नहीं उठाया...?' शुभ्रा।

'अरे हाँ, जाते ही वहाँ कहा गया कि मोबाइल साइलेंट पर रखें। उसे शुरू करने का ध्यान ही नहीं रहा। ' काफी देर तक रिक्शा मिला ही नहीं। बस नंबर दिमाग से निकल गया। किसी से पूछने की इच्छा नहीं हुई, बस पैदल ही निकल पड़ी। पैसे भी बच गए। देर तो हो गई। शुभ्रा और सरिता की डबडबाई आँखों के संगम ने एक नई दुनिया देखी...।

शुभ्रा को और सरिता को सागर का यह फैसला बिलकुल ठीक नहीं लगा कि कोविड के इस भयंकर दौर में गाँव जाया जाए। आखिर शुभ्रा ने कह ही दिया,

'पापा चारों तरफ हालात बहुत खराब हैं। ऐसे में गाँव जाना...। '

सागर ने बात काटते हुए कहा, 'भैया ने तय किया है पिताजी को गए एक साल हो गए...उनकी बरसी है और मुंबई वाला भैया भी ज़ोर दे रहा है। ... कहते हैं यह तो करना ही पड़ेगा नहीं तो पिताजी की आत्मा शाँत नहीं होगी।

'पर बाद में भी तो किया जा सकता है... सरिता ने अपनी बात रखनी चाही। '

'मैं भी इसके पक्ष में नहीं हूँ। लेकिन, उन दोनों ने तय कर लिया है और माँ की भी इच्छा है कि होना ही चाहिए, बरसी पर गाँव-रिश्तेदारों को खाना खिलाना चाहिए!' सागर ने माँ की बात को अधिक महत्व दिया।

तय हो गया कि बरसी पर गाँव जाएंगे।

सागर रात भर सो नहीं पाया। पिताजी को गए साल हो गया। उसे भरोसा ही नहीं हो पा रहा कि समय इतना जल्दी निकल गया। किस तरह वह हर शनिवार को गाँव जाता था और इतवार की रात को लौट आता था। शुरू में जब वह पुणे आया था, तब वह बहुत छोटा कमरा किराये पर ले पाया था। माँ और पिताजी कुछ दिन तो साथ किराये के कमरे में रहे, पर यहाँ उनका मन न लगता। गाँव में थोड़ी ज़मीन थी, उसी में वे अपने

आपको व्यस्त रखते। सागर छोटी-मोटी नौकरी शहर में करता हुआ अपनी पढ़ाई करता रहा और पहले स्कूल में शिक्षक हुआ फिर जूनियर कॉलेज में लग गया। उसने मोटर साइकिल खरीद ली थी। ट्यूशन क्लासेस में भी पढ़ाने लगा था। बहुत मेहनत की और कुछ ही वर्षों में उसने लोन पर एक फ्लैट लिया और बाद में कार भी खरीदी। उसे लगता माँ-पिताजी उसके साथ रहें। पर उनका यहाँ मन न लगता। इस बीच दूर के रिश्ते की बेटी से सागर का विवाह हो गया। उसे दो संतानें हुईं – एक शुभ्रा और दूसरी सुमीत।

पिताजी की बीमारी को लेकर सागर चिंतित रहता। वह गाँव आता-जाता रहता। गाँव बहुत करीब नहीं था। पुणे से दो घंटे की दूरी पर था। पास के कस्बे के डॉक्टर के पास वह ले जाता। दवाइयों की व्यवस्था करता। पर एक दिन पिता हमेशा के लिए उससे विदा हो गए। कोविड शुरू हुआ ही था। पर जाना तो था ही। वह पत्नी और बच्चों के साथ गया। कोविड के डर से ज़्यादा उसे पिता के जाने का दुःख था।

साल तो बीत गया, पर कोविड फिर आ गया। वह अनमने ढंग से गाड़ी चला रहा था। पिता की अनुपस्थिति में वह पहली बार गाँव जा रहा था। कितनी यादें। कितना कुछ छूट गया। वातावरण गमगीन। कोई बात नहीं कर रहा। रास्ते में सुनसान। हाइवे पर कोई चहल-पहल नहीं। गाड़ियों की संख्या कम। होटलों में सन्नाटा। वैसे हमेशा ही इस हाइवे पर खूब ट्रैफिक और भीड़-भाड़ होती थी। पर आज चारों ओर सन्नाटा। सागर के भीतर खूब कोलाहल...पिताजी की बरसी, माँ और भाइयों का कार्यक्रम के लिए आग्रह...कोविड महामारी का प्रकोप...और पत्नी-बच्चों की तबीयत को लेकर एक डर भीतर उतर गया था। वह कार चलाते हुए हाइवे से उतरकर गाँव की सँकरी सड़क पर आ गया था। कार की गति को कम हुई, पर उसकी विचार-श्रृंखला तेज गति से उसे अपनी गिरफ्त में लेती जा रही थी। किसी तरह वह गाँव पहुँचा। घर पर सब उसका इंतज़ार कर रहे थे। बड़े भैया ने कह ही दिया, 'ज़रा जल्दी निकलना चाहिए था। काफी देर हो गई है। ' खैर, माँ को अच्छा लगा। एक चुप्पी सबको समेट चुकी थी। काफी भीड़ जुट चुकी थी। पहले तो अधिक लोग देखकर संतोष होता था, अब भीड़ भीतर डर फैलाती है। वह बच्चों को लेकर चिंतित था। बार-बार मास्क और सेनिटाइज़र की याद दिलाते रहता।

गाँव से निकलते-निकलते शुभ्रा का शरीर तपने लगा था। पुणे पहुँचते-पहुँचते सुमीत भी चपेट में आ गया। चिंताएँ बढ़ गईं दूसरे दिन टेस्ट करवाया। 'निगेटिव' निकला। जान में जान आई। पर चार दिन बाद मुंबईवाले भाई का फोन आया - 'माँ को कोरोना हो गया है। किसी भी अस्पताल में जगह नहीं है। तुम जल्दी निकल आओ... माँ तुम्हें याद करती है। '

उसने कार उठाई और मुंबई पहुँचा। वाकई कहीं जगह नहीं मिल रही था। प्राइवेट अस्पताल की हालत और गंभीर थी। हालाँकि, अस्पताल के खर्च को लेकर वे एक-दूसरे की ओर ताकते। सागर की इच्छा होती कि कहे. 'मैं तो कह रहा था, भीड़ में बरसी का क्या मतलब...। ' पर वह कुछ बोला नहीं। यह कुछ कहने का समय नहीं...ऊपर से माँ की हालत गंभीर। कातर निगाहों से वह बेटों को देख रही थी। सागर कार लेकर आया था। इसलिए दूसरा भाई निश्चिंत था। एक सेंटर से कोविड के दूसरे सेंटर में माँ को लेकर जा रहे थे। उस दिन कहीं एडमीशन नहीं मिला। मुंबई में सागर का एक मित्र अखबार में काम करता था। उससे सागर ने बात की। उसके प्रयास से माँ को एक कोविड सेंटर में जगह मिली। उसकी हालत बहुत खराब थी। वह ऑक्सीजन पर थी। खर्च के मामले में मुंबईवाला भाई जेब से हाथ न निकालता। सागर को दो बच्चों की चिंता थी। कोविड सेंटर में माँ से मिलने की गुंजाइश बिलकुल नहीं थी। उसने अपने भाई को एटीएम से दस हजार रुपये निकालकर दे दिए। वह ऐसे देख रहा था जैसे और की उम्मीद हो। सागर ने आखिर कह दिया और ज़रूरत

रही हो ट्राँसफर कर दूँगा। वह कुछ बोला नहीं। सागर शाम को ही पुणे के लिए चल पड़ा। चिंता माँ की भी थी और बच्चों की भी।

रास्ते में वह अपने भाई के बारे में सोच रहा था... पैसों का बड़ा मोह है उसे। गाँव से चलते समय उसने कहा था। अपने हिस्से की ज़मीन अब बेच देंगे। माँ को अपने पास रखूँगा। बस बँटवारा कर डालें। ज़मीन बहुत ज़्यादा नहीं था। गाँव का भाई पूरी तरह ज़मीन पर निर्भर कर रहा था। सागर ने ही यह विषय फिलहाल टालने के लिए कहा था। हालाँकि, सागर और इस भाई को वेतन लगभग समान था। पर मुंबई के खर्चे को लेकर वह हमेशा रोता रहता। पुणे पहुँचने तक सागर माँ, उसकी तबीयत और भाई के स्वभाव को लेकर सोचता रहता। घर पहुँचा तो बच्चों को बुखार तो उतर चुका था, पर पत्नी को हरारत महसूस होने लगी थी। ऐसी बातें सोसायटी में जल्दी फैल जाती हैं। लोग घर आने से कतराते हैं, पर इंटरकॉम पर पूछताछ, सलाह और मार्गदर्शन शुरू हो जाता है।

सागर सोच ही रहा था कि मुंबई में काफी खर्च हो गया। अब सरिता के टेस्ट के लिए भी खर्च होगा। क्योंकि जब तक 'निगेटिव' होने की खबर नहीं आएगी सोसायटी में चर्चाएँ होती रहेंगी। अभी ही बच्चों के टेस्ट में चौबीस सौ लग गए हैं। पर टेस्ट तो कराना ही पड़ेगा।

'टेस्ट' 'पॉज़िटिव' आ गया। उसके चेहरे पर हवाइयाँ उड़ने लगीं। कॉर्पोरेशन ने 'यहाँ कोरोना पॉज़टिव हैं' का सावधानी-सूचक कागज़ दरवाजे पर चिपका दिया। किसी का भी आना-जाना बंद। सलाहें शुरू। अपने फैमिली डॉक्टर से सलाह कर दवाइयाँ शुरू की। बात अनियंत्रित होती गई। इसी बीच उसने भी हरारत और खाँसी अनुभव की। बच्चों को अलग कमरे में रखा। सरिता की हालत गिरती गई। वह अपना टेस्ट टालता रहा। पर तीसरे दिन टेस्ट कराना ही पड़ा। वह भी 'पॉज़िटिव' निकला। पड़ोसियों और मित्रों की सलाह से वह अस्पताल में भर्ती होना चाह रहा था। पर आज मालूम हुआ कि कहीं बेड उपलब्ध नहीं है। पहले तो केवल टी.वी. में देख-सुनकर रोंगटे खड़े हो जाते थे। अब तो हवाइयाँ उड़ने लगीं।

सोसायटी में उसके संबंध बहुत अच्छे थे। लोग मदद के लिए तैयार रहते थे। पुणे महानगर में फ्लैट संस्कृति के बावज़ूद लोग बंद कमरों में कम ही रहते थे, क्योंकि अधिकाँश लोग बाहर से नौकरी के सिलसिले में यहाँ आए थे। फिर भी, कुछ सीमाएँ तो थीं हीं। अब दरवाजे पर कॉर्पोरेशन के 'पॉज़िटिव' होने की नोटिस चिपका देने के कारण लोग कतराने लगे थे।

तकलीफ बढ़ जाने के बाद दोनों कोविड सेंटर में भर्ती हो गए। चिंता बच्चों की थी। पर कोई विकल्प नहीं था। खुद शुभ्रा अब तैयार हो गई थी। अपने छोटे भाई को भी ढाढ़स बँधा रही थी। संकट शक्ति देता है। पड़ोसियों ने मदद की। दोनों पास-पास बेड पर थे। दिन भर चिंता के अलावा कोई काम न था। बच्चों से बातें करते मोबाइल पर। हाल-समाचार लेते और देते। सुमीत छोटा था। माँ को याद करता रहता। लगभग एक हफ्ता हो गया था।

एक दिन अचानक बताया गया कि यहाँ ऑक्सीजन की व्यवस्था नहीं है। अतः, ऑक्सीजन-बेड की व्यवस्था करनी होगी। भगदड़-सी मच गई। पास-पड़ोस, रिश्तेदार-मित्र तलाश में जुट गए। व्यवस्था नहीं हो पा रही थी और तबीयत गिरती जा रही थी। सरिता कुछ बेहतर थी। सागर की तकलीफ बढ़ती जा रही थी।

सागर एक स्थानीय अखबार में हर शनिवार को एक कॉलम लिखता था। इस हफ्ते का कॉलम भी वह मोबाइल पर भेज चुका था। पर अब उसकी हालत गिरती जा रही थी। कॉलेज के साथी, उसके वर्तमान और पूर्व

विद्यार्थी तथा जिस अखबार में वह कॉलम लिखता था उसके सम्पादक और पत्रकार ऑक्सीजन वाले बेड के लिए प्रयास में जुट गए। सरिता चिंतित थी और सागर घबराया हुआ। बात-बात में बच्चों का विषय समय को बोझिल बना जाता। ऑक्सीजन वाले बेड का न मिल पाना अदृश्य दहशत दे जाता। दोनों एक-दूसरे को दिलासा देकर चिंता में डूब जाते। सागर अब छटपटाने लगा था और डॉक्टर रिश्तेदारों को सचेत करते रहे थे। मुंबई से उस भाई का फोन आता रहता। माँ की तबीयत का हाल-समाचार देता रहता। मुश्किलों का ज़िक्र करना न भूलता। सागर और सरिता बातें सोचते रहते कि बरसी का कार्यक्रम न होती तो यह संकट न आता। पर दोनों भाइयों और माँ की ज़िद ने यह क्या कर दिया। पर अब पीछे जाकर सोचने की सुविधा न थी...ऑक्सीजन... ऑक्सीजन बेड किसी तरह आज मिले अन्यथा...!

तमाम सूत्रों और स्रोतों की गहमागहमी, भागदौड़, संपर्क जो-जो हो सकता था, सब कोशिशें जारी थीं। चूँकि, वह 'लेखक' भी था तो किसी कार्यक्रम में उसका परिचय कंटोनमेंट के प्रमुख अधिकारी रहे एक सज्जन से हो गया था। अखबार के सम्पादक भी प्रयास में थे। दोनों के मिले-जुले प्रयास से एक बेड की व्यवस्था हो गई। अब ऐंबुलेंस मिलना मुश्किल हो रहा था। उसके लिए भी बहुत भागदौड़ करनी पड़ी। रात ग्यारह बजे ऐंबुलेस की व्यवस्था हो पाई। सरिता ने सागर को देखा और सँभल नहीं पाई। फफक पड़ी। अवश्य सागर हाथ से ही धीरज बँधा रहा था। उसके हाथ-पाँव में कोई ऊर्जा नहीं थी। स्ट्रेचर पर उसे डालकर ऐंबुलेस में चढ़ाया गया। इतनी चिंताजनक स्थिति में भी उसने अपने सिरहाने हमेशा साथ रखने वाला छोटा सैक टटोलकर रख लिया। क्योंकि उसी में उसके क्रेडिट-डेबिट एटीएम कार्ड, पहचान-पत्र और कुछ नकदी थी। कुछ नकदी उसने सरिता के पास रखी थी।

नये हॉस्पिटल में पहुँचने पर वह कुछ आश्वस्त हुआ। ऑक्सीजन लगने पर वह कुछ बेहतर महसूस कर रहा था। थोड़ी-बहुत बात भी करता। कोविड सेंटर से इस हॉस्पिटल में लाने में सोसायटी के पड़ोसियों ने और एक पत्रकार मित्र ने बहुत मदद की। केवल एक रिश्तेदार इस भागदौड़ में जुटा रहा।

दूसरे दिन सुबह उसके लड़खड़ाते वाक्यों में सरिता से बात की। शुभ्रा और सुमीत से बात की। अपने एक मित्र अनादि से सागर निरंतर बात करता रहा था। पर अब संभावना कम होती जा रही थी, क्योंकि जल्दी ही उसकी साँस फूल जाती। अनादि पूरे तन-मन-धन से सारी सुविधाएँ जुटाने में लगा था। रात-दिन सम्पर्क से लोगों को जोड़े रखना अनादि की दिनचर्या में शामिल था। चारों ओर से सागर का ध्यान रखा जा रहा था। पर सागर भीतर से टूट चुका था। इस बीच हॉल में किसी की साँस टूटने का दृश्य देखकर वह सिहर उठता। अपने में खो जाता। बहुत अजीब-अजीब खयाल आते। अब वह किसी का मोबाइल न उठाता। मोबाइल चार्ज करने की भी सुध न रहती। ऑक्सीजन तो लगा रहता पर वह अचेत-सा ही रहता।

शाम को वह अनादि को केवल इतना कह पाया कि उसे भोजन में कोई स्वाद नहीं लग रहा। खाने से अरुचि-सी हो गई है। कुछ फल, जूस और अपने पसंदीदा खाने की बात उसने कही। डॉक्टरों ने कुछ दवाइयाँ बाहर से लाने को कहा। मित्र-रिश्तेदार-पड़ोसी उसके लिए यह सब लाकर पहुँचा रहे थे। भीतर जाने की किसी को अनुमति नहीं थी। रिशेप्सन काउंटर पर यह सब रखना होता। जब फल और जूस उस तक पहुँचा तो उसके लिए कुछ मनलायक हुआ। जूस पीकर उसने अनादि को धन्यवाद दिया। अब कुछ-कुछ वह बोलने लगा था। पर उसे बात करने में सुविधा नहीं थी। कभी माँ, कभी सरिता, कभी शुभ्रा-सुमीत तो कभी अनादि उसके मन-मस्तिष्क में घूमते रहते। हमेशा उनींदा, जागी-अनजागी स्थिति। आँख खुलती तो पता नहीं क्या-क्या सोचता रहता। माँ की तबीयत का भी कोई समाचार नहीं। भाई का फोन भी दो दिन से नहीं आया। बस ही सोचते-

सोचते उसकी आँख लग जाती। एक बार तो डॉक्टर आए, जाँचा, फिर भी उसकी आँख नहीं खुली।

डॉक्टर का सम्पर्क अनादि से ही होता। डॉक्टर ने कहा कि सागर को प्लाज़्मा की ज़रूरत है। और कुछ पूछने पर डॉक्टर की ओर से एक ही बात उभरती – कोशिश जारी है... डॉक्टर वैसे भी बहुत कम बोलते। उनकी चुप्पी और कम बोलने का अर्थ लगाने में डर लगता। प्लाज़्मा की खोज शुरू हुई। वाट्सअप पर बहुत सारी जानकारी आती। प्लाज़्मा डोनर की भी जानकारी आती। वाट्सअप का इस हालत में काफी उपयोग हुआ। स्वयंसेवी संस्थाओं की भी मदद मिली। ताज़ा खून प्लाज़्मा का मिला। भागमभाग करके डॉक्टर तक पहुँचाया गया। और माँग की गई। हालाँकि, कठिनाई और परेशानी हुई पर अनादि और पड़ोसियों ने हासिल किया और डॉक्टर ने जो-जो कहा, सब समय पर लाने में सफलता मिली। अभी तक जो समाचार थे कि दवाइयाँ, प्लाज़्मा की कालाबाज़ारी हो रही है, उससे भी जूझकर हर हाल में सब कुछ जुटाया गया।

धीरे-धीरे सागर के फोन कम आने लगे। डॉक्टर भी ठीक से जवाब न देते। सबकी चिंता बढ़ने लगीं। सागर अर्धचेतन स्थिति में माँ के बारे में जानना चाहता पर मुंबई से भाई का फोन ही न आता। बस एक बात यह अच्छी हुई कि सरिता को कोविड सेंटर से डिस्चार्ज मिल गया। बच्चों की चिंता कम हुई, पर सागर की चिंता बढ़ती चली गई। तभी डॉक्टर का फोन आया। तत्काल 'रेंडिसिविर' इंजेक्शन की आवश्यकता है। रोज एक देना होगी – छह दिन तक...!

नई चुनौती सामने थी। चारों ओर रेंडिसिविर की कमी थी और कालाबाजार में चालीस-पचास हजार में बिक रही थी। अनादि ने चारों ओर प्रयास शुरू कर दिए। कहाँ-कहाँ नहीं पूछा। जिस दाम में भी मिला – एक इंजेक्शन हासिल कर डॉक्टर के पास भिजवाया। अब सागर से सम्पर्क नहीं हो पा रहा था। केवल डॉक्टर ही जानकारी का जरिया थे। पर वे ज़्यादा कुछ न बताते। व्यस्तता होती या बताना न चाहते थे। कहते रेंडिसिविर देने के बाद 'ऑब्ज़र्व' करेंगे। भागदौड़, फोन-सम्पर्क और पानी-सा पैसा बहाने पर दो इंजेक्शन मिले। अभी और तीन हासिल करने थे। इसमें से एक ब्लैक में लिया। एक स्थानीय एमएलए से मिला और एक पुलिस अफसर से। डॉक्टर के अनुसार सभी छह इंजेक्शन दिए पर सागर की हालत में खास सुधार नहीं। सरिता निरंतर अनादि के सम्पर्क में रहती। उसकी चिंता लम्बे फोन पर बातचीत में झलकती। अब सागर से न बातचीत होती, न मुलाक़ात, न डॉक्टर से हाल-समाचार...एक दबाव, एक दुःस्वप्न...एक आतंक सभी के बीच घिर गया।

अचानक एक दिन डॉक्टर ने अनादि को फोन किया कि हॉस्पिटल का ऑक्सीजन खत्म हो गया है। सागर को तुरंत कहीं शिफ्ट करना होगा। फिर अफरातफरी, भागदौड़, ऑक्सीजन बेड की तलाश...सागर से कोई सम्पर्क नहीं...मोबाइल बंद...शायद बैटरी खत्म...उसकी स्थिति का हॉस्पिटल के बाहर कोई अंदाज़ नही...अब वहाँ से शिफ्ट करना होगा। पूरे देश में ही ऑक्सीजन की सप्लाई की कमी थी। अंततः, अखबार के सम्पादक के प्रयास से सेना के अस्पताल में एक बेड की व्यवस्था हुई। रात को दो बजे सागर को वहाँ शिफ्ट किया गया। उस समय उसके पड़ोस से दो युवक और एक रिश्तेदार अस्पताल के बाहर दूर से उसे देख रहे थे। वह अचेत ही था। स्ट्रेचर से उसे ऐंबुलेस में चढ़ाया जा रहा था। वह हाथ टटोलकर अपने सैक का पता लगाना चाह रहा होगा...केवल मोबाइल ही उसके हाथ लगा...वह भी निर्जीव...उसकी बैटरी खत्म हो चुकी थी...सागर की आँखें मुँदी हुई थीं। वह अचेत ही था। बयालीस साल का सुदृढ़, सुंदर सागर दस दिन में कितना कमज़ोर और असहाय था कि आँखें खोलकर किसी को देख भी नहीं पाता...ऐंबुलेस सेना अस्पताल की ओर रवाना हो गई...

सरिता लगातार अनादि और पड़ोसी युवकों के संपर्क में थी। स्थिति चिंताजनक है, वह जानती थी। इसी बीच, मुंबईवाले भाई का फोन आया कि माताजी नहीं रहीं। सागर को बताने की गुंज़ाइश भी नहीं थी। माँ को न सागर के बारे में कुछ पता था और न सागर को माँ के बारे में...कोरोना ने आदमी, रिश्ते, समाज से इतनी दूरी बना दी कि मनुष्य एकाकी मृत्यु के लिए विवश हो गया। आदमियों के जंगल में इतना अकेला आदमी शायद पाषाण युग में भी न रहा हो!

मित्रों, रिश्तेदारों में से किसी को मिलने की अनुमति न पहले थी और न अब है। वैसे भी यह सेना का अस्पताल था, यहाँ का अनुशासन और सुरक्षा व्यवस्था बहुत कड़ी थी। हाँ, डॉक्टर से सम्पर्क करने की सुविधा थी। पर डॉक्टर की व्यस्तता इस सुविधा का लाभ नहीं दे पा रही थी। कई फोन के बाद एकाध बार अनादि को बताया कि सागर होश में पूरी तरह नहीं है, पर दवाइयों को रिस्पाँड कर रहा है। अनादि से भी बात इसलिए क्योंकि सागर के एडमिट कार्ड पर सम्पर्क के लिए अनादि का मोबाइल नंबर लिखा था। डॉक्टर की प्रतिक्रियाओं के उम्मीद जगती और निरंतर सुधार न होने का समाचार सबको उदास कर जाती।

अनादि के मोबाइल पर रात को तीन बजे डॉक्टर का नम्बर उभरा। अनादि सशंक हो उठा। थरथराते हाथों से उसने मोबाइल उठाया... 'सॉरी, हम सागर को बचा नहीं पाए, ही इज़ नो मोर...। ' डॉक्टर ने फोन रख दिया। मिनटों में यह दुःखद समाचार सभी मित्रों और रिश्तेदारों में पहुँच गया। अनादि बदहवास! सबसे बड़ा सवाल था सरिता को कैसे बताया जाए। यह जिम्मेदारी सोसायटी के पड़ोसियों को सौंपी गयी...

सुबह दस बजे सेना के अस्पताल के मेन गेट पर अंतिम दर्शन के लिए सागर की बॉडी रखी गई थी। गाँव का और मुंबई का भाई सपरिवार आए थे। सरिता, शुभ्रा, सुमीत ने अंतिम रूप से सागर को देखा...उनकी आँखें, आवाज़ और विलाप शब्दातीत हैं। बस पाँच लोग ऐंबुलेंस में गए। कोविड के नियमानुसार सब हो रहा था। वैसे भी परिचितों, मित्रों, रिश्तेदारों को कोविड ने पहले ही रोक दिया था। सब बच्चों के भविष्य को लेकर चिंतित थे। सरिता निःशब्द थी। बच्चों को बाँहों में भींच लिया और घर लौट आई। अनादि नहीं सोच सकता था कि सागर को इस अवस्था में देखे। वह नहीं गया।

बाद में, मालूम हुआ कि सागर के पास केवल मोबाइल था। वह भी डेड। सैक गया तो उसके पास सिर्फ मोबाइल था। बाकी कुछ नहीं। रिकॉर्ड में भी इतना ही दर्ज़ था। क्या करें...क्या पुलिस...क्या तहकीक़ात... अब क्या फायदा...मुख्य व्यक्ति ही चला गया!

अगले दिन गाँववाला भाई चला गया। बस फोन पर ही रिश्तों-नातों की संवेदनाएँ आती रहीं। सरिता और बच्चों का सब कुछ लुट चुका था। दुःख उनके कलेजे तक समा चुका था। सरिता के लिए यह सभी कभी समाप्त न होने वाली अंधी सुरंग थी। इस तरह सागर का अचानक चला जाना उसे भीतर तक खोखला कर गया। उसकी ज़िंदगी पहाड़-सा बोझ बन गई। वह लगभग अपनी आवाज़ खो बैठी। लेकिन, बच्चों को देखकर वह साहस बटोरने में जुट गई। सोचने लगी वह कि जिसने बहुत ज़िद की वह भाई गाँव चला गया। माँ भी नहीं रही। और यह मुंबईवाले भाई ने भी बरसी के लिए ज़ोर डाला और सारा परिवार ही कोरोना की गिरफ्त में आ गया। सागर के लिए वह छटपटा उठती और उसकी मृत्यु के लिए इन तीनों को ही ज़िम्मेदार मानती। पर सब कुछ छूट चुका था। धुँधली-सा आशा, घर लौटने की उम्मीद, संघर्ष का साहस, भगवान पर आस्था सब छिन्न-भिन्न...!

मुंबईवाला भाई, परिवार सहित लौटने को तैयार। बोला, 'ये पंद्रह दिन बहुत भयंकर रहे हमारे लिए...

पहले माँ गई और अब सागर...सागर ठीक कह रहा था, इस कोरोना में बरसी जैसा कुछ नहीं करना था...पर होनी को कौन टाल सकता है...। ' किसी ने कोई प्रतिक्रिया नहीं दी तो स्वयं ही कहने लगा, 'इन पंद्रह दिनों में बहुत खर्च हो गया। '

सागर ने भाई के साथ मिलकर पुणे में एक और फ्लैट इन्वेस्टमेंट के रूप में लिया था। फ्लैट मिला नहीं था। पर मिलने पर बैंक की किस्त शुरू हो जाएगी। इसी की चिंता में कह रहा था अब किस्त कैसे भरेंगे? सरिता को आश्चर्य हो रहा था कि भाई को गए एक दिन भी नहीं हुआ और यह आदमी पैसों की चिंता में डूबा जा रहा है। हालाँकि, किस्त देना अब आसान नहीं, पर यह विषय अभी निकालना क्या ज़रूरी था...सरिता उठकर बेडरूम में चली गई। सरिता, सागर की मृत्यु के लिए सबसे अधिक ज़िम्मेदार इसी भाई को मानती है। इसी के लिए इसके साथ व्यवहार को लेकर वह सागर से अनमनी रहती थी कि संयुक्त रूप से कुछ न किया जाए। पैसों को लेकर यह भाई बहुत अजीब व्यवहार करता है। आज भी ऐसे समय यह विषय उसने कुरेदा। जितना समय यहाँ रहा, बस हिसाब करता रहा। अब घर कैसे चलेगा? इस फ्लैट की किस्त कितनी है...कार की किस्त कितनी है...बच्चों की पढ़ाई का क्या होगा...इस बारे में कोई बात नहीं। सरिता नौकरी नहीं करती, आय का दूसरा कोई साधन नही...कोई बात उसने नहीं निकाली। दोपहर तीन बजे वह अपने परिवार के साथ मुंबई रवाना हो गया।

दो-तीन दिन रुककर माँ-पिताजी भी चले गए। अब वह नितांत अकेली। सागर की छवि रात-दिन उसके साथ होती। बच्चों को देखकर उसके आँसू ठिठक जाते। पर आँखों की सूजन से भला कब क्या कुछ छिप पाया है। वह अपने आपको नितांत अकेली और असहाय पा रही थी। शुभ्रा माँ के पास आकर बैठ गई। अपने पापा का मोबाइल उसके हाथ में था। बस यही लौट पाया था। बैग तो गायब थी। उसने मोबाइल चार्ज किया था और माँ बता रही थी कि बैंक के क्रेडिट-डेबिट कार्ड से ऑनलाइन पैसे तो नहीं निकले हैं। ढेरों मिस कॉल और मैसेज़ेस हैं। सरिता निर्विकार-सी उसे ताक रही थी। सोच रही थी कि किस तरह कुछ ही दिनों में शुभ्रा कितनी सयानी हो गयी है।

रोज कोई न कोई मिलने आता। कॉलेज का स्टाफ, अखबार के सागर के मित्र। सोसायटी के लोग। सब आश्चर्य व्यक्त करते कि भाई इतनी जल्दी कैसे चला गया। सरिता अनादि को सारी घटनाएँ बताती रहती। अनादि भी उससे मिलता रहता। बच्चों के लिए 'बिग बास्केट' के कुछ न कुछ भिजवाता रहता। एक दिन वह अपनी पत्नी के साथ सरिता से मिलने गया। उसी समय उस अखबार का सम्पादक भी आया, जिसमें सागर कॉलम लिखता था। सोसायटी का एक दंपती आ आया था। जाते समय उन्होंने सरिता को एक लिफाफा दिया। सरिता ने खोलकर देखा तो उसमें पाँच हजार रुपये थे। सरिता के मना करने पर भी वे नहीं माने...सरिता को लगा, वह कितनी दयनीय हो गई है। उसे सागर की याद आई कि सरिता कुछ पढ़कर समर्थ हो जा। कभी ऐसा समय न आए कि तुम्हें अपने पैरों पर खड़ा होना पड़े, किसी के सहारे की तुम्हें ज़रूरत न हो...इन्हीं बातों ने उसे ग्रेजुएट करवाया। छोटे से कस्बे से आई सरिता पुणे के माहौल में घुलमिल गई। पर नौकरी करने जितना साहस नहीं जुटा पाई। आज किसी पड़ोसी के पाँच हज़ार रुपये का लिफाफा उसे और असहाय बना गया। सम्पादक और अनादि के सामने यह घटा...उसकी आँखों में आँसू छलक आए।

सम्पादक ने कहा, 'भाभीजी, हम कोशिश करेंगे कि आपको कहीं नौकरी मिल जाए...पर इसके लिए कम्प्यूटर का सामान्य ज्ञान आना चाहिए। ' शुभ्रा की आँखें चमकीं और माँ पर ठहर गईं एक बात अनादि से भी कि हम जनसामान्य से अपील करेंगे – मदद के लिए। ऐसे पैसे किसी से लेने में भाभीजी की खुद्दारी

अनुमति नहीं देती। लेकिन, सीधे खाते में पैसे जमा हों तो ठीक रहेगा। अनादि ने सहमति जताई। सम्पादक ने एक कवर स्टोरी बनाई और इस परिवार की कथा-व्यथा उसमें रखी। साथ में, सरिता के बैंक विवरण की जानकारी भी। उसका तत्काल असर हुआ। कॉलेज के स्टाफ ने सोशल मीडिया पर इसे तत्काल डाल दिया। सागर एक लोकप्रिय अध्यापक था। उसके पुराने और वर्तमान विद्यार्थियों ने इस स्टोरी को दूर-दूर तक पहुँचाया। शुभ्रा और सुमीत के स्कूल ने साल भर फीस माफ कर दी। खाते में दूर-दराज से रोज कोई न कोई रकम जमा होती। मोबाइल पर जानकारी आते ही शुभ्रा माँ को बताती। एक महीने में सात लाख रुपये जमा हो गए। हालाँकि, रकम बहुत बड़ी नहीं थी, पर समाज की संवेदना ने सरिता को खड़े रहने के लिए उकसाया।

बार-बार सम्पादक की बात सरिता के कानों में गूँजती है कि हम नौकरी के लिए प्रयास करेंगे। बस थोड़ी-बहुत कम्प्यूटर की जानकारी हो तो आसानी हो जाती।

शुभ्रा का उसे बहुत सहारा है।

सरिता घर का सारा काम निपटाकर रोज कम्प्यूटर क्लास के लिए जाती है...!

●●●●

गर्म भात

सोमा बंद्योपाध्याय*

रोते - रोते पता ही न चला कब दोपहर से शाम हुई, कब शाम से रात! अब उसकी आँखों में आँसू नहीं थे। अब उसकी जगह डर ने ले ली थी। भयंकर भविष्य की कल्पना से वह रह - रहकर काँप उठ रही थी। उसे भूख लगी थी। बहुत तेज भूख! सबेरे से वह इस ताला बंद कमरे में हाथ बँधे हुए होने की हालत में पड़ी थी।

उसके लिए रखी हुई दो सूखी रोटियों में से आधे से ज्यादा तो चीटियाँ खा चुकी थीं। वह छाती के बल पर चलकर यानी रेंगते हुए ऊंची कलई वाली थाली में रखा पानी जीभ से चाटकर अपनी प्यास बुझाती है। प्यास क्या बुझाती है, समझो भूख को दबाती है। तब एक दीर्घश्वास के साथ उसके हृदय से मचकर एक आवाज़ निकलती है— मुझे और मत मारो काकी माँ (चाची)।

उसने अपराध ही ऐसा किया था। पिछली रात चोरी की थी उसने एक कर्छी भात। उसे भूख लगी थी। भात की भूख। इसी भात के लिए न वह इतनी दूर अपने परिवार से, गाँव से बिछड़कर इस महानगर में इन अपरिचित लोगों के बीच पड़ी थी। भोर चार बजे से उठकर रात के बारह बजे तक वह खटती थी।

उम्र उसकी तेरह साल थी पर देखने में नौ-दस की ही लगती थी। पतली दुबली, काली-सी। नहीं-नहीं उसे कोई बीमारी नहीं थी, सिर्फ़ एक के सिवा। उसे भूख बहुत लगती थी और वह भी भात की भूख। यह बीमारी सिर्फ़ उसे नहीं, बेलागढ़ के पहाड़-तले बसे उस छोटे से गाँव के सभी को यह बीमारी थी, जहाँ उसका परिवार रहता था। छोटे-बड़े-बूढ़े सभी को। जहाँ गंदे कीचड़ भरे अधसूखे पोखरों से साग-पत्ते और चीटियों के अण्डे खाकर लोग जीते हैं। कभी पोखर में एक-आध छोटी मछली या केंकड़ा मिल जाये तो समझो घर पर उत्सव का माहौल बन जाता है। गर्म भात तो एक रंगीन सपने के समान है। नंग-धड़ंग, अपुष्ट, हड्डियों के ढाँचों से भरा वह गाँव सारी सरकारी सुविधाओं से वंचित वह गाँव। जहाँ खाने को ना हो, वहाँ भूख एक बीमारी ही तो होती है।

लाख चाहकर भी वहाँ वापस नहीं जा पायेगी वह। दो-ढाई वर्ष पहले वहीं से दूर की एक मासी उसे यहाँ ले आयी थी। तब उसके (तथाकथित) मासी और मौसा जो इसी महानगर में रहते थे, उसके लिए किसी परीकथा के रानी और राजा से कम न थे कितनी महंगी सितारों वाली 'रेशमी साड़ी' और 'लिपिस्टिक' लगाकर काले गॉगल्स पहनकर आयी थीं मासी, और मौसाजी भी सिर पर खुशबूदार तेल और गले में रंगीन

* *कुलपति, संस्कृत कॉलेज एवं विश्वविद्यालय, कोलकाता*

रुमाल बाँधकर, बढ़िया पैण्ट-शर्ट और जूते पहनकर आये थे। तब सारे गाँव वाले देखते ही रह गये थे। पोशाक के नाम पर औरतों को पता था तीन हाथ वाली साड़ी और पुरुषों का घुटनों से ऊपर तक किसी तरह ढँक जाये,ऐसी धोती, सर्दियों में अधिक से अधिक एक 'दोलाई' (सस्ता चद्दर)। जब वे दोनों उनकी झोपड़ी के दीन-हीन आँगन में बैठकर महानगर की कहानियाँ सुना रहे थे तो लग रहा था जैसे कोई परीकथा सुनी जा रही है। बुनी सबसे हैरान हुई थी कि वहाँ भर पेट भात खाने को मिलता है। बस वहाँ किसी शहरी बाबू के घर काम करना पड़ेगा। मोटी तनख्वाह तो मिलेगी ही, साथ में खाने को पेट भर भात और कपड़े भी। फिर क्या था, बुनी के बाप ने दोबारा नहीं सोचा। वैसे भी सात बच्चों के बाप को सोचने-समझने की ताकत कहाँ होती है। 'पेट' ही उनके लिए सबसे बड़ा सच होता है।

फिर क्या था कई रंगीन सपनों का जाल बुनते-बनते बस से लालगंज, वहाँ से 'इस्टीमर' में नदी पार कर, फिर 'टिरेन' से महानगर तक का सफ़र तय किया था। बुनी ने, वो जैसे एक सुनहरा सफ़र था उसके लिए। जिसने कभी लालगंज की हाट के बाहर कुछ देखा ही न था। उसे याद है, उसे विदा करने गाँव की उसकी उम्र की सारी लड़कियाँ बस स्टॉप पर आयी थी। मासी ने उन्हें भी ले आने का वादा किया था।

मासी ने नये कपड़े खरीद दिये। फिर एक दिन ले गयी बाबूजी के घर, ये ऊंची इमारत। मासी उसे 'फिलाट' कह रही थी। वहीं दो तल्ला पूरा का पूरा बाबूजी का। उसे याद है कैसी मीठी-मीठी बात की थी बाबूजी और उनकी पत्नी ने। उसे बड़े प्यार से 'काम' समझाया था। कहा था, घर की बेटी की तरह ही रहेगी। घर के छोटे-मोटे कामों में मेरा हाथ बँटायेगी। उसे एक जोड़ी फ्रॉक और रबर की चप्पलें दी गयी थीं। घर के तौर-तरीके समझाये गये थे। दोपहर को गरम-गरम भात परोसा गया था। उसकी तो जैसे परीकथा ही सजीव हो गयी थी। फिर उसे कमरे में जाने को कहा गया था। जाते - जाते उसने देखा मासी फुसफुसाकर कुछ कह रही थी और बाबूजी की पत्नी मासी के हाथ में रुपये रख रही थी, एक - दो नहीं पूरा एक बंडिल। उसकी आँखें फटी की फटी रह गयी थीं।

इस घर में काका-काकी (यही सम्बोधन उसे करने को कहा गया था) के अलावा बड़ी दीदी, बड़े दादा (भैया), बउदी (भाभी) और एक मामा (चाची जी के भैया, न जाने इस घर में क्यों रहते थे)। पहली रात को किचन में ही टाट बिछाकर सोने को कहा गया था। रात को भात नहीं रोटी मिली। जब पूरे घर की बत्तियाँ बुझा दी गयीं, तब पहली बार अकेली सोयी बुनी को माँ बाबा, भाई-बहनों की याद सताने लगी। भात के लालच में अब तक कैसे यह अपनों को भुला बैठी थी छोटी-सी बुनी की आँखों से आँसुओं का समन्दर उफन पड़ा। दूसरे दिन से न जाने क्यों उसका परीलोक दैत्य लोक बन चुका था। सबेरे से ही उसकी अन्तहीन यातनाओं की कथा आरम्भ हो गयी, जब वह पाँच बजे के बाद भी सोती हुई पायी गयी ...।

तब से उसका दिन चार बजे शुरू होता। पूरे घर की डस्टिंग करती, बरतन माँजे रखती। फिर सबके लिए बेड टी बनाती। छह बजते न बजते इकतीस सीढ़ियाँ पानी भरी बाल्टी घसीटकर छत पर ले जाती, बड़ी दीदी शौक से टॉब में लगाये पौधों को पानी डालने। जब पानी डाल रही होती तब मामा जी वहाँ धप्प - धप्प आवाज़ के साथ उठक-बैठक कर रहे होते। बर्जिश ख़त्म होते ही आते और उसे अपने गंदे हाथों से स्पर्श करना चाहते, तब वह सूनी आँखों से देखते हुए सब कुछ सहती और फिर मामाजी कहते "जा, जाकर दीदी को बता घूरकर क्या देख रही है। जा बता, दीदी तुझे ही लातो से मार डालेगी। " उसका मन कहता, मामा जी चाहे इस बात के लिए उसे मारे न मारे पर ठीक से डस्टिंग न करने पर या बरतन न माँजने पर या कपड़े न धोने पर ज़रूर लातों से उसकी मरम्मत करेगी। वह चुपचाप होंठ भींचे नीचे चली जाती। " शुक्र मनाओ तुम्हें सोना

गाछी में नहीं, हमारे पास बेच गये। " मामाजी हो ... हो करके हँसते। उनके हाथों से निकला दर्द सीने से उठकर बुनी के दिमाग में फैल जाता।

सबेरे नाश्ते के लिए बनाये गये पराठे या फिर टोस्ट किये हुए ब्रेड अगर ज़रा जल जाते, तब बउदी उसका मुँह दबा देती और चाची लगातार उसके पीठ पर लातों की बरसात करती। लकड़ी का बेलन फेंककर मारती, गर्म टोस्टर से उसके पीठ पर निशान बना देती और वह इस डर से कि चीख न निकल जाये कहीं अपना जीभ काट लेती। उसे रोते-तड़पते छोड़ वे लोग रसोई से निकल जाते। तब दीदी चुपके से आती और उसके घावों पर मरहम लगाती। बस वही एक थी, जिसे उसकी परवाह थी। दीदी का अपनापन ही तो उस दैत्य लोक को कभी-कभी परीलोक में बदल देता था। सचमुच दीदी परी थी। पर दो साल पहले उसकी भी शादी हो गयी। अब उससे सहानुभूति रखने वाला उस घर में कोई नहीं था। तनख्वाह के बारे में तो पूछना दूर, उसकी उस तथाकथित मासी या मौसा को फिर कभी देखा नहीं था उसने। माँ-बाबा की याद आते ही कलेजा मुँह को आ जाता। एक बार बोली थी तो उसका सर दीवार से बुरी तरह टकरा दिया गया था। दो दिनों तक उठ नहीं पायी थी वह।

सबेरे सबका नाश्ता हो जाने के बाद उसे दो पीस बासी पावरोटी या एक बासी रोटी दी जाती थी, वह भी गुड़ के साथ। फिर सबको खाना खिलाने के बाद दोपहर तीन बजे, घर भर के लोगों के सूखे कपड़े छत से उतार लाती, उन्हें तह करके रखती, तब कहीं जाकर उसके खाने का समय होता। खाने के मेज़ के नीचे उसके लिए रखी हुई मुट्ठी भर भात, उस पर थोड़ी-सी छिड़की गयी दाल और 'पाँच-मिशाली' (पाँच सब्जियों से बनी तरकारी) लेकर जब वह खाने बैठती, उसकी आँखों से झर-झर आँसू बहते। वह होठों को ठीक से खोल भी नहीं पा रही थी। भात मुँह में डालेगी कैसे? चाचाजी ने सबेरे मुँह पर लात जो मारी थी। झाड़ू देते वक्त टेबुल पर से उनकी कीमती 'ऐश ट्रे' गिरकर टुकड़े हो गये थे। उसकी सजा तो मिलनी ही थी न? उसके सामने भात रखा था। इसके लिए ही न इतनी यातना सहती है वह? वही भात अब सामने है, पर खा भी नहीं पा रही है वह। टप-टप नमकीन आँसू उसके मसले होठों को सहलाते हुए भात पर गिर रहे थे।

कई बार सोचती भाग जाये। पर जायेगी कहाँ? इतने बड़े शहर में कौन था उसका? ढाई साल पहले जो इस " फिलाट " में एक बार प्रवेश किया तो उसे कभी बाहर जाने दिया इन लोगों ने दुर्गा पूजा के नाम पर भी बस खिड़की से आती झाँकी की आवाज़ ही उसके कान सुन पाते थे। इसी तरह से रोज़ की मौत मरकर भी जी रही थी, पर कल रात तो गजब ही हो गया। सबेरे से ही उसकी तबीयत ठीक नहीं थी। किसी तरह काम पूरा कर रही थी। रात को दीदी और जमाई बाबू आये थे। खाना खाकर ग्यारह बजे तक चले गये। सबके खा लेने के बाद उसे तीन पीस पाव रोटी देती हुई काकी बोली, "आज इसी से काम चला ले, रोटी खत्म हो चुकी है।"

"पर काकी, भात तो है न, मैं थोड़ी भात ले लूँ?" बस यही एक वाक्य उसने कहा था।"

तेरा लालच तो दिन पर दिन बढ़ता ही जा रहा है। मैं हैरान हूँ, यह देखकर। तू बाप के घर क्या खाती थी रे यह भात कल सबेरे हमारा कुत्ता राकी खायेगा। अब जो दिया है, चुपचाप खा ले।"

बुनी के छोटे से दिमाग ने इस बात को समझने से इनकार कर दिया। वे लोग बासी भात कुत्ते को देंगे, भिखारी को देंगे पर उसे नहीं। इसे क्या कहा जाये?

अब तक तो बुनी मान जाती थी पर कल रात को उसके दिल और दिमाग ने उसका साथ नहीं दिया और तेरह वर्ष की बुनी ने जल्दी-जल्दी एक कर्छी भात और थोड़े-से दूध की जीवन में पहली बार चोरी की।

उसने जल्दी - जल्दी भात और दूध मिलाकर खाना शुरू किया। खा ही लेती पर न जाने कहाँ से यमदूत की तरह बउदी आ गयी।

"अरी माँ, देखो, यह क्या कर रही है। तो तुझमें यह गुण भी हैं?"

और फिर उसकी जो गति हुई वह शब्दों में अवर्णनीय है। उस घर में नित्य कुछ न कुछ पकवान बनते पर उसमें बुनी का हक न था। खीर क्या होती है पुलाव का स्वाद कैसा होता है, बुनी ने कभी जाना ही नहीं था। उसकी चाह तो मुट्ठी भर भात तक ही सीमित थी।

कल रात जब बुनी को खींचकर, घसीटकर स्टोर रूम में ले जाकर हाथ बाँधकर धकेल दिया गया था, उसका परमान्न दूध भात तब भी रसाई के फर्श पर बिखरा पड़ा था।

बुनी उठने की कोशिश करती है। उसका सर ज़ोरों से दर्द करता है। शायद चोटें नाज़ुक अंगों पर भी लगी थी। उसकी आँखों के आगे उसका गाँव छोटा सा घर, आँगन, माँ-बाबा, भाई-बहन सबकी तस्वीरें तैरती हैं— जैसे कि अंत समय में अतीत जी उठता है। उसे दो सौ रुपये तनख्वाह देने की बात हुई थी . जो कभी दी ही नहीं गयी। दीदी ने कहा था, वह दिलायेगी। कल रात जब वह इस घर में आयी थी, तब बुनी ने उसे कहते सुना था कि, 'इस लड़की के चार हजार रुपये इसे दे दो और गाँव भेज दो। वैसे भी बाल मजदूरी अब एक अपराध है। जानते हैं न कहीं कुछ हो गया तो लेने के देने पड़ जायेंगे। ' बुनी सोचने लगी चार हजार? वो कितने रुपये होते होंगे? उससे बहुत सारा चावल खरीदा जा सकेगा? क्या उससे उसके परिवार के लोग साल भर पेट भर भात खा सकेंगे? ...और बुनी ने देखा गरम-गरम भात, झींगा मछली का अचार... माँ परोस रही हैं। बाबा, भाई-बहन और वह सब मिलकर खा रहे हैं। भात की खुशबू चारों ओर से आ रही है... जो उसने अपने जीवन में अंतिम बार महसूस की थी ...

तुहीना की बुनी

पिछले कुछ दिनों से महानगर से छपने वाली एक प्रमुख दैनिक पत्रिका लगातार एक विशेष घटना को लेकर खबरें छाप रही थी...

- 12 दिसम्बर : पिछले दिनों देवड़ा हाट के पास जूट मिल के नज़दीक एक बोरी में लिपटी एक लाश मिली। लाश एक साँवली, पतली - दुबली, कोई तेरह वर्ष की लड़की की है। पुलिस ने छानबीन करने के बाद पता लगाया है कि भोर के चार बजे के करीब एक टैक्सी से वह लाश वहाँ लायी गयी थी। एक प्रत्यक्षदर्शी के अनुसार चलती हुई टैक्सी से वह बोरी जिसका मुँह बँधा हुआ था, वहाँ फेंक दी गयी थी।
- 13 दिसम्बर : देवड़ा हाट के पास मिली लड़की की लाश के बारे में पुलिस के सामने कुछ नये तथ्य आये हैं। लड़की महानगर रामनगर इलाके के रानी मोड़ के सम्भ्रान्त परिवार में काम करती थी इलाके के लोगों के अनुसार, उस पर आये दिन पारिवारिक अत्याचार किये जाते थे। उक्त परिवार के लोग लापता हैं। लड़की की मौत सिर पर चोट लगने से हुई है। उसके परिवार के लोगों से सम्पर्क करने की कोशिश की जा रही है
- 14 दिसम्बर : देवड़ा हाट के पास मिली लड़की की लाश की उसके माता-पिता ने शिनाख्त की है। उनके अनुसार पिछले दो वर्षों से उनके गाँव व आस-पास के इलाके से पचास से ऊपर

लड़कियाँ महानगर में काम और रूपयों के लालच में लायी गयी हैं। उनमें से कई लड़कियों का पता नहीं। बेलागढ़, हरिपुर, नागड़ा आदि जिले के पिछड़े इलाकों से, जहाँ प्रायः सभी बी. पी. एल. कैटेगरी की थी, पर सरकारी सुविधाओं की जानकारी जिन्हें नहीं थीं, इन जगहों से हर रोज बच्चे खासकर लड़कियाँ लायी जाती हैं और तथाकथित आधुनिक, सम्पन्न परिवारों में पशुओं की तरह खटने के लिए बेच दी जाती हैं। लड़कियों के माँ-बाप को पता भी नहीं चलता कि उनकी बेटियाँ कहाँ है, क्या कर रही है? इसके पीछे एक चक्र सक्रिय रूप से काम कर रहा है। देवड़ा हाट जैसी घटना केवल एक लड़की की नहीं, उसके जैसी हजारों लड़कियों की कहानी है। भैया-भाभी, चाचा-चाची, अंकल-आंटी के नाम से समाज का एक लोभी क्रूर वर्ग इन लड़कियों की निर्बाध सरलता, असहाय अज्ञानता, रास्ते पहचान कर घर वापस न जाने पाने की कमजोरी आदि का फायदा उठाकर इनके मांस से कभी ब्रेकफास्ट, कभी लंच तो कभी डिनर खाते हैं और जब कभी ये बच्चियाँ मौत के घाट उतार दी जाती हैं, तो या तो भाग जाते हैं या फिर अपने पैसे या पोजीशन का फायदा उठाकर मामले को दबा देते हैं। सरकार ने बाल मज़दूरी पर रोक लगा दी है। पर ये लड़कियाँ? ये तो बाल मज़दूर भी नहीं कहलातीं। इनका कहीं पंजीकरण नहीं होता। बाल मज़दूरों का तो फिर भी कहीं कुछ अता-पता दर्ज़ रहता है। इन्हें हम क्या नाम दें? इनके शोषणकारियों को हम क्या नाम दें, जो तथाकथित सभ्य जगत के लोग है? यह ज्वलंत प्रश्न है, जिसका उत्तर भी हमें ही देना होगा।

तुहीना सेन जो मानवाधिकार आयोग की उच्च पदासीन सदस्य थी और जो आपराधिक मामलों के जांच की विशेषज्ञ भी थीं, पिछले कई दिनों से देवड़ा हाट वाली केस को वही डील कर रही थी। बड़ी निडर और कभी न समझौता करने वाली तुहीना के लिए यह केस किसी चैलेंज से कम न था। पर आज जहाँ आकर वह रुक गयी थीं, उसी मोड़ पर उसकी भाभी खड़ी थी, बुनी की दीदी परी, जिसका परिवार उस बच्ची की मौत के लिए जिम्मेदार था। भाभी की मूक आँखें कहीं उसके कदमों को कर्तव्य के रास्ते पर डगमगा न दें, इस डर से पिछली दो रातों से वह सो नहीं पायी थी। 'तुहीना क्या सोच रही हो मेरी बात सोचकर परेशान हो न?' तुहीना ने मुड़कर देखा, भाभी चाय लेकर दरवाज़े पर खड़ी थी। 'तुम निडर हो, साहसी हो, कर्तव्यनिष्ठ हो तो मैं भी इतनी खुदगर्ज नहीं। पिछले दो दिनों से तुम मुझसे नजरें चुरा रही हो। कम से कम मुझसे एक बार बात तो की होती। विगत कई दिनों से बुनी का मासूम चेहरा मेरे मस्तिष्क पर छाया रहा है। उसकी डरी-सहमी आँखों में कई सवाल तैरते दिखते हैं, मुझे। इस शर्म के बोझ से खुद को मुक्त कर सकूँ, एक मौका तो दिया होता। ' भाभी की आखों से आँसुओं की धार बह निकली।

'तो, क्या तुम गवाही दोगी अपने लोगों के ख़िलाफ़?'

'हाँ, बुनी की मौत के लिए शायद मैं भी कहीं-न- कहीं जिम्मेदार हूँ। जो बुनी के साथ हुआ वह क्या कोई कम जुर्म है? जीते जी उसके साथ मैं न्याय नहीं कर पायी, कम-से–कम उसके मरने के बाद तो कर सकती हूँ।'

तुहीना को बुनी के नाम एक नया दिन उगता हुआ दिखायी दे रहा था।

●●●●

एक युद्ध ऐसा भी

जितेन ठाकुर*

भूल मुझसे ही हुई थी। इस प्रकार लापरवाही से मोबाइल छोड़कर नहीं आना चाहिए था। पर भूल तो हो चुकी थी और अब तो बस उसके सुधार का रास्ता खोजना था। फोन पर दूसरी तरफ से निरंतर धमकाया जा रहा था।

"मैं पुलिस में आपकी शिकायत दर्ज करवाऊंगा। आपका नम्बर पुलिस को दूँगा। आपके फोन से इतनी गंदी-गंदी गालियाँ दी गई हैं कि मैं उन्हें दोहरा भी नहीं सकता।" स्वर में जितना आवेश था उतनी ही हल्की लहर उस पीड़ा की भी थी जो ऐसे में किसी भी गाली खाए हुए अवश आदमी के स्वर में हो सकती है।

"भाई! मैं अध्यापक हूँ। आप मेरा विश्वास कीजिए कि मैंने आपको कोई भी अपशब्द नहीं कहा है फिर गाली कैसे दे सकता हूँ।" मैंने एक बार फिर अपना पक्ष रखने की चेष्टा की तो दूसरी तरफ से आती हुई आवाज और अधिक बिफर गई

"आपने गाली नहीं दी, पर दी तो आपके ही फोन से गई है। आपका नम्बर मेरे मोबाइल पर मौजूद है और आप मुझे ही झूठा बनाने पर तुले हैं।"

काफी मान-मनौवल के बाद वो आवाज इतना भर मान गई कि मैं खोज-बीन करके उस शख्स का पता लगाऊँगा जिसने गालियों की शक्ल में उनके कानों में पिघलता हुआ सीसा उढ़ेल दिया था। सीसे की धार ने उन्हें कितना लहू-लुहान कर दिया है, यह तो उनके स्वर से ही स्पष्ट हो गया। मेरे बार-बार क्षमा याचना करने पर वो सज्जन कुछ सामान्य हुए और अपना परिचय देते हुए बोले

"मेरा लाईटिंग का काम है। बारात के साथ चलने वाले बिजली के हंडे भी देता हूँ। बड़ा व्यवसाय है। बाजार में रसूख है, मान-सम्मान है। सैकड़ों लोगों को रोजगार दिया हुआ है। आप ही बताइए ऐसी गंदी गालियाँ कैसे बरदाश्त कर लूँ।"

उनकी खीझ भरी आवाजा का सीधा-साधा एक ही अर्थ निकलता था कि अगर उनका व्यवसाय

---

* *सेवानिवृत्त वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारी*

अच्छा नहीं होता, बाजार में उनका मान-सम्मान न होता और वो लोगों को रोजगार देने में सक्षम न होते तो शायद उन गालियों को बरदाश्त भी कर लेते। पर उन्होंने समाज में यह मुकाम गालियाँ सुनने के लिए तो हासिल नहीं किया था। उस पर तुर्रा यह कि जिसने गालियों से उन्हें छलनी कर दिया था न तो वे उसका कुछ भी बिगाड़ पाने की स्थिति में थे और न ही अपने आक्रोश को दबा पा रहे थे। उन दोनों अजनबियों के इस मकड़जाल में मैं फंस कर रह गया था।

"जिसने आपको फोन किया उसकी आवाज कैसी थी? यानी बच्चा था, बड़ा था या फिर कोई...।" मैंने उनके सामान्य होने का फायदा लिया

"ऐसे लगता जैसे कोई बच्चा था।"

उनके इस वाक्य ने मेरे सारे गुंझल सुलझा दिए। मैं समझ गया कि निश्चय ही यह शरारत स्कूल से ही किसी बच्चे ने की है।

दरअसल, दोपहर से कुछ पहले मैं चाय पीने के लिए स्टाफ-रूम में चला गया था और मोबाईल क्लास में मेरी मेज पर ही रह गया था। जब मैं चाय पीने के लिए गया तो फटी हुई टाट पर बैठे हुए बदहाल बच्चे बड़ी शालीनता से नौ का पहाड़ा याद कर रहे थे। उखड़े हुए प्लास्टर वाली सीलन भरी दीवारें उनके सम्वेत स्वर से गूंज रही थीं। इस कृत्रिम शालीनता को मैं भली प्रकार जानता हूँ। मैं जानता हूँ कि कमरे से मेरे बाहर निकलते ही शालीनता का यह आवरण ठीक वैसी ही गालियों से चीथड़ा हो जाता है जैसे कुछ ही दरे पहले रौशनी के उसे व्यवसायी को इन्होंने मर्माहत कर दिया था।

म्यूनिसपैलिटी के उधड़े हुए स्कूलों में इससे बेहतर वातावरण की और क्या कल्पना की जा सकती है। गरीबी के दमघोटू दल-दल में फंसे हुए माँ-बाप अपने बच्चे को यहाँ पढ़ने से ज्यादा दोपहर का खाना-खाने और वजीफे की छोटी सी रकम के लालच में भेजते हैं। इनमें से बहुत से बच्चे तरह-तरह के काम भी करते हैं। कोई कभी-कभार मिल गई मजदूरी करता है कोई मालीगिरी। कोई साफ-सफाई का काम करता है। कोई मौका मिलने पर चोरी और उठाईगिरी।

एक बच्चा केबल चुराते हुए पकड़ा गया और सुधारगृह में तीन दिन बिताने के बाद जब लौट कर स्कूल आया तो उसने अपने साथियों को पूरी धौंस और शान से बताया कि उसने तीन दिन जेल की रोटी खाई है और तीन ही दिन जेल का पानी पिया है। बस, उसी दिन से उसे स्कूल में विशेष दर्जा हासिल हो गया था। अब बच्चों के छोटे-मोटे झगड़े, चोरी-चकारी और दूसरे मामलात उसकी कचहरी मे जाने लगे थे। उस बच्चे का ध्यान आते ही मैंने फौरन उसे बुलवाया और सारा माजरा बताकर पुचकारते हुए कहा-

"मेरे फोन से किसी बच्चे ने गलत फोन कर दिया है। मैं जानता हूँ कि तुम ऐसा नहीं कर सकते, पर जिसने किया है उसका पता लगाना जरूरी है।"

मेरी मनोवैज्ञानिक चाल ने अंधेरे में लक्ष्य भेद लिया। मेरी चालाकी ने उसके बाल मन को उत्साहित कर दिया। वो ओंठ टेड़े करके हंसते हुए बोला-

"ठीक है गुरु जी! पता लग जाएगा।" मुझे आश्वस्त करते हुए, बड़प्पन के साथ उसने जेब में हाथ डालकर सिर को झटका दिया और घूम कर, इतराई हुई कुछ टेढ़ी सी चाल चलता हुआ कमरे से बाहर निकल गया। मुझे गुस्सा भी आया और हंसी भी, पर दोनों को जब्त कर लिया।

वास्तव में यही मेरे शहर की अजीबोगरीब विसंगति है कि यहाँ ऐसे शानदार स्कूल भी हैं जहाँ पढ़ने आया हुआ बच्चा जब उड़ता हुआ लौटता है तो संसद की कुर्सियाँ उसके आगे बिछ जाती हैं और फिर वो ठीक उसी सरलता से नेता और मंत्री बन जाता है जैसे कोई साफ्टी खरीद कर ओंठो से छुवाता है। इसी शहर में मेरे स्कूल जैसे बीसियों ऐसे स्कूल भी हैं जहाँ समय बिताने के लिए गोबर और गटर की गंध के साथ आने वाले हजारों मासूम बच्चे टक-टकी बांधे हुए जीने की प्रतीक्षा में मुस्कुरा रहे हैं, पर उन्हें जीवन की आहट भी सुनाई नहीं देती और उम्र बीत जाती है।

इसी बीच में वो लड़का एक बार फिर मेरे पास आया और कापी में लिखे हुए बहुत से फोन नम्बर दिखा कर मुझसे वो नम्बर जानना चाहा जिससे कि फोन आया था। सचमुच उसमें एक नम्बर वही था। मैने बतला दिया तो वो फिर उसी टेढ़ी चाल से लौट गया।

कुछ ही देर बाद मैंने देखा कि तीन दिन जेल में बिताने की हुंकार भरने वाला वही लड़का एक दूसरे बच्चे का कालर पकड़ कर उसे लगभग घसीटता हुआ चला आ रहा है। उसने जिस बच्चे का कालर पकड़ा हुआ था वो शारीरिक रूप से कमजोर नहीं था- पर दूसरे लड़के के दब-दबे के आगे विवश था। डरा सहमा हुआ वो रस्सी से बंधे हुए बैल की तरह खिंचा हुआ चला आ रहा था। कहीं किसी प्रकार का कोई प्रतिवाद नहीं था।

"लो गुरु जी! इसी साले ने आपके मोबाईल से फोन किया था।" उसने ठीक फिल्मी अंदाज में झटका मार कर लड़के को मेरे आगे गिरा दिया और फिल्मी दादाओं की तरह, दोनों हाथ कमर पर रख कर खड़ा हो गया।

"तुमने फोन किया था?" मैंने डपट कर पूछा पर वो सिर झुकाए हुए मौन खड़ा रहा।

"बोलता क्यों नहीं भैन...।" दादा नुमा लड़के ने गाली देते हुए उसे एक भरपूर लात रसीद कर दी। वो लहराया फिर सम्भल गया। मेरे द्वारा मदद मांगने के कारण ही वो दादानुमा लड़का इतना खुल गया था कि मेरे ही सामने गाली देता हुआ दबंगई पर उतारू हो गया था। अचानक मेरे भीतर का अध्यापक अपमान बोध से भर गया। मैंने अप्रसन्नता से उसे रोकते हुए कहा

"गाली नहीं...गाली नहीं। तुम जाओं मैं पूछ-ताछ कर लूँगा।"

"अरे गुरुजी ये साला बहुत हरामी है। आपसे नहीं मानेगा।" वो कुछ अधिक ही उत्साहित था

"मैंने कहा न! अब तुम जाओ।" अब मैं कुछ सख्त आवाज में बोला। उसने मुझे अविश्वास से देखा और जाने के लिए घूम गया। अलबत्ता उसकी आँखों में कुछ ऐसा भाव था मानो कह रहा हो कि 'मतलब निकल गया तो झिड़कने लगे।'

उसके जाने के बाद मैंने अपना ध्यान सामने खड़े हुए लड़के पर केंद्रित किया। सरसों के तेल में चुपड़ कर काढ़े हुए बाल, लटकती हुई जेब वाली रंग उड़ी नीली कमीज, उधड़ी हुई खाकी नेकर और पैरों में टांका लगी हुई हवाई चप्पल। उसका हुलिया कमोबेश वैसा ही था जैसा यहाँ के दूसरे बच्चों का होता है। पीट कर उसे सजा देने से ज्यादा मुझे यह लगा कि उससे ऐसा करने का कारण पूछा जाए। मैंने उसे पुकार कर "तुम तो बहुत अच्छे बच्चे हो, तुम तो ऐसे नहीं हो फिर तुमने यह क्यों किया", जैसे वाक्या जब कई बार घुमा फिर कर पूछे तो वो टूट गया और सिर झुकाए हुए ही बोला-

"गुरु जी अमल बहुत बदमाश है" अमल वो आदमी था जिसे फोन करके इसने गालियाँ दी थीं।

"क्यों? क्या बदमाशी की है उसने?" मैंने उकसाया

"गुरु जी, मुझसे भी छोटे-छोटे लड़कों को बरात में उठाने के लिए हंडे दे देता है पर मुझे नहीं देता। कहता है तू छोटा है गिरा देगा।" उसने शिकायत भरे स्वर में कहा-

"उसकी चीज है- वो किसी को भी दे।" मैंने कहा-

"पर मेरा तो नुकसान होता है गुरु जी। एक बारात में हंडा उठाने के अस्सी रुपए मिलते हैं।"

ओह! तो यह अस्तित्व की लड़ाई का प्रश्न है। रोटी छीन लेने वाले के प्रति विद्रोह! इसीलिए मौका पाकर उसने मोबाईल पर अपनी भड़ास निकाली थी।

इस नए विचार से चौंक कर मैंने सामने खड़े हुए छोटे से लड़के को देखा। फोन पर जब गालियाँ सुनने वाला आदमी मुझे धमका रहा था तो मैं बार-बार यही निश्चय कर रहा था कि अगर फोन करने वाले बच्चे को पकड़ पाया तो ऐसी कड़ी सजा दूँगा कि दोबारा ओंठ हिलाने की हिम्मत नहीं जुटा पाएगा। पर अब उसे मारने की इच्छा नहीं हुई। बल्कि अब एक दूसरे विचार ने मुझे घेर लिया कि यदि कभी बाल-श्रमिक कानून ने इससे निवाला छीना तब यह किसे फोन करेगा और किसे गालियाँ देगा?

थोड़ा सा कान उमेठ कर मैंने उसे भविष्य में ऐसा न करने की ताकीद की और छोड़ दिया। पर इतने बच्चों में वो पकड़ कैसे लिया गया- यह आश्चर्यजनक था। क्योंकि परिवेश और परिस्थितियों ने इन बच्चों को इतना मजबूत तो बना ही दिया है कि सहज ही कोई उनसे उनका अपराध स्वीकार नहीं करवा सकता।

मैंने इसे पकड़ने वाले लड़के को दोबारा बुलाया और कहा

"तुमने तो कमाल कर दिया। इतनी जल्दी तो जेम्सबांड भी अपराधी को नहीं ढूंढ पाता।" मैंने दुलारते हुए उसे थपथपाया तो वो हुलस गया और कुछ ही देर पहले की झिड़की भुलाकर उत्साह के साथ बोला

"गुरु जी, बड़ा पक्का था साला। बड़ा दिमाग लड़ा कर पकड़ा हरामी को।" मैंने उसे गाली देने पर फिर रोका पर इस बार वो अपनी ही लय में बोलता चला गया।

उसने बताया कि कैसे उसने पहले कक्षा में उन बच्चों को छांटा जो बारातों में हंडे उठाने का काम करते हैं। फिर उन्हें विश्वास दिलाया कि वो स्वयं भी यह काम करके पैसा कमाना चाहता है। इसी बहाने उनसे कापी पर उन दुकानदारों के फोन नम्बर लिखवाए जो यह काम करते हैं। बस! जिस लड़के ने वो नम्बर लिखा था उसे दबोच लिया।

उसकी यह होशियारी सुनकर मैं हैरान रह गया। मैंने जेब से दस रुपए का नोट निकाल कर उसकी तरफ बढ़ाया। उसने बिना किसी झिझक के नोट ऐसे पकड़ा जैसे यह उसका अधिकार हो- और उसे जेब में डालते हुए चला गया। उसे जाते हुए देखकर मैं सोच रहा था कि इनके भीतर भरा हुआ अस्तित्व की लड़ाई का यह जज्बा क्या कभी धरातल पर उभर कर आकार ले पाएगा? या फिर यूं ही टुकड़ा-टुकड़ा होता हुआ दफ्न हो जाएगा।

●●●●

चेहरे

सूर्यकांत नागर*

"बाबूजी... बाबूजी...।"

ओफ्फोह, सुबह-सुबह ठंड में कौन आ मरा। मैं मन ही मन खीझ उठा और पुकार को अनसुनी कर रजाई मुँह तक खींच ली।

"बाबूजी...।" फिर आवाज़ आई। इस बार भी मैंने - कोई उत्तर नहीं दिया, सोचा, चिल्ला-चिल्लाकर आगंतुक ख़ुद ही लौट जाएगा।

"बाबूजी!"

"कौन है? पलंग पर ही लेटे-लेटे मैंने गुस्से में पूछा।

बाहर से फिर पुकार हुई ''बाबूजी...।"

"कौन बेवकूफ है, जो अपनी ही हाँके जा रहा है।" झुंझलाते हुए मैं उठा और बाहर कमरे में आया। जैसे ही दरवाज़ा खोला, तीक्ष्ण हवा का झोंका मुझे भेदते हुए कमरे में फैल गया। नाक में अजीब-सी सुरसुराहट होने लगी।

"कौन है?" दरवाज़े से बाहर झांककर लगभग चीखते हुए मैंने पूछा।

"राम-राम, बाबूजी", ठंड से ठिठुरते, दुबले-पतले दस-ग्यारह वर्षीय उस ग्रामीण बालक ने सहमते हुए कहा।

"मैंने तो तुझे इतवार को नौ बजे बुलाया था। तू आज ही आ धमका।" क्रुद्ध स्वर में मैंने कहा।

"वार की तो म्हारे याद नी री बाबूजी। "कहकर कुछ क्षणों के लिए वह चुप हो गया। फिर एकाएक बोला, "बाबूजी, अबी कित्ता बजा है?"

"अभी तो सात ही बजे हैं, पगले। आने से पहले किसी से समय तो पूछ लिया होता।"

उसने कोई उत्तर नहीं दिया। नज़र नीचे गड़ाये, पैर के अंगूठे से कम्पाउण्ड की ओस से भीगी मिट्टी को

---

* *वरिष्ठ साहित्यकार एवं लेखक*

कुरेदता रहा। एक क्षण को विचार आया, अभी तो इसे चलता करूँ। पर उसकी दयनीय दुरावस्था और भोले-भाले चेहरे को देख, सहसा भगा देने का मन नहीं हुआ। मैंने उसे अंदर बुलाया और दरवाज़े के समीप ही रखे तीन जोड़ी जूतों की ओर इशारा करते हुए कहा, "ले उठा ले।" प्रसन्न हो, उसने जल्दी से जूते उठाये और बाहर जा पॉलिश करने की तैयारी करने लगा। मैं दरवाज़ा अटकाकर मुड़ा, तो ध्यान आया कि, बाहर तो ठंड बहुत है, लड़के को कमरे में ही एक ओर बैठाकर पॉलिश करने के लिए कह दूँ। पर फिर सोचा, नये और अल्प परिचित लड़के का क्या भरोसा? इधर अंदर जाऊँ और उधर वह कोई चीज़ उठाकर अपने झोले में डाल ले। अतः चुप ही रहा और अंदर आकर रजाई में दुबक गया। रजाई में घुसते ही, एक क्षण को ज़ोरों की कपकंपी हो आई। लगा, रजाई ने देह की सारी गर्मी सोख ली है। मुश्किल से दो-तीन मिनट हुए होंगे कि दरवाज़े को ज़ोर से धकेलकर वह अंदर आ गया, बोला, "बाबूजी... बाबूजी।"

"अब क्या है?" मेरी झुंझलाहट फिर बढ़ने लगी।

"सा'ब, या पालिस की डब्बी म्हारे से खुलतीज नी है। जरा तम खोली दो नी।" उसके भोलेपन पर मुझे हँसी आ गई। कैसा लड़का है। कहीं कोई संकोच या झिझक नहीं। विवश हो, बाहर के कमरे में आया और कोशिश कर डिब्बी खोल दी। डिब्बी को मेरे हाथ से झटक, प्रसन्न हो, वह तेज़ी से बाहर चला गया। मैंने पुनः बिस्तर की शरण ली।

...दो दिन पूर्व, उस शाम जब मैं कालोनी के कोने पर निरूद्देश्य घूम रहा था, तब वह मुझे मिला था। जूतों पर पॉलिश करवा लेने के लिए मेरे पीछे पड़ गया था। वैस जूतों को पॉलिश की कोई ख़ास ज़रूरत तो नहीं थी, पर एक तो मैं फुरसत में था और दूसरे वह जूतों पर पॉलिश करवा लेने के लिए कुछ इस तरह गिड़गिड़ा रहा था, कि इनकार न कर सका था। पास ही पड़ी एक टूटी बैंच पर बैठकर, मैंने अपने दोनों पैर उसके सामने फैला दिये थे। ख़ुश हो, उसने पैरों से जूते निकाले थे और पॉलिश करने में मगन हो गया था। उसके पॉलिश करने के तरीके को देखकर ही स्पष्ट हो गया था कि, इस धंधे में वह नया-नया है। कुछ पॉलिश उसके श्याम वर्ण चेहरे और कमीज़ पर लगी थी। वह जूतों पर बहुत कम पॉलिश लगाना चाहता था। पर हर बार, काफी पॉलिश जूतों पर लग जाती थी। वह अंगुलियों से उसे निकाल रहा था। शीतकालीन संध्या की हवा ठंडी हो आई थी। उसके अस्थिपंजर शरीर पर एक ढ़ीली-ढ़ाली, मैली-कुचैली, फटी-पुरानी सी कमीज़ थी। उसके बाल बड़े और उलझे हुए थे। बालक के प्रति मेरे में उत्सुकता बढ़ गयी थी। पूछने पर बताया था कि, कुछ दिनों पहले ही वह अपनी माँ के साथ काम की तलाश में शहर आया है और कॉलोनी के उस सुनसान कोने पर, जहाँ शहर समाप्त होता है, नाले किनारे, घांस-फूस की एक छोटी-सी झोंपड़ी बना कर रह रहा है।

"कोई काम मिला?" बैंच पर बैठ-बैठे ही मैंने पूछा था।

"नी मिल्यो।"

"फिर क्या करता है?"

"माँ भीक मांगे है। हूं जूता पालिस करूं हूं। कदी पॉलिस मा पैइसा कम मिले तो हूं भी भीक मांगी लूं।" उसने ऐसे कहा, जैसे भीख मांगने में कोई बुराई न हो।

"मोची है?" पॉलिश का धंधा करते देख मैंने पूछा था। पर यह प्रश्न उसे अच्छा नहीं लगा था। ऐसा महसूस हुआ था, जैसे यह पूछकर, मैंने उसका अपमान कर दिया था। मुँह में कड़ूवाहट घोलते हुए, उसने कहा

था, "बड़ी ऊंची जात है म्हारी। गांव मां तो बलाई के हाथ को पानी भी नी पीतो थो।"

उसका उत्तर सुन मुझे हँसी आ गई थी।

"बाप-भाई हैं?" उसके प्रति मेरा कौतुहल बढ़ता जा रहा था।

"बाप गांव में हे। भाई नी हे। दो बड़ी बेन हे। दोई का ब्याह हुई ग्योत।" जूतों के तस्मे बांधते हुए उसने कहा था। फिर उसने जूतों पर कपड़ा मारकर चमका दिया था और उन्हें मेरे पैरों के सामने रख दिया था। शीश झुका, जब वह जूतों के बंद बांधने लगा, तो एक क्षण को मुझे अपनी सामंती सोच पर ग्लानि-सी हो आयी। मैंने उसके हाथ पर दस का नोट रख दिया था। कहा था, हर चौथे दिन उधर सामने घर पर आकर जूतों पर पॉलिश कर दिया करे। प्रसन्नन हो, वह चला गया था।

"बाबूजी, पालिस हुईगी।" कहते हुए जैसे ही उसने आगे के कमरे में प्रवेश किया, मेरी तंद्रा टूटी। उठकर बाहर आया। जूते उसने बैंच के पास एक कतार में जमा दिए। मैंने उसे पैसे दिये और स्वर में कठोरता लाते हुए ताकिद की, "अब चार दिन से पहले आया, तो भगा दूँगा। और हाँ, नौ बजे से पहले आया, तो दरवाज़ा नहीं खोलूँगा।" उसे इस बात का बुरा नहीं लगा। उसने गर्दन हिला दी और भाग गया। मैंने दरवाज़ा बंद कर लिया। ठंड से कुछ राहत महसूस हुई। एक बार फिर, जैसे ही रजाई में घुसा, तो सावधानी बरतने के बावजूद मेरे ठंडे पाँव पास ही सोए रवि को छू गए। वह तिलमिला उठा, बोला, "पापा, आप बार-बार क्यों उठते हैं। हमें ठंड लगती है।"

"अब नहीं उठेंगे बेटे। सो जाओ।" कहते हुए मैंने रवि के आजकल की फैशन के मुताबिक बड़े बालों पर हल्के से हाथ फेरा, तो उस लड़के का निरीह चेहरा आँखों के सामने घूम गया। सोचा, रवि का हमउम्र वह लड़का अपनी उम्र से कितना बड़ा हो गया है। उसे न ठंड लगती है, न जूतों पर पॉलिश करते शर्म आती है। दो जून की रोटी जुटाने की चिंता ने उसे अभी से बुज़ुर्ग बना दिया है। स्वावलंबन का सबक़ सिखाने की दृष्टि से रवि को मैंने कितनी ही बार कहा था कि, कम से कम अपने जूतों पर तो ख़ुद ही पॉलिश कर लिया करे, लेकिन उसे क्रिकेट, कम्प्यूटर, मोबाईल और दोस्तों से फ़ुरसत मिले, तब न।

चार दिन के बजाय वह दो दिन बाद ही आ धमका। सोचा, या तो वह ठीक से दिन नहीं गिन पाता होगा या फिर उसे पैसे की सख्त ज़रूरत होगी। पर इस बार, सात बजे न आकर, वह नौ बजे आया था, अत: मैंने उसे कुछ नहीं कहा। केवल जूतों की ओर इशारा कर दिया। उन्हें उठाकर वह बाहर चला गया और पॉलिश करने लगा। इस तरह, उसका मेरे यहाँ आना-जाना बढ़ता गया। विचित्र-सी आत्मी यता उसने मेरे साथ स्थापित कर ली। कई बार पॉलिश की डिब्बी ख़रीदने को भी उसके पास पैसे नहीं होते थे। वह मुझसे पैसे ले जाता, दौड़ता हुआ कहीं से डिब्बी ख़रीदकर लाता और हाँफते-हाँफते मेरे और रवि के जूतों पर पॉलिश करता। पॉलिश करते समय, कई बार मेरी दृष्टि उसके ठंड से फटे गंदे पैरों पर पड़ती, तो विचार आता कि, रोज़ अनेक जोड़ी जूते चमकाने वाले के पास एक जोड़ी फटे-पुराने जूते भी नहीं हैं। एक दिन आया, तो रवि के जूते दिखाई नहीं दिये। बोला, "सा'ब, आज रवि बाबा का जूता नी दीखे।"

"आज उसके स्कूल में जलसा है। इसलिए वह स्कूल जल्दी चला गया।" मैंने कहा।

"पर म्हारा गांव मां तो कोई इस्कूल नी हे। म्हूं बी कदी नी गयो। दूसरा छोरा होन पांच कोस दूर स्कूल जावे।" भोलेपन के साथ उसने कहा। मैं उसे क्या जवाब देता? सारा गणित कैसे समझाता?

छुट्टी का दिन था। धूप में बैठा अख़बार के पन्ने पलट रहा था। मेरी दृष्टि सूखा, अकाल और राहत-कार्यों के बारे में छपे समाचारों पर दौड़ रही थी। तभी देखा, एक अधेड़ औरत के साथ वह कम्पाउंड के अंदर आकर मेरे सामने खड़ा हो गया है। "बाबूजी। या म्हा री मां हे'', उस औरत की ओर इशारा करते हुए उसने कहा। स्त्री ने दोनों हाथ सिर तक उठाकर जोड़ लिए। मैंने देखा, उम्र यही कोई पैंतालीस-पचास के आस-पास होगी। चेहरे पर चेचक के हल्के निशान। चेहरा थकान और पीड़ा का प्रतीक।

"बाबूजी, या केलास तमारी भोत तारीफ करे हे। रोज के हे के बाबूजी से मिलणे के चलो। आज नी मान्यो, तो इका साथे चली अई।" थूक निगलते हुए उसने कहा।

मैं कुछ क्षणों तक चुपचाप उसे देखता रहा। फिर एकाएक पूछ बैठा, "तू गांव छोड़कर क्यों आयी?"

"कई करती बाबूजी। वां बरोबर काम भी नी है और खाणे के भी नी। सूखा का कारण लोग शेहर की तरफ भागी रया हे।"

"सरकार राहत के काम चला रही है। काम देती है, पैसे देती है।"

"काम तो दे हे। पर कदी-कदी आठ-आठ दन तक पइसा नी मिले।"

"क्यों?"

"वी के, के खजाणा से पइसा नी आया। आयगा जदे दांगा।"

"कितने पैसे मिलते थे?"

"बरोबर मालम नी, बाबूजी। अंगूठो लगई देती थी और जो देता था, लई लेती थी। सच्चीं-झूठी राम जाने, पर सुन्यो' है के मोटी रकम बीच का भाई-भतीजा जिमी जावे। देखजो, गरीब की हाय लेगा, तो कीड़ा पड़ेगा।"

"वे लोग अनाज भी तो बाँटते हैं?"

"हाँ, बांटता था। पर उनमें भी आधा कांकरा होता था। खानी बखत दांत कड़ड-कड़ड बोलता था।

"तेरा आदमी क्या करता है?"

"बीमार है। अच्छो थो जदे एक कि साण के यां मजूरी करतो थो। पेलां थोड़ी जमीन भी थी। बेटी का ब्याव की बखत गिरवी राखी थी। साहूकार वा जमीन भी जिमी गयो।"

"आदमी का इलाज करवाया?"

"सूखा का बाद से डॉक्टर होन की टोली लोग-बाग की जांच करवा सरू गांव मां आणे लगी है। उनके दिखायो थो। वी नरी सारी गोली दई ग्यो था। वी खातो रयो। पर ठीक नी हुओ।" कहकर कुछ क्षणों के लिए वह खामोश हो गई, जैसे दर्द का कोई गोला कंठ में अटक गया हो। फिर जैसे एकाएक कुछ याद आ गया, बोली, "बाबूजी झूठी-सच्ची राम जाणे, पर लोग होन केता था कि गोली नकली वेगा। इकाज सरू म्हा रा आदमी के फायदो नी हुओ।"

अस्पतालों के अभाव और असली-नकली दवाइयों की बात छोटे-छोटे गाँवों तक पहुँच गयी है, मैंने सोचा और कुछ देर इसी समस्या में उलझा रहा।

"अपने बीमार बादमी को अकेला छोड़, यहाँ क्यों आ गयी?" मैंने एकाएक बात बदल दी।

"दो बखत पेट में डालने के वास्ते कई तो चइए। हूं तो एक बखत भूकी रई लेती, पर ई केलास के कस्तो भूको राखती। जद म्ह के भी काम से बंद करी दियो तो शेहर मां आवा का सिवाय दूसरो कोई रस्तो् नी थो। थोड़ा दन केलास ने भी बाल मजदूरी करी।" उसने बहुत दु:खी स्वर में कहा। एक गहरा नि:श्वास उसके मुँह से निकल पड़ा। आँखों में आँसू तैर आए।

"तुझे काम से क्यों बंद कर दिया था?" मैंने कुछ विस्मय से पूछा।

"राहत को नवो काम सरकार ने एक बड़ा ठेकेदार के दियो थो। उ बड़ो होशियार थो। धीरे-धीरे, एक-एक करीके उने बूढ़ा और कमजोर मनख के काम से हटई दियो। एक दन म्हा रो भी नम्बर अई ग्यो। इका बाद, गांव मां ज कई काम करवा की म्हने नरी कोसिस करी। पर गांव मां कोई काम थोज नी। पाणी नी पड़वा का कारण सब खेत सूखा पड़्या था। कुआ सुखई गया था। पाणी-चारा का बगैर ढोर मरने लग्याह था। आखर केलास का बाप की खाट उका छोटा भई की ओसारी में डाली के हूं भी यां अई गई।" स्वर में अब भी पीड़ा थी।

"भीख मांगने के बजाय कोई काम क्यों नहीं करती?" मैंने पूछा, तो कुछ क्षण वह चुप रही। फिर बोली, "काम मिले कां है बाबूजी? ...मकान का एक ठेकेदार ने काम पे राख्यो तो उ भी हफ्ता का हफ्ता पइसा देतो थो। उकी नजर भी ठीक नी थी। बर्तन-ठामड़ा मांजवा को काम ढुंढयो, तो बई होण पेचाण मांगे। अब शेहर मां म्ही किकी पेचाण लऊं। अरू चार घर ठामड़ा घिसती, तो भी मइना भर बाद सौ-पचास मिलता। तो मईना भर कई करती। केलास के जेर देती? घरे-घर जई के भीक मांगवा से रूखी-सूखी रोटी अरू फटो-पुरानो कपड़ो तो मिली जाय। "मेरे प्रश्न से विचलित हो, वह कुछ उत्तेजित हो गयी। उसका यह व्यावहारिक अर्थशास्त्र सुन मुझे अपना ज्ञान बौना लगने लगा।

इतना सरल गणित मेरी समझ में नहीं आया कि जिसके पास कुछ भी नहीं है, यदि उसे नित पैसे या खाने को न मिले, तो उसका काम कैसे चले। उसका काम तो नित कुँआ खोदना और नित पानी पीने जैसा है। मुझे विचार में खोया देख, उसी ने मौन तोड़ा, "अच्छा अब म्हूं चलूं बाबूजी। राम-राम।" कहकर उसने अपना हाथ कैलाश के कंधे पर रखा और मुड़कर जाने लगी। फिर सहसा रूककर बोली, "कैलास का सरू कोई पुरानी कमीज होय तो दीजो। ठंड में बुरी तरे कांपे हे।" मैंने देखा कैलाश की दुर्बल देह पर आज भी वही कमीज़ है, जो उसने उस दिन पहनी थी, जब वह पहली बार मुझसे मिला था। अब फटकर ज़ार-ज़ार हो चुकी थी। "जब भी रवि की कोई कमीज़ निकलेगी, मैं ज़रूर दूँगा।" मैंने उसे आश्वस्त किया।

"बड़ी किरपा होगी।" जुड़े हाथ सिर तक ले जाते हुए उसने कहा और मुड़कर चली गई।

कैलाश का मेरे यहाँ आना-जाना उसी तरह जारी था। पॉलिश न भी करनी होती, तब भी वह कभी-कभी आकर बाहर बैठ जाता और रवि तथा उसके दोस्तों को हसरत भरी नज़र से क्रिकेट खेलते देखते रहता। अभाव की पीड़ा से खींची रेखा, उसके चेहरे पर नज़र आ जाती। बीच-बीच में वह मुझे कमीज़ के लिए याद दिलाता। मैं हर बार उसे आश्वासन देता कि अगली बार जब भी कोई कमीज़ देने लायक निकलेगी, अवश्य दूँगा। इस बीच रवि की एक कमीज़ निकली भी। पर वह मैंने बर्तन मांजने वाली बाई के बेटे को दे दी। बर्तन वाली भी स्वयं के लिए साड़ी और बेटे के लिए कमीज़ की मांग करती रहती है। हम लोग अक्सर उसे टाल देते हैं। पर इस बार उसने कूटनीतिक पैंतरा अपनाया, "यदि मुझे इस बार दिवाली पर नई साड़ी और लड़के को कमीज़ नहीं मिली,

तो काम छोड़ दूँगी, कॉलोनी में मुझे हर घर से कुछ न कुछ मिलता है, बस आपके यहाँ ...।" इस धौंस के आगे मैंने घुटने टेक दिए। आजकल महरियाँ मिलती कहाँ हैं। मिल भी जाएँ, तो वेतन के लिए मुँह फाड़ती हैं। बर्तन वाली काम छोड़ देगी, तो पत्नी को सुबह-शाम बर्तन मांजने पड़ेंगे। पहले ही वह अत्यधिक व्यस्त और कमज़ोर है। दुबले और दो आषाढ़ वाली बात हो जाएगी। यही सब सोच, मैंने वह कमीज़ कैलाश को न दे, बर्तन वाली के छोकरे को दे दी। स्वार्थ, परमार्थ के आड़े आ गया।

कुछ दिनों बाद कैलाश का आना एकाएक बंद हो गया। कई दिनों तक बड़ी उत्सुकता से उसकी प्रतीक्षा करता रहा, पर वह नहीं आया। अनेक प्रकार की आशंकाओं से मन घिर आया। कहीं उसे ठंड तो नहीं लग गयी? किसी दुर्घटना की चपेट में तो नहीं आ गया? उसका बीमार बाप तो नहीं चल बसा? उसकी माँ को तो कुछ नहीं हो गया? इस तरह कई दिनों तक मैं कुशंकाओं और भय की गिरफ्त में रहा। आखिर धैर्य का बांध टूटा। एक दिन शाम को रवि की एक कमीज़ और बीवी की पुरानी साड़ी उठायी और कैलाश की झोंपड़ी की तलाश में निकल पड़ा। लम्बी–चौड़ी कॉलोनी को पार कर उस छोर पर पहुँचा, जहाँ शहर समाप्त होता है और जिसका कैलाश ने संकेत दिया था। ऊबड़-खाबड़ ज़मीन को पार करते हुए आगे बढ़ता गया। शाम का धुंधलका बढ़ता जा रहा था। दूर स्ट्रीट-लाईट की बत्तियाँ टिमटिमाने लगीं थीं। आखिर नाले के किनारे पेड़ के नीचे घांस-फूस की एक छोटी-सी झोंपड़ी दिखायी दी। उत्साहित हो, तेज़ कदमों से वहाँ पहुँचा। पास पहुँचते ही झोंपड़ी में से एक मरियल काला कुत्ता दुम दबाकर निकला तथा एक ओर भाग गया। मैंने झांककर झोंपड़ी में देखा। अंदर कोई न था। कुछ सामान यहाँ-वहाँ बिखरा पड़ा था। कच्चे चूल्हे की ईंटें राख पर इधर-उधर लुढ़की पड़ी थीं। आस-पास नज़र दौड़ायी कि कोई हो तो पूछूँ, पर वहाँ कोई न था। कुछ देर तक मैं वहाँ खड़ा रहा, स्तब्ध और उखड़ा-उखड़ा। आखिर निराश हो, कमीज़ को हाथ में झुलाते हुए, मेरे कदमों से लौट आया।

●●●●

"स्कूल चले हम..."

स्वाति कान्हेगावकर*

आज सुगंधा काम पर आनेवाली नहीं है, यह कल ही जाते-जाते उसने सीमा को बताया था। "बीबीजी मैं कल काम पर आनेवाली नहीं हूं। "यह सुगंधा के शब्द सीमा के कान में गूंज उठे वैसे ही सीमा तेजी से बिस्तर से उठी उसने सुबह के सारे काम निपट लिए। आज उसे जल्दी स्कूल जाना था क्योंकि "सर्व शिक्षा अभियान" के अंतर्गत उनका स्कूल अव्वल आया था इसलिए सीमा के प्रधानाचार्य और सभी सहयोगी शिक्षकों का सत्कार समारोह जिलाधिकारी के हाथों आज रखा गया था। "सर्व शिक्षा अभियान, बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ,जैसी योजनाओं को सक्षमता से विद्यार्थी तथा गांववालों तक पहुंचाने में नंदीग्राम पूरे जिले में पहले नंबर पर था। इस काम में सीमा ने तो बहुत मेहनत की थी। अपने छोटे से गांव में घर-घर जाकर शिक्षा से वंचित बच्चों को स्कूल लाने का उसका प्रयास काफी सफल रहा था। जिसके कारण बच्चे स्कूल आने के लिए प्रेरित हुए थे।

"सीमा...अरे ओ सीमा...सीमा..." बाहर से रजनी जोर-जोर से सीमा का नाम पुकार रही थी। "अरे ओ सीमा चलती हो या मैं चलूं। निकल ना बाहर, देर हो रही है। "रजनी दो मिनट में आ रही हूं मैं, यह देख निकल ही रही हूं।" कहकर सीमा ने अपना बैग संभाला, दरवाजे को लॉक किया और अपनी साड़ी को संभालते वह रजनी की गाड़ी पर उसके पीछे बैठ गई...

नंदीग्राम की स्कूल आज बिल्कुल नई दुल्हन जैसी सज-धज कर तैयार थी। जगह-जगह पर फूल मालाओं से सजा हुआ स्कूल का हर एक हिस्सा देखने वाले का मन आकर्षित कर रहा था। रंग-बिरंगे फूलों से सजा स्कूल का चप्पा- चप्पा रंग और सुगंध न्यौछावर कर रहा था। स्कूल की दीवारों पर अलग-अलग लिखी सुभाषित देखने वालों के साथ बातचीत कर रहे थे। स्कूल के हरे- भरे चमन में पत्ते, फूलों, फलों से लदे हर पेड़ पर एक-एक साहित्यकार के नाम देकर उन कवि-लेखकों की कविताएं, सुभाषित आदि से उन पेड़ों को एक अलग रूप प्रदान किया गया था। जिससे स्कूल के बच्चे हंसते खेलते खुशी से शिक्षा को आत्मसात कर रहे थे। यही तो कारण था आज पूरे जिले में नंदीग्राम के इस छोटे से स्कूल ने अपना नाम रोशन किया था। नंदीग्राम के स्कूल के बारे में जिलाधिकारी ने बहुत कुछ सुना था, आज उस स्कूल को प्रत्यक्ष तौर से देखने के लिए जिलाधिकारी खुद इस छोटे से गांव में पधार रहे थे। वह खुद स्कूल को देखकर नंदीग्राम की स्कूल

* *कनिष्ठ व्याख्याता एवं लेखिका, मराठी और हिंदी भाषा*

का नाम राष्ट्रीय स्तर पर "आदर्श स्कूल" पुरस्कार के लिए भेजने वाले थे।

"आ गए... आ गए... चलो हटो बाजू... साहब आ गए..." किसी ने तो वर्दी दे दी और पलक झपकते ही जिलाअधिकारी के साथ जिले का पूरा शिक्षा विभाग स्कूल के सामने उपस्थित हुआ। सजा -धजा स्कूल का यह रूप देखकर जिलाधिकारी के साथ आए हुए सारे महानुभव देखते ही रह गए। पेड़ों पर फल, फूलों के साथ लटकी हुई कविताओं की, सुभाषित, संत वचनों की तख्तियां देखकर सभी एक एक पेड़ के पास जाकर उन तख्तियों को बड़े चाव से पढ़ने में लीन हुए।

"साहब अगला प्रमुख कार्यक्रम शुरू करना है ना?"

किसी ने तो प्रश्न किया और जिलाधिकारी के साथ सभी प्रमुख कार्यक्रम के लिए मंच पर विराजित हुए।

"स्वागत है... स्वागत है। श्रीमान है आपका।

सुमन कुंज से लेकर आए फूलों के गुच्छे।

स्वागत करने आए हम प्यारे प्यारे बच्चे"। .....

"गुरु मेरी पूजा

गुरु मेरा परब्रह्म

गुरु भगवंत, गुरु साक्षात परब्रह्मा"

स्वागत गीत तथा गुरु की महती गाते गाते अपने मधुर स्वर से बच्चों ने सुनने वाले को मुग्ध कर दिया। बच्चों की मधुर वाणी से पूरा माहौल प्रसन्नविद हुआ। कार्यक्रम की शुरुआत बहुत ही शानदार हुई थी। और... और जिसका बेताबी से सबको इंतजार था वे जिलाधिकारी साहब भाषण के लिए खड़े हुए, तालियां गूंज उठी अपनी भारी आवाज से जिलाधिकारी बोल रहे थे— "इस छोटे से गांव की यह सुंदर पाठशाला देखकर मन प्रसन्न हुआ। अपनी आंखों पर विश्वास ही नहीं हो रहा है कि इतने छोटे से गांव में इतनी सुंदर सजग पाठशाला हो सकती है। गांव का हर बच्चा शिक्षा के प्रभाव में लाने के लिए इस स्कूल के प्रधानाध्यापक तथा शिक्षकों ने जो काम किया वह सराहनीय है। संविधान ने हमें जो मानव अधिकार दिये है उस पर हर एक इंसान का अधिकार है। उन अधिकारों की पहचान देश के कोने-कोने तक पहुंचाना यह हमारे जैसे पढ़े-लिखे लोगों का परम कर्तव्य है। "रोटी-कपड़ा और मकान" के साथ "शिक्षा" यह सबका हक है। इस नंदीग्राम ने यह हक हर एक बच्चे को मिलाने के लिए जो प्रयास किया उन सभी शिक्षकों का मैं तहेदिल से अभिनंदन करता हूं और मेरे सजग शिक्षकों को और एक बात बताना चाहता हूं, मेरे भाइयों शिक्षा के साथ-साथ गांव के बच्चों का और गांववालों के स्वास्थ्य का ख्याल आप लोगों को रखना है क्योंकि हर एक भारतीयों को स्वस्थ- निरोगी रहने का अधिकार है। स्कूल में आने वाला हर बच्चा तन- मन से स्वस्थ होना जरूरी है,क्योंकि स्कूल में तो "कल के भारत" का निर्माण होता है। भारत का उज्जवल भविष्य स्कूल के चार दीवारों के अंदर ही तो होता है। सज्जनों मानव अधिकार यानी क्या यह आप जानते हैं। क्या होता है यह मानव अधिकार। हर एक व्यक्ति का शारीरिक-मानसिक-आध्यात्मिक विकास होना चाहिए। 1948 में ही यह तय हुआ परंतु आज तक हर एक व्यक्ति तक सही अर्थ में यह मानव अधिकार पहुंचे नहीं। इसे पहुंचाना हमारा उत्तरदायित्व है। सज्जनों मानव अधिकार में कई सारे अधिकार निहित जैसे-जिंदगी जीने का, आजादी का, समानता, समान काम समान दाम, कानून के अनुसार सब समान, ऐसे एक नहीं कई सारे हक इसके अंतर्गत

आते हैं। आपके स्कूल से आपने यह शुरुआत की इस गांव के लिए, हमारे जिले के लिए बड़े हर्ष की बात है। आपके इस सुंदर स्कूल को "आदर्श स्कूल" का पुरस्कार मिलना ही चाहिए। वह मिलेगा हमारे देश का प्रतिनिधित्व यह हमारा नंदीग्राम का स्कूल करेगा",

"सज्जनों इतने छोटे से गांव में यह सब करना आसान नहीं था यह मैं जानता हूं लेकिन कहा जाता है ना"इरादे नेक हो तो सपने साकार होते हैं।

"दिल में सच्ची लगन हो तो रास्ते आसान होते हैं।"

"हमारा नंदीग्राम का स्कूल "आदर्श स्कूल" प्रतियोगिता में प्रथम ही आएगा। जिसके लिए मैं स्कूल के प्रति अपनी शुभकामनाएं व्यक्त करता हूं और मेरे मंतव्य को विराम देता हूं"

जिलाधिकारी साहब के जोशीले मंतव्य से सुनने वाले मंत्रमुग्ध रहे।

आज का कार्यक्रम बड़ा ही सफल रहा इस खुशी से सीमा घर पहुंची। सुबह से घर के कई सारे काम उसकी राह देख रहे थे लेकिन आज स्कूल में ही वह इतनी थक चुकी थी, घर के कामों की तरफ देखने का उसका मन नहीं था। चाहकर भी उसने घर की तरफ ध्यान नहीं दिया। बस बार-बार सुबह से लेकर शाम तक स्कूल के कार्यक्रम की झलक उसके आंखों के सामने मंडरा रही थी।

दूसरे दिन सुगंधा काम के लिए जल्दी ही पधारी आज वह अकेली नहीं थी उसके साथ उसके साथ सात साल की बेटी भी थी बहुत ही दुर्बल, शक्तिहीन, मरियल,जिसकी हड्डी पसली एक थी गाल पिचके हुए थे। सुगंधा ने उसे आंगन में पेड़ के नीचे बैठाया,वैसे ही बहुत जोर-जोर से हाथ पैर पटक- पटक कर रोने लगी। "अरे ओ सुगंधा बच्ची रो रही है ना उसे आंगन में क्यों बिठाया, ला इधर घर में बिठा दे" सीमा ने उस मरियल बच्ची की तरफ देखकर सुगंधा को सूचना दी। "बीबीजी यह बच्ची वैसी ही है उसे घर में बिठा लो, गोद में बैठा लो, या सर पर ले लो वह रोने वाली है।" ऐसा कुछ बड़बड़ाते हुए सुगंधा ने उस दुर्बल बच्ची को हॉल के एक कोने में पटक दिया। बच्ची की हालत देखकर सीमा का दिल पिघल गया। उसने झट से खाने की मेज पर रखे दो बिस्कुट और सेब के दो कोर एक प्लेट में रखकर बच्ची के सामने वह प्लेट रख दी। बच्ची अपने दुर्बल, शक्तिहीन हाथों से एक- एक टुकड़ा उठाकर मुंह में ठूसने की कोशिश कर रही थी। हाथ में उठाया टुकड़ा मुंह तक जाते-जाते दो-तीन बार नीचे गिरता बच्ची फिर से उसे उठाने की चेष्टा करती और बहुत प्रयास से टुकड़ा मुंह में डालती।

आराम कुर्सी पर बैठकर सीमा दुर्बल बच्ची का निरीक्षण कर रही थी उसने सुगंधा से प्रश्न किया "सुगंधा तुम्हारी यह बच्ची कितने साल की हुई।"

"बीबीजी अभी इसे सात साल पूरे होने को आए ना जी।"

"अरे बच्ची सात साल की हुई है फिर भी तुमने इसका नाम स्कूल में दर्ज नहीं किया?"

"बीबीजी यह एक जगह से दूसरी जगह अकेली जा नहीं सकती, और बीबीजी लड़की जात को कायको पढ़ाना लिखाना। इसको पढ़ाकर मैं पैसा बर्बाद नहीं करूंगी। कितना भी पढ़ कर आखिर लड़की जात को चूल्हे के सामने तो बैठना है वह कहां कलेक्टरीन बनेगी।..." ऐसी कुछ उल्टी-सीधी बात करते-करते सुगंधा काम करने में रत हुई।

कल का कार्यक्रम बहुत बड़ा हुआ था, आज स्कूल की छुट्टी थी। महेश और समय दोनों चार दिन के

लिए बाहर गांव गए हुए थे। आज काम पर सुगंधा भी आई थी, सीमा के कंधों का बोझ हल्का हुआ था। कल जिलाधिकारी ने जो प्रशंसा की थी उसका नशा दिलो-दिमाग पर आज तक विराजित था। जिलाधिकारी के प्रशंसा भरे शब्द कानों में गूंज रहे थे और अब सामने सुगंधा की यह सात साल की कुपोषित बालिका को बहुत गौर से देख रही थी। वैसे ही जिलाधिकारी के शब्द, उन्होंने मानव अधिकार के संदर्भ में दी जानकारी, वे अधिकार सबको मिलने चाहिए जिन लोगों को इन अधिकारों के बारे में जानकारी नहीं उन्हें जानकारी देना हम जैसे पढ़े-लिखे लोगों का उत्तरदायित्व है। गांव-गांव में घर-घर जाकर हम उन अधिकारों के प्रति लोगों को सजग करेंगे। वैसे आप सभी शिक्षक यह काम करते ही हो, आगे भी यह काम करने की जिम्मेदारी मैं आपके कंधों पर सौंपता हूं..." सीमा यह सारी बातें याद ही कर रही थी और... और उसके सामने सुगंधा की वह बेटी सात साल की होने के बावजूद पिछले एक घंटे से हाथ में लिया हुआ बिस्कुट का टुकड़ा खा ही रही थी। उस मासूम बच्चे की तरफ देखकर सीमा शर्मिंदा हुई। "अरे इस बच्ची को भी शिक्षा ग्रहण करने का, स्वस्थ रहने का अधिकार है। अब उसे सात साल पूरे होने को आए तो भी उसने अभी तक स्कूल में कदम नहीं रखा। उसका शरीर एक ठूंठ मात्र ही रह गया है। उसका कद बढ़ता ही नहीं। सीमा झट से आराम कुर्सी से उठ कर खड़ी हुई इस बच्ची जैसे पता नहीं कितने बच्चे होंगे जो अपने अधिकारों से कोसों दूर है। अपने हकों की उन्हें पहचान ही नहीं होगी। हमें भी पढ़ने का, स्वस्थ सुंदर रहने का अधिकार है, यह इन्हें मालूम ही नहीं। ...अरे मैं केवल इनके बारे में सोच कर ऐसा बैठ नहीं सकती। सीमा की अंतरात्मा जागृत हुई मुझे कुछ करना होगा...इन बच्चों के लिए मुझे कुछ करना होगा..."

"सुगंधा अरे ओ सुगंधा... तुम्हारा काम हो गया क्या?...

"हां अभी बीबीजी हो गया आई...देखो आ गई मैं..." कहकर सुगंधा उसके सामने खड़ी हुई।

"सुगंधा यहां मेरे सामने बैठ मैं तुमसे कुछ कहना चाहती हूं। पहले यह पानी पी ले... तेरे लिए चाय बनाई वह भी पी लेना..."

अपने गीले हाथ अपने मैले पल्लू से पोंछकर सुगंधा अपने दुर्बल लड़की को गोद में बिठाकर सीमा के सामने बैठ गई। "बोलिए बीवीजी आप कुछ कहना चाहती थी...."

"अरे सुगंधा तेरी इस बच्ची को सात साल पूरे हुए तो भी तुमने इसका नाम स्कूल में अभी तक दर्ज नहीं किया ऐसा क्यों?"

"बीबीजी आपको सच बोलूं क्या? बच्चों को स्कूल भेजने के लिए जो पैसा लगता है वह हमारे पास कहां से आएगा जी, मुझे भी लगता है मेरी बिटिया पढ़ेगी,आपके जैसे मास्टरनी बनेगी लेकिन बीबीजी आप इसकी हालत देख रही हो ना। दो वक्त की रोटी हम लोग इसे नहीं दे सकते..." इतना कहकर उसने अपना मैला पल्लू आंखों पर लगाकर आंखें पोंछ ली।

"सुगंधा अब जो हुआ सो हुआ अब मैं तुझे जो कहने जा रही हूं उसे ध्यान से सुन ले... अरी सुगंधा बच्चों को पढ़ने के लिए एक पैसा भी खर्च करने की जरूरत नहीं, हमारी सरकार बच्चों को मुफ्त में शिक्षा देती है। इसके साथ-साथ बच्चों को स्कूल में मुफ्त में भोजन मिलता है। बच्चों की सेहत का जिम्मा अब सरकार ने ही लिया यह सब मानव अधिकार बच्चों को मिलने चाहिए इसलिए हमारी सरकार कितनी सारी योजनाएं ला रही है परंतु आप लोग हैं कि इन योजनाओं का लाभ उठाते नहीं। छोड़ दे तू भी क्या करेगी तुझे इसका ज्ञान ही नहीं है। अब कल से मैं एक काम करूंगी तुम्हारे मोहल्ले में जो सरकारी स्कूल है उसमें सबसे

पहले तुम्हारी बच्ची का नाम दर्ज करेंगे। इस मासूम बच्ची को पढ़ने का अधिकार है और एक बार सरकारी अस्पताल में बच्ची को हम ले जाएंगे, स्कूल में मिलनेवाला खुराक यानी भोजन उसे स्वस्थ बनाएगा। और एक बात सुगंधा तुम्हारे मोहल्ले में स्कूल न जानेवाले, दुर्बल जितने भी बच्चे हैं उन्हें हम स्कूल भेजेंगे, उन्हें अस्पताल ले जाएंगे, उन्हें सेहतमंद भोजन देंगे और इस काम के लिए मुझे तेरी जरूरत है।"

"बीबीजी आप तो बड़ा पुण्य का, नेक काम कर रही हो। मैं आपका साथ दूंगी, मैं आपके साथ आऊंगी हां मैं आपके साथ ही हूं..."

दूसरे दिन से सीमा ने यह नेक काम शुरू ही किया। शहर के हर झोपड़ियों में जाकर स्कूल ना जाने वाले दुर्बल, शक्तिहीन, बीमार बच्चों को अस्पताल में भर्ती कराया, जहां उनका इलाज शुरू किया। बच्चों के हक उन्हें मिलने ही चाहिए। मानव अधिकार अगर उन तक पहुंच सकते तो हम उन तक पहुंचा देंगे। यह जिलाधिकारी के शब्द बार-बार सीमा को काम के लिए प्रेरित कर रहे थे। इसी प्रेरणा से सीमा ने कितने सारे बालक -पालकों को सजग किया। उनके अधिकारों की पहचान उन्हें दी। बालकों के साथ पालक भी अपने अधिकारों के प्रति सजग हुए। अब नंदीग्राम जैसे ही सीमा के शहर में भी स्कूल से दूर भागनेवाले बच्चे शिक्षा से वंचित बच्चे रोज सुबह खुशी खुशी "स्कूल चले हम..." कहकर स्कूल जा रहे थे। इन बच्चों को ऐसे हंसते-खेलते स्कूल जाते देखकर सीमा के मन में एक आनंद की लहर दौड़ती और उसका मन उसे कहता "चलो मानव अधिकार इन लोगों तक पहुंच गए और वह भी बच्चों जैसा ही गुनगुनाती "स्कूल चले हम..."

●●●●

सामना

बलराम*

ट्यूशन पढ़ाकर लौट रहा है सोमनाथ। मकान के अंदर प्रवेश कर पाए, इसके पहले ही तिवारी जी की गुहार उसके कानों से टकराई। वह मुड़ा और सड़क पार सामने फुटपाथ पर टाट बिछाकर लगाई गयी तिवारी जी की दुकान पर पहुंच गया। तिवारी जी के शरीर पर मैले-चीकट निक्कर के अलावा अगर कुछ और था तो कंधे से कमर तक लटकता जनेऊ। उनका दुबला-पतला तन और यह हाड़-तोड़ दुकानदारी, सोमनाथ ने सोचा-अच्छे-भले डागा कॉटन मिल में लगे हुए थे कि एक दिन तालाबंदी हो गयी और उनके जैसे हजार से अधिक लोग बेकार हो गए। उनमें से कुछ तो अपने-अपने गांव लौट गए और कुछ ने मुंबई, अहमदाबाद या कोलकाता का टिकट कटा लिया। कुछ ने रिक्शे पकड़े और बाकियों ने दूसरे छोटे-मोटे धंधे, जैसे तिवारी जी ने फुटपाथ पर गल्ले की यह दुकान कर ली। सोमनाथ जब उनके करीब पहुंचा, वे तराजू का पल्ला उठाकर उस बूढ़े ग्राहक के झोले में गेहूं डाल रहे थे, जिसके सिर के सारे बाल सफेद थे। गेहूं डलवाकर बूढ़े ने अपनी टेंट खोली, कुछ मुड़े-तुड़े नोट निकाले और उनमें से छांटकर सड़ियल नोट तिवारी जी की ओर बढ़ा दिए। तिवारी जी ने पहले तो बूढ़े को घूरा और फिर नोट लेकर गिनने लगे। उनमें से दो नोट निकालकर बूढ़े को लौटाते हुए बोले, "हमहीं मिले रहन ई सड़े न्वांट भ्याईं की खातिर?"

"ठीक तव हैं हो, का खराब है इनमा?"

"खराब नांइ हैं तव हमैं दूसर दइ देव अऊर इनका ट्यांट मा बांधि लेव।"

"अरे यार, नाइ मानत हव तव लाव।" कहते हए बूढे ने नोट लिये और अपनी टेंट खोलकर अपेक्षाकृत कम सड़ियल नोट तिवारी जी की ओर बढ़ा दिए। टेंट कसी, झोले को अपनी खडखडिया साइकिल पर टांगा और आगे बढ़ गया। उससे निबटकर तिवारी जी सोमनाथ की ओर मुखातिब हुए, "शंभू आया था। काफी देर तक आपका इंतजार करता रहा। थोड़ी देर में फिर आएगा। कहीं जाइएगा नहीं।" तिवारी जी कुछ और कह पाएं, इसके पहले ही एक खूबसूरत औरत ने आकर उन्हें टोक दिया, "गेहूँ का भाव हैं?"

"कउन?"

"ई..." तिवारी जी उस औरत से उलझ गए तो सोमनाथ सड़क पार कर अपने कमरे में आ गया।

---

* *केन्द्रीय साहित्य अकादमी की पत्रिका, 'समकालीन भारतीय साहित्य' के संपादक*

तिवारिन अंगीठी सुलगा रही थीं। सोमनाथ को देखते ही रुक गई और उन्होंने भी शंभू के आने की खबर दी। हवा का तेज झोंका अंगीठी से उठता सारा धुआं उनके मुंह पर बिथरा गया तो वे उठ खड़ी हुई और अंगीठी का कड़ा चिमटे में फंसाकर उसे घर से बाहर चबूतरे पर रख आयी।

ऊपरी मंजिल से मकान मालिक के लड़के ने मास्टर साहब से कटियार साहब के बारे में पूछा तो कमरे में लटकता ताला देखकर उन्होंने नकार में सिर हिलाया और साइकिल लेकर बाहर निकल गए। कटियार साहब शायद ड्यूटी के लिए घर से निकल चुके थे। राधेश्याम सब्जी में नमक ज्यादा पड़ जाने पर बीवी को लताड़ रहा था। उसे शायद ड्यूटी पर जाने में देर हो रही थी। सोमनाथ ने कमरे का ताला खोला और चारपाई पर लेट कर शंभू का इंतजार करने लगा-कोऑपरेटिव बैंक में सोमनाथ को फिट कराने की जुगाड़ कर रहा है शंभू।

नौकरी, वह भी बैंक की, मिल जाए तो चांदी है, पर कम्बख्त मिलती कहां है? हाई स्कूल में उसने प्रथम श्रेणी पायी थी। इंटर और बीए में भी अच्छे नंबर पाए हैं और इस साल कोशिश में है कि एमए में प्रथम श्रेणी ले आए, पर उससे भी क्या होगा। उसके जैसे न जाने कितने ग्रेजुएट सड़कें नाप रहे हैं, किसी को कहां मिलती है नौकरी। कहां धरी हैं इतनी नौकरियां! और धरी भी हैं तो एक अनार सौ बीमार' वाली बात है। वह अनार भी उसी बीमार को मिलता है, जो किसी समर्थ का बेटा है और ऐसे बेटों की जमात में सोमनाथ जैसों का नाम नहीं आता। कंडीडेट पहले से तय हो जाते हैं, रिक्त स्थानों का विज्ञापन बाद में निकलता है। कुछ के पिता, काका या मामा एमएलए या एमपी होते हैं, कुछ के सेक्रेटरी या डायरेक्टर या फिर उनके पिता की हैसियत और पहुंच इतनी होती है कि संबंधित अधिकारी की जेब में नोटों की गर्मी पहुंच जाती है और सब कुछ मोम की तरह पिघल जाता है। विज्ञापन तो एक फॉर्मेलिटी होता है और होता है समता का ढोंग, सोचता हुआ सोमनाथ विचलित होने लगता है। उसके पिता, काका या मामा किसी ऊंची पोस्ट पर नहीं हैं, न ही उनकी जेब ऐसी है कि भेंट पूजा कर सकें। वे गांव में खेती करते एक साधारण किसान हैं और किसान की औकात होती ही कितनी है!

हाई स्कूल में प्रथम श्रेणी पाते ही सोमनाथ ने बैंक और पोस्ट ऑफिस की नौकरियों के लिए अप्लाय करना शुरू कर दिया था। न जाने किस-किस बैंक के लिए कितने-कितने रुपये के बैंक ड्राफ्ट लगाकर उसने अप्लाय किया। पोस्ट ऑफिस और तारघर की क्लर्क ग्रेड नौकरी के लिए भी कई बार फॉर्म भरे, पर किसी ने कभी रिटन टेस्ट तक के लिए नहीं बुलाया।

आजकल नौकरी का हाल यह है कि जिसे मिल गयी, उसे मानो राज-पाट मिल गया। वह जिंदगी की दौड़ जीत गया और जिसे नहीं मिली, उसका जीवन तो नरक ही समझो। सारी शिक्षा-दीक्षा, सारी काबिलियत धरी की धरी रह जाती है। धोबी के कुत्ते की तरह वह न घर का रहता है, न घाट का। ऐसी हालत में कुछ लोग चोरी-डकैती करने लगते हैं, कुछ दादा बनते हैं, दलाल बनते हैं, ठग बनते हैं, हत्यारे और स्मगलर बनते हैं, क्योंकि उनके खाली दिमाग और जवान शरीर को करने के लिए कोई काम तो चाहिए ही। सोमनाथ के कई साथी 'वैसे' हो चुके हैं, लेकिन सोमनाथ वैसा कुछ नहीं होना चाहता।

इस मकान में सोमनाथ को आए अभी सिर्फ तीन महीने हुए हैं। नीचे छह कमरे हैं, जिन्हें कोठरियां कहना ज्यादा सही होगा। पांच में तो पांच किरायेदार अपने-अपने परिवार के साथ रहते हैं और छठी कोठरी में मकान मालिक की गाय बंधती है, अकेली। ऊपरी मंजिल जरूर ठीक-ठाक बनी है, जिसमें मकान मालिक का परिवार रहता है। सोमनाथ की कोठरी में न खिड़की है, न रोशनदान। बाकी कोठरियां भी कमोबेश ऐसी

ही हैं, जिनके टांडों पर आलतू-फालतू सामान भरा रहता है। जैसे सोमनाथ की कोठरी का टांड किताबों और पत्र-पत्रिकाओं से अंटा पड़ा है। एक अलमारी है, जिसमें जरूरी बर्तन-भांडे और अनस्तर-कनस्तर भरे हैं। कोने में लोहे की बाल्टी में पानी है और उसकी बगल में रखी है सुराही। एक कोने में अंगीठी और स्टोव है। एक चारपाई है, जिसके नीचे सूटकेस है, जिसमें सूट के नाम पर पिछली सर्दी में खरीदा गया सेकेंड हैंड कोट है और है एक स्वेटर, जिसे मीता ने बुना है, जिसके बारे में सोमनाथ का खयाल है कि वह उसे प्यार करती है।

कोठरी में थोड़ी देर बाद ही उसका बदन पसीना-पसीना हो उठा। सीलिंग या टेबल फैन की बात तो सपना ही है सोमनाथ के लिए। खजूर का पंखा जरूर है, अंगीठी धौंकते-धौंकते जिसकी हालत भी खस्ता हो चुकी है। पहले तो उसने उसी खस्ता-हाल पंखे से हवा करके बदन को राहत देनी चाही, दो-चार बार उसे हिलाया-डुलाया भी, पर उससे तन और मन की व्याकुलता कम नहीं हुई तो तौलिया लपेटकर बाहर निकल आया और मकान मालिक की दुकानदारी देखने लगा। प्रवेश द्वार के अगल-बगल के दो कमरों में मकान मालिक की दुकानदारी है, स्पिरिट की, जिसे एल्गिन मिल में काम करने वाले मजदूर और रिक्शेवाले पीते हैं। हालांकि हड्डियों के क्रॉसनुमा ढांचे के नीचे 'डिनेचर्ड स्पिरिट विकृत विष है और स्वास्थ्य के लिए खतरनाक है' लिखा साइनबोर्ड वहां टंगा है, लेकिन जिसे नशे की लत पड़ गयी हो, उसके लिए ऐसे किसी बोर्ड की अहमियत ही क्या!

वह नीम की छांव तले आया तो गर्मी का असर कुछ कम हुआ और उसे राहत महसूस हुई। फिर वह चबूतरे पर बैठ गया। तिवारिन की अंगीठी ऊपर तक दहक आयी थी। उसने आवाज दी तो वे आकर उसे उठा ले गयी।

सोमनाथ चाह रहा था कि शंभू जल्द से जल्द आ जाए तो उसे पूरी बात मालूम हो। उसका दिल बल्लियों उछल रहा है। मकान मालिक के लड़के शंभू को 'लंगड़वा' कहकर बुलाते हैं और कभी-कभी नाराज होने पर तिवारिन भी उसे लंगड़दीन कहती हैं, हालांकि गांव के रिश्ते में वह उनका भाई लगता है, पर लोग हैं कि उसे बहुत-बहुत कुछ कह जाते हैं और वह है कि सिर झुकाए सुनता रहता है। शंभू के प्रति लोगों का यह व्यवहार सोमनाथ को अच्छा नहीं लगता। बचपन में बैलगाड़ी पलटने से उसका पैर टूट गया था। इलाज से वह ठीक तो हुआ, पर थोड़ा टेढ़ा रह गया और शंभू लंगड़ा हो गया, जीवन भर के लिए।

किसी तरह कस्बे से उसने थर्ड डिवीजन में हाई स्कूल पास किया और आईटीआई से ट्रेनिंग लेकर सूटरगंज के एक प्रेस में काम करने लगा, जहां प्राइमरी स्कूल के छात्रों के लिए पाठ्य पुस्तकें छपती हैं। अभी स्थिति ऐसी नहीं है कि वह अपने परिवार को गांव से लाकर शहर में रख सके, परिवार यानी मां-बाप और बहन। ग्वालटोली के एक मकान में सीढ़ियों के नीचे की भंडरिया किराये पर लेकर रहता है वह। तिवारी जी के घर कभी-कभी ही आता है, वह भी जब कोई काम हो। कभी गांव से आलू ले आएगा तो कभी पिपिया भर गन्ने का रस, कभी मकान मालिक के लिए असली देसी घी। आते ही तिवारिन से खाना मांगेगा और खाकर सबसे मिलेगा, हाल-चाल पूछेगा और फिर थोड़ी बहुत गप्पबाजी। जितनी देर रहेगा, हंसता रहेगा, सबको हंसाता रहेगा, बच्चों को, बड़ों और बूढ़ों को भी, पर मकान मालिक के लड़के न जाने क्यों उससे चिढ़ते हैं।

तीन महीने पहले सोमनाथ ने खलासी लाइन के मकान में किराये पर जब कोठरी ली तो शंभू ही वह पहला आदमी था, जिससे उसकी बोलचाल हुई और फिर दोस्ती भी। शंभू के जरिए ही तिवारी परिवार से सोमनाथ का मेल-जोल बढ़ा और फिर तो बात कभी कभार तिवारिन के घर से साग-सब्जी आ जाने या रोटी

बनवा लेने तक बढ़ गयी। मास्टर साहब, कटियार साहब, गोविंद या राधेश्याम से अब भी सोमनाथ की बात नहीं होती। वे लोग अपनी तरफ से कभी कुछ पूछ लेते हैं तो वह हां-ना में जवाब दे देता है। बात इससे आगे बढ़ नहीं पाती। हालांकि सोमनाथ चाहता है कि आगे बढ़े, वे लोग भी शायद चाहते होंगे, पर अपनी-अपनी व्यस्तता उन्हें अपने आप में उलझाए रखती है, लेकिन शंभू से सोमनाथ की आत्मीयता बढ़ गयी। उन्होंने 'अंकुर' आदि कुछ फिल्में साथ-साथ देखीं और कई बार ढाबे में एक साथ खाना भी खाया। कई बार सोमनाथ के कपड़े शंभू पहन गया और एकाध बार सोमनाथ भी शंभू की शर्ट पहनकर गांव गया है। एक दिन मोती झील में कार से उतरकर कैफे की ओर जाते एक सज्जन मिल गए, जिन्हें शंभू ने मामा कहकर संबोधित किया। औपचारिक कुशल-क्षेम पूछने के बाद उनसे अलग होने पर शंभू ने बताया था कि कोऑपरेटिव बैंक में डिप्टी डायरेक्टर हैं। मैट्रिक में तुम्हारी प्रथम श्रेणी है, नौकरी के लिए बात करूंगा।

परसों भेंट होने पर उसने सोमनाथ को बताया था कि बैंक की फलबाग ब्रांच में एक स्थान रिक्त हुआ है। सारी डिटेल्स लेकर आज आने का वादा किया था शंभू ने। सो, उसके आने की सूचना पाकर सोमनाथ को लग रहा है कि उसकी नौकरी लगने में अब देर नहीं। नौकरी, वह भी बैंक की, उसके मन की मुराद पूरी होने का समय शायद आ गया है।

इसी को कहते हैं कि भगवान के घर देर है, अंधेर नहीं है। भगवान की कृपा हुई तो उसे शंभू जैसा दोस्त मिल गया। और अब उस दोस्त के जरिए उसे नौकरी मिलने जा रही है। मन ही मन पुलकित होता सोमनाथ बेसब्री से शंभू का इंतजार कर रहा है, एक-एक पल गिनते हुए।

तकरीबन एक घंटे बाद शंभू आया और बैंक का अप्लीकेशन फॉर्म उसकी ओर बढ़ा दिया, "बहुत लकी हो यार, मामाजी ने तुम्हारे लिए हां कर दी।" कहते हुए शंभू उसे बंगाली ढाबे ले गया और अपनी तरफ से उसका मुंह मीठा कराया। वे दोनों वहां डेढ़ घंटे बैठे रहे, मीठी मीठी बातें करते और कल्पनाओं की ऊंची-ऊंची उड़ान भरते हुए। शंभू ने उससे प्रॉमिस लिया कि नौकरी का एक साल पूरा होने पर वे दोनों दार्जिलिंग जाएंगे, जिसका सारा खर्च सोमनाथ उठाएगा। और लगे हाथ उससे सूट बनवा लेने का वादा भी करवा लिया शंभू ने। शंभू की सब बातें सोमनाथ ने स्वीकार कर लीं, कर भी क्यों न लेता, इतनी अच्छी नौकरी जो लगने जा रही है। अभी ऐसे तो क्या है कि तमाम सारी भाग दौड़ के बाद कछ रुपये ट्यूशन से कमाकर कक्का की मदद से एमए कर लेने की फिराक में है वह। हालांकि जानता है कि एमए हो जाने भर से स्थिति में कोई खास फर्क नहीं आने वाला। इसलिए चाहता है कि किसी भी कीमत पर बैंक की यह नौकरी उसे मिल जाए। फिर अगर एमए न भी हो पाए तो कोई चिंता नहीं, क्योंकि आजकल महत्व एमए-बीए का नहीं, अच्छी तनख्वाह वाली नौकरी का है। तमाम सारे लोग एमए-बीए नहीं हैं, पर कोई भी ऐसी-वैसी नौकरी पाकर निश्चित हैं, पर उनसे कई गुना ज्यादा सोमनाथ जैसे एमए-बीए करते लड़के भविष्य की लहरों के थपेड़ों से जूझ रहे हैं। यह तो कहो कि उसकी किस्मत का सितारा बुलंद है कि उसे शंभू मिल गया, नहीं तो पता कैस चलता कि कोऑपरेटिव बैंक की फूलबाग ब्रांच में कोई जगह रिक्त हुई है। पता चलता भी तो नौकरी किसी और को मिल जाती, उसे कौन पूछता!

डेढ़ घंटे बाद जब दोनों अपने-अपने कमरे के लिए विदा होने लगे तो शंभू ने धीमे स्वर में उससे कहा, "ये सारी बातें तब तक गुप्त रखना, जब तक तुम ज्वाइन नहीं कर लेते। तिवारी जी को भी मत बताना। बात लीक हो गयी तो मामला गड़बड़ हो जाएगा। और हां, मामा को तो नहीं पर नीचे वाले और लोगों की कुछ न कुछ भेंट पूजा करनी होगी। किसी बैंक से तीन महीने का एक्सपीरिएंस सर्टीफिकेट भी लेना पड़ेगा।"

भेंट पूजा वाली बात सुनते ही सोमनाथ का दिल डूबने लगा। डूबते दिल से उसने पूछा, "कम से कम कितने रुपयों में काम हो सकता है?" अंगुलियों पर हिसाब लगाकर शंभू ने बता दिया।

"यार, इतने रुपये कहां से लाऊंगा?" "देख लो, मौका है, फिर मुझे दोष मत देना कि कुछ किया नहीं। वैसे तुम्हारा अप्वॉइंटमेंट हो जरूर जाएगा।" "पर यार..." "क्या है, तीन-चार महीने की तनख्वाह में सब लौट आएगा।" "यार, ऐसा नहीं हो सकता कि मामा से कहकर कुछ ऐसी व्यवस्था करवा लो कि नौकरी लगने के बाद डेढ़ गुने दे दूं?" "ऐसा नहीं होता है दोस्त।" "फिर यार, कुछ कम में काम करवा।" "चल, कोशिश करते हैं।" "शुरू में कितने चाहिए होंगे?" सोमनाथ ने पूछा तो शंभू ने अंगुलियों पर हिसाब लगाकर फिर बता दिया। "बाकी?" "बाकी भी एकाध हफ्ते में। देर होने पर मामला गड़बड़ हो सकता है।" "ठीक है, मैं तीन-चार दिन में कैसे भी इतने की व्यवस्था करता हूं।" "जितनी जल्दी कर सकते हो, करो।" "जल्दी बहुत हो तो मेरी पासबुक में हैं कुछ।"

"ठीक है, वही निकालकर दे दो ताकि काम शुरू तो हो।" सुनकर सोमनाथ ने कमरे से पासबुक ली और दोनों पोस्ट ऑफिस पहुंच गए। फार्म भरकर सोमनाथ ने रुपये निकाले और शंभू को थमा दिए। दुकान पर आकर शंभू ने पान लगवाया और फिर सोमनाथ के सर्टीफिकेट और मार्कशीट वगैरह लेकर चला गया।

इसके बाद दिन का शेष समय तो किसी तरह बीत गया, पर रात में चारपाई दहकने लगी या शायद सोमनाथ खुद। जैसे-जैसे रात गहराई, सोमनाथ की बेचैनी बढ़ती गयी। कभी-कभार मकान मालिक की गाय की घंटी टुनक उठती। बाकी पूरी तरह खामोशी है। सभी लोग सो गए हैं, लेकिन सोमनाथ है कि उसकी नींद उड़ी हुई है। इतने धन की व्यवस्था कर पाना उसके लिए असंभव है। न जाने कब से दो-दो, चार-चार रुपये बचाकर पोस्ट ऑफिस में जमा करता रहा, जिन्हें शंभू ले गया। बाकी भी तुरंत ही चाहिए। क्या करे, किसी से उधार ले, पर इतने रुपये देगा भी कौन? गांव जाकर कक्का से कहे तो कौन उनके पास दबी-छिपी गिन्नी रखी होंगी, जो गिनकर दे देंगे। इतने बड़े परिवार की गुजर-बसर ही कर रहे हैं, यही क्या कम है! उनके पांव का हाल दिनोंदिन बिगड़ रहा है, किसी दिन वे बिल्कुल ही बैठ गए तो... सोचकर ही सोमनाथ का दिल डूबने लगा। उसकी समझ में नहीं आ रहा है कि वह क्या करे। अपने दिमाग को उसने सत्तर जगह दौड़ाया, पर कहीं भी कुछ हाथ लगता नजर न आया।

अगली सुबह का सूरज कुछ अधिक ही गर्म था। उसने कुछ मित्रों की जेबें और मन टटोले, पर कहीं कुछ न मिला। कहावत है कि अंततः 'हारे को हरि नाम' और 'गंवई को अपना गांव' ही याद आता है, जहां उसके थके-हारे मन को त्राण मिलता है। सो, सोमनाथ ने भी गांव ही जाने का निर्णय कर लिया। कुछ दूसरे काम निबटाते-निबटाते चार बज गए। पांच बजे रावतपुर आकर उसने एक टेम्पो पकड़ लिया, जिसने उसे दो घंटे बाद शिवराजपुर उतार दिया।

उतरा तो अंधियारा अपनी प्रतीति कुछ अधिक देने लगा और उसे ऊसर-ऊसर तीन किलोमीटर पैदल चलकर अपने गांव पहुंचना है, कक्का के पास। कक्का को बहुत मानता है सोमनाथ। यही वजह है कि जैसे-जैसे गांव का फासला तय हो रहा है, उसकी बेचैनी बढ़ रही है। इतने सारे रुपयों की मांग वह कक्का से किस तरह कर सकेगा, सोचता हुआ जैसे ही जीटी रोड से उतरकर रामबाग पार हुआ, कुछ भी दिखाई देना बंद हो गया। चारों ओर अंधेरा छा गया था, घना अंधकार। कभी-कभार इधर-उधर चमकते जुगनुओं की चमक जरूर उसको कुछ सुकून दे रही थी, ठीक वैसा, जैसा नौकरी के अभाव में जीवन के लंबे अंधेरे पथ में अचानक उभर आया कोऑपरेटिव बैंक की नौकरी का यह जुगाड़।

वह काफी तेज चल रहा था, पर उसकी इच्छा हो रही थी कि वह और तेज चले। तेज क्या चले, भागता हुआ एकदम से कक्का के पास पहुंच जाए और एक ही सांस में सारी बातें उनसे कह दे। वैसे तो शायद ही बता सके अपनी जरूरत, मन की आकुलता और कल्पना की यह ऊंची उड़ान कि बैंक की नौकरी लगते ही उसे अपनी मंजिल मिल जाएगी, उसका सारा संघर्ष सार्थक हो जाएगा, उसके अपने जीवन का कायाकल्प तो होगा ही, पूरे परिवार को सबल आर्थिक आधार भी मिल जाएगा और कक्का के थके-हारे कंधों को राहत भी, पर गांव अभी दूर था, हालांकि परभू बाबा की हवेली में टिमटिमाती रोशनी दिखने लगी थी। चलने की गति में कुछ और तेजी आयी, पर अचानक उसका पांव धूल भरी लीक में धसक गया और वह गिरते-गिरते बचा। उसने अपने को संभाला और बचा-बचाकर कदम रखने लगा। पीछे से साइकिल पर कोई आ रहा था। गांव का होगा तो बिठा लेगा, सोमनाथ ने सोचा, पर साइकिल पास से गुजरी तो उसमें आगे-पीछे दो लोग पहले से ही लदे-फंदे थे। मन मारकर वह चुपचाप चलता रहा और फिर अपने घर के सामने आ खड़ा हुआ।

गांव में सोमनाथ का घर किनारे ही है। लिडौरी पर बंधे बैल चारा टूंगने में मगन थे। नांद पर भैंस चभोक-चभोक कर सानी का पानी सुड़क रही थी। धीरे से बरोठे के किवाड़ खोलकर वह आंगन में पहुंच गया। कक्का वहीं खड़े अम्मा से कुछ कह रहे थे। उसने झुककर उनके पांव छुए। उन्होंने उसके सिर पर हाथ फेरा तो न जाने ऐसा क्या कुछ उसके सिर से उतर गया कि वह अपने आपको हल्का महसूस करने लगा। तब तक हाथ में डेलइया लिये तिदवारी से अम्मा निकल आयीं। डेलइया उन्होंने कक्का की ओर बढ़ा दी, शायद बैलों के लिए मक्के का आटा था, जिसे लेकर वे बाहर निकल गए। झुककर उसने अम्मा के पांव छुए तो उन्होंने उसे चूम लिया। वह जब भी शहर से लौटता या शहर के लिए निकलता है तो अम्मा उसे चूम लेती हैं, छोटे बच्चे की तरह। और तब, थोड़ी देर के लिए ही सही, उसकी सारी हताशाएं खत्म हो जाती हैं, वह निर्द्वंद्व हो जाता है, पर जैसे ही शहर पहुंचता है, स्थितियां उसे तोड़ने लगती हैं, समस्याओं के विषधर फन काढ़कर डराने लगते हैं, लेकिन शंभू की मदद से बैंक की यह नौकरी उसे मिली नहीं कि सारे संकटों से मुक्त हो जाएगा। कुछ पैसा जोड़कर शांता की शादी कर देगा।

और फिर स्वेटर के धागों में पिरोकर अपना प्यार देने वाली मीता से अपनी शादी भी, सोमनाथ रास्ते भर सोचता आया है। नंदू और सुनील ने आकर उसके पांव छुए तो याद आया कि इस बार तो उनके लिए फल वगैरह कुछ लाया ही नहीं, अन्यथा खाली हाथ वह शायद ही कभी आया हो। छोटे भाई-बहनों के लिए कुछ न कुछ तो हमेशा लाता रहा है, पर इस बार कुछ याद ही नहीं रहा, हालांकि याद भी रहता तो चाह कर भी वह ला नहीं सकता था। फिलहाल तो उसे एक-एक रुपया भी बचाकर किसी तरह उतनी रकम जोड़नी है, जितनी शंभू ने बतायी है।

कक्का पहले ही खाना खा चुके थे, नंदू और सुनील भी। उसने कमीज उतारकर खूटे पर टांगी और लोटे में पानी लेकर दिसा-मैदान को निकल गया। लौटकर हाथ-पांव धोये, कुल्ला किया और चौके में पीढ़े पर आ जमा। अरहर की दाल की महक ने उसकी भूख को और भी बढ़ा दिया। शहर में कहां मिलती है ऐसी गाढ़ी दाल और मक्के की करारी रोटियां। वह खाने पर ऐसे टूटा, मानो कई दिनों का भूखा हो। अम्मा ने दूध दिया और थोड़ा-सा गुड़ भी। मींस कर उसने दो रोटियां और खायीं तो तन-मन पूरी तरह भर गया।

कक्का शायद बाहर ही लेट गए थे। वह चाह रहा था कि कक्का से अभी बात हो जाती तो वह कल शाम तक शहर लौट जाता, पर कक्का फिर भीतर नहीं लौटे। कक्का से अपनी बात कैसे कहे, कैसे समझाए कि वे बखारी के गेहूं बेचने को राजी हो जाएं और नंबरदार से उधार लेकर कल सुबह ही रुपये उसे दे दें,

सोमनाथ देर रात तक सोचता रहा। सोचता रहा और न जाने कितनी रात गए सो पाया या आंखें बंद किए-किए सोचते हुए सारी रात काट दी। सोया भी हो तो एकाध घंटे की झपकी आ गयी हो और फिर किसी खड़कन ने उसे जगा दिया हो या शायद रहीम कक्का के नीम पर बैठे मुर्गे ने उसकी उस झपकी को भी पूरा न होने दिया हो। बहरहाल, अम्मा चकिया ओइरने के लिए उठी तो सोमनाथ जाग रहा था।

सुबह नहा-धोकर वह आया तो अम्मा मथानी से दही मथ रही थीं। शांता परांठे बना रही थी और चौके में बैठे कक्का खा रहे थे। सोमनाथ बगल में बैठ गया। सोमनाथ जब भी कक्का का हाथी-सा पांव देखता है. उसका मन रोने-रोने को हो आता है : एक पांव आदमी-सा और दूसरा हाथी-सा। फीलपांव का इलाज क्या है, क्यों होता है फीलपांव' जैसे सवाल लगता है कि गांव के लोगों के मन में उठने ही बंद हो गए हैं। कक्का से पहले और भी कई लोगों को फीलपांव हो चुका है। कुछ लोग कहते हैं कि यह रोग एक प्रकार के मच्छर के काटने से होता है और कुछ लोगों का खयाल है कि इसका कारण इधर के गांवों के कुओं का खारा पानी है। ग्राम प्रधान ने ब्लाक प्रमुख से लेकर जिलाधिकारी तक सबको इस स्थिति के बारे में बार-बार लिखा, पर कभी कुछ नहीं हुआ। किसी ने नहीं सुनी गांव की पुकार। कोई नहीं आया फीलपांव की दवा लेकर।

दैवी प्रकोप मानने लगे हैं और आज भी देवी-देवताओं में इतना विश्वास करते हैं कि फीलपांव से मुक्ति के लिए हर मंगलवार वे मकनपुर के महुआ बाबा की परिक्रमा करने जाने लगे हैं, लेकिन अभी तक उससे भी किसी पीड़ित आदमी का पांव ठीक हुआ नहीं है।

__एक थाली में दही और परांठे सोमनाथ के सामने आए तो वह कौर तोड़कर धीरे-धीरे खाने लगा। साहस बटोरा कि कक्का से कह दे अपनी बात। सिर उठाया तो पाया कि कक्का की नजर उसी पर टिकी है। नजरें टकरायीं तो लगा कि कोई बात है. जो होना चाहती है, पर सोमनाथ की जबान है कि ताल से चिपक-सी गयी है। कक्का ने उसकी स्थिति भांपी और बोले, "कउनिव बात है का?"

"हां..." "का..." "नौकरी क्यार चक्कर हय।" "कहां?" "बैंक मा।"

"का हय..." कक्का की जिज्ञासा है कि पल भर भी इंतजार नहीं करना चाहती और सोमनाथ का मन है कि बात को जबान पर लाने से रोक रहा है, पर कितनी देर! अंतत: उसने बिना किसी भूमिका के सारी बात कक्का के सामने रख दी, पर कक्का आश्वस्त नहीं हुए, "आज-कालि नौकरी के बहाने ध्वाखाधड़ी खूब चलि रही हय, अउर फिरि इत्ते रुपया!"

"एहमा कउनिव ध्वाखाधड़ी नाइ हय। तिवारी बड़े ईमानदार आदमी हंय। शंभू उनक्यार सार लागत हय।" "लेकिन..."

"वोहके मामा बैंक मा ऊंची पोस्ट पर हंय। पहिली तारीख का नौकरी लगिही समझव।" सोमनाथ ने समझाया जरूर, पर कक्का अंत तक अनाश्वस्त ही रहे, लेकिन विरोध जैसी कोई मुद्रा उन्होंने नहीं बनायी, हालांकि सोमनाथ जानता है कि कक्का उसकी किसी बात का विरोध नहीं करते, करना चाह कर भी कर नहीं पाते, ज्यादा से ज्यादा अनाश्वस्ति जाहिर करते हैं। सोमनाथ समझ गया है कि कक्का इसके लिए राजी नहीं हैं। इसका कारण सिर्फ अनाश्वस्ति नहीं, रुपयों का संकट भी है। रुपये पाने का एकमात्र जरिया बखारी के गेहूं हैं, जो कक्का के हिसाब से साल भर परिवार के भरण-पोषण भर के लिए भी पूरे नहीं हैं। उसके किसी भी अंश के बिकने का मतलब है, एक अवधि के बाद घर में गेहूं की समाप्ति, हालांकि वक्त-बेवक्त थोड़ा-बहुत गेहूं बेचकर ही घर की जरूरतें पूरी की जाती हैं। सोमनाथ ने इस चिंता से कक्का को निश्चित करना चाहा था,

"अगले महीने की तनख्वाह मिलते ही गेहूं खरीदकर बखारी भर देंगे।"

"उवो तौ ठीक हय, लेकिन..."

इसके बाद फिर कोई कुछ नहीं बोला। कुछ मिनट तक कक्का असमंजस में रहे और सोमनाथ संकट में। थोड़ी देर बाद होकर चल दिया तो कक्का अकुला उठे, "द्याखव, लंबरदार से बात करे लेत हन।" कहते हुए कक्का उठे और चले गए। तकरीबन एक घंटे बाद लौटे तो कुर्ते की जेब से रुपये निकालकर सोमनाथ को पकड़ा दिये। बाजार भाव से कम में गेहूं का सौदा कर रुपये देते हुए उनके चेहरे पर संतुष्टि का भाव झलका था, पर जल्दी ही उसे चिंता के राहु ने ग्रस लिया। उनके चेहरे का तनाव साफ साफ पढ़ा जा सकता था, सोमनाथ पढ़ भी रहा था, पर हालात ऐसे थे कि वह अपने आपको किसी भी ऐसी स्थिति में नहीं पा रहा था कि तत्काल कक्का के माथे पर पड़े बल मिटा सकता, कुछ ऐसा कर पाता कि वे तनाव मुक्त हो सकते। काश! ऐसा कुछ हो पाता, सोमनाथ सोचता रहा।

दोपहर की गाड़ी से वह कानपुर लौट आया। उसका मन हो रहा था कि शंभू उसे शाम को ही मिल जाए तो वे रुपये वह उसे सौंपकर मुक्त हो जाए, पर शंभू नहीं मिला तो उसका मन रात भर अकुलाता रहा। सवेरे जैसे ही शंभू आया, सोमनाथ खिल उठा। शंभू ने उसे अब तक हुई कार्रवाई की रिपोर्ट दी कि किन-किन लोगों से वह मिला और किस-किससे क्या-क्या बात हुई और अभी क्या-क्या करना बाकी है। शंभू की बातों से लगा कि सारा मामला एकदम फिट है। सोमनाथ ने अपनी जेब से रुपये निकालकर उसे पकड़ा दिये। नोट लेते हुए शंभू मुस्कराया और सोमनाथ को आश्वस्त किया कि अब तो पहली तारीख को अप्वॉइंटमेंट लेटर अपने हाथ में ही समझो। और फिर बतियाते हुए वे दोनों चौराहे पर आए। चाय के बाद दोनों ने अपनी-अपनी राह पकड़ी। सोमनाथ ट्यूशन पढ़ाने चला गया और शंभू प्रेस की तरफ, लेकिन अगली शाम शंभू फिर हाजिर था। आते ही उसने सोमनाथ की किस्मत की तारीफ की कि बिना किसी झंझट के सारा काम निबट गया। अब तो बस एम्प्लॉयमेंट एक्सचेंज से किसी तरह कार्ड निकलवाना और किसी बैंक से एक्सपीरिएंस सर्टीफिकेट लेना भर शेष रह गया है। शंभू की इन बातों से उसका माथा ठनका और लग गया कि उसके लिए भी शंभू रुपयों की मांग करेगा और हुआ भी यही। चलते समय शंभू ने कह दिया, "दो-ढाई का इंतजाम और करो यार, नहीं तो सारा किया-धरा माटी हो जाएगा। ' कहकर शंभू तो चला गया, पर सोमनाथ बेचैन हो उठा।

उठते ही सुबह-सुबह उसने तिवारी जी को याद किया। नहा-धोकर माथे पर चंदन का टीका लगाकर वे हनुमान चालीसा का पाठ कर रहे थे : शंकर सुवन केसरी नंदन, तेज प्रताप महा जग वंदन... तिवारी जी सीधे-सादे भगत किसिम के जीव हैं। जितना है, उसी से संतुष्ट, जो कुछ हो रहा है, सब पिछले कर्मों का फल मानने वाले। और सोमनाथ इतने दिन में जितना उन्हें जान पाया है, वे सत्पुरुष ही हैं। उन पर विश्वास किया जा सकता है। तिवारी जी पूजा से उठे तो सोमनाथ ने उन्हें अपनी कोठरी में बुलाया और शंभू को दिये गए रुपये और अब तक हुई सारी बातें बता दी और यह भी कि वह ढाई और मांग रहा है। उसने पहली बार तिवारी जी से शंभू के चाल-चलन के बारे में पूछा और यह भी कि ढाई और दे देने के बारे में उनकी राय क्या है?

बातों की गहराई तक तिवारी जी शायद नहीं पहुंचे और धीरे से बोले, "वैसे तो शंभू ठीक-ठाक ही है, उसका दूर का कोई रिश्तेदार शायद बैंक में है भी, हालांकि मैं उनसे कभी मिला नहीं। जब बगैर मेरी राय लिये तुमने शंभू को इतने रुपये दे ही दिये हैं तो ढाई और दे देने में क्या हर्ज है।" कहकर थोड़ी देर बाद वे उठ गए तो सोमनाथ और भी परेशान हो उठा।

कुछ देर बाद शंभू फिर आ गया और पूछा, "क्या व्यवस्था कर रहे हो यार, जल्दी करो, नहीं तो कोई और हाथ साफ कर जाएगा और हम लोग टापते रह जाएंगे।" सुनकर सोमनाथ कातर हो उठा। डूबी हुई आवाज में उसने शंभू से कहा, "घर का दाना-दाना बेचकर तो किसी तरह वे रुपये ला पाया था। अब गांव-घर से कुछ नहीं मिल सकता। यार, तुम ऐसा करो कि ब्याज पर कहीं से इतनी रकम दिलवा दो। पहली तनख्वाह मिलते ही चुका दूंगा।"

"अगर मेरी हैसियत और स्थिति होती तो जरूर दिलवा देता। अब अगर नहीं कर सकते तो तुम जानो। एंप्लॉयमेंट एक्सचेंज से कार्ड निकलवाने में तो पैसा नकद लगेगा, वहां उधार नहीं चल सकता। बाकी तुम सोच लो। बाद में मुझे दोष मत देना, फिर मैं कुछ नहीं सुनूंगा।" सुनकर सोमनाथ को लगा कि थोड़े से रुपयों के चक्कर में हाथ आयी नौकरी इधर से उधर हुई जा रही है। रुपये तो फिर भी आ सकते हैं, पर हाथ में आए इस अवसर के निकल जाने पर क्या पता, ऐसा अवसर फिर कभी मिले, न मिले, पर सवाल तो रुपयों का ही है, जिनके मिलने के कोई आसार नहीं। घूम-फिर कर सोमनाथ का दिमाग फिर गांव और कक्का पर ही जाकर अटका, लेकिन घर में अब बचा ही क्या होगा, पर लगभग मिली हुई नौकरी से हाथ धो बैठने का मतलब तो और भी भयावह होगा। कक्का के लिए न सही, उसके लिए तो होगा ही। अंतत: उसने फिर गांव ही जाने का निर्णय कर लिया।

अगले दिन वह गांव में था, कक्का के सामने। दोनों का अपना-अपना अंतर्द्वंद्व, आदर और स्नेह की मुठभेड़। जरूरत और अभाव का टकराव और एक भयावह स्थिति की आशंका... घर का शेष गेहूं भी बिक गया और नौकरी तब भी न लगी तो... घर का शेष गेहूं भी बेचकर कक्का ने रुपये दे दिए, उसके बाद भी कोई और जरूरत निकल आयी तो...सोमनाथ ने सोचा। फिर भी, उसने कक्का को समझा दिया, "थोड़े गेहूं और बेचकर कैसे भी मुझे इतने रुपये और दे दो। पहली तारीख को तो नौकरी ज्वाइन कर ही लेनी है।"

और शाम को चलते समय कक्का ने फिर उसकी हथेली पर रुपये रख दिए। संतुष्टि और आशंका का समंदर एक साथ उनके चेहरे पर लहरा उठा, लेकिन इस समय कक्का क्या वाकई इतने सहज हैं, जितने ऊपर से दिख रहे हैं? पानी शायद सिर से ऊपर बह रहा है। ऊपर क्या, कक्का शायद अथाह पानी में डूब रहे हैं। फिर भी, कक्का ने अपना फर्ज निभा दिया और रुपये लेकर सोमनाथ कानपुर लौट आया। सुबह शंभू फिर हाजिर था। रुपये फिर उसकी हथेली में रख दिए थे सोमनाथ ने।

शाम को बैंक का एक्सपीरिएंस सर्टीफिकेट लेकर आया था शंभू। सर्टीफिकेट टाइप किया हुआ था, जिस पर स्टेट बैंक की मोहर लगी थी। सोमनाथ उससे संतुष्ट नहीं हुआ। उसने शंभू से पूछा, "स्टेट बैंक का सर्टीफिकेट तो प्रिंटेड लेटरहेड पर होना चाहिए था!"

"तुम इसकी चिंता मत करो।" "यार, कोई गड़बड़ तो नहीं होगी? कुछ गड़बड़ हुआ तो समझो कि आत्महत्या के सिवा मेरे पास दूसरा चारा नहीं होगा।"

"कैसी बात करते हो यार, तुम निश्चित रहो। सब कुछ एकदम फिट है बॉस। सिर्फ मेडिकल रह गया है। वह भी कल हो जाएगा। एम्प्लॉयमेंट एक्सचेंज से कार्ड निकलवा लिया है। परसों अप्वॉइंटमेंट लेटर तुम्हारे हाथ में होगा और तुम बैंक एम्प्लॉइ हो चुके होगे।"

"अब और रुपये तो नहीं लगेंगे?"

"अब तो सारा काम हो गया है। सौ-दो सौ मेडिकल अफसर को देकर फिटनेस सर्टीफिकेट लेना होगा। बस, उसके बाद एक भी पैसा नहीं लगेगा।"

"अब मेरे पास देने के लिए कानी कौड़ी भी नहीं है।" "अरे यार, रो क्यों रहा है। परसों तू राजा हो जाएगा, राजा। तब हमें पहचानेगा भी नहीं। और रो रहा है सौ-दो सौ रुपये के लिए!" "नहीं यार, वाकई मेरे पास अब कुछ नहीं बचा।" "अरे बेटा, आएगा भी तो टनाटन!" "आएगा, तब आएगा, अभी तो..." कहते हुए सोमनाथ रुआंसा हो उठा।

"ट्यूशन के एडवांस मांग ले मेरे भाई, कौन रोज-रोज मांगने हैं। यह आखिरी महीना है ट्यूशन पढ़ाने का। सब के सब छूट जाएंगे नौकरी ज्वाइन करते ही।" और अगले दिन सोमनाथ ने शंभू की मुट्ठी फिर गरम कर दी। तब शंभू उसे होटल ले गया। दो-दो पीस गुलाब जामुन मंगाए और खाते हुए बताया कि सारा काम हो गया है, लेटर तैयार है और कल सुबह दस बजे सोमनाथ को बैंक ज्वाइन कर लेना है।

तय हुआ कि सुबह दस बजे दोनों मित्र फूलबाग पहुंचेंगे, गांधी जी की स्टेचू के पास और फिर वहां से दोनों साथ-साथ बैंक जाएंगे, क्योंकि सोमनाथ को उस बैंक का कोई भी आदमी जानता नहीं है, वह भी नहीं, जिसने उसका काम करवाया है, क्योंकि उसकी हिदायत के अनुसार सारा काम गुपचुप तरीके से हुआ है। गुलाब जामुन खाकर दोनों उठे तो उनकी आत्माएं तृप्त थीं, सोमनाथ की तो कुछ ज्यादा ही। और फिर वे अलग हो गए थे, अगले दिन फूलबाग में गांधीजी की स्टेचू के पास दस बजे मिलने की बात पक्की करके।

रात-भर सो नहीं पाया था सोमनाथ। वह चाह रहा था कि रात जल्द से जल्द बीत जाए और सूरज निकल आए। हो सके तो सूरज अभी निकल आए। दस भी अभी बज जाएं और शंभू उसे ले जाकर बैंक मैनेजर के सामने खड़ा कर दे। मैनेजर उसे देखते ही खड़ा होकर उसका स्वागत करे और एक भी मिनट का विलंब किए बिना उसे एप्वॉइंटमेंट लेटर दे दे और वह उसी क्षण ज्वाइन करके काम शुरू कर दे, पर ऐसा कैसे होता। समय की अपनी चाल है, जो किसी के चाहने से तेज या धीमी कहां होती है!

सवेरे छह बजे के करीब सोमनाथ ने बिस्तर छोड़ा और नित्य-कर्म से निवृत्त होकर चौराहे तक गया और चाय पी। गांव से शहर आने के बाद इतने सवेरे इस तरह उठकर पहली बार उसने चाय पी थी और तभी उसका मन हो आया था कि सिगरेट भी पिए और उसने विल्स फिल्टर मंगवाकर सुलगा ली। सिगरेट के धुएं में सपनों के महल बनने लगे, जिसमें मीता चहकने लगी। नौकरी लगते ही वह मीता के पिता के सामने शादी का प्रस्ताव रख देगा। मीता जैसी लड़कियां आज के जमाने में कहां मिलती हैं। मिलने को तो तमाम लड़कियां मिल जाएंगी, पर उनमें वह सलीका कहां होगा, जो मीता में है। मीता उसकी कल्पनाओं के अनुरूप है, डर सिर्फ कक्का का है कि वे कहीं मना न कर दें। वे अपने मन से न भी मना करें, लेकिन गांव-घर की रूढ़ियां तो उन पर दबाव डालेंगी ही, पर वह उन्हें तोड़ेगा। कक्का नहीं मानेंगे तो वह कभी भी शादी न करने की धमकी दे देगा और तब तो कक्का हथियार डाल ही देंगे, सोचता हुआ सोमनाथ वर्तमान से काफी आगे तक चला गया और वापस लौटा तो बहुत खुश-खुश।

मीता को वह ट्यूशन पढ़ाता है। इंटर करते हुए उसकी शादी हुई और एक साल बाद ही वह विधवा हो गयी। उसी से शादी का सपना देख रहा है सोमनाथ। तैयार होकर साढ़े नौ बजे वह फूलबाग पहुंच गया, गांधी जी की स्टेचू के पास। उसको भरोसा था कि शंभू भी साढ़े नौ बजे तक वहां आ जाएगा, पर भरोसे के विपरीत शंभू दस बजे तक भी नहीं पहुंचा। वह नहीं आया तो सोमनाथ के दिल की धड़कन तेज हो उठी। शंभू उसका दोस्त है, साले को साढ़े नौ बजे तक पहुंच जाना चाहिए था। पहले नहीं पहुंचा तो हरामजादे को वादे के मुताबिक दस बजे तो आ ही जाना चाहिए था। चलो, पंद्रह मिनट बाद ही आ जाए, पर नहीं, साले का अभी तक कुछ अता-पता नहीं है। साढ़े दस बजे तक भी शंभू के न दिखने पर सोमनाथ की बेचैनी बढ़ने लगी।

शंभू को आखिर हो क्या गया, वह अभी तक आया क्यों नहीं?

राह देखते-देखते ग्यारह, बारह और फिर एक भी बज गया। उसकी गर्दन दुखने लगी और दिल डूबने लगा। कहीं शंभू ने उसे धोखा तो नहीं दिया है, सोचते ही उसका कलेजा मुंह को आ गया। और फिर समय के सरकने के साथ उम्मीद का एक-एक कतरा माटी में मिलता चला गया। क्या लंगड़ा साला वाकई छल कर गया! यदि उसने मुझे धोखा दिया है तो साले की टांगें तोड़कर रख दूंगा। दिख भर जाए साला, मादर... बिफरते-बिफरते जब चार बजे तक भी शंभू का कुछ अता-पता न चला तो सोमनाथ की चेतना चीत्कार कर उठी : हे ईश्वर! मरे मरे कदमों से वह फूलबाग से बाहर आया और चावला प्रेस जाकर शंभू के बारे में पूछताछ की। मालूम हुआ कि वहां भी कई हजार की चपत लगाकर शंभू भाग निकला है। लोगों ने जाकर देखा तो उसकी भंडरिया खाली मिली। वहां कुछ नहीं है।

अब सोमनाथ को काटो तो खून नहीं। कुछ सोचकर वहां से सीधे तिवारी जी के पास पहुंचा और सारा वाकया कह सुनाया। तिवारी जी सोच में पड़ गए। उनकी जबान भी मानो पथरा गयी, बोल ही नहीं फूटे। अब क्या करे वह, कहां डूब मरे जाकर। गांव पहुंच कर कक्का को क्या जवाब दे, सोचते-सोचते सोमनाथ का सिर चकराने लगा। हताश-निराश सोमनाथ कमरे में लौटकर चारपाई पर ढह गया।

लेटे-लेटे ही शाम हुई, रात गहराई और गहराती चली गयी। सोमनाथ की छाती में कोई आग सुलगी और सुलगती रही, रात भर। उसने सोने की बहुतेरी कोशिश की, पर नींद थी कि उसकी पकड़ में नहीं आयी तो फिर नहीं ही आयी।

कमरे में अंधेरा था, सोमनाथ की आंखें बंद थीं, पर कुछ था, जो इसके बावजूद चमक रहा था, सुनहरे कणों के रूप में, सहज गति से गतिमान, सोमनाथ ने अंधेरे के सागर में जाज्वल्यमान उन टुकड़ों का अर्थ जानने की कोशिश की, पर कोई अर्थ निकाल पाने में सफल नहीं हो सका।

चार बजे के करीब शाकिर मियां के मुर्गे ने बांग देनी शुरू कर दी। लोगों की खटर-पटर हुई और क्रमश: बाहर की दुनिया गतिमान हो उठी, पर सोमनाथ नहीं उठा, जस का तस पड़ा रहा, निष्पंद, संज्ञाशून्य-सा। इस स्थिति से उबरने और मुक्त होने में उसे कई दिन लग गए।

और फिर सोमनाथ ने किसी तरह खुद को तैयार कर लिया, गांव जाकर कक्का को सब कुछ बता देने के लिए। अंधेरे में सुनहरे कणों के चमकने का मतलब शायद यही था कि गांव जाकर सच का सामना करो।

अगली शाम एक बार फिर सोमनाथ अपने गांव में था। जैसे ही वह घर पहुंचा, मां एकदम से प्रफुल्लित हो उठी और भाई-बहन उछलने कूदने लगे। कक्का भी अपेक्षाकृत प्रसन्न नजर आए। कपड़े उतारकर वह दिसा-मैदान को गया और लौटकर देखा तो छोटी बहन मंदिर में बताशे चढ़ाकर परसाद बांट रही थी। परसाद लेते हुए मुकुंदी मास्टर ने पूछा, "किस खुशी में बंट रहा है परसाद?"

"भैया की नौकरी लग गयी।" मुन्नी ने उमंग के साथ बताया, लेकिन उसकी उमंग देखकर सोमनाथ दहल गया। जब तक वह संभले और बहन को रोककर कुछ कहे, वह परसाद बांटने छिद्दन के घर घुस गयी, छिद्दन नाई के घर।

●●●●

आजादी का अमृत महोत्सव बनाम लैंगिक समानता

एक नुक्कड़ नाटक

दिव्या तिवारी*

हमारी आजादी का ये अमृत महोत्सव सही मायनों में तब तक सार्थक नहीं माना जा सकता जब तक कि आज का ये नारी समाज भयमुक्त होकर बिना किसी भेदभाव के गरिमामयी वातावरण में सम्मान सहित अपने मानवाधिकारों का सतत उपभोग न करने लग जाए। इसके लिए आवश्यक है कि ऐसी व्यवस्थाएं बनाने का संकल्प लिया जाए जिसमें भेदभाव की कोई जगह न हो। एक ऐसे समाज के निर्माण की ओर कदम बढ़ें जो समता और सामाजिक न्याय की बुनियाद पर मजबूती से खड़ा हो। किंतु ये सब तभी संभव है जब हम और हमारा समाज इसके प्रति जागरूक होगा। केवल कठोर कानून बनाकर ही समाज और व्यवस्थाओं को नहीं बदला जा सकता। लोगों के अंतर्मन को जगाना भी जरूरी है। अतः यहाँ पर मैं आज के नारी की वास्तविक स्थिति का चित्रण बहुत ही सरल तरीके यानी एक नुक्कड़ नाटक के माध्यम से प्रस्तुत करने का प्रयास कर रही हूँ ताकि आज के निष्ठुर समाज की मृतप्राय हो चुकी संवेदानाओं को पुनः जागृत किया जा सके :

सूत्रधार —

नाटक मंडली आई है, गजब तमाशा लाई है।
नाटक मंडली आई है, गजब तमाशा लाई है।

देख तमाशा देखो भाई, कैसी आंधी समाज में आई।
तड़क भड़क और फैशन की दुनिया, चकाचौंध ही चकाचौंध है।
पर क्या मानव तुमको दिखता, आंखों पर नफरत का चश्मा,
नहीं दिखेगा, नहीं दिखेगा।

नहीं दया या धर्म का सिक्का, इस बाजार में चलता है।
केवल पुरुष प्रधान समाज में, मर्दों का ही दबदबा है।

इस समाज में लिंगभेद के कारण औरत को ही दबाया जाता है।

* *हिन्दी शिक्षिका, आईटीएल पब्लिक स्कूल, सेक्टर-9, द्वारका, नई दिल्ली*

तब नहीं निकलकर कोई श्रवण कुमार सा आता है।

तब क्यों नहीं किसी पुरुष के सीने में दर्द का सागर लहराता है।

कंस पापियों के अत्याचारों से अगर कुटिलता बढ़ जाती है

योगमाया तब जन्म है लेती हर दिन कारागारों में।

एक बानगी प्रस्तुत है बचपन के ही दौर की

दृश्य देखकर प्रस्तुत करना, सुनो तो सारे गौर से।

पहला दृश्य

(एक माँ का अपने दो बच्चों के साथ प्रवेश)

माँ — मालती... भैया को तैयार कर दो।
वह स्कूल जाएगा। वह साइकिल लेकर चला जाएगा।

मालती — ठीक है माँ... पर मैं कैसे जाऊँगी... बताओ न माँ...।

दीपक — हाँ माँ मैं तो अपनी नई साइकिल से जाऊँगा। ट्रिन – ट्रिन – ट्रिन...। मजा आएगा।

माँ — अरे तू पैदल जाएगी... और क्या।

मालती — माँ... मुझे भी साइकिल दिला दो ना।

माँ — तू तो मेरी समझदार बेटी है न...। तेरे पिताजी केवल एक ही साइकिल लाए हैं जो तुम्हारे भाई के लिए है।

मालती — क्यों माँ... क्या मैं तुम्हारी संतान नहीं।

माँ — नहीं बेटी पर तुम तो बड़ी हो... वह तुमसे छोटा है... उसे समझाना मुश्किल था।

(मालती सिर झुका कर चल देती है।)

सूत्रधार —

देखा आपने बचपन से ही लिंग भेद का शिकार

बड़ी होकर गंदी नजरों की शिकार

कार्यालय में शोषण का शिकार
क्या यही नारी है... भारतीय नारी...।
नर की पूरक दो परिवार की एक कड़ी

महज दहेज की वस्तु रह जाती है।
दहेज के दानव को समाज ने पोषित और पल्लवित करके
नारी के पैरों की जंजीर बनाकर छोड़ दिया।

दूसरा दृश्य

(घर के अंदर का दृश्य)

पति — अरी सुनती हो...। आज अपने पापा को फोन करके कह देना मुझे 5 लाख रूपए चाहिए।

पत्नी — नहीं...नहीं...। मैं अपने रिटायर पिता को कैसे तंग कर सकती हूँ।

पति — फिर तुमने मना किया... (पहला थप्पड़... दूसरा थप्पड़... तीसरा थप्पड...) और बाहर चला जाता है।

पत्नी — मैं कैसी अभागन हूँ...। दहेज की वेदी पर मेरा शोषण होता है। पर यह कठोर समाज क्यों नहीं रोता है।

नाटक मंडली (समवेत स्वर में) —

देखो...देखो...हर दूसरे घर की इक तस्वीर दिखाती हूँ
आँसू की बूँदों से लिखी बेटी की तकदीर दिखाती हूँ।

सुनो ...। सुनो...। ऐ दुनिया वालों...।
देवी जहाँ पर पूजी जाती है।
आज उसी भारत में डोली
अर्थी में बदली जाती है।

गरीब पिता की बेटी को दहेज की बलि पर चढ़ना होता है।
पुरुषों के इस घृणित समाज में बेटी को पल–पल मरना होता है।

द्रोपदी का आंचल यदि दुर्योधन दुशासन ने खींचा था तो
यह दोषी समाज तब से हर जगह भीष्म पितामह व
धृतराष्ट्र बना ही दिखता है।

नहीं चाहिए संबल तेरा मुझे केवल अधिकार चाहिए
संविधान के द्वारा पोषित नागरिक का सम्मान चाहिए
यदि विरासत पुत्रों की है तो पुत्री का क्या होगा बोलो
घर के बाहर निकले तो वह मात्र भोग की वस्तु कहलाती है

कठिन परिश्रम और योग्यता होते हुए भी हर पग पर दुख पाती है।

एक झलक कार्यालय की देखो क्रूर समाज के निर्माताओं

तीसरा दृश्य

(कार्यालय का एक दृश्य)

माया — गुड मॉर्निंग ...सर।

बॉस — गुड मार्निंग...माया।

आज तो बड़ी फ्रेश लग रही है।

बहुत सुंदर लग रही हो।

थोड़ी देर यहाँ बैठो।

माया — सर... धन्यवाद... काम बताइए।

बॉस — काम नहीं... आराम करो।

यहीं बैठो।

माया — सर... मैं चलती हूँ।

वॉस — मैंने कहा... रुको...। यहाँ बैठो...।

माया — सर। मुझे कुछ काम है।

(हाथ पकड़ लेता है)

बॉस — बैठो न माया... (अश्लीलता से)।

माया — (हाथ छुड़ाकर)... छोड़िए... सर...।

मैं यहाँ पर काम नहीं कर सकती हूँ। जहाँ पर इस तरह का व्यवहार हो।

बॉस — यहाँ पर सभी को इसी तरह रहना पड़ता है।

(माया एक थप्पड़ लगाकर चल देती है)

नाटक मंडली (समवेत स्वर में) —

देखो। देखो। देखो।
कभी भोग है कभी है शोषण
इस समाज का नंगा ताण्डव
काम करे तो नारी का सम्मान दांव पर
नहीं करे तो घर में अपमान

किस्मत के पलड़े में लेकर आग जन्मती है बेटी
दोनों हाथों में ढेरों सा आशीष भी देती है बेटी
माँ बनकर पुत्रों को स्नेह तथा सम्मान दिलाती है
शिक्षक बनकर सबका सपना भी पूरा करवाती है।

कभी सेविका बनकर रोगी की सेवा करती है
कभी काली बनकर देश की सीमा पर
शत्रु के प्राण भी हरती है।

एक नहीं दो–दो मात्राएं, नर से भारी नारी है।
पर इस लोलुप समाज में, ठोकर ही ठोकर पाती है।
आँखों से जो नीर बहेगा, वह समुद्र बनकर उफनेगा
नारी के रोम–कूप से, नया समाज बनकर उभरेगा।

यदि सिंहों को जन्म है देती दुर्गा बन अवतारी है
नारी को कमजोर न समझो वह समता की अधिकारी है।

इस नाटक के दर्शक श्रोता, मन में यह संकल्प करो
बजी डुगडुगी करतल ध्वनि से, नारी को अधिकारी समझो।
नारी नर के समान ही इस जग की पालनहार है।

सूत्रधार —

पन्ना धाय अगर देश हित बलिदान पुत्र का करती है
तो वीर शिवाजी की माता सिंहों को जन्म भी देती है।
मत भूलो हाड़ा रानी ने अपना शीश भी दान किया
मेवाड़ी मिट्टी पर नारी का सर ऊँचा किया।

लाखों माताओं ने मातृभूमि पर बेटों का बलिदान दिया
हजारों पद्मिनियों ने जौहर व्रत करना सीखा
त्याग और बलिदान तो नारी का ही दूसरा रूप है
धन्य...धन्य...है नारी तेरे रूप अनूप हैं।

जब तक नर न माने आधा अंग है नारी का,
तब तक क्या यह समाज स्वीकारेगा कि नारी न बेचारी है।
वह तो नारी मातृशक्ति है काली व चामुण्डा है,
अपने अधिकारों की खातिर वह निर्दयी समाज से लड़ती है।

नुक्कड़ के इस विषय को अनुत्तरित नहीं छोड़ा जा सकता है,
जब तक नारी सुखी नहीं भारत नींद भर न सो सकता है।
नारी के उत्थान का बीड़ा हर वर्ग–धर्म के वीरों को ही उठाना है,
समाज को इस अश्लील कोढ़ के अत्याचारों से ही हमें बचाना है।

आजादी के इस अमृत महोत्सव में कसम यही हम खाते हैं,
जब तक नारी को सम्मान न मिले तब तक आजादी का मूल्य नहीं।
आधी आबादी पर लेखनी हमारी तब तक चलती रहेगी,
जब तक दुनिया की हर नारी समानता की राह पर नहीं बढ़ेगी।।

●●●●

यह कैसी आज़ादी

(वास्तविक अनुभव पर आधारित)

प्रीति प्रभाकर*

स्कूल छूटने के बाद बस स्टैण्ड तक मैं अक्सर पैदल ही चल लिया करती थी। इस पंद्रह मिनट के रास्ते में जो कुछ दिखाई पड़ता उसे मेरा मन, मस्तिष्क और आत्मा अपने लिए अर्थ ढूँढ़ ही लिया करता था। कभी बच्चों की कैंटीन पर कुछ खरीदने की आपाधापी दिखती तो कभी अनुशासन की बेड़ी से उन्मुक्त होने की खुशी छलकती। किसी को घर पहुँचने की जल्दी होती तो फौरन अपनी वैन या रिक्शे पर पहुँच जाया करते या फिर किसी को दूसरी कक्षा में पढ़ रहे अपने दोस्त से मिलकर बताने-पूछने की बेताबी रहती। जिन्हें पढ़ाया करती थी, वे 'बाय-बाय प्रीति मैम' कहकर मेरा ध्यान खींच ले जाते और मैं मुस्कराकर हाथ हिलाकर उन्हें जवाब देते हुए निकल जाती। एक नज़ारा जिसे देखकर मैं सहम जाया करती थी और घंटों अंदर मंथन चलता रहता था वह थी एक दुकान जो स्टैण्ड से कुछ तीस-पैंतीस कदम पहले पड़ती थी। यह रंग-बिरंगे पक्षियों और एक्वेरियम की दुकान थी जहाँ पालतू पशु-पक्षियों से संबंधित हर सामान मिल जाया करता था। उस दुकान पर पहुँचने के कुछ कदम पहले से ही मेरी नज़र उन्हीं रंग-बिरंगे पक्षियों पर रहती और रोज़ाना यही सोचती कि ईश्वर ने इन्हें इतना सुंदर बनाया है और यही सुंदरता इनकी सज़ा बन गई है। ईश्वर ने इन्हें खुले आसमान में उड़ने के लिए जो पंख दिए है वो इस पिंजरे में टूट रहे हैं। हम इंसान अपने घर की शोभा के लिए या केवल शौक जैसे स्वार्थ के लिए इनके जीवन को रौंद रहे हैं। यह विचार इतने तेज़ आवेग के साथ उठता कि मुझे उन चहचहाते पंछियों को तुरंत आज़ाद करने की ललक उठती। अब क्यूँकि पिंजरे दुकान से बाहर ही रखे होते थे तो कभी सोचती कि चुपके से पिंजरे को खोल दूँ लेकिन पिंजरे का दरवाज़ा दुकान के मालिक की ओर ही रहता। कभी तो सोचती उस दुकान वाले से खूब लड़ाई करूँ लेकिन उसकी आँखें मुझे अंदर जाकर ऐसे सवाल करने से ही डरा देतीं। खैर, विचारों की उधेड़बुन में कभी इस प्रकार की हिम्मत जुटा नहीं सकी और प्रतिदिन ऐसे विचारों के आवेगों को मन में दबाए आगे बढ़ती रही। अब आपको वह वाक़या बताती हूँ जिसने मुझे झकझोर दिया। उस दिन सुबह से ही मन बेचैन था। किसी अनहोनी के होने का एहसास हो रहा था। स्कूल में भी मन विचलित-सा ही था। बच्चों के चहकने की आवाजें मुझे उन पिंजरे में कैद चिड़ियों की चहचहाट प्रतीत होने लगी और फिर एक और विचार कौंध गया। सोचा जैसे इन बच्चों को खाने-पीने, खेलने, और इच्छानुसार जीवन जीने का अधिकार है वैसे उन मासूम पक्षियों को क्यों नहीं? हम उन्हें उनके परिवार से अलग कर एक अनजान और क्रूर दुनिया की बेड़ियों के बीच क्यों ला पटकते हैं? अस्तित्व को ज़िंदा रखने

* *पी.एच.डी. शोधार्थी, शिक्षा विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय*

वाले ये प्रश्न मुझे साँस नहीं लेने दे रहे थे जैसे वे पक्षी मुझसे मदद माँग रहे हो और मैं इतने दिनों से उनके दर्द को अपना समझते हुए भी अनदेखा किए जा रही थी। खुले आसमान में उड़ने की उन पक्षियों की प्रार्थना आज मुझे वह हिम्मत दे रही थी जिसे जुटाने में इतना समय लग रहा था। तो बस ठान लिया हो न हो आज तो बात करनी ही पड़ेगी। लेकिन यह बेचैनी निराधार नहीं थी। उस दिन की घटना ने मुझे ऐसा हिलाया जिसके लिए मैं आज तक स्वयं को दोषी मानती हूँ। उस दिन इस दृढ़ निश्चय के साथ चली जा रही थी कि आज इन नन्हीं मासूम चिड़ियों को उनका आसमान लौटाना है लेकिन हुआ यूँ कि वहाँ पहुँचने से पहले एक कार उस दुकान के आगे खड़ी दिखाई दी। दुकान से एक युवक निकला जिसके हाथ में एक सुंदर-सी चिड़िया का पिंजरा था। वह उसी कार का मालिक था, यह मुझे तभी पता चला जब उसने गाड़ी का दरवाज़ा खोला। उसने कार में बैठने से पहले पिंजरे को खोला और उस चिड़िया को हवा में उड़ा दिया। यह देखकर मैं खुशी से झूम उठी। ऐसा लगा उस कैद से मुक्ति उस प्यारी चिड़िया को नहीं, मुझे मिली है। मेरी नज़र हवा में उड़ती उस चिड़िया पर ही टिकी थी। जैसे मैं ही किसी पिंजरे से निकलकर खुले आसमान में उड़ रही थी। खैर अच्छा लगा कि मेरी जैसी सोच भी कोई रखता है। सोचने लगी कि यह आइडिया मुझे क्यों नहीं सूझा। इस खुशी के साथ मैं उसे देखे जा रही थी और चलती जा रही थी। लेकिन मेरी यह खुशी कुछ सेकंड में ही मायूसी में बदल गई। खुले आसमान में उड़ती उस चिड़िया को एक चील हवा में ही दबोच ले गई। यह देखते ही मुझे जैसे सदमा लग गया हो मन बहुत गहरे अवसाद में चला गया। सीने में दिल टुकड़े-टुकड़े हो रहा था। आँखें बहुत रो लेना चाह रही थी। उबार निकालने के लिए और खुद को सम्भालने के लिए चिल्लाना चाहती थी और फिर मेरे मुँह से निकल पड़ा- "आज़ादी मिली भी तो मौत के बाद ही। "

फिर घंटों मंथन चलता ही रहा कि पिंजरे में बंद चिड़िया न कभी ऊंचा उड़ना सीख पाई, न ही स्वयं को बचाना ही सीख पाई। जिस नैसर्गिक गुणों से ईश्वर ने उसे नवाज़ा था, हम मानवों ने वो रौंद दिए, वो सपने तोड़ दिए, उनकी उन्मुक्त प्रवृत्ति को उनसे छीन लिया। आज का मानव आसमान में उड़ने के सपने देखता है और हवाई जहाज इत्यादि बनाकर अपनी मंशा पूरी भी कर लेता है लेकिन जिसका जन्मजात अधिकार उड़ना ही हो, उससे उसका यह अधिकार छीनने में वक़्त भी नहीं लगाता, पल भर भी 'जियो और जीने दो' का मानवता का नारा उसके मन को दिशा नहीं देता।

आज भी हम अपने घरों में कितनी ही चिड़ियों को बंद करके रखते हैं, उनके सपनों का तो क्या उनकी क्षमताओं पर सवाल खड़े कर उनके व्यक्तित्व का ही कचूमर कर देते हैं। अब इस पर भी वे यह कह जाएँ कि जब पिंजरे में ही उन्हें दाना-पानी दिया जा रहा है तो बाहर निकलकर उड़ने की क्या जरूरत है तो ऐसे लोग किसी कातिल से कम नहीं। वे केवल देश और उस व्यक्ति का विकास ही नहीं रोक रहे बल्कि अपना विकास भी रोक रहे हैं, खुद को ऐसी सोच का बंदी बनाकर।

आज यह अनुभव लिखते हुए मुझे शिवमंगल सिंह 'सुमन' की प्रसिद्ध कविता याद आ रही है –

"हम पक्षी उन्मुक्त गगन के पिंजरबद्ध न गा पायेंगे, कनक तिलियों से टकरा पुलकित पंख टूट जायेंगे।"

यह कविता जब अपने अस्तित्व को बचाए रखने की माँग करती है तो इसकी गूंज आत्मा में उतरकर रूदन करती है और चिल्ला-चिल्लाकर कहती है- "बस बहुत हुई हिंसा, बहुत हुआ शोषण! जीने दो मुझे, उड़ने दो मुझे! नहीं चाहिए मुझे मरने के बाद की आज़ादी! मुझे चाहिए जीने की आज़ादी बिल्कुल तुम्हारी तरह!"

●●●●

खंड-IV

आयोग के महत्त्वपूर्ण निर्णयों की सृजनात्मक प्रस्तुति

कहानीकार - सर्वमित्रा सुरजन

अजन्मी संतानों का संरक्षक आयोग

सर्वमित्रा सुरजन*

हमारे देश में बच्चे भगवान का रूप माने जाते हैं। घर में बच्चे के आगमन की संभावना बनती है, तब से उत्सव का सिलसिला शुरु हो जाता है। अजन्मे बच्चे और उसकी मां की कुशलता की कामनाएं की जाती हैं। जननी हर तरह से स्वस्थ और प्रसन्न रहे, इस कोशिश में परिजन लगे रहते हैं। लेकिन ये एक भारत की तस्वीर है। दूसरी तस्वीर है उस भारत की, जहां जच्चा-बच्चा दोनों का जीवन अकुशल दाइयों के हाथ में रहता है। चिकित्सा के सीमित संसाधन, गरीबी और अशिक्षा के कारण इस दूसरे भारत में बहुत से बच्चे इस दुनिया को देखने से पहले ही आंखें मूंद लेते हैं। विशेषकर आदिवासी इलाकों में, जहां सरकारी सुविधाओं और योजनाओं का समुचित लाभ निवासियों को नहीं मिल पा रहा है, आए दिन इस तरह की विडंबनाएं होती रहती हैं। ऐसी ही एक दुखद घटना की जानकारी राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग को प्राप्त हुई आंध्रप्रदेश से। अंग्रेजी अखबार द टाइम्स ऑफ इंडिया में 26 अगस्त 2019 को एक खबर प्रकाशित हुई, जिसमें विस्तार से बताया गया कि किस तरह विशाखापट्टनम में आदिवासी इलाकों में गर्भवती आदिवासी महिलाओं के बीच मासिक धर्म और स्वास्थ्य से जुड़ी जानकारियों का अभाव कहर बनकर टूट रहा है। रिपोर्ट का शीर्षक था- गर्भवती आदिवासी महिला की मौत से हुआ लचर और कमजोर स्वास्थ्य व्यवस्था का खुलासा। रिपोर्ट में स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता के अभाव के बारे में तो लिखा ही गया था, साथ ही ये भी बताया गया कि इस इलाके में रेडियोलॉजिस्ट की कमी से गर्भवती महिलाओं के लिए स्थितियां और तकलीफदेह बन रही हैं। क्योंकि रेडियोलॉजिस्ट जांच के द्वारा ये बता पाते हैं कि बच्चे के जन्म लेने की अनुमानित तारीख कौन सी होगी। रिपोर्ट में लिखा है कि इस जिले में आदिवासी गर्भवती महिलाओं की जिंदगी लगातार खतरे में है। इसी रिपोर्ट में एक हृदयविदारक जानकारी दी गई कि विशाखापट्टनम जिले के पेदाबायालू मंडल के छोटे से गांव जामदांगी में एक आदिवासी महिला ने अत्यधिक रक्तस्त्राव के कारण गर्भ में ही अपने बच्चे को खो दिया।

महाभारत में तो श्रीकृष्ण ने गर्भवती उत्तरा की कोख के भीतर पल रहे परीक्षित को बचा लिया था, लेकिन जामदांगी गांव के परीक्षित को नहीं बचाया जा सका। भविष्य में ऐसी विडंबनाओं पर रोक लगे, इसके लिए राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग ने इस खबर को न केवल संज्ञान में लिया, बल्कि इसकी गंभीरता को

* *वरिष्ठ पत्रकार एवं लेखिका, नोएडा, उत्तर प्रदेश*

देखते हुए आंध्र प्रदेश सरकार के मुख्य सचिव से रिपोर्ट तलब की। आयोग के आदेश का अनुपालन करते हुए आंध्रप्रदेश सरकार के स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण निदेशक ने मामले के बारे में जानकारी जुटाई और रिपोर्ट पेश की। इस रिपोर्ट में बताया गया कि पेदाबायालू क्षेत्र की किसी गैर प्रशिक्षित दाई ने चिन्ना राव की पत्नी 28 बरस की किल्लो लक्ष्मी की जचकी करवाई। जिसमें जच्चा किल्लो देवी ने एक मृत बच्ची को जन्म दिया। जन्म के बाद नाल निकालने की प्रक्रिया में किसी स्थानीय जड़ी को दाई ने दवा के रूप में मां को खिलाया और उसके बाद 18 अगस्त 2019 को गांव से चली गई। लेकिन उसी दिन किल्लो लक्ष्मी ने भी दम तोड़ दिया। बताया गया कि नाल के गर्भ में ही रह जाने के कारण पीड़िता की मौत हो गई। गर्भवती किल्लो लक्ष्मी को एएनएम यानी सहायक नर्स मिडवाइफरी और स्वास्थ्य कार्यकर्ता द्वारा सारी स्वास्थ्य सुविधाएं दी गई थी और ये निश्चित हुआ था कि बच्चे का जन्म गोमांगी के स्वास्थ्य केंद्र में होगा। लेकिन एएनएम की सलाह के विपरीत प्रसव घर पर अप्रशिक्षित दाई की देख-रेख में करवाया गया। रिपोर्ट में ये भी बताया गया कि आदिवासी इलाकों में गर्भवती महिलाओं के लिए कई और सुविधाओं की व्यवस्था की जाती है। और समय-समय पर आदिवासी स्वास्थ्य सुविधाओं को मजबूत करने के लिए जो कदम उठाए जाते हैं, उनका भी उल्लेख रिपोर्ट में है। आंध्रप्रदेश सरकार के स्वास्थ्य, चिकित्सा एवं परिवार कल्याण विभाग के मुख्य सचिव ने आयोग को एक पत्र में मातृत्व स्वास्थ्य योजना के अंतर्गत चलाए जा रहे विभिन्न कार्यक्रमों की जानकारी भी दी। जिसमें बताया गया कि किस तरह गर्भवती महिलाओं को सरकारी या निजी चिकित्सालयों में जाकर प्रसव के लिए प्रोत्साहित किया जाता है, ताकि शिशु मृत्यु व मातृ मृत्यु की घटनाओं को रोका जा सके।

इन तमाम रिपोर्ट्स को संज्ञान में लेने के बाद भी राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग ने एक बुनियादी सवाल यह पूछा कि अगर तमाम योजनाओं और उपायों का इतना प्रचार-प्रसार और उपलब्धता रही, उसके बावजूद 2019 की वह घटना क्यों घटी, जिसकी जानकारी एक मीडिया रिपोर्ट के जरिए आयोग को हुई। आयोग के विचार में जिन योजनाओं का जिक्र रिपोर्ट्स में किया गया है, उन्हें कार्यान्वित करने की जिम्मेदारी जिन अधिकारियों पर थी, वे अपनी जिम्मेदारियों पर खरे नहीं उतरे। इसलिए इस दुखद घटना के लिए पीड़ितों को मौद्रिक क्षतिपूर्ति न देने का कोई कारण नहीं बनता। यह बात भी पानी की तरह साफ है कि आदिवासी समुदाय को कहीं और से कोई उपचारात्मक सहायता नहीं मिलती, इसलिए आयोग ने यह माना कि एक गर्भवती महिला की घर पर प्रसव के दौरान जिस तरह मौत हुई है, ऐसे दुखद प्रसंग और भी हो सकते हैं। इसलिए आदिवासी समुदाय के बीच स्वास्थ्य के अधिकार की रक्षा करने में असफल रहने पर सरकार मुआवजा देने के लिए उत्तरदायी है।

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग ने 5 लाख रूपए की क्षतिपूर्ति रकम दिवंगता किल्लो लक्ष्मी के परिजनों को देने का आदेश आंध्रप्रदेश सरकार को दिया। मुआवजे की राशि किल्लो लक्ष्मी के पति को दी गई और यह प्रकरण समाप्त हो गया। एक अजन्मे परीक्षित को बचाने में सरकार नाकाम रही, लेकिन अब कोई परीक्षित जन्म से पहले दम न तोड़े और जीने व स्वस्थ रहने का हर मानव का अधिकार बना रहे, यह कोशिश इस फैसले में नजर आई।

(प्रकरण-847/1/21/2019)

●●●●

न्याय के नए दरवाजे

सर्वमित्रा सुरजन*

निर्भया नाम दें या शक्ति की पूजा करें, लेकिन महिलाओं को अपनी इज्जत और आत्मसम्मान के लिए, अपने अस्तित्व के अधिकार के लिए कितना संघर्ष करना पड़ता है, कितनी परीक्षाओं से गुजरना पड़ता है, ये पूछिए उस लड़की से, जिसके साथ पहले बार-बार बलात्कार किया गया और फिर इंसाफ के नाम पर लीपापोती करने की कोशिश की गई। सीता जी को भी अग्निपरीक्षा से गुजरना पड़ा था, लेकिन 21 वीं सदी के भारत में तो लड़कियों की अग्निपरीक्षाएं खत्म ही नहीं हो रही हैं।

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग को एक शिकायत प्राप्त होती है, जिसमें शिकायतकर्ता ने गुहार लगाई कि उसकी बेटी का अपहरण किया गया और फिर चित्रकूट, मैहर और अलग-अलग जगहों पर कई बार उसके साथ बलात्कार हुआ। पुलिस में शिकायत दर्ज की गई तो पीड़िता को ढूंढ लिया गया और फिर पुलिस स्टेशन में रखा गया, जहां उसने अपने अपहरण और बलात्कार की भयावह आपबीती सुनाई। लेकिन पुलिस ने आरोपियों को गिरफ्तार नहीं किया, बल्कि पीड़िता को ही दो दिन पुलिस स्टेशन में रखा गया। जहां उसका न मेडिकल परीक्षण हुआ, न उसका बयान अदालत में दर्ज किया गया। केवल एनसीआर रजिस्टर करके 10वें दिन मामले को बंद कर दिया गया। इसके बाद आरोपियों ने लगातार शिकायतकर्ता को प्रताड़ित करना और धमकाना शुरु किया। इस शिकायत को प्राप्त करने के बाद माननीय आयोग ने एक नोटिस जारी किया, जिस पर उत्तरप्रदेश के बांदा के एसपी ने बताया कि एक एफआईआर आरोपियों के खिलाफ अतरा पुलिस स्टेशन में दर्ज की हुई है।

महज एक एफआईदर्ज करने से क्या पीड़िता को इंसाफ मिल गया, हर्गिज नहीं। माननीय आयोग की राय में पुलिस का पक्ष इस प्रकरण में संतोषजनक नहीं है। इस समूचे घटनाक्रम में जांच अधिकारी की ओर से घोर लापरवाही बरती गई है, तभी तो न पीड़िता का परीक्षण हुआ, न उसका बयान दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के तहत दर्ज किया गया है। हर पीड़ित को त्वरित व निष्पक्ष जांच का अधिकार है, लेकिन इस प्रकरण में पीड़िता के इस अधिकार से वंचित रखा गया। एक एफआईआर दर्ज करने में 4 महीनों का अनावश्यक विलंब किया गया। इस पहलू को भी नजरंदाज नहीं किया जा सकता कि कहीं जांच अधिकारी ने आरोपियों के साथ सांठ-गांठ न कर ली हो। इसलिए आयोग इस नतीजे पर पहुंचा कि पीड़िता को पांच लाख रूपए मुआवजे के तौर पर दिए जाने चाहिए।

पीड़िता को मुआवजे की राशि पांच लाख रूपए प्राप्त हुए और आरोपियों के खिलाफ आरोपपत्र दायर किया गया तो आयोग ने इस प्रकरण को बंद किया। लेकिन न्याय की उम्मीद के नए दरवाजे अपने फैसले से खोल दिए।

(प्रकरण सं 35620/24/12/2016-WC)

●●●●

* *वरिष्ठ पत्रकार एवं लेखिका, नोएडा, उत्तर प्रदेश*

निराश्रितों को आयोग का आश्रय

सर्वमित्रा सुरजन*

उन लड़कियों के लिए जीवन पहले ही कठिनाइयों से भरा हुआ था। अनाथ, बेसहारा, परित्यक्ता लड़कियों के लिए हमारे समाज में वैसे भी कोई जगह कहां होती है। कुछ समाजसेवी ऐसी निराश्रित लड़कियों के लिए आश्रय घर खोलते हैं, ताकि उन्हें मां-बाप का लाड़-दुलार न सही, सुरक्षित छत तो मिल ही जाए। मगर मुजफ्फरपुर की ये लड़कियां तो इस मामले में भी अभागी ही निकलीं।

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग को एक शिकायत मिलती है, जिसमें बताया गया कि बिहार के मुजफ्फरपुर में एक आश्रय गृह की 36 लड़कियों का 10 साल तक शारीरिक शोषण होता रहा है। शिकायतकर्ता ने माननीय आयोग से इस मामले में दखल देने की दरयाफ्त की। इस शिकायत का संज्ञान लेते हुए आयोग ने संबंधित अधिकारियों से इस बारे में रिपोर्ट मांगी। जवाब में बिहार सरकार के गृह विभाग के विशेष सचिव ने बिहार के डीजीपी द्वारा दर्ज एक रिपोर्ट पेश की।

जिसमें बताया गया कि 31 मई 2018 को आईपीसी की धारा 120बी/ 376/ 34 और सेक्शन 4/ 6/ 8/ 10 /12 पॉक्सो एक्ट के तहत सभी 11 आरोपियों के खिलाफ महिला थाने में केस संख्या 33 /2018 दर्ज की गई और बाद में एससी एसटी एक्ट के तहत भी अपराध दर्ज किया गया। उपरोक्त मामला अब सीबीआई के सुपुर्द है, जिसके तहत जांच चल रही है। इस रिपोर्ट के बाद माननीय आयोग ने सीबीआई निदेशक को निर्देशित किया कि मामले की स्टेटस रिपोर्ट जमा की जाए।

माननीय आयोग को बताया गया कि मुजफ्फरपुर में एक एनजीओ सेवा संकल्प एवं विकास समिति द्वारा चलाए जा रहे बालिका संरक्षण गृह में यह दुखद घटना घटी है। मामला पहले महिला पुलिस थाने में दर्ज हुआ, फिर सीबीआई के पास चला गया। सीबीआई ने जांच पूरी की और फिर एनजीओ के मालिक व 20 अन्य आरोपियों के खिलाफ मुजफ्फरपुर के अतिरिक्त सत्र एवं जिला जज और पॉक्सो एक्ट के तहत विशेष अदालत में आरोपपत्र दाखिल किया। बाद में मामला माननीय सुप्रीम कोर्ट के निर्देश पर दिल्ली के साकेत कोर्ट में स्थानातंरित कर दिया गया। आईपीसी, पॉक्सो और जे जे एक्ट के तहत 20 आरोपियों के खिलाफ ट्रायल कोर्ट ने आरोप दायर किए। इनमें से 19 को दोषी ठहराया गया और एक आरोपी बरी हुआ। मुजफ्फरपुर बालिका गृह संचालित करने वाले एनजीओ मेसर्स सेवा संकल्प एवं विकास समिति का पंजीकरण रद्द किया

** वरिष्ठ पत्रकार एवं लेखिका, नोएडा, उत्तर प्रदेश*

गया और एनजीओ के मालिक को उसके सहयोगियों सहित जेल भेजा गया।

इस प्रकरण की पूरी जांच माननीय सुप्रीम कोर्ट की निगरानी में हुई और मुकदमे का निपटारा शीर्ष अदालत द्वारा तय समय सीमा के भीतर किया गया। माननीय आयोग इन सारे पहलुओं पर संज्ञान लेते हुए इस नतीजे पर पहुंचा कि लड़कियों का शारीरिक शोषण एक लंबे अरसे तक होता रहा लेकिन राज्य अधिकारी इस बारे में अनभिज्ञ रहे। अधिकारियों ने आश्रय गृह पर पर्याप्त निगरानी नहीं रखी, जिस वजह से मासूम लड़कियों का जीवन नर्क बन गया। इसलिए इस मामले में राज्य को भी जिम्मेदार माना गया। तमाम परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए आयोग ने मुआवजे के रूप में हर पीड़िता को 50 हजार रूपए का भुगतान करने की सिफारिश की। आयोग को बताया गया कि सभी 20 आरोपियों के खिलाफ आरोपपत्र दाखिल किया गया है। इसके साथ ही सभी 49 पीड़ित लड़कियों को 7-7 लाख रूपए की वित्तीय सहायता दी गई है। इन बातों पर गौर फरमाते हुए माननीय आयोग ने फैसला लिया कि इस मामले में अब दखल की और आवश्यकता नहीं है और ये प्रकरण बंद कर दिया गया। निराश्रित, पीड़ित लड़कियों को आयोग ने इंसाफ का आश्रय दिया और मानवाधिकार संरक्षण हर हाल में हो सकता है, ये साबित कर दिखाया।

(प्रकरण संख्या 690/4/23/2019)

●●●●

मातम में बदली जन्माष्टमी

सर्वमित्रा सुरजन*

आठवीं कक्षा में पढ़ता था सोनू। हर बच्चे की तरह वो भी अपनी मां-बाप की आंखों का नूर होगा। कितने सपने संजोए होंगे, सोनू के मां-बाप ने। बेटा पढ़-लिख कर जिंदगी में कुछ मुकाम हासिल करेगा। मां-बाप के बुढ़ापे का सहारा बनेगा। लेकिन ऐसा कुछ होता, इससे पहले ही सोनू असमय काल का शिकार हो गया। बल्कि ये कहना ठीक होगा कि कुछ लोगों की लापरवाही सोनू की जिंदगी पर भारी पड़ गई। जन्माष्टमी का उत्सव सोनू के घर वालों के लिए मातम का दिन बन गया।

उत्तरप्रदेश के बस्ती जिले के डीएम का एक पत्र राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग को प्राप्त होता है। विद्यालय में जन्माष्टमी उत्सव के आयोजन में आठवीं कक्षा के एक छात्र की करंट लगने से मौत हो गई। माननीय आयोग के निर्देश पर उत्तरप्रदेश सरकार के प्रधान सचिव ने एक रिपोर्ट जमा की। रिपोर्ट में बताया गया कि इंडियन इलेक्ट्रिसिटी रेगुलेशन्स, 1956 के नियम 29 व 30 (1) के तहत बिजलीकरण के सुरक्षा संबंधी मानकों का पालन नहीं किया गया, जो बालक की मौत का कारण बना। घटना की रिपोर्ट में विद्यालय के तत्कालीन प्राचार्य व प्रबंधकों को इसका जिम्मेदार ठहराया गया. भारत सरकार के स्कूल शिक्षा व साक्षरता विभाग की ओर से नवोदय विद्यालय समिति ने घटना की एक विस्तृत रिपोर्ट भी आयोग को प्रेषित की। रिपोर्ट में बताया गया कि स्कूल हॉल के फ्लोर की सफाई के दौरान पर्याप्त सुरक्षा मानकों का पालन नहीं किया गया और इसलिए बालक की मौत के लिए स्कूल प्रबंधन जिम्मेदार है।

माननीय आयोग भी इस रिपोर्ट के प्राप्त होने के बाद इसी निष्कर्ष पर पहुंचा कि बालक की इस असामयिक मौत के लिए बस्ती के जवाहर नवोदय विद्यालय का प्रबंधन, प्राचार्य और अन्य कर्मचारी जिम्मेदार हैं। नवोदय विद्यालय समिति ने इसके लिए विभागीय एक्शन लिया है। इस लापरवाही के कारण श्री सुलाई के बेटे मास्टर सोनू गौतम की जान चली गई। इस घटना में मानवाधिकारों का हनन हुआ और इसके लिए पीड़ित बालक के परिवार को 5 लाख रुपए का मुआवजा देने की सिफारिश आयोग ने की।

पीड़ित परिवार को मुआवजे की राशि मिलने के बाद प्रकरण समाप्त हो गया। जन्माष्टमी तो भगवान के जन्म का उत्सव होता है, लेकिन सोनू के परिवार के लिए यह दिन हमेशा एक दुखदायी याद और टीस का सबब बन गया।

(प्रकरण संख्या 33064/ 24/ 15/ 2016 एम-4)

●●●●

** वरिष्ठ पत्रकार एवं लेखिका, नोएडा, उत्तर प्रदेश*

जख्मों पर आयोग का मलहम

सर्वमित्रा सुरजन*

छोटे-मोटे झगड़े, तीखी-मीठी बहसें और रूठना-मनाना तो दांपत्य जीवन की सामान्य बातें हैं। कभी छोटे-मोटे मनमुटाव होते हैं, तो कुछ समय बाद आपसी बातचीत से सुलझा भी लिए जाते हैं। कहा भी जाता है कि मियां-बीबी राजी, तो क्या करेगा काजी। लेकिन बात अगर काजी तक पहुंचाई जाए और वहां झगड़ा सुलझने की जगह और उलझने की नौबत आ जाए, तो बनती बात बिगड़ जाती है, सुख-चैन से रहने के अधिकार का हनन होता है। ऐसा ही कुछ हुआ दिल्ली के जोगिंदर सिंह के साथ।

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग को उत्तरी दिल्ली नगर निगम में सैनेटरी इंस्पेक्टर पद पर कार्यरत जोगिंदर सिंह ने एक शिकायत भेजी। जिसमें उन्होंने लिखा कि 17 फरवरी 2018 को उनका अपनी पत्नी के साथ एक मामूली विवाद हुआ। लेकिन अपने गुस्से पर काबू न करते हुए असंतुलित मानसिक अवस्था में उनकी पत्नी रोहिणी कोर्ट की पुलिस पोस्ट पहुंच गईं और जोगिंदर सिंह के खिलाफ शिकायत दर्ज कर दी। उसी दिन लगभग 2 बजे पुलिस पोस्ट के हेड कांस्टेबल ने जोगिंदर सिंह को फोन किया और ढाई बजे तक वह थाने पहुंच गए। उन्होंने पुलिसकर्मी को ये समझाने की कोशिश की कि यह मामूली पारिवारिक विवाद है, लेकिन उनकी बात न सुनते हुए पुलिसकर्मी ने उन्हें थप्पड़ मारना शुरु कर दिया। उन्हें घूंसे से भी मारा जिससे उन्हें गंभीर चोटें आईं। इसके बाद पुलिस कर्मी ने जोगिंदर सिंह को गिरफ्तार करने की धमकी भी दी और ये सब हुआ उनके नाबालिग बच्चों के सामने। बाद में एक पुलिस कांस्टेबल घायल जोगिंदर सिंह को रोहिणी के बाबासाहेब अंबेडकर अस्पताल ले गया।

माननीय आयोग के निर्देश पर एडिशनल डिप्टी कमिश्नर ऑफ पुलिस ने जो रिपोर्ट पेश की, उसमें बताया कि जांच में एस आई आदेश कुमार द्वारा जोगिंदर सिंह को पीटने की शिकायत की पुष्टि हुई है। यह भी बताया गया कि शिकायतकर्ता की पत्नी ने जो शिकायत की थी, पुलिस अधिकारियों ने उस पर भी सही तरीके से कार्रवाई नहीं की। इस पर संबंधित पुलिस अधिकारियों को एक लिखित चेतावनी और कारण बताओ नोटिस जारी किया गया। आयोग ने इस रिपोर्ट को देखा और पाया कि रिपोर्ट में यह बात स्वीकार की गई है कि एसआई आदेश कुमार पर शिकायतकर्ता द्वारा लगाए गए पीटने के इल्जाम सही हैं। इन परिस्थितियों में माननीय आयोग इस नतीजे पर पहुंचा कि यह सरासर मानव अधिकारों का हनन है। इस मामले में अपराध पुलिस अधिकारियों से हुआ है, इसलिए राज्य सरकार भी पीड़ित को आर्थिक मुआवजा देने के लिए जिम्मेदार है।

** वरिष्ठ पत्रकार एवं लेखिका, नोएडा, उत्तर प्रदेश*

तमाम साक्ष्यों व परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए माननीय आयोग ने दिल्ली सरकार को यह सिफारिश की कि पीड़ित को एक लाख रूपए का मुआवजा दिया जाए। मुआवजे का भुगतान होने के बाद यह प्रकरण खत्म हो गया। जोगिंदर सिंह के साथ हालात ने जो खेल खेला, उसके जख्म तो न जाने कैसे भरेंगे, पर आयोग ने कम से कम उस पर मलहम तो लगाया ही है।

(प्रकरण संख्या 1246/30/ 6/ 2018)

●●●●

खंड-V

समीक्षा

अन सोशल नेटवर्क

सोशल मीडिया को भारतीय संदर्भ में समझने की एक बेहतरीन प्रस्तुति

विनय कुमार शर्मा*

सोशल मीडिया हमारे सामाजिक या सोशल होने की जो मूल प्रवृत्ति है, उसका ही विस्तार है। इसने समाज में सम्बन्धों के निर्माण और बनाए रखने तथा समूहों को जोड़ने एवं उनमें पारस्परिक क्रिया करके क्षेत्र में क्रान्ति ला दी है। इस तरह सोशल मीडिया हमारे समाज का ही एक ऑनलाइन प्रतिबिम्ब है और यह ऑनलाइन सामाजिकता के लिए एक नया शब्द है। अधिक विस्तृत दृष्टिकोण के अन्तर्गत हम कह सकते हैं कि सोशल मीडिया हमारे समाज का ही एक विस्तार हैं। यह वास्तविक समाज का सिमुलेशन है, बिल्कुल असली समाज का एक मॉडल जहाँ तकनीकी उपकरणों द्वारा सामाजिक कार्य सम्पन्न किये जा रहे हैं।

प्रस्तुत पुस्तक 'अन सोशल नेटवर्क' सोशल मीडिया को भारतीय सन्दर्भ में समझने की एक बेहतरीन प्रस्तुति है। इस पुस्तक में कुल पन्द्रह अध्याय हैं एवं दो अध्याय परिशिष्ट में है। पहले अध्याय में लेखक ने सोशल मीडिया की विकास यात्रा एवं उम्मीदों से लेकर आशंकाओं और खतरों के सफर को बहुत ही खूबसूरती से रेखांकित किया है। सोशल मीडिया का दायरा जैसे-जैसे बढ़ रहा है और यह समाज की अलग-अलग प्रक्रियाओं के साथ जैसे-जैसे टकरा रहा है, वैसे-वैसे इसके अलग-अलग पहलू सामने आ रहे हैं। इन अन्तर्क्रियाओं के साथ ही सोशल मीडिया अपने असली तेवर में नज़र आ रहा है जो न पूरी तरह सकारात्मक है और न ही पूरी तरह नकारात्मक। सोशल मीडिया को लेकर शुरूआती दौर में बना उत्साह थोड़े समय में गायब हो गया क्योंकि समाज में जो शक्तिशाली और प्रभुत्वशाली शक्तियाँ और विचार थे, वे सोशल मीडिया में भी हावी हो गये। दूसरे अध्याय में सोशल मीडिया अपने नाम से उलट अनसोशल नेटवर्क क्यों है यह बताने का प्रयास किया गया है। सोशल मीडिया दरअसल आपकी निजी जिन्दगी का अक्स यानी मिरर इमेज है। फेसबुक, ट्विटर, इंस्टाग्राम, लिंक्डइन, गूगल प्लस और तमाम तरह के सोशल नेटवर्क आपके सामने दुनिया की कई खिड़कियां खोलते है। आप वहाँ पुराने-नए दोस्तों से मिलते हैं, डेटिंग पार्टनर ढूँढ़ते हैं, कारोबारी दायरा बढ़ाते हैं, नई सूचनाएँ पाते हैं। सिद्धान्त रूप में यह सच है कि सोशल मीडिया पर आप करोड़ों लोगों से मिल सकते हैं और उन तक अपनी बात पहुँचा सकते हैं। इसमें न जाति धर्म की सीमा है और न ही भूगोल या नागरिकता का बंधन। तीसरे अध्याय में सोशल मीडिया किस प्रकार आपको लगातार उग्र और आक्रामक

* *मुख्य संपादक, शोध सरिता और शोध संचार बुलेटिन, लखनऊ, उत्तर प्रदेश*

बना सकता है, इस पर विस्तार से चर्चा की गयी है। सामाजिक मनोविज्ञान में ग्रुप पोलराइजेशन पर काफी अध्ययन हुआ है और यह पाया गया है कि किसी समूह में आपसी चर्चा के बाद लोग अक्सर मध्यमार्गी होने की जगह ज्यादा कट्टर बन जाते हैं। किसी भी सोच-नजरिए-विचार के सबसे उग्र और आक्रामक प्रतिनिधियों की पोस्ट और कमेंट को अक्सर सोशल मीडिया में सबसे ज्यादा लोकप्रियता मिलती है, जिसे लाइक और शेयर से नापा जा सकता है।

चौथे अध्याय में मॉब लिंचिंग और सोशल मीडिया पर फैलने वाली अफवाहों के सम्बन्धों पर प्रकाश डाला गया है। मॉब लिंचिंग सोशल मीडिया के पहले भी थी और सोशल मीडिया के बाद भी है। अब नया यह हुआ है कि सोशल मीडिया के कारण अफवाहों के फैलने की रफ्तार बहुत तेज हो गई है और चूँकि सोशल मीडिया पर ज्यादातर बातें हमारे आसपास या परिचित या समान विचार के लोगों की होती हैं, इसलिए अफवाहों को विश्वसनीयता भी मिल जाती है। सोशल मीडिया ने पिछड़े देशों में उन आदिम भावनाओं को जगा दिया है, जिसमें किसी को दोषी करार देने से लेकर उसे दोष का दंड देने तक का काम भीड़ खुद ही कर रही है और इसके लिए फेसबुक या व्हाट्सएप पर फैली अफवाह को ही प्रमाण मान लिया जा रहा है।

पांचवे अध्याय के अन्तर्गत डाटा को लेकर विस्तार से चर्चा की गयी है डाटा सिक्योरिटी को लेकर भारत की स्थिति ज्यादा नाजुक इसलिए भी है क्योंकि भारत में लगभग 98 प्रतिशत स्मार्टफोन एंड्रायड ऑपरेटिंग सिस्टम (बाकी आईओएस) पर चलते हैं और एंड्राएड सिस्टम पर डाटा की सुरक्षा का अच्छा बंदोबस्त नहीं हैं। जब भी कोई यूज़र इस सिस्टम पर कोई ऐप डाउनलाड करता है, वह दरअसल अपना डाटा सार्वजनिक करने का रास्ता खोल देता है। छठा अध्याय सोशल मीडिया की एक और प्रमुख अवधारणा एको चेम्बर को भारतीय परिप्रेक्ष्य में देखता है। इस अध्याय में बताया गया है कि सोशल मीडिया में जब हम अपने जैसे लोगों को ज्यादा सुनते देखते हैं तो दरअसल यह एक एको चेम्बर या अपनी ही आवाज की गूँज सुनाने वाले कमरे की तरह हो जाता है। जहाँ प्रतिद्वन्दी विचार के लिए कोई जगह नहीं होती या कम जगह होती है। ऐसा एल्गोरिदम भी सेट किया जा सकता है कि किसी यूजर के फ्रेंड के फ्रेंड की पोस्ट टाइमलाइन पर ज्यादा दिखाया जाए। ऐसे ही सैकड़ों और पैरामीटर के आधार पर या हर पैरामीटर का अलग-अलग वेटेज निर्धारित कर हजारों लाखों तररह के एल्गोरिदम बनाए जा सकते हैं। आखिरकार इन सबमें आदमी की भूमिका तो है ही और जहाँ आदमी की भूमिका है, वहाँ जेंडर भी है, रेस भी है, जाति भी है, धर्म भी है, पसन्द और नापसन्द भी है। विचार और विचारधारा भी है। तो यह उतना सीधा-सपाट मामला नहीं है, जितना सोशल मीडिया कम्पनियाँ बताती हैं कि सब एल्गोरिदम से अपने-आप तय होता है।

सातवें अध्याय के अन्तर्गत वायरल कंटेंट की तकनीक और समाजशास्त्र पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है। सोशल मीडिया पर कोई भी कंटेन्ट वायरल यानी तेजी से लोकप्रिय क्यों हो जाता हैं और इसके पीछे कौन-कौन सी प्रक्रियाएँ काम करती हैं। दरअसल हर कंटेन्ट का एक क्रिटिकल मॉस होता है, जहाँ के बाद उसे वायरल करने के लिए किसी को प्रयास नहीं करना पड़ता। हर तरह के कंटेन्ट के लिए वह संख्या अलग-अलग होती है। किसी लेख को अगर सोशल मीडिया में 10,000 लोगों ने देख लिया तो कई लोग इस वजह से उसे और देख लेंगे कि 10,000 लोगों ने इसे देखा है। उसी तरह यूट्यूब पर किसी गाने के अगर 1 मिलियन व्यूज़ हैं तो स्वाभाविक जिज्ञासा की वजह से कई सारे और लोग भी उसे देख लेंगे और इस क्रम में उसके टोटल व्यूज़ और बढ़ जाएँगे, जो और भी नए लोगों को क्लिक करने के लिए उकसाएगा। यानी एक लहर

कई सारी और लहरों को पैदा कर सकती हैं और किसी भी कंटेन्ट को वायरल या पॉपुलर बना सकती है। आठवें अध्याय में सोशल मीडिया युग में रिश्तों के बनने और बिगड़ने के बारे में बहुत ही खूबसूरती के साथ रेखांकित किया गया है। दरअसल ऐसी हजारों या लाखों स्थितियों से मानवीय रिश्ते इन दिनों गुज़र रहे हैं, जहाँ सोशल मीडिया ओर वहाँ लोगों का व्यवहार रिश्तों को निर्धारित कर रहा है, उन्हें मजबूत बना रहा है, या उन्हें तोड़ रहा है। सम्बन्धों की नई दुनिया में, जिसमें अब मोबाइल फोन, सोशल नेटवर्क और व्हाट्सएप जैसे चैटिंग नेटवर्क का न सिर्फ प्रवेश हो चुका है, बल्कि उनमें सम्बन्धों को बनाने और बिगाड़ने की ताकत आ गई है। अब कसमें-वादे-प्यार-वफा सब कुछ स्क्रूटनी यानी जाँच के दायरे में है। हमारे जीवन में मोबाइल फोन और इंटरनेट अब हड्डियों के अन्दर तक समा गया है। हमारी हर ताकत, यहाँ तक कि सोचने का तरीका तक अब अपने डिजिटल फुटप्रिंट छोड़ जा रहा है। हमारे सर्फिंग बिहेवियर से हमारे व्यक्तित्व के बारे में तमाम जानकारियाँ ली जा सकती हैं। वे जानकारियाँ भी, जिन्हें हम अन्यथा छिपा ले जाते हैं। मिसाल के तौर पर, यह मुमकिन है कि हम सार्वजनिक जीवन में एक निष्ठ पति या पत्नी की भूमिका जी रहे हैं और एकान्त में डेटिंग साइट पर सेक्स खोज रहे हों।

नौवाँ अध्याय सोशल मीडिया में थर्ड पर्सन इफेक्ट के बारे में है। सोशल मीडिया अब हमारे जीवन में कई तरह से समा चुका है और हमारे जीवन को प्रभावित भी कर रहा है। भारत में डाटा की दरें सस्ती होने के कारण भी इसका इस्तेमाल खूब हो रहा है। लेकिन जो चीज़ हमारे जीवन में इतने गहरे प्रवेश कर चुकी है और करोड़ों लोग अपना ढेर सारा समय जहाँ बिता रहे हैं, तमाम तरह की सूचनाएँ, सच और झूठ, वहाँ से जान रहे हैं, उसका हमारे सोचने के तरीकों और व्यवहार पर किस तरह का असर हो रहा है?

दसवें अध्याय के अन्तर्गत यह बताया गया है कि फेक न्यूज़ लोकतंत्र के लिए किस तरह एक बड़ा खतरा बन गई है। सोशल मीडिया ने संवाद को दोतरफा या बहुआयामी बना दिया है। सोशल मीडिया के जरिए फैलाई जाने वाली मिस इनफार्मेशन को लेकर जिस तरह की वैश्विक स्तर की चिन्ता नजर आ रही है, उससे यह तो स्पष्ट है कि लोकतंत्र के लिए यह वास्तविक खतरा बन चुकी है, लेकिन यह नहीं कहा जा सकता है कि इस वजह से तोकतंत्र संकट में है। ऐसे निष्कर्ष नहीं निकाले जा सकते कि किसी देश के चुनाव को फेक न्यूज़ के सहारे जीता जा सकता है। लेकिन चुनाव पर इसका असर पड़ता है, इसे लेकर कोई शक नहीं है।

ग्यारहवें अध्याय में सोशल मीडिया में जेंडर विमर्श पर विस्तार से चर्चा की गई है। सोशल मीडिया यूजर्स के सर्फिंग व्यवहार में जेंडर के आधार पर किस तरह की प्रवृत्तियाँ हैं। यह शोध का विषय है और नया क्षेत्र होने के कारण उस क्षेत्र में किए गए शोध के निर्णायक और प्रमाणिक निष्कर्ष आने अभी बाकी हैं। लेकिन खासकर भारत में सोशल मीडिया में औरतों की उपस्थिति कई तरह से दर्ज हो रही है। जहाँ महिलाएँ सोशल मीडिया को प्रभावित कर रही हैं, वहीं वे सोशल मीडिया को बदल भी रही हैं।

बारहवें अध्याय में मीडिया के समाजशास्त्र से जुड़ी एक महत्वपूर्ण बहस को उठाया गया है। मुख्य धारा के मीडिया में तो हमेशा सवर्ण जातियों का वर्चस्व रहा है और वंचित समाज के स्वर वहाँ कम ही सुनाई देते हैं। सोशल मीडिया के आगमन से वंचित समूहों को अचानक स्वर मिल गया। वे सवाल जो मुख्य धारा के अखबारों और चैनलों में नहीं उठाए जा रहे थे, उन्हें सोशल मीडिया में उठाया जाने लगा। लेकिन क्या सोशल मीडिया अपनी उम्मीदों पर खरा उतर पाया? इस अध्याय के अन्तर्गत इसी सवाल का जवाब ढूँढ़ने का प्रयास किया गया है। तेरहवें अध्याय में यह बताया गया है कि सोशल मीडिया हायरार्की यानी ऊँच-नीच को पूरी तरह से बरतता है बल्कि समाज में मौजूद भेदभाव को मजबूत भी करता है। इसके लिए सोशल

मीडिया का एक पूरा तंत्र है। ट्विटर और फेसबुक आदि सोशल मीडिया प्लेटफार्म पर खास लोगों को मिलने वाला एकाउंट वेरिफिकेशन या ब्लू टिक या इसी तरह का कोई और बैज संवाद के मामले में एक किस्म का नस्ल भेद है या आप इसे डिजिटल वर्ष तयवस्था भी कह सकते है। यह लोकतंत्र के लिए हानिकारक है।

चौदहवें अध्याय में यह बताया गया है कि तकनीक के विस्तार ने यादों को स्थायी बनाने के नए-नए उपकरण विकसित कर दिए हैं। यादों का मानव जीवन में काफी महत्व माना जाता है। स्मृतियों ने मानव सभ्यता के विकास में खासी भूमिका निभाई है। परिवार संस्था के निर्माण में भी यादों की अहमियत है। जब मनुष्य ने इन यादों के आधार पर परिवार बसाना शुरू किया कि कौन से सम्बन्ध बनाए जा सकते हैं ओर किन सम्बन्धों को निषेध करना चाहिए तब से ही परिवार संस्था का बनना शुरू हुआ। यह स्मृतियाँ हर जीवित प्राणी में नहीं होतीं। स्मरण क्षमता को कई बार विद्धता का आधार भी माना जाता हैं। सोशल मीडिया के युग में वक्त ने अपना मरहम वाला गुण काफी हद तक खो दिया है।

पन्द्रहवें अध्याय में यह बताने का प्रयास किया गया है कि सोशल मीडिया राजनीतिक संचार के क्षेत्र में किस तरह से काम कर रहा है। इसमें यह देखने की कोशिश की गई है कि भारत के नेता सोशल मीडिया की दुनिया में किस तरह के लोगों से घिरे हैं और किनके पोस्ट या ट्वीट पर उनकी नजर ज्यादा होती है। इस अध्याय को लिखने के क्रम में देश के दो प्रमुख नेताओं नरेन्द्र मोदी और राहुल गाँधी के ट्विटर प्रोफाइल का अध्ययन किया गया है। परिशिष्ट के अन्तर्गत दो अध्याय हैं। पहले में यह बताने की कोशिश की गई है कि सोशल मीडिया में असरदार बनने के लिए क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए। यह अध्याय एक यूजर गाइड की तरह है। दूसरे में कुछ जरूरी किताबों की सूची दी गई है जो सोशल मीडिया के बारे में अच्छी जानकारी प्रदान करती है। कुल मिलाकर सोशल मीडिया के अध्येताओं एवं सोशल मीडिया के यूजर्स के लिए यह पुस्तक बहुत ही उपयोगी है।

पुस्तक: अन सोशल नेटवर्क
लेखक : दिलीप मंडल, गीता यादव
प्रकाशक: राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली-110 032
संस्करण: प्रथम संस्करण अगस्त 2021
मूल्य : 199 रुपये

●●●●

मानवाधिकार एवं सत्य की नई खोज है रेत समाधि

कन्हैया त्रिपाठी*

पुस्तकें अपना सौन्दर्यबोध स्वयं पा लेती हैं जब लेखन के औचित्य समाज-केन्द्रित और मनुष्यतामूलक प्रश्नों के साथ पाठक के अंतस में धंसते जाते हैं। हमारे समय की लेखिका गीतांजलि श्री का उपन्यास रेत समाधि को पढ़ते हुए पाठक क्या सोचता है? उसके भीतर की अनुभूति क्या है? ऐसे कई सवालों के उत्तर यदि उपन्यास के शिल्प और संवेदना को समझने की कोशिश एक आम पाठक करेगा तो वह स्वयं गीतांजलि श्री और उनकी इस कृति से प्राप्त कर लेगा। हिंदी उपन्यास रेत समाधि लेखन प्रक्रिया में उन बिम्बों को गीतांजलि श्री उकेरती हैं जो इतिहास और वर्तमान की भावभूमि पर एक सजग लेखक ही उकेर सकता है।

रेत समाधि उपन्यास से अचानक निर्मल वर्मा, कृष्णा सोबती, कृष्ण बलदेव वैद, ज्योत्सना, कुर्तुल ऐन हैदर, रेणु, व राही मासूम रज़ा के अक्स इसलिए उभरकर सामने आते हैं क्योंकि गीतांजलि श्री के उपन्यास में वही स्थिरता, कहन और अस्वाद इस उपन्यास को पढ़ते हुए हमें मिलता है। किसी बात को सच के साथ रखना, लेखन में कोई बनावटीपन को जगह न देना और दिखावे से दूर रहना एक सजग लेखक की निपुणता होती है। गीतांजलि श्री के लेखन की यह एक सांस्कृतिक यात्रा है जिसमें वह कहती हैं कि बार्डर से अपने टुकड़े मत करो। इंसानी रिश्तों की सरहदें न कभी थीं, न कभी होंगी। गीतांजलि श्री ने सरहदों के बगैर सांस्कृतिक संबंधों को उस डोर में बाँधने की अपील की है जिसमें सहिष्णु-मन होता है। जिसमें कोई भी बार्डर के लिए जगह नहीं होती।

उपन्यास अपने शिल्प में कहानी और पात्रों की विशिष्टता लिए हुए है जिसमें घटनाएँ, संवाद अपने प्रवाह में बहते हुए एकालाप की ओर चल पड़ते हैं, और कथा को विश्राम देने की जगह और तेज प्रवाह से आगे बढ़ाते हैं और उन ध्येय को रेखांकित करते हैं जो लेखक की इस उपन्यास के जरिये कहने की असीम इच्छा थी।। रोज की जिंदगी के साथ विभिन्न तरह के रूपकों की बौछार उपन्यास की अपनी समृद्धता है। इन सबके बीच गीतांजलि श्री ने पितृसत्ता की जगह फेमिनिज्म की नब्ज को पकड़कर जो उपन्यास को धार दी है, वह इस उपन्यास की अनेको वर्जना संबंधी डिस्कोर्स को भी अलग तरह से रेखांकित कर सकी है। रेत समाधि को मूलतः मैं एक मानवतावादी उपन्यास मानता हूँ जो सरहदों के आर-पार मनुष्यता की छटपटाहट है। उसको गीतांजलि श्री ने बखूबी रेखांकित कर मानवाधिकारों के नए विमर्श को खड़ा किया है। रेत समाधि

* *सहायक प्रोफेसर, डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर, मध्य प्रदेश*

मूलतः मानवाधिकारों की संवेदनाओं की अनुभूति पर आधारित कृति है जिसे दुनिया में पढ़ा जाना चाहिए। यह उपन्यास किसी भी सरहर-बार्डर के आर-पर मनुष्यता के द्वंद्व को भी रेखांकित करता है।

चंद्रप्रभा और बेटी के बीच जिस किस्सागोई से गीतांजलि श्री इस उपन्यास को जीवंत बनाती हैं, उसे तो समझने के लिए पाठक आसानी से अपनी एक राय बना सकते हैं लेकिन सरहद और बाड़ के बीच फंसी जिन्दगी की अंतर्कथा और उसके भीतर की पीड़ा में जन्मी मानवाधिकार की संवेदना को समझने वाले इसे जब महसूस करेंगे तो उन्हें यह उपन्यास भावुक भी बना देगा। इस उपन्यास का एक अंश-"ज़माने की फ़ितरत जानों। लोग ऊब जाते हैं। हर वक्त कुछ घटना चाहिए। नाटकबाजी चले, नहीं तो लगता है कुछ हो नहीं रहा, जीवन रुक गया है।।इसीलिए शांति से ज्यादा क्रांति मगन करती है, शील से अधिक अश्लील, आराधना से ज्यादा दहाड़ना, बनने से ज्यादा बिगाड़ना, धीर से ज्यादा अधीर, चुपचाप से ज्यादा मारधाप।(पृष्ठ 245)'

भाषा की दृष्टि से समृद्ध गीतांजलि श्री का उपन्यास लोगों को अपनी ओर खींचता है। मंजुल एहतेशाम इसीलिए लिखते हैं कि यह उपन्यास हिंदी साहित्य में एक लैंडमार्क है और सदा रहेगा....अद्भुत और अनूठा...इसकी भाषा और कथ्य एक दूसरे के पूरक हैं। ऐसा हासिल करना एक बड़ी चीज है। किसी भी उपन्यास की समझ उसकी अपनी अनूठे भाषाई समृद्धता से ज्यादा समझा जाता है। सम्भवतः इसीलिए फ्रेंच लेखक पाल वैलरे जैसे लोग उपन्यास को संगीत मानते हैं। संगीत का अर्थ है एक ऐसा उपन्यास जो व्यक्ति की रूह में समाकर अपनी छाप छोड़ दे, उसे झंकृत कर दे। गीतांजलि श्री ने निःसंदेह इस कसौटी पर एक बेहतरीन उपन्यास का सृजनकर रेत समाधि को एक नए अंदाज़ में पाठकों के बीच छोड़ा है।

इस पूरे उपन्यास की काव्यात्मकता इसके अपनी बुनावट में ज्यादा उभर कर सामने आयी है। खासकर 20वीं और 21वीं सदी में दुनिया भर में अनेकों निर्वासन हुए हैं। इन निर्वासन, शरणार्थी जीवन में प्यार और नुकसान के बीच की खाईं, साथ ही घर वापसी के समय राज्य के अनुबंध, जिसमें नागरिकता, वीजा, व्यक्तिगत व राजनीतिक सीमाएं और साथ ही भौगोलिक सरहदों के साथ जूझती मनुष्यता की पीड़ा या आर्तनाद कितनी कोलाहलपूर्ण होती हैं, इसे इस उपन्यास की भावभूमि बनाकर सबकुछ कहा गया, यह अद्भुत है। गीतांजलि श्री ने चन्द्रप्रभा और उसकी बेटी के मध्यम से अनवर तक की जो कथा विकसित की है उसके मनोविज्ञान को यदि समझें, तो वह संपूर्ण खोज में अपने प्रेम और पुनर्मिलन को स्थापित करती कहानी है लेकिन मनुष्यता की डोर में विमर्श में आती मानव अधिकार की पृष्ठभूमि भी इस पूरी सीरिज में उस चेतना का विस्तार है जिसमें मानवाधिकार की खोज भी सम्मिलित है।

सरहद लालचियों के हवाले न करो। उनके लिए खून और ज़ुल्म मुफ़्त। और धूप, आसमान, हवा, तस्करी। मत मानो बार्डर को। बार्डर से अपने टुकड़े मत करो।(पृष्ठ: 333)। यह द्वितीय विश्व युद्ध के बाद रची गयी अनेकों विधाओं में बातें आई हैं लेकिन गीतांजलि श्री इसलिए पुनश्च लोगों के बीच इस उपन्यास के माध्यम से नए तार और धुन के साथ मिलती हैं क्योंकि उनके कहने का अंदाज़ नया है। गीतांजलि श्री ने अपने इसी उपन्यास में लिखा है-ये तो दुनिया है जो पीछा नहीं छोड़ती। दुनिया को साहित्य सख्त ज़रूरत है क्योंकि वो उम्मीद और जीवन की द्योतक है। तो दुनिया आड़े तिरछे छिपे खुले रास्तों से साहित्य में घुलने में चली आती है। दबे पाँव उसमें ज़ज्ब हो जाती है।(पृष्ठ-356) भाषाई परिपक्वता के साथ साहित्य की अपनी संवेदना भी इस उपन्यास की अपनी कसौटी है। वह अपने संवादों के कहने के क्रम में साहित्य की अपनी ताकत को भी रेखांकित करती हुई अपने उपन्यास को आगे बढ़ाती हुई मिलती हैं, यह लेखक की अपनी ताकत भी है और उसके भीतर की चेतना का सक्षम स्वर भी है।

रिश्तों के ताने-बाने में रचा-बुना उपन्यास कई मुद्दों पर कटाक्ष करता है। किन्तु नायाब तरह की मुखर बेटी, मितभाषी अफसर बेटा, एक सेवाधर्मी बहु, प्रेम की नई लकीर खींचती माँ चंद्रप्रभा और अली अनवर, नज़ीर भाई, रज़ा मास्टर, केके के साथ वे कौवे व दूसरे पक्षी जो कि इस उपन्यास की देहरी में अपनी-अपनी भूमिका को दर्ज़ करके उपन्यास को गतिशील बनाते हैं। कुछ मुद्दे और भौगोलिक समस्याएं जो इसकी पृष्ठभूमि में अपने एहसास देते हैं तो कुछ ऐसे भी मनोवैज्ञानिक आशय इस उपन्यास के हैं जो साम्प्रदायिकता, सरहद, जीवन की अनसुलझी गुत्थियाँ और कहें कि पितृसत्ता और जेंडर विषयक सेंसेशनल विषय इस उपन्यास को समृद्ध करके इसे बहस बीच लाते हैं। गीतांजलि श्री ने इन सभी को इस उपन्यास में प्रथमतया एक तटस्थ लेखक और जीवंत पाठक भी होकर जिया है। इस उपन्यास को पढ़ते हुए कई दूसरे लेखकों की रचनाएँ जेहन में आती हैं जो उपन्यास को छूकर जाती हुई गीतांजलि श्री को जुदा करती हैं। उनकी रचना-प्रक्रिया को अलग से समझने के लिए विवश कर देती हैं। इस बेहतरीन उपन्यास को बुकर पुरस्कार मिला जिसके लिए गीतांजलि श्री को कोटिशः बधाई किन्तु लेखक के लिए उसका पुरस्कार तो पाठक की अपनी तृप्ति होती है। उसके भीतर उपजे कुतूहल और रोमांचित और प्रश्न छोड़ने वाले सवाल होते हैं। गीतांजलि श्री ने निःसंदेह अपने लेखन के मध्यम से पाठकों को जीता है।

एक अच्छे कलेवर के साथ राजकमल प्रकाशन से प्रकाशित उपन्यास रेत समाधि मात्र 376 पृष्ठों में सृजित है। मेरी दृष्टि से इस उपन्यास को मानव अधिकार की पृष्ठभूमि में भी पढ़ा जाना चाहिए क्योंकि इस रेत समाधि ने उपन्यास की समझ को नए तरह से स्थापित किया है।

पुस्तक: रेत समाधि
लेखिका: गीतांजलि श्री
अनुवाद : टुम्ब ऑफ़ सैंड (Tomb of Sand)/डेज़ी रॉकवेल
प्रकाशक: राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली-110 032
संस्करण: प्रथम संस्करण जनवरी 2018, सातवाँ संस्करण जून 2022
मूल्य : 450 रुपये

●●●●

मानव अधिकार:

नई दिशाएं

अंक:19, वर्ष:2022

ISSN 0973-7588

9 770973 758000

सर्वे भवन्तु सुखिनः

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग

मानव अधिकार भवन, ब्लॉक - सी, सी.जी.ओ. कॉम्प्लेक्स आई.एन.ए., नई दिल्ली - 110023

ई-मेल : patrika-nhrc@gov.in वेबसाइट : www.nhrc.nic.in